टि. ५८६

हि· ५३६

श्री हरिवंश प्रसाद उपाध्याय [illegible]
'हरि निवास' १/१०[illegible]
ललितपुर, काठमाण्डु (नेपाल)

श्री हरि [illegible] आँखकोटा.
'हरि नि[illegible]
ललितपुर, काठमाण्डु (नेपाल)

राममोहन रामचन्द्र वैश्य
फैन्सी बुक बाइन्डर
आजाद हिन्द पार्क, बहराइच

२१५.ज

हिन्दी प्रबन्ध-कला

(रचना, व्याकरण, विराम चिह्न, छन्द, रस,
अलंकार, निबन्ध, पत्रलेखन, अपठित
और कवियों की शैली आदि
का विस्तृत विवेचन)

वाल्मीकि विद्यापीठ-पुस्तकालय

लेखक

बनवारीलाल जैन, एम० ए०

प्रकाशक
हरप्रसाद भार्गव,
एजूकेशनल पब्लिशर,
कचहरीघाट, आगरा

P. O. RUPAIDIHA

प्रकाशक
हरप्रसाद भार्गव,
एजूकेशनल पब्लिशर,
कचहरी घाट, आगरा

प्रथम बार] मूल्य......३।) रु० [सन् १९४९

पु० ७५१

मुद्रक
धर्मचन्द भार्गव बी. एस-सी.,
अमृत इलैक्ट्रिक प्रेस,
बेलनगंज, आगरा

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक हाईस्कूल एवं अन्य समकक्ष परीक्षाओं के छात्रों के लाभार्थ लिखी गई है। इसमें उन सभी विषयों का विस्तृत विवेचन किया गया है जो हिन्दी-रचना-ज्ञान के लिए नितान्त आवश्यक हैं। अन्य पुस्तकें किसी एक विषय का ही विवेचन करती हैं; इससे छात्रों का भाषा ज्ञान अधूरा रह जाता है और वे शुद्ध भाषा लिखने की भी क्षमता प्राप्त नहीं कर पाते। प्रस्तुत पुस्तक का लक्ष्य है भाषा सुधार और लेखन-कला का समुचित विकास। अतएव प्रबन्ध-कला के विविध अंगों—शब्दों के विविध अर्थों, उनका वाक्य में उचित प्रयोग, विराम-चिह्नों का ठीक उपयोग, रचना-सम्बन्धी भूलों का सुधार, छन्द, रस, अलङ्कार आदि विषयों का विशद विवेचन किया गया है। इसी दृष्टि से व्याकरण का उतना ही विवेचन किया गया है, जितना भाषा-निर्माण के लिए आवश्यक है।

निबन्ध और पत्र-लेखन के प्रकरण में तत्सम्बन्धी सभी आवश्यक बातें पर्याप्त उदाहरणों, रूपरेखाओं और पत्रों द्वारा समझाई गयी हैं। अन्त में अभ्यास के लिए विभिन्न विषय भी दिए गए हैं।

छात्रों को परीक्षा-सम्बन्धी-विषयों का सम्यक् ज्ञान कराने के लिए अपठित गद्यांश, चरित्र-चित्रण, व्याख्या, अर्थ, सार आदि उपयोगी विषयों का भी वर्णन किया गया है। प्रत्येक प्रसंग के अन्त में अभ्यासार्थ प्रचुर प्रश्न भी दिये गये हैं जिनसे पठित विषय की समुचित जाँच हो सकेगी।

हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास, प्रमुख कवियों और लेखकों की जीवनियों और शैलियों पर भी प्रकाश डाला गया है। इन

सब विषयों का समाहार करने के कारण, आशा है कि यह पुस्तक छात्रों के लिए परम उपयोगी सिद्ध होगी।

इस पुस्तक के लिखने में जिन विद्वानों की रचनाओं से लेखक ने सहायता ली है, उनका वह परम आभारी है। सुहृद्वर पं० गोपालदत्त जी आचार्य ने पुस्तक के संशोधन में और श्री० मौलवी अब्दुल क़ादिर ने फारसी की लोकोक्तियों का संकलन करने में पूर्ण सहायता दी है; अतएव लेखक उनका हृदय से आभारी है।

सरस्वती-सदन, आगरा
१-७-४६

—बनवारीलाल जैन

विषय-सूची

१—भाषा का महत्त्व
२—प्रबन्ध-कला के कुछ नियम

प्रथम कला—

भाषा और व्याकरण

३—भाषा का विकास १
४—व्याकरण का महत्त्व २
५—व्याकरण के भाग ३
६—वर्ण-विचार ४
७—वर्णों का उच्चारण ५
८—देवनागरी लिपि की विशेषताएँ ७
९—सुलेख के नियम ८
१०—लिपि सम्बन्धी अशुद्धियों का परिशोधन ९
  (अ) अक्षरों की अशुद्धियां ९
  (आ) मात्राओं की अशुद्धियाँ १२
  (इ) अनुस्वार का प्रयोग १२
  (ई) संयुक्ताक्षरों का प्रयोग १४
  (उ) शुद्ध शब्दावली १९
११—सन्धि २२
  (क) स्वर सन्धि २३
  (ख) व्यंजन सन्धि २६
  (ग) विसर्ग सन्धि २९
१२—शब्द विचार ३२
१३—शब्द-भेद ३३
  (१) उत्पत्ति के अनुसार शब्द-भेद ३४
    (क) आर्य भाषाओं के शब्द ३५
    (ख) अनार्य भाषाओं के शब्द ३५
    (ग) विदेशी भाषाओं के शब्द ३५
    (घ) प्रान्तीय भाषाओं के शब्द ३६
    (ङ) अनुकरण वाचक शब्द ३६
    (च) शब्दों के तत्सम रूप ३७
  (२) अर्थ के अनुसार शब्द-भेद ३९

(३) व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द-भेद ४३

- (क) पर्याय वाचक शब्द ४५
- (ख) विपरीतार्थक शब्द
- (ग) अनेकार्थक शब्द
- (घ) समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द ५५
- (ङ) लिङ्ग भेद से भिन्नार्थक शब्द ५८
- (च) एकार्थक-शब्दों का प्रयोग ५९
- (छ) विशेष अर्थों में प्रयुक्त होने वाले शब्द
  संख्या वाचक शब्द ७७
- (ज) वाक्यांशों के समानार्थक शब्द ८२
- (झ) शिष्टाचार सूचक शब्द ८५
- (ञ) जीव जन्तुओं की ध्वनि का बोध करानेवाले शब्द ८६
- (ट) अन्य पदार्थों के ध्वनि मूलक शब्द ८७

(४) विकार के अनुसार शब्द भेद ८८

- १४—संज्ञा ९०
- १५—भाव वाचक संज्ञाएँ बनाने के नियम ९१
- १६—लिङ्ग ९३
  - (अ) लिङ्ग भेद के नियम ९४
  - (आ) लिङ्ग बनाने के नियम ९६
- १७—वचन ९७
  - (अ) वचन का प्रयोग ९८
  - (आ) बहुवचन बनाने के नियम ९९
- १८—कारक १००
- १९—सर्वनाम १०६
- २०—विशेषण ११२
  - (अ) विशेषणों का तुलनात्मक प्रयोग ११५
  - (आ) विशेषण बनाने के नियम ११७
- २१—क्रिया १२१
  - (अ) क्रिया के भेद १२१
  - (आ) अपूर्ण क्रियायें और पूरक १२२

(इ) विधि क्रिया १२३

(ई) पूर्वकालिक क्रिया १२४

(उ) क्रियाओं के रूपान्तर १२४

(ऊ) काल १२७

(ए) कालों का तुलनात्मक विवेचन १३०

(ऐ) वाच्य १३१

(ओ) वाच्य परिवर्तन के नियम १३२

(औ) क्रिया के लिङ्ग, वचन और पुरुष १३४

२२—अव्यय १३६

(१) क्रिया विशेषण १३६

(२) सम्बन्ध वाचक अव्यय १३७

(३) समुच्चय बोधक अव्यय १३८

(४) विस्मयादि ,, ,, १३९

२३—शब्दों के विभिन्न प्रयोग १४१

२४—पदान्वय १४५

(अ) संज्ञा का पदान्वय १४५

(आ) सर्वनाम का पदान्वय १४५

(इ) विशेषण शब्दों का पदान्वय १४७

(ई) क्रिया शब्दों का पदान्वय १४७

(उ) अव्यय शब्दों का पदान्वय १४८

(ऊ) विशेषण शब्दों का पदान्वय १४९

२५—हिन्दी में शब्द निर्माण १५१

(अ) उपसर्ग (संस्कृत) १५२

(आ) ,, (हिंदी) १५५

(इ) ,, (विदेशी) १५६

(ई) ,, (अंग्रेजी) १५६

(उ) प्रत्यय १५७

(ऊ) कृदन्त १५९

(ए) तद्धित १६०

२६—समास १६३

(अ) समास के भेद १६३

(आ) समास और विग्रह की रीति १७३

२७—पुनरुक्ति से बने शब्द १७४

२८—शब्द-निर्माण सम्बन्धी अशुद्धियों का परिशोधन १७६
२९—वाक्य-विचार १८१
३०—वाक्य विभेद १८३
(१) रचना के अनुसार वाक्य-भेद १८३
(२) अर्थ के अनुसार वाक्य-भेद १८५
(३) क्रिया के अनुसार वाक्य भेद १९२
(४) वाक्य के साहित्यिक भेद १९२
३१—वाक्य-विग्रह १९५
(१) साधारण वाक्य १९९
(२) मिश्रित वाक्य २०१
(३) संयुक्त वाक्य २०५
(४) मिश्रित और संयुक्त वाक्यों में भेद २०६
(५) समानाधिकरण वाक्य २०६
(६) वाक्य विग्रह के विषय २०८
(६) मिश्रित और संयुक्त वाक्यों का विश्लेषण २०९
३२—वाक्य के गुण २१६
३३—वाक्य सुधार २१९

द्वितीय कला

३४—विराम चिह्न और उनका प्रयोग २३८
३५—अनुच्छेद और उस का विभाजन २४७

तृतीय कला

३६—मुहावरे और कहावतें २५०
(अ) मुहावरे और लोकोक्तियों में अन्तर २५१
(आ) मुहावरों और कहावतों के भेद २५२
(इ) मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग के नियम २५२
(ई) मुहावरों का प्रयोग २५३
(उ) कुछ मुहावरों के अर्थ २६०
(ऊ) अन्तर्कथाओं से सम्बन्धित मुहावरे २६७
(ए) क्रियाओं का मुहावरेदार प्रयोग २७०
(ऐ) मुहावरेदार वाक्यांशों का प्रयोग २७३

(ओ) लोकोक्तियाँ और उनका प्रयोग २७९
(औ) संस्कृत की कुछ कहावतें २९७
(क) फारसी की कुछ कहावतें ३००
(ख) अनूठी उक्तियाँ ३०१

तृतीय कला—काव्य कला

३७—काव्य का स्वरूप ३०४
३८—काव्य के अंग ३०४
३९—काव्य के भेद ३०५
४०—काव्य और साहित्य ३०७
४१—रस ३०८
४२—अनुकूल और प्रतिकूल रस ३१३
४३—रस-उत्पत्ति के साधन ३१३
४४—अलंकार ३२०
  (१) शब्दालंकार ३२१
  (२) अर्थालंकार ३२३
४५—पिंगल-प्रकाश ३३१
४६—काव्य के गुण ३४३
४७—काव्य के दोष ३४५

चतुर्थ कला—अपठित गद्य

४८—व्याख्या, अर्थ, सारांश आदि का विवेचन ३५२
४९—गद्य खंड का सार, अर्थ (उदाहरण) ३५३
५०—पद्य खण्ड का भावार्थ ३५७
५१—अपठित गद्य सम्बन्धी अभ्यास ३५८

पाँचवीं कला—निबन्ध कला

५२—निबन्ध क्या है ? ३७७
५३—विचार-सामग्री ३७७
५४—शैली ३७८
५५—निबंध के अंश ३८१
५६—कुछ आदर्श-निबन्ध ३८२
  (क) सरदार बल्लभ भाई पटेल ३८३
  (ख) विज्ञान के चमत्कार ३८७
  (ग) वीर पूजा ३९२
  (घ) १५ अगस्त का महत्त्व और स्वातन्त्र्य समारोह ३९६
  (ङ) तेल की आत्म कहानी ४०१
  (च) ब्रह्मचर्य ४०६

(छ) राष्ट्रभाषा-हिन्दी ४१०
(ज) जहाँ सुमति तहाँ सम्पति नाना ४१५
(झ) अहिंसा से ही विश्व शान्ति हो सकती है ४१७
५७—कुछ निबन्धों की विस्तृत रूपरेखाएँ ४२०
(अ) यात्रा सम्बन्धी लेख ४२०
(आ) विश्व-वंद्य महात्मा गांधी ४२०
(इ) यंत्र सम्बन्धी लेख ४२२
(ई) मैच ४२२
(उ) विद्यालय का वार्षिकोत्सव ४२३
(ऊ) पैसे की आत्म-कहानी ४२३
(ए) दीर्घजीवी बनने के साधन ४२४
(ऐ) गुरु-भक्ति ४२५
(ओ) रेडियो ४२६
(औ) व्यायाम ४२८
(अं) विज्ञान की उन्नति से हानि-लाभ ४२९
(अः) छात्रावास का जीवन ४३०
(क) पुस्तकालय ४३२
(ख) देशाटन ४३३
(ग) देश भक्ति ४३४
(घ) ग्राम-सुधार ४३५
५८—पत्र लेखन-कला ४३६
(अ) प्राचीन प्रथा के अनुसार पत्र-रचना ४३६
आ) नवीन प्रथा के अनुसार पत्र-रचना ४३८
(इ) मित्र को पत्र—अनुज के नटखटपन का वर्णन ४३९
(ई) पिता को पत्र—रेल दुर्घटना का वर्णन ४४१
(उ, विवाह का निमंत्रण पत्र ४४५

(ऊ) छुट्टी के लिए प्रार्थना-पत्र ४४६
(ए) आवेदन पत्र ४४६
(ऐ) अभिनन्दन पत्र ४४७
५९—चरित्र-चित्रण ४४९
६०—लेखों के लिए विषय ४५१

छटवीं कला—हिन्दी साहित्य का इतिहास

६१—हिन्दी भाषा का विकास ४५२
६२—हिन्दी साहित्य का विकास ४५४
(अ) वीर गाथा काल की प्रवृत्तियाँ ४५५
(आ) भक्ति-काल की प्रवृत्तियाँ ४५६
(इ) रीति-काल की प्रवृत्तियाँ ४५८
(ई) आधुनिक काल की प्रवृत्तियाँ ४५९
६३—सन्त कवि कबीर ४६१
६४—महाकवि सूरदास ४६४
६५—महाकवि तुलसीदास ४६७
६६—सूर—तुलसी की समानता ४७३
६७—आचार्य केशवदास ४७६
६८—रहीम ४७९
६९—बिहारी ४८२
७०—भूषण ४८५
७१—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ४८९
७२—मैथिलीशरण गुप्त ४९२
७३—अयोध्यासिंह उपाध्याय ४९६
७४—गोपालशरण सिंह ५००
७५—रामनरेश त्रिपाठी ५०२
७६—हिन्दी गद्य का विकास ५०४
७७—बालकृष्ण भट्ट ५०७
७८—प्रताप नारायण मिश्र ५०९
७९—जयशंकर 'प्रसाद' ५११
८०—डा० श्यामसुन्दर दास ५१३
८१—पं० रामचन्द्र शुक्ल ५१६
८२—बा० प्रेमचन्द्र ५२०

मुरलीधर जोशी
22-7-5

हिन्दी प्रबन्ध-कला

आमुख

भाषा का महत्त्व

भाषा के महत्त्व को कौन नहीं जानता ? उसकी अमोघ शक्ति से किसको परिचय नहीं ? उसकी अजस्र धारा में कौन प्रवाहित नहीं होता ? वास्तव में उसका क्षेत्र अत्यन्त विशाल और विस्तीर्ण है; उसका प्रभाव अमिट और स्थायी है और उसका आकर्षण आश्चर्यजनक है। जो कार्य सम्राट अकबर की प्रचण्ड तलवार न कर सकी, उसे भक्त-चूड़ामणि तुलसीदास की भव्य भारती ने परिपूर्ण किया। जिस प्रबल दस्यु को मगध की सशस्त्र वाहिनी वश में नहीं कर सकी, उसे निर्विकार महात्मा बुद्ध की संयत वाणी ने चिरानुयायी बना लिया। भाषा की शक्ति अपार, चिरन्तन और स्थायी है। वह जीवन में ज्योति, निराशा में आशा और संघर्ष में शान्ति प्रदायिनी है। क्रान्ति की वह जननी है। वह जड़ को चेतन और कायरको वीर बनाती है। भटकते हुओं को उसने सुमार्ग पर लगाया है। उसकी शक्ति अनिर्वचनीय है।

क्या आप भी चाहते हैं कि 'भाषा' पर आपका भी अधिकार हो ? भाषा एक कला है, इसकी साधना भी सरल नहीं। यदि आप अपने कथन को तर्कपूर्ण, भाषा को सशक्त और अपनी शैली को प्रभावपूर्ण बनाना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि आप प्रत्येक वस्तु का निरन्तर निरीक्षण करें, अध्ययन और मनन से

ज्ञानोपार्जन करें और लिखने का सतत अभ्यास करें उद्देश्य है मनोभावों की उत्तम अभिव्यंजना। प्रसाद स्विनी और प्रभाव पूर्ण भाषा द्वारा ही यह अभिलषि प्राप्त किया जासकता है। सदोष भाषा प्रभाव रहित ह अतएव भाषा की शक्ति अथवा प्रबन्ध-कला के विकार अपनी रचना को सुव्यवस्थित और प्रभावपूर्ण बनाने के लिए यह आवश्यक है कि आप भाषा सम्बन्धी नियमों से परिचित हों, दोषों से बचें और लिखने से पूर्व विवेच्य विषय का भली भाँति मनन करके अपने विचारों को सुन्दर शैली में व्यक्त करें।

प्रबन्ध-कला के कुछ नियम

(१) व्याकरण का समुचित ज्ञान।

(२) शब्द-निर्माण, शब्दों के अर्थों का ठीक ठीक ज्ञान और उनका उचित प्रयोग।

(३) मुहावरों, लोकोक्तियों, अलंकारों और रसों का विषयानुकूल प्रयोग।

(४ विषय और भाव के अनुकूल वाक्य-योजना।

(५) विराम-चिह्नों का उपयुक्त प्रयोग।

(६) भाषा-सम्बन्धी दोषों का परिहार।

अगले अध्यायों में इन्हीं नियमों का विस्तृत विवेचन किया गया है।

ाषा और व्याकरण

यद्यपि बहुना धीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम् ।
स्वजनः श्वजनो मा भूत् सुभगः श्वभग सकृच्छकृत् ॥

—महाकवि भट्टि ।

—हे पुत्र चाहे तुम अधिक व्याकरण मत पढ़ो तब भी थोड़ा बहुत पढ़ना ही चाहिये जिससे "स्वजनः" (प्रिय बन्धु) और "श्वजन" (कुत्ता रूपी बन्धु) शब्दों का अनुचित प्रयोग न हो जाय। इसी प्रकार 'सुभग' (सुन्दर) के स्थान पर 'श्वभग' (कुत्ते के भग) और सकृत (एक बार) शब्द की अपेक्षा 'शकृत' (विष्ठा) का प्रयोग न हो जाय जिससे सभ्य समाज में अश्लीलता का प्रचार हो।

भाषा और उसका विकास

प्रत्येक मनुष्य अपने भाव और विचार दूसरों पर प्रकट करना और दूसरों के भावों और विचारों को जानना चाहता है। **भाव एवं विचार विनिमय के साधन का नाम ही भाषा है।** सृष्टि के आरम्भ में जब मनुष्य पशुओं से अधिक उन्नत नहीं था; उसकी विचार-शक्ति अविकसित थी, तब वह अपने विचारों का आदान-प्रदान शारीरिक चेष्टाओं, इंगितों और ध्वनियों से करता था। आज भी विभिन्न देशों के निवासी, जो

वर्ण-विचार

वर्ण या अक्षर—वह मूल ध्वनि है जिसके खंड न हो सकें; जैसे, अ, इ, उ, क्, प्, न् आदि।

वर्णमाला—वर्णों के समुदाय को कहते हैं।

वर्णों के दो भेद हैं:—(१) स्वर और (२) व्यंजन।

स्वर—उन वर्णों को कहते हैं जिनकाउच्चारण अन्य किसी वर्ण की सहायता के बिना होता है; जैसे, अ, इ, उ, ए आदि।

व्यंजन—उन वर्णों को कहते हैं जिनका उच्चारण स्वरों की सहायता के बिना नहीं हो सकता; जैसे, क्, ग्, ट्, प्, आदि। जिन व्यंजनों में स्वर नहीं होता उन्हें हलन्त कहते हैं और उनके नीचे हलन्त का चिह्न (्) लगा देते हैं; जैसे, भगवान् में 'न्' है।

हिन्दी भाषा में कुल ११ स्वर हैं :—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ। इनमें अ, इ, उ, ऋ मूल स्वर हैं। अन्य स्वर इनके दीर्घ रूप हैं अथवा इनके संयोग से बने हैं; जैसे, आ, ई, ऊ—अ, इ, उ, के दीर्घ रूप हैं। ए (अ+इ), ऐ (अ+ए) ओ (अ+उ), औ (अ+ओ) से मिलकर बने हैं। अ, इ, उ को ह्रस्व स्वर और आ, ई, ऊ, ए, ऐ ओ, औ कों दीर्घ स्वर कहते हैं; क्योंकि इनके उच्चारण में मूल स्वर की अपेक्षा दूना समय लगता है।

व्यंजन ३३ हैं जो सात वर्गों में विभाजित किए जा सकते हैं:—

क,	ख,	ग,	घ,	ङ	—	कवर्ग
च,	छ,	ज,	झ,	ञ	—	चवर्ग
ट,	ठ,	ड,	ढ,	ण	—	टवर्ग
त,	थ,	द,	ध,	न	—	तवर्ग
प,	फ,	ब,	भ,	म	—	पवर्ग
य,	र,	ल,		व	—	अन्तस्थ
श,	ष,	स,		ह	—	ऊष्म

क़, ख़, ग़, ज़, ड़, ढ़, फ़—**अवशिष्ट वर्ण** कहलाते हैं; क्योंकि इनका प्रयोग अरबी, फारसी और अँगरेजी आदि भाषाओं की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए होता है। इनके अतिरिक्त क्ष, त्र, ज्ञ संयुक्ताक्षर हैं। क्ष (क्+श), त्र (त्+र) और ज्ञ [ज्+ञ] के मेल से बनते हैं।

अनुस्वार (ं), चन्द्रबिन्दु (ँ) और विसर्ग (ः) वास्तव में व्यंजन हैं; किन्तु उच्चारण की दृष्टि से इनकी गणना स्वरों में की जाती है।

वर्णों का उच्चारण

वर्णों का उच्चारण मुख के विभिन्न स्थानों—कण्ठ, तालु, दाँत, आदि से होता है। उच्चारण की दृष्टि से वर्णों का निम्नलिखित विभाजन किया जा सकता है:—

कण्ठ्य—अ, आ, ग क, ख, घ, ङ, ह, और विसर्ग। इनका उच्चारण कण्ठ से होता है।

तालव्य—इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य, श इनका उच्चारण तालु से होता है।

मूर्द्धन्य—ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र, ष--इनका उच्चारण मूर्द्धा से होता है।

दन्त्य—त, थ, द, ध, न, ल, स--इनके उच्चारण में जीभ दाँतों को छूती है।

ओष्ठ्य—उ, ऊ, प, फ, ब, भ, म। ओठों को स्पर्श अथवा संकुचित करके इनका उच्चारण किया जाता है।

कुछ स्थानों का उच्चारण दो स्थानों की सहायता से होता है; जैसे, ए, ऐ का कण्ठ और तालु से; ओ, औ का कण्ठ और ओठों से; व, फ़ का दाँत और ओठों से तथा ङ, ञ, ण, न, म, अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु का मुख और नासिका से होता है; अतएव इनको क्रमशः **कण्ठ-तालव्य, कण्ठोष्ठ्य, दन्तोष्ठ्य और आनुनासिक वर्ण कहते हैं।**

अभ्यास

(१) स्वर या व्यंजन में क्या अन्तर है?

(२) व्यंजन कितने हैं और उनको कितने वर्गों में बाँटा जा सकता है?

(३) अ, क, ट, च, प, और व के उच्चारण किन स्थानों से किये जाते हैं?

(४) आनुनासिक वर्णों से तुम क्या समझते हो?

देवनागरी लिपि और लेखन कला

भाव प्रकाशन बोलकर अथवा लिखकर किया जाता है। बोलचाल में 'भाषा' विभिन्न ध्वनियों द्वारा व्यक्त की जाती है; किन्तु लिखने में इन्हीं ध्वनियों को कुछ कल्पित चिह्नों अथवा वर्णों द्वारा प्रकट किया जाता है। प्रत्येक वर्ण का रूप विभिन्न होता है। जिस रूप में वर्ण लिखे जाते हैं उसे **लिपि** कहते हैं।

प्रत्येक भाषा की अपनी विभिन्न लिपि होती है। हिन्दी भाषा जिस लिपि में लिखी जाती है उसे **देवनागरी** लिपि कहते हैं।

देवनागरी लिपि की विशेषताएँ

भारतवर्ष में उर्दू, रोमन, कैथी, मुड़िया, मैथिली आदि अनेक लिपियों का कम-अधिक व्यवहार है किन्तु देवनागरी लिपि का स्थान इन में सर्वोत्कृष्ट है। भारतवर्ष के अधिकांश भाग में देवनागरी लिपि का ही प्रयोग किया जाता है। इसका सम्बन्ध भारत की प्राचीनतम राष्ट्रीय लिपि 'ब्राह्मी' से है। हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, बंगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाएँ भी देवनागरी लिपि के कुछ परिवर्तित रूपों में लिखी जाती हैं।

“नागरी” की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है। इसमें वर्णों का विभाग ऐसे ढंग से किया गया है कि उनके नाम और उच्चरित ध्वनि दोनों में अन्तर नहीं है। एक वर्ण से एक ही ध्वनि निकलती है। जैसे अँगरेजी में किसी रोमी स्वर वर्ण द्वारा कभी एक ध्वनि निकाली जाती है और कभी दूसरी, ऐसी बात नागरी में नहीं। फ़ारसी लिपि में रोमी वर्णों की भाँति ही वर्ण के नाम और ध्वनि में

एकता नहीं है। वर्ण का नाम 'बी' या 'बे' है पर ध्वनि उससे 'ब्' होती है। लिखें कुछ और पढ़ें कुछ ऐसा नागरी में नहीं, अन्यत्र चाहे जहाँ हो। यही क्यों, मात्राओं के विधान के कारण थोड़े में ही बहुत कुछ लिखा जासकता है। यह विधान भी ध्यान देने योग्य है। व्यंजन के चारों ओर मात्राएँ लगती हैं। इनमें केवल ह्रस्व 'इ' की मात्रा (ि) ही व्यंजन के पहले लगती है, शेष मात्राएँ ऊपर, नीचे या आगे ही लगाई जाती हैं।*

सुलेख के नियम

सुलेख भी एक कला है। सुन्दर, स्पष्ट और सुबोध लेखन से पाठक अथवा परीक्षक को पढ़ने की सुविधा ही नहीं होती वरन् अर्थ ग्रहण करने में भी सरलता होती है। अतएव विद्यार्थियों को सुन्दर लिखने की ओर यथेष्ट ध्यान देना चाहिए।

(१) अक्षर सुडौल, सीधे और समान आकार के बनाना चाहिए।

(२) विभिन्न शब्दों के बीच में स्थान छोड़ना चाहिए, किन्तु एक ही शब्द के अक्षरों को मिलाकर लिखना चाहिए।

(३) एक शब्द को दो बार लिखना हो तो दोनों ही बार अलग-अलग लिखना चाहिए, यह नहीं कि एक बार शब्द लिख कर २ का अंक बना दिया जावे, जैसे, **धीरे २** के स्थान में **धीरे धीरे** लिखा जाय।

(४) यदि पंक्ति के अन्त में पूरा शब्द लिखने के लिए स्थान न हो तो उस शब्द को दूसरी पंक्ति में लिखना चाहिए। एक

---

*वाङ्मय-विमर्श से उद्धृत।

शब्द को दो भागों में तोड़ना कदापि उचित नहीं, जैसे, सरलार्थ को सरला—र्थ करके न लिखा जाय।

(५) विभिन्न वाक्यों को भी शब्दों के समान कुछ स्थान छोड़कर लिखना चाहिये।

(६) विराम चिह्नों का यथास्थान उचित प्रयोग करना चाहिए।

लिपि-सम्बन्धी कुछ अशुद्धियों का परिशोधन

देवनागरी लिपि अत्यन्त सरल, सुबोध और वैज्ञानिक है। इसमें जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाता है; किन्तु फिर भी विद्यार्थी असावधानी, अशुद्ध उच्चारण, और ज्ञानाभाव के कारण शुद्ध हिन्दी लिखने में निम्न प्रकार की भूलें करते हैं:—

(अ) अक्षरों की अशुद्धियाँ :—

(१) **ए और ऐ का प्रयोग**— ए और ऐ की मात्राओं के रूप क्रमशः (े) और (ै) हैं जो व्यंजनों से मिलकर ते, ये, तै, कै, हो जाते हैं। 'एै' जैसा वर्ण हिन्दी में नहीं है। अतएव 'ऐसा' को एैसा, 'एक' को 'एैक' या 'अेक' तथा 'लिए', 'आइए' को 'लिऐ', 'आइऐ' नहीं लिखना चाहिए।

(२) ड, ढ, ड़, ढ़ के प्रयोग में विद्यार्थियों को विशेष कठिनाई प्रतीत होती है। इनकी पहचान यह है कि ड, ढ का प्रयोग शब्द के आदि में भी हो सकता है किन्तु ड़, ढ़, का नहीं, जैसे, डर, ढक, डस, ढंग, चढ़ना, पढ़ना, लड़का, लड़ना। ड, ढ के उच्चारण करने में जिह्वा का अग्र भाग मूर्द्धा (दाँतों की

जड़) को स्पर्श मात्र करके हट जाता है ; किन्तु ड़ ढ़, में हम जिह्वा के अग्र भाग को कुछ पीछे मोड़ कर मूर्द्धा से छुआते हुए झटके से आगे फेंकते हैं । इसी प्रकार ‘ड़’ के स्थान पर ‘ढ़’ का प्रयोग किया जाता है, जैसे, ‘पढ़ना’ के लिए ‘पड़ना ।’ अतएव आगे दिए गए शब्दों का खूब अभ्यास करना चाहिए—कड़ाई, कढ़ाई, चढ़ना, बूढ़ा, ढेर, ढूँढ़ना, गड्ढा, डंडी, ढीला, डाक, ढाक, डाढ़, डाह, ढील, ढोल, डेढ़ ढाई, गढ़ना, बड़बड़ाना, सड़ा, खड़ा, बाढ़ आदि ।

(३) **ब और व**—इनका विभेद न करने के कारण ‘बाह्य’ ‘बाहरी’ को ‘वाह्य’ (ढोने योग्य) ‘बाण’ को ‘वाण’ ‘बृहस्पति’ जी की दुर्दशा करके ‘वृहस्पति’ बना देते हैं । इसी प्रकार जब, तब, कब, सब, बार शब्दों में ‘ब’ के स्थान में ‘व’ का अशुद्ध प्रयोग किया जाता है । ‘ब’ ओष्ठ्य वर्ण है । इसका उच्चारण दोनों होठों को लगाकर किया जाता है, किन्तु ‘व’ दन्त्योष्ठ्य वर्ण है और इसका उच्चारण नीचे के होठ को दाँतों से लगाकर किया जाता है । संस्कृत में ‘व’ वाले शब्दों की अधिकता है, जैसे—विद्या, विद्वान्, वीर, विभूति, विकास, विधर्मी, विचार, विषय, विष, विनय, व्यवहार आदि । बिन्दु, बहुधा, ब्रह्मचर्य, बाल, बुद्धि में ‘ब’ का प्रयोग होता है ।

(४) **श और ष**—‘श’ का उच्चारण तालु से और ‘ष’ का मूर्द्धा से होता है । (२) संस्कृत शब्दों में ‘च’, ‘छ’ के पूर्व ‘श’ का प्रयोग होता है; जैसे, निश्चय, निश्छल । (३) संस्कृत की जिन धातुओं में ‘ष’ होता है, उनसे बने हुए शब्दों में भी ‘ष’ का प्रयोग होता है, जैसे, पुष्, रुष्, शिष् धातुओं से बने हुए शब्द

पोषण, रोष, शिष्य आदि हैं। (४) क, ख, ट, ठ, प, फ के पूर्व 'ष' का प्रयोग होता है; जैसे, निष्कलङ्क, निष्फल,। (५) व्यंजन संधि में आगे दिए हुए ६-१० नियमों को भली भांति समझो। य, र, ल, व, ह और कवर्ग तथा 'अ', 'आ' के अतिरिक्त अन्य स्वरों के पश्चात् 'ष' का प्रयोग होता है; जैसे, अभि+सेक= अभिषेक। (६ इन शब्दों का बार बार अभ्यास करोः—स्पष्ट, सन्तोष, पृष्ठ, परिभाषा, कनिष्क, हृषीकेश, भीष्म, मनुष्य, विमर्श, कोश, विकास, केसरी, कैलास, आदि।

(६) क्ष, छ—संस्कृत के शब्दों में प्रायः 'क्ष' का प्रयोग होता है। इसके उच्चारण में 'क्' और 'ष्' की ध्वनि का मेल होता है; जैसे, नक्षत्र, क्षमा, क्षोभ, क्षत्रिय, प्रत्यक्ष, कक्षा आदि। ठेठ हिन्दी शब्दों में 'छ' का प्रयोग होता है; जैसे—छात्र, स्वच्छ, अच्छा, छत, छिद्र आदि।

(७) ट, ठ,—'ष' के मेल से 'ठ' के स्थान में 'ट' का अशुद्ध प्रयोग किया जाता है। ऐसे शब्द हैं—वसिष्ठ, कोष्ठ, पृष्ठ, कर्मनिष्ठ, शिष्ट, क्लिष्ट, धृष्ट, सन्तुष्ट, यथेष्ट आदि जो प्रायः अशुद्ध बोले या लिखे जाते हैं।

(८) न और ण—शुद्ध संस्कृत और खड़ी बोली के शब्दों में 'ण' का तथा ब्रजभाषा और अवधी में 'न' का प्रयोग किया जाता है; जैसे—चरण, शरण, प्रमाण, गुण आदि।

इसी प्रकार 'झ' के लिए 'ज' और 'ख' के स्थान में 'क' का प्रयोग नहीं करना चाहिए; जैसे, तुझ, मुझ, को तुज, मुज और धोखा को धोका लिखना ठीक नहीं है।

(आ) मात्राओं की अशुद्धियाँ—प्रारम्भिक कक्षाओं में लेखन की अशुद्ध प्रणाली के कारण बालक 'इ', 'उ', 'ऊ' की मात्राएँ व्यंजनों में मिलाने में त्रुटियाँ करते हैं।

(१) 'इ' की मात्रा का रूप 'ि' है। प्रायः विद्यार्थी व्यजन लिखने के पश्चात् 'ि' मात्रा को लगाने के लिए बिना स्थान छोड़े प्रयत्न करते हैं; किन्तु इस मात्रा को व्यजन लिखने से पूर्व ही लिख लेना चाहिए। इसी प्रकार यदि दो व्यजन सयुक्त हों और पिछले व्यंजन में 'इ' जोड़ना हो तो मात्रा प्रथम व्यंजन के पूर्व लगाई जावेगी; परन्तु वह पिछले व्यंजन के साथ पढ़ी जावेगी; जैसे, 'सृष्टि' में 'इ' की मात्रा 'ट' के साथ है, ष के साथ नहीं।

(३) उ, ऊ की मात्राओं को 'र' में मिलाने से 'रु' और 'रू' रूप बनता है, जैसे; रुपया, गुरु, रूखा। (रु और रू रूप अशुद्ध हैं)।

[आ, ई, ओ, औ, की मात्राएँ (ा, ी, ो, ौ) व्यंजन के पीछे और उ, ऊ, ऋ (ु, ू; ृ) को नीचे लगाते हैं, जैसे, का, की, को, कौ, कु, कू, कृ)]

(४) दो मात्राएँ साथ साथ नहीं लग सकतीं; किन्तु अनुस्वार अथवा विसर्ग दूसरी मात्रा के लगे होने पर भी लग सकते हैं, जैसे, सिंह, दुःख।

(इ) अनुस्वार का प्रयोग—प्रायः विद्यार्थी अनुस्वार और चन्द्रबिन्दु का प्रयोग नहीं समझते।

(१) मैं, में, नहीं, क्यों, कहीं, यहीं, वहीं पर वे अनुस्वार का प्रयोग नहीं करते। मैं (प्रथम परुष वाचक सर्वनाम) के स्थान में में (सम्बन्ध वाचक अव्यय) का प्रयोग करते हैं।

(२) जिन सर्वनामों का अन्तिम रूप 'न्ह' होता है; जैसे, उन्हें, उन्होंने, इन्होंने, किन्हें, किन्होंने, जिन्हें, जिन्होंने में 'ह' पर अनुस्वार लगाया जाता है। 'ने' पर नहीं।

(३) जब कर्त्ताकारक का बहुवचन रूप ओकारान्त होता है तो उस पर अनुस्वार लगाया जाता है, उस की विभक्ति 'ने' पर कभी नहीं लगता; जैसे, बालकों ने, मनुष्यों ने आदि।

(४) है, हैं—"है" एक वचन और "हैं" बहुवचन क्रियाएँ हैं। 'है' के पूर्व क्रिया का रूप आकारान्त और 'हैं' के पूर्व एकारान्त होता है, जैसे, वह आया है; वे गए हैं।

(५) (अ) सुनेंगे, दौड़ेंगे, हँसेंगे। (ब) सुनोगे, दौड़ोगे, हँसोगे। (स) खायँगे, पायँगे। इन सभी क्रियाओं के अन्त में 'गे' है; परन्तु 'गे' से पूर्व ए की मात्रा आने पर अनुस्वार और 'य' आने पर चन्द्र बिन्दु का प्रयोग होता है। 'गे' से पूर्व 'ओ' की मात्रा आने पर अनुस्वार का प्रयोग नहीं होता; किन्तु 'होंगे' इसका अपवाद है।

(६) **अनुस्वार और चन्द्र विन्दु में विभेद**—सानुस्वार वर्ण का उच्चारण हलका होने पर चन्द्र बिन्दु और खींचकर किये जाने पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाता है. जैसे—रंग-विरंग, संग, संत में अनुस्वार और यहाँ, वहाँ, जहाँ, गेहूँ, हँसना आदि में चन्द्र विन्दु का प्रयोग होगा।

(७) **अनुस्वार का संयुक्ताक्षर में परिवर्तन**—सानुस्वार अक्षरों पर प्रायः सुविधा के लिए बिंदी का प्रयोग किया जाता है;

परन्तु कभी-कभी अनुस्वार को आगे के वर्णों में मिलाने में विद्यार्थी त्रुटियाँ करते हैं, जैसे, दण्ड को दन्ड, कञ्चन को कन्चन लिङ्ग को लिन्ग लिखते हैं। सानुनासिक ध्वनि के लिए सभी स्थानों में 'न्' का प्रयोग वांछनीय नहीं। अतएव नीचे दिये हुए नियमों को ध्यान में रखना चाहिए।

१—अनुस्वार के परे जिस 'वर्ग' का अक्षर हो उसी वर्ग के पञ्चम वर्ण में अनुस्वार को बदलना चाहिए, जैसे अंचल, (अञ्चल) में अनुस्वार के परे च चवर्ग का वर्ण है, अतएव अनुस्वार को ञ् में परिवर्तित किया गया है। अचल और अञ्चल रूप ठीक है; किन्तु अन्चल अशुद्ध है। इसी प्रकार अंक (अङ्क), पंडित (पण्डित), स्कंध (स्कन्ध), व्यंजन (व्यञ्जन), लंबा (लम्बा) शब्दों के रूप होंगे।

(२) सुगमता की दृष्टि से हिन्दी में अधिकतर अनुस्वार का ही व्यवहार होता है।

(३) यदि अनुस्वार के परे य, र, ल, व, श, ष, स, ह में से कोई वर्ण हो तो अनुस्वार में परिवर्तन नहीं होता; जैसे—हंस, स्वयंवर, संरक्षक आदि।

(४) ङ, ञ, ण, न, म अपने ही वर्ण के अक्षरों से मिलते हैं; जैसे कङ्कण, चन्द्रमा।

(ई) अनुस्वार का प्रयोग—(१) क्त, त्त—'क्त', क् और त के मेल से और त्त, त् और त से मिलकर बनते हैं; जैसे, संयुक्त

युक्ति, वक्ता, शक्ति, पंक्तियाँ; सत्ता, पत्ते।

(२) **ग्य, ज्ञ**-'ज्ञ' ज् और 'ञ' के मेल से बनता है। 'ज्ञ' का सम्बन्ध 'जानना' क्रिया से है; जैसे, विज्ञान, मनोज्ञ, जिज्ञासा। 'ज्ञ' का उच्चारण लोग भूल से 'ग्य' करते हैं। यदि शुद्ध उच्चारण किया जावे तो प्रतिज्ञा, यज्ञ, आज्ञा और योग्य, वैराग्य, ग्यारह शब्दों में अशुद्धियाँ होने की संभावना न रहे।

(३) **'र' 'र्' के प्रयोग**—'र' और रेफ के अशुद्ध प्रयोग के कारण परमात्मा, स्मरण, मनोरथ आदि की शक्लें बिगड़ कर प्रमात्मा, स्मर्ण, मनोर्थ हो जाती हैं। अतएव 'र' के निम्न प्रयोगों को भली भाँति समझना चाहिए।

(१) 'र'—इसके उच्चारण में पूरा समय लगता है, जैसे, परम, अदरख, शरण।

(२) जब 'र' स्वयं दूसरे व्यंजनों से संयुक्त होता है तो उस का रूप (ˆ) होता है। ऐसे संयुक्ताक्षर का उच्चारण करते समय 'र्' आगे आने वाले व्यंजन से पूर्व और झटके के साथ बोला जाता है और अन्त में ध्वनि उस व्यंजन की ही निकलेगी 'र्' की नहीं; जैसे, र् + म = र्म; धर्म, कर्म (उच्चारण—धर्‌म, कर्‌म)

(३) जब 'र' किसी व्यंजन के पीछे मिलता है तो उसके दो रूप होते हैं। —(अ) खड़ी पाई वाले व्यंजनों के नीचे यह रूप (-) है; जैसे, क्रम, प्रीति, प्रकार में; और (आ) खड़ी पाई रहित व्यंजनों के नीचे इस रूप (‸) में, जैसे, राष्ट्र, ड्रामा, उष्ट्र में

मिलता है। इनमें अन्य व्यंजन स्वयं 'र' में मिलते हैं; अतः इनका आधा उच्चारण पहले किया जाता है और बाद में 'र' का पूरा उच्चारण किया जाता है; जैसे, क्+र=क्र; चक्र, तक्र (उच्चारण--चक्‌र, तक्‌र) इसी प्रकार सहस्र (स् में र का मेल है, त्र का नहीं); व्रज (व में र का मेल है, ऋ का नहीं); हर्ष (र्+ष का मेल है)। प्रायः ट, ड में (्र) मिलता है; जैसे, ड्रामा ट्रेन।

(४) नृप, शृंगार, समृद्धि—इन शब्दों में 'र' का मेल नहीं वरन् 'ऋ' का है। 'र' और 'ऋ' का विभेद करने के लिए इस नियम को ध्यान में रखना आवश्यक है:—

"किसी शब्द में 'रि' (र+इ) यदि किसी अक्षर के पिछले भाग में संयुक्त हो तथा उसके बाद में 'य' न हो तो 'रि' के स्थान पर 'ऋ' की मात्रा प्रयुक्त होगी; जैसे, कृपा। बाद में 'य' होने पर 'रि' (र्+इ) ही संयुक्त होगी; जैसे, प्रिय, क्रिया, म्रियमाण।" कुछ ऐसे शब्दों जैसे—गृह, ग्रह, पृथा, प्रथा, मात्र, ऋतु, ऋण, रिपु, रिक्त का भली भाँति मनन करना चाहिए।

(४) द का विभिन्न वर्णों से योग--

द्द=द्+द, जैसे, उद्दंड, उद्देश्य।

दृ=द्+ऋ, जैसे, दृश्य, दृष्टि।

द्य=द्+य (इसका उच्चारण भूल से ध्+य जैसा किया जाता है); जैसे, विद्या, गद्य, पद्य, उद्यान।

ध्य=ध्+य; जैसे, अध्ययन, ध्यान, सन्ध्या।

द्व=द्+व; जैसे, विद्वान्, द्वार, द्वारिका।

द्ध = द् + ध; जैसे, बुद्धि, युद्ध, क्रुद्ध ।
द्म = द् + म; जैसे, छद्म, पद्म ।

(५) संयुक्ताक्षरों और द्वित्व (वह संयोग जिससे व्यंजन उसी व्यंजन में मिलता है) के लिखने के प्रायः दो रूप हैं; जैसे, (१) बुड्ढा, चक्कर । (२) बुड्ढा, चक्कर । प्रथम में हल् का प्रयोग किया गया है ।

(६) एक वर्गीय अक्षरों का संयोग—द्वितीय तथा चतुर्थ वर्णों का द्वित्व नहीं होता । वे अग्रभाग में अपने वर्ग के क्रमशः प्रथम और तृतीय अक्षरों से संयुक्त होते हैं; जैसे, मक्खन, बग्घी, पत्थर, कत्था, चिट्ठी आदि ।

(७) अन्य अशुद्धियाँ—(अ) लिए, लिये; हुआ, हुवा । जब 'लिया' क्रिया का बहुवचन लिखना हो तो 'लिये' परन्तु अव्यय रूप 'लिए' लिखना चाहिए । संज्ञा शब्दों के दोनों रूप शुद्ध माने जा सकते हैं; जैसे, रुपये, रुपए, संस्थाएँ, संस्थायें । क्रियाओं में जहाँ 'ये' का उच्चारण स्पष्ट न हो वहाँ 'ए' भी लिखा जा सकता है, जैसे, जाइए, चाहिए आदि ।

'होना' क्रिया के भूत-कालिक रूप 'हुआ, हुई' के स्थान में 'हुवा' 'हुयी' लिखना ठीक नहीं । इसी प्रकार 'जाओ' को 'जावो' और जाओगे को जावोगे लिखना भी अशुद्ध है ।

(अ) कुछ शब्दों के प्रारम्भ में स् का प्रयोग होता है, जैसे, स्त्री, स्मारक, स्काउट । इनको इस्त्री, इस्मारक, इस्काउट लिखना अशुद्ध है ।

(इ) हल् का प्रयोग--कुछ संस्कृत शब्दों के अन्तिम अक्षरों में हल् (्) लगता है, जैसे, विद्वान्, श्रीमान्, अर्थात् आदि। शुद्धता की दृष्टि से इनमें हल् का प्रयोग आवश्यक है।

(उ) विभक्तियों को किसी शब्द में मिलाकर लिखा जाय या अलग—इस पर विभिन्न मत हैं। सर्वनामों में विभक्तियों को मिलाकर लिखना ही उचित है; जैसे, उसने, तुमको। संज्ञाओं की विभक्तियाँ पृथक् लिखी जाती हैं; जैसे, राम को।

(ऊ) महिला, स्त्री, ऋषि, भानु, हिन्दू शब्दों के बहुवचन रूप महिलाएँ (महिलाओं), स्त्रियों, ऋषियों और हिन्दुओं है। इनको स्त्रीयों हिन्दूओं, ऋषीयों और भानूओं लिखना अशुद्ध है।

(८) विदेशी भाषा के शब्दों को उनके तत्सम रूपों में न लिखकर हिंदी में प्रचलित तद्भव रूप में लिखना ही समीचीन है; जैसे, आहिस्तः हमेशः मज़ा को आहिस्ता, हमेशा, मजा। हिंदी लिपि के बीच-बीच में अंगरेजी के अंक और शब्द लिखना ठीक नहीं; जैसे, 'वह Volley Ball खेलने 5 बजे गया'—इसका शुद्ध रूप होगा—'वह बालीबाल खेलने ५ बजे गया। यदि विदेशी भाषा के किसी शब्द को तत्सम रूप में कहीं लिखने की आवश्यकता ही हो तो नागरी लिपि में लिखने के पश्चात् उसे कोष्टक में लिख दिया जाय; जैसे, राशन (Ration)।

(९) कुछ शब्दों के दुहरे रूप प्रचलित है; जैसे, उषा, ऊषा, महि, मही; श्वसुर, ससुर; दश, दस; गदहा, गधा; आँचल,

आँचर; बहन, बहिन; अंगुली, उँगली आदि। ऐसे शब्दों के दोनों रूप शुद्ध माने जाते हैं।

यहाँ कुछ अशुद्धियों का निराकरण किया है। रचना को पूर्ण शुद्ध बनाने के लिए विद्यार्थियों को सतत अभ्यास करने और श्रेष्ठ रचनाओं को पढ़ने की परम आवश्यकता है।

(शब्दों के अशुद्ध प्रयोग और उनका परिशोधन आगे देखिये)

शुद्ध शबदावली

यहाँ कुछ शब्द दिये जाते हैं जो प्रायः अशुद्ध लिखे जाते हैं:—

अत्यन्त, अद्वितीय, अत्युक्ति, अतिरिक्त, अतिथि, अक्षौहिणी, अनुग्रह, अन्तर्धान, अभ्युदय, अन्तरिक्ष, अन्वय, अधीन, अपभ्रंश, अश्लील, (अश्लील), अन्तर्यामी, अश्वत्थामा। आविष्कार, आवश्यकता, आयुष्मान्, आख्यायिका, आध्यात्मिक, आरोग्य, आह्लाद, आह्वान। इन्द्रिय, इच्छा, ईर्ष्या। उद्देश्य, उद्योग, उन्नति, उपर्युक्त, उपाधि। ऋण, ऋतु, ऋद्धि, ऋषि, ऋजु। एकता, ऐक्य, ऐश्वर्य, ऐहिक, ऐरावत, ऐन्द्रजालिक, ऐसा।

कृत्रिम, कृषक, कृष्ण, कैकेयी, किंवदन्ती, कौमुदी, कुटुम्ब' कवि, कवयित्री, क्रम, कर्म। गरिष्ठ, गरुड़, गवेषणा, गृहस्थ, ग्रहण, गार्हस्थ्य, गोष्ठी, ग्रीष्म, घृणा, घोषणा।

चिह्न, चेष्टा, चित्र, चिह्न, चेष्टा, चित्र, चक्षु, छद्म, छत्र। जागृति (संज्ञा), जाग्रत (जगा हुआ), ज्येष्ठ, ज्योतिष,

जन्माष्टमी, जिज्ञासा, जिह्वा, जाह्नवी, जीविका, जितेन्द्रिय, जीर्णोद्धार, ज्योत्स्ना।

तथ्य, तस्कर, तात्पर्य, तीव्र, त्रिफला, तिमिर, तुच्छ, तृतीय, तृष्णा। द्वितीय, दम्पति, द्रौपदी, द्वेष, दिग्विजय, दृष्टान्त, दोष, दुष्यन्त, द्रव, द्रविड़ (जाति विशेष), द्रविण (धन), द्रोण, द्यूत, द्रव्य, द्वन्द्व, धनाढ्य, ध्रुव, ध्येय, ध्वंस। नरक, निशिचर, निशाचर, निद्रा, निषङ्ग, निष्ठा, नीरस, नीरोग, निर्दोष, निष्कण्टक, नम्र, नृशंस।

परिणत, परिष्कृत, पूजनीय, पूर्ति, पंक्तियाँ, पृथ्वी, पृथक्, प्रत्यक्ष, प्रह्लाद, प्रारब्ध, पद्धति, प्रयत्न, पर्याप्त, प्रशंसा, पश्चिम, पीयूष, प्रीति, पुरुषार्थ, प्रकृति, प्रेरणा, प्रौढ़, प्रश्न, प्रसन्न। बृहस्पति, बृहत्, बाह्य, ब्रह्मचर्य, बग्घी। भृकुटि, भेषज, महर्षि, भर्त्सना, भर्तृहरि, भ्रष्ट, भ्रमण। मर्त्यलोक, मातृभूमि, मिलिन्द, महिला, मुकुट, मुहूर्त, मुग्दर, मुरली, मुक्ति, मुक्त, म्लेच्छ, मृत्यु, मैथिली।

युधिष्ठिर, योद्धा, योग्यता, यौवन, यज्ञ, यक्ष। रत्न, रसना, राजयक्ष्मा, राजर्षि, रुपया, रूढ़, रुदन, रश्मि, रक्षा, रक्त, राक्षस। लक्ष्मण, लक्ष्मी, लक्ष्य, लौकिक।

वक्तृता, वंशी, वचन, वज्र, वधू, वध, वनिता, वन्दना, वर्तमान, वर्षा, वल्कल, वसन, वसुधा, वसन्त, वस्तु, वस्त्र, वाल्मीकि, वाणिज्य, वानप्रस्थ, वाचाल, वानर, वाराह, वालुका, वामन, वासना, विघ्न, विपत्ति, विप्लव, विमान, विलम्ब, विवाह, विवेक, वर्ण, विषय, विहार, वृत्त, वृथा, वेला, वैकुण्ठ, वैष्णव, व्यतीत, व्यथा, व्यवहार, व्याकुल,

व्याज, व्याख्यान, व्यापार, व्यूह, व्रत, वैराग्य, विज्ञान, विद्या, विदेश, वितरण, विद्युत्, व्रज ।

शाप, शासन, शिथिल, शिखर, शिष्टाचार, शीर्षक, शुश्रूषा, शृगाल, शृङ्खला, शृङ्गार, श्मशान, श्रम, श्रेष्ठ, षोडश ।

संरक्षक, संशोधक, संवत्सर, संस्कार, संख्या, सदृश, समिति, सम्मान, साधु, समुद्र, सहस्र, सामग्री, साष्टाङ्ग, सान्त्वना, सांसारिक, सारांश, सिंह, सुषमा, स्वच्छ, सूक्ष्म, स्वयंवर, स्तुति, स्नान, स्वस्थ, स्वास्थ्य, स्वस्ति, स्मरण, स्थिति, स्थायी, सेना, सैनिक, संस्कृत, संस्कृति, हृदय, हृष्ट-पुष्ट, ह्रस्व, हिंसा

अभ्यास

१—निम्न लिखित शब्दों के शुद्ध रूप लिखो:—

श्राप, श्रृंगार, पुष्टी, प्रमात्मा, बृजभासा, पुरुस्कार, प्रथक, ट्रेन, स्त्रीयों, हिन्दूओं, परसपर, मनोर्थ, स्मर्ण, बदली, मुठठी ।

२—'ष' और 'रेफ' के प्रयोगों में किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है ?

३—देवनागरी लिपि की क्या विशेषताएँ हैं ?

सन्धि

सन्धि–दो वर्णों के मिलने से जो विकार होता है उसे संधि कहते हैं; जैसे, जगत् + नाथ = जगन्नाथ। यहाँ त् के बाद न आने से 'त्' को 'न' बना।

सन्धि और संयोग–दो वर्णों के मिलने को संयोग या संयुक्ताक्षर भी कहते हैं; जैसे, पत्थर में त् + थ के संयोग से 'त्थ' बना। संधि और संयोग में यह भेद है कि 'संयोग' में अक्षरों में परिवर्तन नहीं होता—जैसे के तैसे बने रहते हैं; किन्तु सन्धि में उच्चारण के अनुसार अक्षरों के मिल जाने पर उनके रूप कुछ न कुछ परिवर्तित हो जाते हैं। जैसे—कृपा, शीघ्र, विद्या में कृ (क् + ऋ), घ्र (घ् + र), द्या (द् + या) संयोग से बने हैं। निश्चय (निः + चय), उच्चारण (उत् + चारण), गायक (गै + अक) में सन्धि है।

सन्धि के भेद–सन्धियाँ तीन प्रकार की होती हैं:—

(१) **स्वर सन्धि**–जब एक स्वर दूसरे स्वर से मिले।

(२) **व्यंजन सन्धि**–जब व्यंजन वर्ण के पश्चात् स्वर या व्यंजन वर्ण मिले।

(३) **विसर्ग सन्धि**—विसर्ग के साथ स्वर या व्यंजन वर्ण की सन्धि हो।

स्वर सन्धि

(१) **नियम**--दो समान स्वर मिल कर दीर्घ हो जाते हैं।

ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ के साथ क्रम से ह्रस्व या दीर्घ समान स्वर मिलें तो दोनों के स्थान पर दीर्घ स्वर हो जाता है। जैसे:—

अ + अ = आ। देव + असुर = देवासुर।
आ + आ = आ। विद्या + आलय = विद्यालय।
अ + आ = आ। प्रेम + आलाप = प्रेमालाप।
आ + अ = आ। विद्या + अर्थी = विद्यार्थी।
इ + इ = ई। रवि + इन्द्र = रवीन्द्र।
इ + ई = ई। कवि + ईश = कवीश।
ई + इ = ई। देवी + इच्छा = देवीच्छा।
ई + ई = ई। नदी + ईश = नदीश।
उ + उ = ऊ। भानु + उदय = भानूदय।
ऊ + ऊ = ऊ। भू + ऊर्द्ध = भूर्द्ध।
उ + ऊ = ऊ। सिन्धु + ऊर्मि = सिन्धूर्मि।
ऊ + उ = ऊ। वधू + उत्सव = वधूत्सव।

(२) **नियम**—'अ' अथवा 'आ' के पश्चात् 'इ' अथवा 'ई' हो तो दोनों मिल कर 'ए' हो जाते हैं। जैसे—

अ + इ = ए। देव + इन्द्र = देवेन्द्र।
अ + ई = ए। परम + ईश्वर = परमेश्वर।
आ + इ = ए। महा + इन्द्र = महेन्द्र।

आ + ई = ए । रमा + ईश = रमेश ।

(३) **नियम**--'अ' वा 'आ' के पश्चात् 'उ' वा 'ऊ' हो तो दोनों मिल कर 'ओ' हो जाते हैं। जैसे—

अ + उ = ओ । हित + उपदेश = हितोपदेश ।
अ + ऊ = ओ । समुद्र + ऊर्मि = समुद्रोर्मि ।
आ + उ = ओ । महा + उत्सव = महोत्सव ।
आ + ऊ = ओ । गंगा + ऊर्मि = गंगोर्मि ।

(४) **नियम**--यदि 'अ' वा 'आ' के पश्चात् 'ऋ' हो तो दोनों मिलकर 'अर्' हो जाते हैं। जैसे—

अ + ऋ = अर् । देव + ऋषि = देवर्षि ।
आ + ऋ = अर् । महा + ऋषि = महर्षि ।

(५) **नियम**--'अ' या 'आ' के पश्चात् 'ए' या 'ऐ' हो तो दोनों मिल कर 'ऐ' हो जाते हैं। जैसे—

अ + ए = ऐ । एक + एक = एकैक ।
अ + ऐ = ऐ । मत + ऐक्य = मतैक्य ।
आ + ऐ = ऐ । महा + ऐश्वर्य = महैश्वर्य ।
आ + ए = ऐ । सदा + एव = सदैव ।

(६) **नियम**--'अ' या 'आ' के पश्चात् 'ओ' या 'औ' हो तो दोनों मिल कर 'औ' हो जाते हैं जैसे—

अ + ओ = औ । उष्ण + ओदन = उष्णौदन ।
अ + औ = औ । काष्ठ + औषधि = काष्ठौषधि ।
आ + ओ = औ । महा + ओज = महौज ।
आ + औ = औ । महा + औदार्य = महौदार्य ।

(७) **नियम**–'इ' या 'ई' के पश्चात् यदि कोई असवर्ण स्वर (इ या ई को छोड़ कर कोई अन्य स्वर) हो तो 'इ' या 'ई' के स्थान में 'य्' हो जाता है; जैसे—

यदि + अपि = यद्यपि। अति + आचार = अत्याचार।
अभि + उदय = अभ्युदय। नि + ऊन = न्यून।
प्रति + एक = प्रत्येक। रीति + अनुसार = रीत्यनुसार।
देवी + अर्पण = देव्यर्पण।

(८) **नियम**--यदि 'उ' या 'ऊ' के पश्चात् 'उ' या 'ऊ' को छोड़ कर अन्य कोई स्वरहो तो दोनों के स्थान में 'व्' होजाता है। जैसे—

सु + आगत = स्वागत; अनु + अय = अन्वय; वधू + आगमन = वध्वागमन; अनु + एषण = अन्वेषण; गुरु + आदेश = गुर्वादेश; अनु + इत = अन्वित।

(९) **नियम**--यदि 'ऋ' के पश्चात् 'ऋ' को छोड़ कर अन्य कोई असमान स्वर हो तो 'ऋ' के स्थान में 'र्' हो जाता है; जैसे— पितृ + आज्ञा = पित् + ऋ + आज्ञा = पित् + र् + आज्ञा = पित्राज्ञा; मातृ + आनन्द = मात्रानन्द। पितृ + अनुमति = पित्रनुमति।

(१०) **नियम**--यदि 'ए' के पश्चात् कोई भिन्न स्वर आवे तो 'ए' के स्थान में 'अय्' हो जाता है; जैसे—ने + अयन = नयन; चे + अथन = चयन; शे + अयन = शयन।

(११) **नियम**--'ऐ' के पश्चात् कोई भिन्न स्वर आवे तो 'ऐ' के स्थान में 'आय' हो जाता है; जैसे—गै + अक = गायक; नै + अक = नायक।

(१२) यदि 'ओ', 'औ' के पश्चात् कोई भिन्न स्वर आवे तो 'ओ' या 'औ' के स्थान में क्रम से 'अव' या 'आव' हो जाता है; जैसे—पो + अन = पवन; भो + अन = भवन; पौ + अक = पावक; नौ + इक = नाविक ।

व्यंजन संधि

पहले बताया जा चुका है कि व्यंजनों के कवर्ग (क्, ख्, ग्, घ्, ङ्), चवर्ग (च्, छ्, ज्, झ्, ञ्), टवर्ग (ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्) तवर्ग (त्, थ्, द्, ध्, न्), पवर्ग (प्, फ्, ब्, भ्, म्), अन्तस्थ (य्, र्, ल्, व्) और ऊष्म (श्, ष्, स्, ह्) वर्ग होते हैं। इन्हीं वर्गों के आधार पर व्यंजन संधि के निम्न नियम बनते हैं:—

(१) किसी वर्ग के प्रथम वर्ण (क्, च्, ट् त् और प्) के आगे किसी वर्ग का तीसरा और चौथा अक्षर या कोई अन्तस्थ वर्ण या 'ह' अथवा कोई स्वर आवे तो प्रथम वर्ण के स्थान में उसी वर्ग का क्रमशः तीसरा वर्ण (ग्, ज्, ड्, द्, ब्) हो जाता है; जैसे—षट् + दर्शन = षड् दर्शन । दिक् + गज = दिग्गज । जगत् + ईश = जगदीश । सम्यक् + ध्यान = सम्यग्ध्यान । भगवत् + गीता = भगवद् गीता । षट + आनन = षडानन ।

(२) यदि क्, च्, ट्, त् प् के आगे किसी वर्ग का पंचम वर्ण (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्) आवे तो क्, च्, ट्, त्, प् के स्थान में उसी वर्ग का पंचम वर्ण हो जायगा । जैसे—

वाक् + मय = वाङ्मय । षट् + नाम = षण्नाम । भगवत् + नाम = भगवन्नाम । जगत् + नाथ = जगन्नाथ । चित् + मात्र = चिन्मात्र ।

(३) 'त्' और 'द्' के आगे यदि 'च' या 'छ' हो तो च्, 'ज' या 'झ' हो तो 'ज्', 'ट' या 'ठ' हो तो ट्, 'ड' या 'ढ' हो तो 'ड' और 'ल' हो तो 'ल्' हो जाता है। जैसे—

उत् + चारण = उच्चारण। सत् + जन = सज्जन। विपद् + जाल = विपज्जाल। तत् + लीन = तल्लीन। उत् + लास = उल्लास। विपद् + लीला = विपल्लीला। सत् + चिदानन्द = सच्चिदानन्द। शरद् + चन्द्र = शरच्चन्द्र।

(४) जब 'त्', 'द्' के पश्चात् 'श' आवे तो 'त्' वा 'द्' को 'च्' और 'श' को 'छ्' हो जाता है। यदि 'त्', 'द्' के पश्चात् 'ह' हो तो 'त्' वा 'द्' के स्थान में 'द्' और 'ह' के स्थान में 'ध' हो जाता है। जैसे—सत् + शास्त्र = सच्छास्त्र। उत + हार = उद्धार। विपद् + हारी = विपद्धारी।

(५) जब किसी ह्रस्व स्वर (अ, इ, उ) के पश्चात् 'छ' आवे तो 'छ' के पूर्व 'च' हो जाता है; जैसे—इ + छा = इच्छा। परि + छेद = परिच्छेद।

(६) यदि 'म्' के पश्चात् 'क' से 'म' तक कोई वर्ण हो तो 'म्' के स्थान में बाद में आने वाले वर्ण के वर्ग का पञ्चम अक्षर हो जाता है। जैसे :—

सम् + कल्प = सङ्कल्प। सम + गम् = सङ्गम। सम् + चित = सञ्चित। सम् + तोष = सन्तोष। सम + देश = सन्देश। सं + पूर्ण = सम्पूर्ण।

(७) 'म्' के पश्चात् 'राट्' वा 'राज्य' शब्दों के अतिरिक्त अन्य वर्णों (य्, र्, ल्, व्, श्, ष्, स्, ह्) में से कोई आवे तो

'म्' का अनुस्वार हो जाता है :—

सम् + राट् = सम्राट् । सम + राज्य = सम्राज्य ।

सम् + यम = संयम । सम् + रक्षक = संरक्षक ।

किम् + वा = किंवा । सम् + ताप = संताप ।

(८) 'म्' के पश्चात् कोई स्वर आवे तो 'म्' का 'म्' ही रहता है । जैसे—सम् + उचित = समुचित । सम् + आदर = समादर ।

(९) यदि किसी शब्द का प्रथम वर्ण 'स' हो और उसके पूर्व 'अ' वा 'आ' के अतिरिक्त अन्य कोई स्वर हो तो 'स' के स्थान में 'ष' हो जाता है :—

अभि + सेक = अभिषेक । नि + सिद्ध = निषिद्ध ।

(१०) यदि 'स' के पश्चात् चवर्ग का कोई वर्ण आवे तो 'स' को 'श्', टवर्ग का कोई वर्ण आवे तो 'स' को 'ष' और तवर्ग को क्रम से टवर्ग हो जाता है :—

दुस् + चरित्र = दुश्चरित्र । दुस् + त = दुष्ट । श्रेस् + थ = श्रेष्ठ । निस् + चल = निश्चल ।

(११) यौगिक शब्दों में यदि प्रथम शब्द के अन्त में 'न्' हो तो दोनों शब्दों का योग कर देने पर 'न्' का लोप हो जाता है :—

राजन् + पुत्र = राजपुत्र । गुणिन् + गण = गुणिगण ।

(१२) यदि 'ऋ', 'र' या 'ष' के आगे 'न' हो और उसके बीच में कोई स्वर, कवर्ग, पवर्ग, अनुस्वार, 'य', 'व', 'ह' आवे तो 'न' का 'ण' हो जाता है । यदि 'ऋ', 'र', 'ष', के पश्चात् और 'न्' से पहिले (दोनों के बीच में) चवर्ग, टवर्ग,

तवर्ग, 'ल्', 'श्' और 'स्' में से कोई एक हो तो 'न्' को 'ण' नहीं होगा ; जैसेः—

राम + अयन = रामायण । तृष + ना = तृष्णा । दक्षिण + अयन = दक्षिणायन । रस + ना = रसना ।

विसर्ग सन्धि

विसर्ग सन्धि में विसर्ग से पूर्व स्वर और बाद में स्वर अथवा व्यंजन के आधार पर परिवर्तन होते हैं ।

(१) यदि विसर्ग के पश्चात् 'च' या 'छ' हो तो विसर्ग का 'श्' ; 'ट' या 'ठ' हो तो 'ष्' और 'त' या 'थ' हो तो 'स्' हो जाता हैः—

नि : + चल = निश्चल । नि : + छल = निश्छल । नि : + ठुर = निष्ठुर । नि : + तेज = निस्तेज । धनु : + टङ्कार = धनुष्टङ्कार । दु : + ट = दुष्ट । दु : + चरित्र = दुश्चरित्र । मन : + ताप = मनस्ताप ।

(२) यदि विसर्ग के आगे 'श', 'ष', 'स' आवें तो कोई विकार नहीं होता । जैसे—नि : + शोक = निःशोक ; नि : + सन्देह = निःसन्देह ; दु : + शासन = दुःशासन ।

(३) यदि विसर्ग के पूर्व 'अ' हो और उसके आगे 'अ' के अतिरिक्त अन्य कोई स्वर हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है । जैसे— अत : + एव = अतएव ।

(४) यदि विसर्ग के पूर्व 'अ' हो और पीछे भी 'अ' हो तो प्रथम 'अ' और विसर्ग के स्थान में 'ओ' हो ज़ायगा और पिछला 'अ' लोप हो जावेगा। इस लोप हुए 'अ' के स्थान में कभी कभी ऽ

का चिह्न लगा देते हैं। जैसे—

तेज: + असि = तेजोसि या तेजोऽसि । शिव: + अहम् = शिवोऽहम् ।

(५) यदि विसर्ग के पूर्व 'अ' हो और आगे किसी वर्ग का तृतीय, चतुर्थ अथवा पञ्चम वर्ण अथवा य, र, ल, व, ह में से कोई वर्ण हो तो 'अ' और विसर्ग मिलकर 'ओ' हो जाते हैं। जैसे—

मन: + योग = मनोयोग । यश: + धर = यशोधर। मन: + हर = मनोहर। मन: + ज = मनोज। तेज: + राशि = तेजोराशि। अध: + गति = अधोगति।

(६) यदि विसर्ग के पूर्व 'अ', 'आ', को छोड़ कर कोई अन्य स्वर हो और आगे किसी वर्ण का तृतीय, चतुर्थ या पञ्चम वर्ण अथवा य, र, ल, व, ह या अन्य कोई स्वर हो तो विसर्ग के स्थान में 'र' हो जाता है। जैसे—

नि: + धन = निर्धन; नि: + गुण = निर्गुण; दु: + उपयोग = दुरुपयोग; नि: + उद्योग = निरुद्योग; नि: + आश = निराश; बहि: + मुख = बहिर्मुख; दु: + जय = दुर्जय; अन्त: + यामी अन्तर्यामी ।

(७) यदि विसर्ग के पूर्व 'अ' 'आ', को छोड़कर कोई अन्य स्वर हो और आगे 'र' हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है और उसके पूर्व का ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है; जैसें—

निः + रस = नीरस; निः + रोग = नीरोग।

(८) यदि विसर्ग के पूर्व 'इ' अथवा 'उ' हो और आगे क, ख, प, फ में से कोई वर्ण हो तो विसर्ग का 'ष' हो जाता

है; जैसे—दुः + कर्म = दुष्कर्म, निः + काम = निष्काम; निः + कपट = निष्कपट; निः + फल = निष्फल ।

अपवाद—‘ दुःख ’ शब्द का विसर्ग ज्यों का त्यों रहता है।

सन्धिविच्छेदन की रीति

(१) इन शब्दों का सन्धिविच्छेदन करो :—इत्यादि, उद्धार

शब्द	सन्धिविच्छेदन	विकार और नियम ।
इत्यादि	इति + आदि	इ का य्—स्वर सन्धि ।
उद्धार	उन् + हार	त् का द और ह् का ध्—व्यंजन सन्धि ।

(२) निम्नलिखित शब्दों में सन्धि-सम्मेलन करो :—

सत् + जन, निः + गुण ।

शब्द सम्मेलन	विकार	सन्धि ।
सत + जन = सज्जन	त् को ज	व्यंजन सन्धि ।
निः + गुण = निर्गुण	विसर्ग का र्	विसर्ग सन्धि ।

अभ्यास

(१) सन्धि से क्या समझते हो ? सन्धियाँ कितने प्रकार की होती हैं ? उदाहरण देकर स्पष्ट करो ।

(२) सन्धि और संयुक्ताक्षर में क्या अन्तर है ?

(३) निम्न लिखित शब्दों का सन्धि-विच्छेद करो:—

विद्याध्ययन, कवीश्वर नरेश, महेन्द्र, सूर्योदय, ब्रह्मर्षि सदैव, महौषधि, इत्यादि, नयन, गायक, महोत्साह, उच्चारण, चिदानन्द, संयोग दिगम्बर, नीरस, दुरुपयोग, मनोयोग, अन्तरात्मा, अहर्निश, निर्भय ।

(४) सन्धि करो:— सुर + इन्द्र । पितृ + अनुमति । सप्त + ऋषि । सु + आगत । महा + ऐश्वर्य । जगत् + नाथ । निः + कपट नौ + इक । दिक् + गज । षट् + आनन । उत् + नत । निः + काम । दुः + गुण ।

शब्द-विचार

"एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति"—महर्षि पतञ्जलि ।

शब्द से तात्पर्य उस ध्वनि से है जिसे सुन कर किसी अर्थ का बोध होता है। भाषा-निर्माण में शब्दों का अत्यधिक महत्व है। शब्दों के उचित प्रयोग से भाषा में ओज और शक्ति उत्पन्न होती है; किन्तु उनके अनुचित तथा सन्दिग्ध प्रयोग से अर्थ का अनर्थ हो जाता है। शब्दों के समुचित संगठन पर ही वाक्य एवं भाषा का सौन्दर्य निर्भर है। अतएव वक्ता और लेखक को शब्दों का प्रयोग अत्यन्त सावधानी से करना चाहिये। एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं; किन्तु उनका वाक्य में प्रयोग क्रम और प्रसङ्ग के अनुसार होता है। उदाहरण के लिए 'द्विज' शब्द के अर्थ ब्राह्मण, पक्षी, दाँत और चन्द्रमा हैं। अब यदि कहें कि 'तुम्हारे मुख में द्विजराज बैठे हैं' तो श्रोता इसे अनर्गल प्रलाप ही समझेगा। इसी प्रकार 'हरि' के पर्यायवाची शब्द हैं—'विष्णु, सूर्य, इन्द्र, सर्प, सिंह, बानर'। 'उसने हरि-भजन किया'—इस वाक्य में 'हरि' का अर्थ 'विष्णु' लिया जावेगा न कि 'वानर'।

अनेक अर्थवाची शब्दों के एक अर्थ का निर्णय कई प्रकार से किया जाता है; जैसे—

(१) संयोग–विचरत 'हरि' सिंहिनि सहित ।

यदि अच्छी प्रकार से एक शब्द भी जान लिया जाय और उसका उचित स्थान पर ठीक ठीक प्रयोग किया जाय तो वह शब्द इस संसार में तो क्या परलोक में भी अभीप्सित अर्थ का देने वाला होता है।

'हरि' शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, पर 'सिंहिनि' शब्द के 'संयोग' से इसका अर्थ यहाँ पर सिंह ही होगा।

(२) साहचर्य—'राम'-कृस्न ब्रज-भूषन जानौ।

'राम' शब्द परशुराम, रामचन्द्र और बलराम के लिए प्रयुक्त होता है; पर कृष्ण के 'साहचर्य' से इसका अर्थ 'बलराम' ग्रहण किया जायेगा।

(३) देशबल—मरु में 'जीवन' दूर है।

'जीवन' के अर्थ जल और जिन्दगी हैं; पर मरुदेश के बल पर इसका अर्थ 'जल' लिया जावेगा।

(४) प्रसंग—सुधा-वृष्टि भई दुहुँ 'दल' ऊपर, जिये भालु कपि नहिं रजनीचर।

दल के अर्थ पत्ता, सेना, मंडली आदि है; पर युद्ध का 'प्रसंग' होने के कारण 'दल' का अर्थ 'सेना' लिया जावेगा

हिन्दी-भाषा में शब्द-भेद

भाषा को 'ध्वनि-संकेतों का समूह मात्र' कहा जाता है। ध्वनि से ही शब्द बनते हैं। इस दृष्टि से शब्दों के दो भेद हैं—(१) सार्थक और (२) निरर्थक। सार्थक उस ध्वनि समूह को कहते हैं जिससे किसी अर्थ का बोध हो; जैसे, लकड़ी, छाता॥ निरर्थक उस ध्वनि-समूह का नाम है जिसका कोई अर्थ न हो; जैसे—हवा की सरसराहट, पानी का कलकल नाद आदि। निरर्थक शब्दों का भाषा में कोई महत्त्व नहीं होता।

सार्थक शब्दों का वर्गीकरण कई विचार से किया जा सकता है:—

(१) उत्पत्ति के विचार से,

(२) व्युत्पत्ति या बनावट के अनुसार,

(३) अर्थ के अनुसार और

(४) विकार या परिवर्तन की दृष्टि से।

(१) उत्पत्ति के अनुसार शब्द-भेद

प्रत्येक जीवित भाषा खिचड़ी होती है—अर्थात् उसमें अनेक भाषाओं के शब्दों का प्रचलन होता है। इसका कारण यह है कि किसी भाषा का विकास और उत्थान उत्तरोत्तर होता है; अतएव शब्दों के रूप परिवर्तित होते रहते हैं। ज्ञान क्षेत्र के विकसित होने से भी अनेक शब्दों का आविष्कार होता रहता है। इसी प्रकार अन्य भाषाओं के शब्दों का भी समावेश हो जाता है।

आधुनिक हिन्दी भाषा में भी अनेक प्रकार के शब्द मिलते हैं। हिन्दी भाषा का उद्गम अपभ्रंश से माना जाता है। अतएव उसमें संस्कृत और प्राकृत के अनेक शब्द विशुद्ध और बिगड़े हुए रूपों में प्रचलित हैं। अरबी, फारसी और अंगरेज़ी के संसर्ग से उसमें इन शब्दों का भी बाहुल्य है। हिन्दी भाषा-शब्द समूह निम्न श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है:—

(क) भारतीय आर्य भाषाओं के शब्द;

(ख) भारतीय अनार्य भाषाओं के शब्द, या देशज शब्द;

(ग) विदेशी भाषाओं के शब्द;

(घ) प्रान्तीय भाषाओं के शब्द, और

(ङ) अनुकरण वाचक शब्द।

(क) भारतीय आर्य भाषाओं के शब्द

(१) **तत्सम**—संस्कृत भाषा के उन शब्दों को कहते हैं जो हिन्दी में विशुद्ध रूप में प्रचलित हैं; जैसे, लेखनी, सुवर्ण, वस्त्र, अग्नि आदि।

(२) **तद्भव**—संस्कृत के वे शब्द हैं जिनका रूप परिवर्तित हो गया है; जैसे, घर (गृह), पोथी (पुस्तक), नाक (नासिका), घी (घृत) आदि।

(३) **अर्द्ध तत्सम**—वे संस्कृत शब्द हैं जो प्राचीन बोलचाल की भाषा प्राकृत में विकृत होकर हिन्दी में प्रचलित हैं; जैसे, कारज, अच्छर, रात, दई, अगिन आदि।

अनेक शब्दों के रूप परिवर्तन से अर्थ में विभिन्नता आगई है। उनके तत्सम रूप सामान्य अर्थ में और तद्भव रूप विशेष अर्थ में प्रयुक्त होते हैं; जैसे, स्थान और थान, स्तन और थन।

(ख) अनार्य भाषाओं के शब्द (देशज शब्द)

वे शब्द हैं जो भारत के आदिम निवासियों की बोलियों में से लिये गए हैं; अथवा आवश्यकतानुसार जन साधारण ने किसी अर्थ को सूचित करने के हेतु गढ़ लिये हैं; जैसे, पेट, कोड़ी, कौड़ी, पगड़ी, डोंगी, लोटा, कटोरा, जूता, आदि।

(ग) विदेशी शब्द—अरबी, फारसी, पुर्तगाली, अँगरेजी आदि विदेशी भाषाओं के शब्द जो राजनीतिक प्रभाव से हिन्दी में प्रचलित हैं ; जैसे—

अरबी–सिफारिश, अदालत, मुक़दमा, मालूम, माफी हकीम, हुक्म, असबाब,औरत, मकान, काग़ज़, मिसाल आदि।

फ़ारसी--आदमी, दूकान, चाकू, कमर, शरम, होश, बाग़, आज़ाद, दरबार, दोस्त, रास्ता, ख़ून, आमदनी, गरम आदि।

तुर्की–तोप, लाश, कालीन, तमाशा, कुली, अलमारी, क़ाबू, बावर्ची, तमग़ा आदि।

अँगरेज़ी–मास्टर, रेल, निब, स्कूल, बक्स, डिप्टी, बोतल, लालटेन, जज, बटन, प्रेस, कमीशन, राशन, स्टेशन, टिकट, कण्ट्रोल आदि।

पुर्तगाली--कमरा, गोदाम, पादरी, फर्म, मेज़, नीलाम, गिर्जा; अचार, कमीज, कप्तान, आदि।

(घ) प्रान्तीय भाषाओं के शब्द–हिन्दी में मराठी, बंगला, गुजराती आदि प्रान्तीय भाषाओं के शब्द भी प्रचलित हैं, जैसे—उपन्यास, गल्प, नितान्त, भद्र, प्राणपण, चूड़ान्त, लागू, प्रगति, चालू, बाड़ा, बाजू, आदि।

(ङ) अनुकरणवाचक– जो शब्द निर्जीव पदार्थों की ध्वनि, पशु-पक्षियों की बोली और मनुष्यों के मनोभावों के अनुकरण से बने है; जैसे, झर-झर, टप-टप, सर-सर, भन-भन, हिनहिनाना, हाय-हाय, सी-सी, दुरदुराना आदि।

शब्दों के तत्सम रूप

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
अजान	अज्ञान	ऊँट	उष्ट्र	चमार	चर्मकार
अम्मा	अम्बा	कबूतर	कपोत	चूरा, चून	चूर्ण
अछत	अक्षत	कड़ुवा	कटु	चौपाया	चतुष्पद
अगम	अगम्य	कन्धा	स्कन्ध	चौंच	चंचु
अंगूठा	अंगुष्ठ	कांटा	कण्टक	चौराहा	चतुष्पद
अनरथ	अनर्थ	काठ	काष्ठ	छेद	छिद्र
अनाड़ी	अनार्य	किवाड़	कपाट	छोभ	क्षोभ
अफीम	अहिफेन	कीड़ा	कीट	जस	यश
अमी	अमृत	कुम्हार	कुम्भकार	जतन	यत्न
अलख	अलक्ष्य	खम्भ	स्तंभ	जीभ	जिह्वा
असवार	अश्ववार	खार	क्षार	जीरन	जीर्ण
अमचूर	आम्रचूर्ण	'छीर'	क्षीर	जुगत	युक्ति
आँचर	अंचल	गधा	गर्दभ	जेठा	ज्येष्ठ
आरज	आर्य	गाभिन	गर्भिणी	जंतर	यंत्र
आसरा	आश्रय	गाँठ	ग्रन्थि	डीठ	दृष्टि
आँसू	अश्रु	गँवार	ग्रामीण	ढीठ	धृष्ट
इकट्ठा	एकत्र	गोत	गोत्र	तिनका	तृण
इमली	इम्लिका	गोरा	गौर	तुरन्त	त्वरित
ईख	इक्षु	घर	गृह	तिरिया	स्त्री
उमस	उष्ण	घी	घृत	थन	स्तन
उछाह	उत्साह	चकवा	चक्रवाक	थल	स्थल
उलाहना	उपालम्भ	चमड़ा	चर्म	दही	दधि

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
दाँतौन	दन्तधावन	पुहुप	पुष्प	मक्खी	मक्षिका
दीठ	दृष्टि	पूस	पौष	मदिरा	मद्य
दूध	दुग्ध	फुर्ती	स्फूर्ति	मलीन	म्लान
दूब	दूर्वा	बच्चा	वत्स	मंझला	मध्यम
धुआँ	धूम्र	बछड़ा	,,	मामा	मातुल
नखत	नक्षत्र	बनिज	वाणिज्य	माँ	मातृ
नाच	नृत्य	बहिरा	बधिर	माँझ	मध्य
नाह	नाथ	बहू	बधू	मिट्टी	मृत्तिका
निठुर	निष्ठुर	बहिन	भगिनी	मूरत	मूर्ति
नीच	निकृष्ट	बांझ	बन्ध्या	मूसा	मूषक
नेह	स्नेह	बाँका	वक्र	मोर	मयूर
नोन	लवण	बाजा	वाद्य	रिस	रोष
लोनी	नवनीत	बिसरना	विस्मरण	रीता	रिक्त
पछतावा	पश्चात्ताप	बिजली	विद्युत्	रूखा	रूक्ष
पतोहू	पुत्रबधू	बिच्छू	वृश्चिक	रूठा	रुष्ट
पत्थर	प्रस्तर	बैल	वृषभ	लोंग	लवंग
पत्ता	पत्र	भतीजा	भ्रातृज	साखी	साक्षी
परस	स्पर्श	भाई	भ्राता	सांवल	श्यामल
पनच	प्रत्यंचा	भावज	भ्रातृ	सांकल	शृङ्खला
पलंग	पर्यंक	भौजाई	जाया	सिंगार	शृङ्गार
पास	पार्श्व	भीतर	अभ्यन्तर	सीख	शिक्षा
पाहन	पाषाण	भूखा	बुभुक्षित	सुनार	स्वर्णकार
पीठ	पृष्ठ	भौंह	भ्रकुटी	सुपना	स्वप्न

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
सफेद	श्वेत	सेज	शैया	सहालग	शुभलग्न
सेठ	श्रेष्ठी	सौत	सपत्नी	हिय	हृदय

अभ्यास

(१) तत्सम शब्दों से क्या समझते हो? नीचे लिखे शब्दों के तत्सम रूप बताओ:—

अचरज, आठ, उछाह, ओठ, कपूर, कान, गांठ, जीरन, नाक, फुर्ती, भूखा, हाथी सेज।

(२) 'विदेशी' शब्दों से क्या समझते हो? दस ऐसे शब्द बताओ जो अरबी और अँग्रेजी भाषाओं के हों।

(३) निम्न शब्दों के तद्भव रूप बताओ:—

सुवर्ण, श्वेत, धूम्र, स्त्री, स्तंभ, कपाट, उष्ट्र, गर्भिणी, भ्राता, अयश।

(२) अर्थ के अनुसार शब्द भेद

(१) सीता **नाक** में नथ पहने है। (२) देवेन्द्र स्कूल की **नाक** है। (३) मुझे देखते ही उसने **नाक सिकोड़ी**। (४) नाले के निकट **नाक** सड़ गई। (५) इन्द्र **नाक-पति** हैं।

इन वाक्यों में 'नाक' शब्द का प्रयोग देखो। प्रथम वाक्य में 'नाक' से 'शारीरिक अङ्ग' का बोध होता है। द्वितीय वाक्य में 'नाक' से 'शारीरिक अङ्ग' का अर्थ प्रकट नहीं होता किन्तु इसका अर्थ है—'इज्जत'। नाक का अर्थ **प्रकरण** द्वारा

लिया गया है। यहाँ पर 'नाक' शब्द का व्यावहारिक सीधा-सादा अर्थ ग्रहण नहीं किया गया। इसी प्रकार 'नाक सिकोड़ना' और 'नाक सड़ना' के अर्थ 'घृणा करना' और 'अत्यधिक दुर्गन्ध आना' है। 'नाक-पति' से तात्पर्य 'स्वर्ग लोक का पति' है।

इस कथन का तात्पर्य यह है कि शब्दों में शक्ति होती है और प्रकरण अथवा प्रसंग से उनके अर्थ भी भिन्न-भिन्न होते हैं। कहीं तो शब्द का साधारण अथवा मुख्यार्थ लिया जाता है; कहीं विशेष अर्थ और कही शाब्दिक अर्थ से भी विभिन्न अर्थ ग्रहण करते हैं।

निम्न उदाहरणों से यह कथन अधिक स्पष्ट हो जावेगा—

(१) गाय खेत में चर रही है। (२) एक हड्डी की ठठरी सामने आकर खड़ी होगई। (३) लाल पगड़ी को देखकर भाले और बरछे सब भाग खड़े हुए। (४) अब तो संध्या हो गई। (५) आप तो पूरे महा पुरुष हैं।

प्रथम वाक्य में गाय से केवल दूध देने वाले पशु का अर्थ है। यह 'गाय' शब्द का सरल और व्यवहारिक अर्थ है। अर्थात् 'गाय' का यहाँ वाच्यार्थ या शब्दार्थ ग्रहण किया गया है। 'गाय' से उसी अर्थ का बोध हमारे मन में होता है जिसका प्रयोग सब लोग करते हैं। अतएव यह वाचक शब्द है।

द्वितीय वाक्य 'हड्डी की ठठरी' का साधारण अर्थ नहीं लग सकता; क्योंकि ठठरी खड़ी नहीं हो सकती। वाच्यार्थ से इसका ठीक-ठीक अर्थ समझ में नहीं आता; अतएव लक्षणा

द्वारा साधारण अर्थ को छोड़कर इस पद का अर्थ उस अर्थ से सम्बन्ध रखने वाला 'अत्यन्त क्षीण और दुर्बल मनुष्य' ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार 'लाल पगड़ी' और 'भाले बरछे' से 'पुलिस के सिपाही' और 'भालों बरछों से लड़ने वाले मनुष्य' लेते हैं। व्यवहार, अनुभव और देखने से हम को ज्ञात है कि 'लाल पगड़ी' का लाक्षणिक अर्थ 'पुलिस का सिपाही' है; अतएव इस शब्द का यही यथार्थ अर्थ होगा। इस प्रकार के शब्द जो वाच्यार्थ को छोड़कर भिन्न अर्थ रखते हैं, वे **लाक्षणिक** शब्द कहलाते हैं और लक्षणा से प्रकट होने वाले अर्थों को **लक्ष्यार्थ** कहते हैं।

चौथे वाक्य 'सन्ध्या हो गई' के विभिन्न अर्थ निकलते हैं। खेत जोतनेवाला किसान 'सन्ध्या' शब्द को सुनकर यह अर्थ लगाता है कि अब अन्धकार होने वाला है। दफ़्तर में काम करने वाला क्लर्क इससे छुट्टी का आशय लेता है। खेलने वाले 'घर जाने' का अर्थ ग्रहण करते हैं। पथिक 'विश्राम' का अर्थ निकालता है। इस प्रकार एक ही शब्द से अनेक अर्थों का बोध होता है। शब्द के ये अर्थ न तो वाच्यार्थ हैं और न लक्ष्यार्थ ही; वरन् इनसे विभिन्न हैं। इन अर्थों को **'व्यंगार्थ'** और ऐसे शब्दों को **व्यञ्जक** अथवा **व्यङ्ग्यात्मक** शब्द कहते हैं।

'शब्द' के उपर्युक्त तीन भेद—वाचक, लाक्षणिक और व्यंजक शब्द की तीन शक्तियों—अभिधा, लक्षणा और व्यंजना पर अवलम्बित हैं :—

अभिधा—शब्द की जिस शक्ति द्वारा वाच्यार्थ अथवा सांकेतिक अर्थ का बोध होता है; जैसे, **लड़के** पढ़ने जाते हैं; घड़े का

पानी ठंडा है; प्रभा ने **दीपक** जलाया। इन वाक्यों में लड़के, पानी और दीपक शब्द 'अभिधा' द्वारा साधारण अर्थों का बोध कराते हैं। अतएव 'अभिधा' द्वारा जिस अर्थ का बोध होता है, उसे **वाच्यार्थ** और ऐसे शब्द को **वाचक** कहते हैं।

(२) **लक्षणा**– शब्द की जिस शक्ति द्वारा लक्ष्यार्थ—अर्थात् शब्द के साधारण और प्रचलित अर्थ के अतिरिक्त उससे सम्बन्ध रखने वाले अन्य विशेष अर्थ का बोध होता हो, जैसे, इस **गांव** में बड़ा मेल है। **भारतवर्ष** वीर है। **पैसा** कमाना बड़ा कठिन है। इन वाक्यों में गाँव, भारतवर्ष और पैसा से क्रमशः गांव वाले, भारतवासी और धन के अर्थों का बोध होता है। अतएव लक्षणा शक्ति द्वारा जिस अर्थ का बोध होता है उसे '**लक्ष्यार्थ**' और ऐसे शब्द '**लाक्षणिक**' कहलाते हैं।

(३)– वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ को छोड़कर किसी अन्य अर्थ को प्रकट करने वाली शक्ति **व्यंजना** कहलाती है। व्यंजना द्वारा शब्द का जो अर्थ ग्रहण किया जाता है वह **व्यंग्यार्थ** और ऐसे शब्दों को **व्यंजक** कहते हैं; जैसे, 'उसका घर गंगा-तट पर है'। 'गंगातट' से पवित्रता की व्यंजना होती है।

अभ्यास

(१) शब्दों में कितने प्रकार की शक्तियां होती हैं? व्यंजना द्वारा शब्द का कौनसा अर्थ ग्रहण किया जाता है?

(२) निम्न वाक्यों का लक्ष्यार्थ बतलाओ:—

(क) मैंने 'तुलसीदास' का अध्ययन किया है। (ख) यह स्त्री गाय नहीं, सर्पिणी है। (ग) आजकल लोह युग है। (घ) हाथ-पैर बचाकर काम करो। (ङ) सभा-भवन में गांधी-टोपी का बोलबाला था। (च) आप पर साम्यवाद का रंग चढ़ रहा है।

(३) नीचे लिखे प्रसंगों में व्यंग्यार्थ बतलाओ:—

(क) सीता जी ने रामचन्द्र जी से बन जाने के अवसर पर कहा, "मैं सुकुमार नाथ बन जोगू। तुमहिं उचित तप मोकहँ भोगू।" (ख) लक्ष्मण जी परशुराम जी से कहते हैं—"यहां कुम्हड़ बतियाँ कोंउ नाहीं, जो तर्जनी देखि डर जाहीं।" (२) "कहेउ लषण मुनि शील तुम्हारा, को नहिं जान विदित संसारा।" (ग) आपने उसका घर नीलाम कराके बड़ा उपकार किया है। (घ) आपके मुख से साधुता टपकती है।

व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द-भेद

शब्दों का निर्माण प्रायः कई अक्षरों के योग से होता है। कुछ शब्द एक या दो शब्दों के योग से बनते हैं; जैसे, जलज—जल + ज के मेल से बना है। अनेक शब्द शब्दार्थ से विभिन्न विशेष अर्थ में प्रयुक्त किये जाते हैं। अतएव व्युत्पत्ति अथवा बनावट के आधार पर शब्दों के तीन भेद होते हैं:—

(१) **रूढ़ि**—ऐसे शब्द जो किसी अन्य शब्द या शब्दों से नहीं बनते और खण्ड करने पर उनके कुछ भी अर्थ नहीं निकलते, जैसे, गाय, कुरसी आदि। 'कुरसी' शब्द तीन अक्षरों से मिलकर बना है। अलग-अलग इन अक्षरों के कुछ भी अर्थ नहीं हैं; किन्तु तीनों के मिलाने से एक शब्द बनता है जो बैठने के लिए प्रयुक्त होने

वाले पदार्थ का बोध कराता है। रूढ़ि शब्दों का एक विशेष अर्थ ही प्रसिद्ध होता है।

(२) **यौगिक**--वे शब्द हैं जो दूसरे शब्दों के योग से बनते हैं और उस अर्थ का बोध कराते हैं, जो उन शब्दों से निकलता है; जैसे—महाशय (महा आशय); भूपति (भू + पति); दिनेश (दिन + ईश) सुधांशु, भूपाल आदि। यहाँ 'महाशय' का अर्थ उदार पुरुष और 'भूपति' का पृथ्वी का स्वामी, राजा है। यौगिक शब्दों का अभीष्ट अर्थ दोनों शब्दों को मिलाकर ही निकलता है, अलग अलग शब्दों से नहीं।

हिन्दुस्तानी और फारसी के अनेक यौगिक शब्द में हिन्दी में प्रचलित हैं जैसे–घुड़सवार, कलमदान, बेहया, खैरख्वाह, पानदान, गंठ-कटा। कुछ यौगिक शब्द विभिन्न भाषाओं के शब्दों के मेल से बने हैं; जैसे—अछूतोद्धार। इसमें 'अछूत' हिन्दी का और 'उद्धार' संस्कृत का शब्द है। इसी प्रकार पलंग पोश, फलदार, और रसदार में पलंग, फल और रस हिन्दी के और दार तथा पोश फारसी के शब्द हैं। सिनेमा, टिकट आदि अँग्रेजी शब्दों के साथ हिन्दी शब्द 'घर' जोड़कर सिनेमाघर, टिकटघर बनाए गये हैं। अरबी शब्द किताब' के साथ 'घर' जोड़कर 'किताबघर' बना है इस प्रकार अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। जन साधारण के मुद्रालय में ऐसे शब्द नित्य प्रति ढलते रहते हैं।

(३) **योगरूढ़ि**—वे यौगिक शब्द हैं जो सामान्य अर्थ से भिन्न अन्य विशेष अर्थ बतलावें; जैसे, जलद (जल + द)–जल देने वाला जल देने वाले से नदी, समुद्र तालाब, कूप सभी का अर्थ निकलता है

किन्तु 'जलद' इन सभी अर्थों को न बताकर एक ही अर्थ 'मेघ' का बोध कराता है। इसी प्रकार पंकज, जलज, चौपाया, त्रिफला (हड़, बहेड़ा, आँवला), चारपाई, निशाचर, पंजाब, हिमालय, गणेश, पीताम्बर, अंगरखा, चक्र आदि शब्द भी योगरूढ़ि हैं।

भाषा के शब्द प्रायः प्रारम्भिक दशा में यौगिक होते हैं; किन्तु कुछ समय पश्चात् योगरूढ़ि हो जाते हैं; जैसे—मृगराज। 'मृग' साधारण वन्य जन्तुओं के अर्थ में प्रयुक्त होता था। धीरे धीरे 'मृग' का अर्थ 'हरिण' लिया जाने लगा; किन्तु 'मृगराज' का अर्थ अब भी 'सिंह' किया जाता है। योगरूढ़ि शब्दों में यौगिक और रूढ़ि दोनों शक्तियाँ सम्मिलित रहती हैं।

अभ्यास

(१) व्युत्पत्ति के अनुसार शब्दों के कितने भेद हैं ?

(२) यौगिक शब्द किस प्रकार बनते हैं ? यौगिक और योगरूढ़ि शब्दों में क्या भेद है ?

(३) निम्न लिखित शब्द व्युत्पत्ति के अनुसार कैसे शब्द हैं:—
लेखनी, गंगालाभ, स्वर्गवास, महाराज, श्रीगणेश, भागीरथी, चन्द्रचूड़, कामचोर, मनभाया, मुँहमांगा, कुम्भकार, दियासलाई, लम्बोदर, पयोद, वंशीधर, चक्रपाणि।

(४) निम्न लिखित शब्दों से यौगिक अथवा योग रूढ़ि शब्द बनाओ:—
प्रातः, पीत, बालक, भक्त, मुनि।

पर्याय वाचक शब्द

हिन्दी भाषा में एक शब्द के लिए समान अर्थ में दूसरे शब्द प्रयुक्त किये जाते हैं, उनको 'पर्याय वाचक' शब्द कहते हैं।

पर्याय वाची शब्दों से अर्थ और व्याख्या करने में बड़ी सरलता होती है। फिर भी इनके प्रयोग में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है; क्योंकि समानार्थक होने पर भी कुछ शब्दों के भावों तथा व्यावहारिक प्रयोगों में अन्तर हो गया है; जैसे, 'गृह' के पर्यायवाचक शब्द हैं—गेह, भवन, मन्दिर, आगार आदि। किन्तु 'भवन' से 'राजा का निवास-स्थान'; 'मन्दिर' से 'देव-स्थान' और 'आगार' से 'समूह' के अर्थों का बोध होता है। इसी प्रकार 'जल' के पर्यायवाचक शब्द हैं—वारि, पय, जीवन, अमृत आदि; किन्तु 'वारि' से 'मेघों' से बरसा हुआ जल, 'पय' से 'पवित्र जल' 'अमृत' से 'अमर करने वाली वस्तु' और 'जीवन' से 'प्राण' के अर्थों का बोध होता है। अतएव पर्यायवाची शब्दों के सूक्ष्म विभेद समझकर ही उचित स्थान पर उनका प्रयोग वांछनीय है। कुछ पर्यायवाची शब्द आगे दिये जाते हैं :—

अग्नि—वह्नि, पावक, अनल, कृशानु, ज्वलन, दहन, हुताशन।

असुर—दनुज, दानव, दैत्य, राक्षस, निशाचर, रजनीचर, तमीचर, मनुजाद।

अश्व—हय, बाजि, तुरङ्ग, घोटक, घोड़ा, रविसुत।

आंख—लोचन, दृग, नयन, नेत्र, चक्षु, चख, दीदा, अक्षि।

आकाश—अभ्र, अम्बर, अन्तरिक्ष, गगन, अनन्त, नभ, व्योम।

आनन्द—मोद, प्रमोद, प्रमद, हर्ष, आमोद, सुख, उल्लास, आह्लाद।

इच्छा—कांक्षा, स्पृहा, ईहा, वाञ्छा, लिप्सा, मनोरथ, अभिलाषा, लालसा, कामना।

इन्द्र—पुरन्दर, शचीपति, देवपति, सुरपति, मघवा, मेघपति, सुरेन्द्र, सुरेश, सहस्राक्ष, अमरपति, शक्र, जिष्णु, पुरहूत, विबुधेश, वज्रधर, देवराज, पाकशासन।

कपड़ा—वस्त्र, दुकूल, पट, वसन, अम्बर, चीर।

कमल—उत्पल, कुवलय इन्दीवर, पद्म, नलिन, सरोज, अरविन्द, शतपत्र, तामरस, सरसीरुह, राजीव, कंज, अम्भोज, पंकज अब्ज, पाथोज, पुण्डरीक, वारिज आदि।

कल्पवृक्ष—सुरतरु, हरि-चन्दन, मन्दार, पारिजात, देववृक्ष।

कामदेव--मदन, मनोभव, पंचशर, मार, स्मर, मनसिज, मन्मथ, मीनकेतु, कन्दर्प, अनङ्ग, रतिपति, मनोज, मयन, मकरध्वज।

किरण--कर, मरीचि, मयूख, अंशु, रश्मि।

गणेश--विनायक, विघ्नराज, एकदन्त, गजानन, गणाधि, लम्बोदर, विघ्न-विनाशक, गणपति, गौरीसुत।

गंगा—विष्णुपदी, जाह्नवी, भागीरथी, देवनदी, मन्दाकिनी, सुरसरिता, त्रिपथगा, सुर-सरि, जह्नु-सुता।

गृह—गेह, निकेतन, सदन, भवन, आगार, मन्दिर, धाम, ओक, आवास, सद्म, आलय।

चन्द्र--चन्द्रमा, हिमांशु, इन्दु, विधु, निशापति, सोम, मृगांक, कलानिधि, सुधांशु, शशि, राकेश, राकापति, निशाकर मयंक, दधिसुत, क्षपानाथ, द्विजराज, रजनीपति।

जल--वारि, सलिल, पय, अमृत, जीवन, उदक, तोय, अम्बु।

जमुना--सूर्य-तनया, सूर्य-सुता, कालिन्दी, अर्कजा, तरणिजा।

दुःख--पीड़ा, व्यथा, कष्ट, क्लेश, वेदना, यातना, खेद, विषाद, संताप, क्षोभ, यंत्रणा, संकट, शोक।

दुर्गा--उमा, गौरी, शिवा, भवानी, पार्वती, गिरिजा।

देव--देवता, अमर, विबुध, सुर, आदित्य, निर्जर, गीर्वाण।

देह--कलेवर, वपु, शरीर, विग्रह, काय, तनु, मूर्ति।

नदी-सरिता, तटिनी, निर्झरिणी, तरङ्गिणी, आपगा, जलमाला।

पति-आर्यपुत्र, भर्ता, बल्लभ, ईश, स्वामी, बालम, भरतार, जीवनाधार।

पत्नि-भार्या, दारा, सहगामिनी, गृहिणी, बधू, प्राणप्रिया, बल्लभा, वामा।

पवन-वायु, समीर, हवा, मारुत, प्रकम्पन, मारुत, अनिल, समीरण, प्रभंजन, प्राण।

पर्वत-भूधर, गिरि, महीधर, शैल, अचल, नग, भूमिधर, अद्रि मेरु, कुधर।

पक्षी-द्विज अंडज, विहग, खग, विहङ्ग, शकुन्त, शकुनि, पतङ्ग।

पण्डित--विद्वान्, सुधी, कोविद, बुध, धीर, मनीषी, प्राज्ञ।

पृथ्वी-भू, भूमि अचला, धरा, धरित्री. धरणी, वसुधा, वसुन्धरा, उर्वी, अवनि, मेदिनी, मही, पुहुमि, धात्री, जगती, क्षोणी, क्षिति, वसुमति।

फूल-कुसुम, पुष्प, प्रसून, सुमन, लतान्त, मंजरी, पुहुप, फल-पिता

बाण-तीर, तोमर, विशिख, शिलीमुख, नाराच, शर, इषु।

बिजली-विद्युत्, चपला, चंचला, सौदामिनि, तड़ित, दामिनी।

ब्रह्मा--पितामह, स्वयंभू, चतुरानन, विरञ्चि, विधना, विधि विधाता।

ब्राह्मण--द्विज, भूदेव, विप्र, अग्रजन्मा, महिसुर, महिदेव, भूसुर।

भ्रमर--मधुकर, भृङ्ग, षटपद, अलि, द्विरेफ, शिलीमुख, चंचरीक, मधुप।

महादेव--शंकर, शंभु, काम-रिपु, त्रिपुरारि, उमापति, भूतनाथ, पशुपति, नील-कण्ठ, शिव, रुद्र, चन्द्रमौलि, वृषकेतु, गिरीश, महेश, चन्द्रशेखर, उमेश, गंगाधर आदि।

मेघ—अभ्र, धाराधर, घन, जलधर, वारिद, बादल, नीरद, वारिधर, पयोद, पयोधर, अम्बुद।

मोर--नीलकंठ, केकी, शिखी, सारङ्ग, अहिभक्षी, कलापी, मयूर, शिखण्डी।

यम--धर्मराज, कृतान्त, सूर्यपुत्र, अन्तक, जीवन पति।

लक्ष्मी--जगदम्बा, हरि प्रिया, कमला, इन्दिरा, पद्मा, श्री, समुद्रजा, क्षीरोद तनया।

वज्र—अशनि, कुलिश, पवि, गाज, शम्ब, निर्घात।

विष्णु—चतुर्भुज, केशव, मुरारि, गरुड़ध्वज, कृष्ण, गोविन्द, विश्वम्भर, दामोदर, मुकुन्द, पद्मनाभि, पीताम्बर।

समुद्र—सिन्धु, सागर, अम्बुनिधि, जल-निधि, उदधि, वारीश, नदीश, नीरनिधि, जलधि, अर्णव, पयोनिधि, रत्नाकर।

सरस्वती—ब्राह्मी, भारती, गिरा, भाषा, वाचा, वाणी, शारदा, इला, वीणापाणि, वागीश, वागेश्वरी।

सर्प-अहि, भुजंग, विषधर, व्याल, फणी, उरग, पन्नग, नाग।

सिंह—केहरि, हरि, केशरी, व्याघ्र, शार्दूल, मृगराज, मृगारि, पंचमुख, मृगेन्द्र, पुण्डरीक।

सूर्य—सूर, आदित्य, दिवाकर, भास्कर, दिनकर, प्रभाकर, अर्क, मार्तण्ड, रवि, तरणि, भानु, सहस्रांशु, अंशुमाली, हंस ।

सोना—कंचन, हेम, सुवर्ण, हाटक, स्वर्ण, जातरूप, कलधौत, हिरण्य, चामीकर, कनक, अष्टापद ।

स्वर्ग—सुरलोक, नाक, दिव्यलोक, देवलोक, द्यौ ।

स्त्री—वनिता, नारी, अबला, ललना, कान्ता, रमणी, कलत्र, महिला, अंगना, कामिनी, प्रमदा ।

हाथी—द्विरद, कुञ्जर, इभ, गज, कुम्भीकरी, नागहरि, मतंग, वारण, सिन्धुर, करी, वितुण्ड, कलभ, सुण्डाल ।

विपरीतार्थक अथवा विलोम शब्द

(ANTONYMS)

भाषा-सौष्ठव की वृद्धि और भावों की ठीक-ठीक अभिव्यक्ति के लिये लेखक प्रतिकूल अर्थ प्रकट करने वाले विलोम शब्दों का एक साथ प्रयोग करते हैं; जैसे, गांधी जी के निधन से धनी-निर्धन, नर-नारी, बाल-वृद्ध सभी शोक-आगर में निमग्न हैं। इसी प्रकार कुछ विलोम शब्द प्रायः जोड़े में प्रयुक्त होते हैं; जैसे, दुख-सुख, आय-व्यय, मरना-जीना, हँसना-जीना, हँसना-रोना, पाप-पुण्य, हिताहित, शुभाशुभ, धरमाधर्म, शीतोष्ण, अहर्निश, न्यूनाधिक, सत्यासत्य, भद्राभद्र, आवागमन आदि। शब्दों के विपरीतार्थ कई प्रकार से प्रयुक्त होते हैं :—

(१) **विभिन्न शब्दों द्वारा**—अंधकार-प्रकाश । आदि-अन्त । अमृत-विष । उदय-अस्त । आकाश-पाताल । आय-व्यय । आरम्भ-अन्त । आवाहन-विसर्जन । उत्थान-पतन ।

ऊँच--नीच । कोमल--कठोर । गुरु–लघु । गुण--दोष । थोड़ा--बहुत । धनी–दरिद्र । ज्येष्ठ–कनिष्ठ । जड़--चेतन । जीवन–मरण । निद्रा–जागरण । प्राचीन–नवीन, अर्वाचीन । पंडित–मूर्ख । परकीय–स्वकीय । स्वार्थ–परमार्थ । पाप–पुण्य । पाश्चात्य–पौर्वात्य । बन्धन–मोक्ष । बद्ध–मुक्त । भला–बुरा । मिलन–विछोह । योगी–भोगी । लाभ–हानि । विधि–निषेध । सृष्टि–प्रलय । स्थूल– सूक्ष्म । स्वर्ग–नरक । सुख–दुख । स्तुति–निन्दा । स्थावर–जंगम । सफल–विफल । शीत–उष्ण । उदार–कृपण । सत्य–मिथ्या ।

(२) अ, आ, अन जोड़ने से :—

आचार–अनाचार । आदि–अनादि । आतप–अनातप । आतुर–अनातुर । ईश–अनीश । उचित–अनुचित । एक–अनेक ऐश्वर्य–अनैश्वर्य । कल्याण–अकल्याण । चर–अचर । ज्ञान–अज्ञान । न्याय–अन्याय । मङ्गल–अमङ्गल । शान्ति–अशान्ति । स्वस्थ–अस्वस्थ ।

(३) उपसर्ग जोड़ने से :—

क्रय–विक्रय । कीर्ति–अपकीर्ति । मान–अपमान । यश–अपयश । राग–विराग । योग–वियोग । घात–प्रतिघात । वाद–प्रतिवाद । जय–पराजय । सम–विषम । श्वास–उच्छ्वास ।

(४) विभिन्न उपसर्ग जोड़ने से :—

सुलभ–दुर्लभ । सजीव–निर्जीव । संयोग–वियोग । सुगम–दुर्गम । स्वतन्त्र–परतन्त्र । आदान–प्रदान । अतिवृष्टि–अनावृष्टि । अनुकूल– प्रतिकूल । अनुराग–विराग । अनुग्रह–विग्रह । उत्कर्ष–अपकर्ष । उत्कृष्ट–निकृष्ट । उन्नति–अवनति । आकर्षण–विकर्षण । उपकार–अपकार । सश्लेषण–विश्लेषण । साकार–निराकार ।

(५) लिङ्ग भेद से :—

राजा–रानी। नर–नारी । माता–पिता । पुरुष–स्त्री ।

अनेकार्थक शब्द

अनेकार्थक वे शब्द हैं जो विभिन्न प्रसंगों से अनेक अर्थों में प्रयुक्त होते हैं। ऐसे शब्दों का अर्थ भी प्रसंग या सन्दर्भ से ग्रहण किया जाता है ; जैसे, यशोदा श्रीकृष्ण को अपने अङ्क में लेकर अत्यधिक सुख पाती थीं ; नौ का अङ्क लिखो ; इस नाटक में कितने अङ्क हैं। नीचे कुछ अनेकार्थी शब्द दिये जाते हैं:—

अग्र--आगे, पहले, अगुवा, मुख्य, सिरा, श्रेष्ठ ।

अज--ब्रह्मा, शिव, दशरथ के पिता, बकरा, मेष राशि ।

अनन्त--विष्णु, सर्पों का राजा, ब्रह्म, आकाश, अविनाशी, अन्त हीन ।

अन्तर--आकाश, मध्य, छिद्र, अवसर, अवधि, अन्तर्द्धान ।

अपवाद--कलङ्क, किसी नियम का न लगना ।

अमृत--जल, पारा, दूध, अन्न, स्वर्ण, गिलोय ।

अम्बर--वस्त्र, आकाश ।

अर्क--सूर्य, मदार का पौधा, इन्द्र, स्फटिक ।

अरुण--सूर्य, रक्तवर्ण ।

अर्थ--धन, मतलब, कारण ।

अक्ष--पहिया, धुरी, आँख, रथ, सर्प, ज्ञान, मण्डल, आत्मा

अक्षर--वर्ण, नाश रहित, सत्य, मोक्ष, आकाश, आत्मार्थ ।

अङ्क--गोद, संख्या, चिह्न, परिच्छेद, नाटक के अङ्क ।

आत्मा--स्वरूप, ब्रह्म, सूर्य, अग्नि, परमात्मा ।

उत्तर--उत्तर दिशा, जवाब।

कनक—सोना, धतूरा।

कर—किरण, हाथ, सूँड़, टैक्स।

गुण—स्वभाव, रस्सी, गुन, कौशल, शील।

ग्रहण—लेना, पकड़ना, सूर्य-चन्द्र पर राहु-केतु का प्रभाव।

घन—बादल, घना, गणित में किसी संख्या को उसी संख्या से दो बार गुणा करना।

जलज—कमल, मोती, मछली, चन्द्रमा, शंख।

जीवन—जल, प्राण।

तात—पिता, भाई, मित्र, बड़ा, पूज्य, प्यारा, गर्म।

तारा—नक्षत्र, आँख की पुतली, देवी विशेष।

दण्ड—दंडा, सजा।

द्विज—ब्राह्मण, चन्द्रमा, पक्षी, दाँत।

दल—समूह, पत्ता, पक्ष।

धात्री—माता, आँवला, पृथ्वी, उपमाता।

नाग—सर्प, हाथी, नाग केशर।

निदेश—अनुमति, आदेश, कथा, शिक्षा, उक्ति।

निमित्त—हेतु, शकुन, संयोग।

पक्ष—पन्द्रह दिन का समय (पखवारा), ओर, पंख, बल, सहायक।

पतंग—पक्षी, सूर्य, चंग, पतिंगा।

पद—पैर, स्थान, उद्यम, रक्षा, अधिकार, चौथा भाग, छन्द का एक चरण, उपाधि।

पत्र—पत्ता, पंख, चिट्ठी, पुस्तक का एक पन्ना ।

पात्र—बरतन, स्थान ।

पृष्ठ—पीठ, कागज की पीठ ।

पोत—नाव, लड़का, स्वभाव, वस्त्र, गुड़िया ।

फल—परिणाम, वृक्ष का फल, तलवार या चाकू का फल ।

बल—शक्ति, सेना, बलराम ।

बलि—बलिदान, उपहार, कर, राजा बलि ।

भूत—प्राणी, प्रेत, बीता समय, पंचभूत (पृथ्वी, जल, पवन, आकाश, अग्नि)

मधु—शहद, शराब ।

मान—सम्मान, अभिमान, तोल, नाप ।

मित्र—सूर्य, दोस्त ।

मन्त्र—सलाह, देवता का मन्त्र ।

मुद्रा—रुपया-पैसा, मोहर, शारीरिक अंगों को विशेष रीति से रखना ।

योग—योग शास्त्र, मिलना ।

रस—सार, आनन्द, स्वाद, जल, प्रेम, पारा, पौधे का दूध ।

राग—प्रेम, रंग, गाने का राग ।

विग्रह—लड़ाई, शरीर ।

विधि—ब्रह्मा, ईश्वर, भाग्य, रीति ।

वर्ण—अक्षर, रंग, चारवर्ण ।

वर--वरदान, दूल्हा, श्रेष्ठ।

शक्ति--बल, सांग (अस्त्र) दुर्गा, आदि शक्तियाँ।

सत्व--एक गुण, जीव।

सारंग--राग विशेष, मोर, सर्प, मेघ, हरिण, पानी, पपीहा, हाथी, राजहंस, कोयल, कामदेव, वर्ण, धनुष, भौंरा, मधुमक्खी, कपूर, कमल, भूषण, फूल, छत्र, रात, दीपक, स्त्री, शंख, वस्त्र।

सैंधव--नमक, घोड़ा,।

हरि--विष्णु, सूर्य, इन्द्र, सिंह, वानर, सर्प, घोड़ा, मोर, हंस, कोयल, पहाड़, गज, कामदेव, तोता, आग।

समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द

हिन्दी भाषा के कुछ शब्द उच्चारण में समानता रखते हुए भी रूप में विभिन्न होते हैं। उनके अर्थों में भी अन्तर होता है। कुछ ऐसे शब्द नीचे दिये जाते हैं:—

अन्त = समाप्त; **अन्त्य** = नीच, अन्त में होने वाला। **अंस** = कन्धा; **अंश** = हिस्सा। **अर्घ** = जल दान, मूल्य; **अर्घ्य** = पूजा-द्रव्य। **अनल** = आग; **अनिल** = हवा। **अन्न** = अनाज; **अन्य** = दूसरा। **अनिष्ट** = बुराई; **अनिष्ठ** = निष्ठा रहित। **अवलम्ब** = सहारा; **अविलम्ब** = शीघ्र। **असित** = काला; **अशित** = खाया हुआ। **अपभोग** = बुरा व्यवहार; **उपभोग** = आस्वादन। **अपेक्षा** = इच्छा; **उपेक्षा** = निरादर। **अणु** = कण,

छोटे से छोटा भाग, **अनु**=पीछे। **अशक्त** = शक्तिहीन; **आसक्त** =मोहित। **अभिहित**=उक्त, माननीय; **अविहित** = अनुचित। **अभिज्ञ**=जानने वाला; **अनभिज्ञ** = अनजान। **अभिराम** = सुन्दर; **अविराम** = लगातार। **आकर**=खान; **आकार** = सूरत, शक्ल। **आदि**=आरम्भ, वग़ैरह; **आधि**=पीड़ा। **आहुत** =यज्ञ में डाला गया, **आहूत**=निमन्त्रित। **इत** = इस ओर; **ईति**=आपत्ति। **उद्धत** = उद्दण्ड; **उद्यत** = तैयार। **कुल** = वंश; **कूल**=किनारा। **कृत**=किया हुआ; **क्रीत**=खरीदा हुआ; **कृत्य**=काम। **केशर** = कुंकुम; **केसर**=अयाल। **गड़ना** = चुभना; **गणना**=गिनती। **गृह** = घर; **ग्रह**=सूर्य, चन्द्र आदि नवग्रह। **जलज**=कमल; **जलद** = बादल। **चिर** = दीर्घ; **चीर** = वस्त्र। **छत्र**=छतरी; **क्षत्र**=क्षत्रिय। **छात्र**=विद्यार्थी; **क्षात्र** = क्षत्रिय का। **जरा**= बुढ़ापा; **ज़रा**=थोड़ा। **तरणी**=नौका; **तरणि**=सूर्य; **तरुणी**=जवान स्त्री। **तरंग**=लहर; **तुरंग**=घोड़ा। **दार**=पत्नी; **द्वार**=दरवाजा। **दारा**=पत्नी; **द्वारा**=हेतु। **दिन**= दिवस; **दीन**= निर्धन। **द्विप**=हाथी; **द्वीप**=टापू; **दीप**=दीपक। **दूत**=सम्वाददाता; **द्यूत**= जुआ। **देश**=राज्य; **द्वेष**=शत्रुता। **नाक**=स्वर्ग; **नाग**=सर्प, हाथी। **नीर**=पानी; **नीड़**=घोंसला। **नारी**= स्त्री; **नाड़ी**=नबज। **परुष**=कठोर; **पुरुष**=मनुष्य। **प्रकार** =रीति; **प्राकार**=किले की चहार दीवारी। **प्रतिहार**= द्वारपाल;

प्रत्याहार=निवारण, संक्षेप । **प्रथा**=रीति-रस्म; **पृथा**=कुन्ती । **प्रसाद**=प्रसन्नता; **प्रासाद**=महल । **प्रमाण**=सबूत; **प्रणाम**=नमस्कार । **परिणाम**=नतीजा, फल; **परिमाण**=मात्रा, **परमाणु**=कण मात्र । **प्राकृत**=भाषा विशेष; **प्रकृत**=यथार्थ; **प्रकृति**=स्वभाव । **प्रहार**=मारना; **परिहार**=त्यागना । **प्रवाह**=बहाव; **परवाह**=चिन्ता । **पाणि**=हाथ; **पानी**=जल । **बलि**=बलिदान; **बली**=वीर । **भवन**=घर; **भुवन**=संसार । **मूल**=जड़; **मूल्य**=कीमत । **मनोज**=कामदेव; **मनोज्ञ**=सुन्दर । **मात्र**=केवल; **मातृ**=माता । **यक्ष**=बन-देवता; **अक्ष**=धुरी । **लक्ष**=लाख; **लक्ष्य**=निशाना । **वसन**=कपड़ा; **व्यसन**=बुरी आदत । **विष**=जहर; **विस**=कमल-नाल । **वृन्त**=डण्ठल, घेरा; **वृन्द**=समूह । **शङ्कर**=महादेव; **सङ्कर**=मिला हुआ । **शमी**=वृक्ष विशेष; **समीर**=हवा । **शर**=वाण । **सर**=तालाब । **शकल**=खण्ड; **सकल**=पूरा । **शारद**=शरद ऋतु सम्बन्धी; **सारद**=सरस्वती । **शूर**=वीर; **सूर**=सूर्य; अन्धा । **शुल्क**=फीस; **शुक्ल**=स्वच्छ । **सर्ग**=सृष्टि; **स्वर्ग**=देवलोक । **शम**=नियम, शान्ति; **सम**=समान । **स्वपच**=जो स्वयं पचजावे; **श्वपच**=चाण्डाल । **सुत**=पुत्र; **सूत**=सारथी । **सुमन**=फूल; **स्वमन**=अपना मन; **सुअन**=पुत्र । **सिल**=पीसने का पत्थर; **शील**=नम्र स्वभाव; **सील**=सीलन ।

शुचि=पवित्र; सूचि=सुई। हय=घोड़ा; है=वर्तमान काल की क्रिया। ह्रद=सरोवर; हृद=हृदय।

लिङ्ग भेद से भिन्नार्थक शब्द

कल--(हि० पु०)=पिछला दिन। (फा० स्त्री०)=यंत्र, चैन, आराम।

कान--(हि० पु०)= सुनना, श्रवणेन्द्रिय। (हि० स्त्री०)= लज्जा, मर्यादा।

चूड़ा--(हि० पु०) चावल का चवैना, सिर का गहना। (सं० स्त्री०)=चुटिया।

टीका--(हि० पु०) = माथे का आभूषण, तिलक, भेंट। (सं० स्त्री०) =टिप्पनी, अर्थ।

दई--(हि० पु०)=देवता, भाग्य। (हि० स्त्री०)=ईश्वरता, देना।

बल--(सं० पु०)=शक्ति, सेना। (हि० स्त्री०)=ऐंठ मरोड़।

बाट--(हि० स्त्री०)=बटवारा; (सं० स्त्री०) मार्ग, इन्तजार

वात--(हि० पु०)=वायुरोग; (सं० स्त्री०)=हवा। बात= बोली, प्रश्न, कारण।

बान--(हि० पु०)=तीर, मूंज की रस्सी। (हि० स्त्री०) =स्वभाव, आदत।

बाल--(हि० पु०)=केश, लड़का। (हि० स्त्री०)=सोलह वर्ष की लड़की, अनाज की फुनगी।

वास--(हि० पु०)=स्थान, डेरा, (हि० स्त्री०) गन्ध।

हि०=हिन्दी; सं०=संस्कृत; फा०=फारसी; पु०=पुल्लिंग स्त्री=स्त्रीलिंग।

एकार्थक शब्दों में प्रभेद

अनेक शब्दों में सामान्य दृष्टि से कोई भेद प्रतीत नहीं होता, किन्तु उनके अर्थ में विभिन्नता होती है। ऐसे कुछ शब्द नीचे दिये जाते हैं:—

अस्त्र शस्त्र

प्रायः 'हथियार' के अर्थ में दोनों शब्दों का प्रयोग होता है; किन्तु 'अस्त्र' वह हथियार है जो किसी यंत्र द्वारा चलाया जाता है या फेंक कर मारा जाता है; जैसे, बम्ब, तोप, धनुष आदि। 'शस्त्र' वह हथियार है जो पास-पास अथवा आमने सामने खड़े होकर हाथ से चलाए जाते हैं; जैसे, गदा, लाठी, तलवार आदि।

आधि व्याधि

आधि—मानसिक पीड़ा ; जैसे, चिन्ता, क्लेश।

व्याधि—शारीरिक पीड़ा; जैसे, ज्वर, खांसी।

अमूल्य, दुर्मूल्य, बहुमूल्य

अमूल्य—मूल्य देने पर भी जो वस्तु दुर्लभ हो, वह अमूल्य है; जैसे, विद्या, यश।

दुर्मूल्य—जिस वस्तु का मूल्य इतना अधिक हो कि उचित न कहा जा सके; जैसे, बंगाल में अकाल के समय चावल 'दुर्मूल्य' था।

बहुमूल्य—जिस वस्तु का मूल्य अधिक हो, किन्तु उचित हो; जैसे, हीरा 'बहुमूल्य' पदार्थ है।

असामान्य, असाधारण, अलौकिक और अस्वाभाविक

असामान्य—जो गुण विशेष सभी प्राणियों में समान रूप से न पाया जाय; जैसे, असामान्य सौन्दर्य। असामान्य वस्तु इन्द्रियों द्वारा देखी या जानी जा सकती है।

असाधारण—वह गुण या प्रतिभा जो किसी व्यक्ति-विशेष में औरों से अधिक हों; जैसे, श्री राजगोपालाचार्य की राजनीतिक दूरदर्शिता असाधारण है।

अलौकिक—जो वस्तु या गुण, लोक या समाज में प्रायः न देखा जाता हो; जैसे, अभिमन्यु की वीरता।

अस्वाभाविक—जो बात सृष्टि या प्रकृति के नियमों के विरुद्ध हो।

अज्ञान, अनभिज्ञ

अज्ञान—जिसमें साधारण रूप से समझने-सोचने की बुद्धि न हो; जैसे, अज्ञान-वश मनुष्य अनेक कुकर्म करता है।

अनभिज्ञ—जिसे किसी बात की जानकारी न हो या समझने का अवसर न मिला हो; जैसे, मैं फारसी भाषा से सर्वथा अनभिज्ञ हूँ।

अज्ञ, मूर्ख, मूढ़

अज्ञ—वह मनुष्य जिसे कुछ ज्ञान न हो।

मूर्ख—वह मनुष्य जिसमें किसी बात के समझने की शक्ति न हो या किसी असत्य बात को ही ठीक समझ कर उसी पर अड़े रहने वाला व्यक्ति।

मूढ़—महामूर्ख ; जैसे, यह मनुष्य कितना मूढ़ है कि जिस डाल पर बैठा है उसी को काट रहा है।

अवस्था, आयु, वय

अवस्था—जन्म से अब तक का जीवन काल, उम्र ; जैसे, उस की अवस्था २५ वर्ष की है।

आयु—समस्त जीवन का समय—जैसे, महात्मा जी ने आयु भर साम्प्रदायिक एकता के लिये प्रयत्न किया।

वय—पूर्ण आयु की समाप्ति—८० वर्ष की वय में उसने प्राण त्याग किये।

अभिज्ञता, बहुदर्शिता, विज्ञता, पारंगत

अभिज्ञता—किसी विषय की सामान्य जानकारी,, जैसे, केवल अध्ययन करने से किसी विषय की अभिज्ञता होती है, व्यावहारिक ज्ञान नहीं।

बहुदर्शिता—किसी विषय को अनेक दृष्टियों से समझने की शक्ति ; जैसे, श्री राजगोपालाचार्य की बहुदर्शिता ने अनेक राजनीतिक समस्याओं को सुलझाया है।

विज्ञता—किसी विषय की विशेष जानकारी ; जैसे, उसकी धर्मशास्त्र की विज्ञता ने उपस्थित नर-नारियों को चकित कर दिया।

पारंगत—किसी विषय का पूर्ण ज्ञान रखने वाला, जैसे, वह बिजली के कार्य में पारंगत है।

अहंकार, अभिमान, दर्प, गर्व, गौरव, दम्भ, मान, मद

अहंकार—कुछ थोड़ा होने पर भी अपने को अधिक समझना ; जैसे, उसे अपने धन का बड़ा अहंकार है।

अभिमान--दूसरों को तुच्छ और अपने को प्रतिष्ठा में बड़ा समझना ; जैसे, उसने अभिमान-वश मुझ से बातें तक न कीं। इस शब्द का प्रयोग अच्छे भाव में भी होता है; जैसे, हमको अपनी प्राचीन संस्कृति पर अभिमान है।

दर्प—किसी नियम के विपरीत अनुचित व्यवहार; जैसे, चार्ल्स द्वितीय ने सभा भवन में प्रजा के प्रतिनिधियों को पकड़ना चाहा, यह उसका दर्प था।

गर्व—कुछ योग्यता या गुण—रूप, यौवन, कुल, विद्या और धन आदि होने के कारण अभिमान करना; जैसे, रावण को अपने बल का बड़ा गर्व था।

गौरव--अपने महत्व का ठीक-ठीक ज्ञान होना ; जैसे, देश की रक्षा के लिये प्राण देना क्षत्रियों के लिये गौरव पूर्ण था।

दंभ--अपना गौरव दिखलाने या कोई स्वार्थ साधने के लिये बाहरी आडम्बर रचना और अभिमान करना। जैसे, उसे ज्योतिष का अधिक ज्ञान नहीं, जनता को ठगने के लिये ही उसने यह दम्भ फैलाया है।

मान--पूज्य भाव रखना अथवा किसी गुण विशेष के कारण अपने को पूज्य समझना; जैसे, हमको गुणवानों का मान करना चाहिये।

मद—धन-धान्य की प्राप्ति से अत्यधिक अभिमान; जैसे, "प्रभुता पाइ काहि मद नाहीं।"

अर्पित, प्रदान

अर्पित---पूज्य अथवा बड़ों को छोटों की ओर से कोई वस्तु भेंट करना; जैसे, मेरी सेवायें देश के लिये अर्पित हैं।

प्रदान--बड़ों के द्वारा छोटों को देना ; जैसे गुरुजी ने यह पुस्तक पारितोषिक में प्रदान की है।

आचार, व्यवहार

आचार--साधारण आचरण (चाल-चलन) की रीति; जैसे, तुम्हारे आचार से सभी प्रसन्न हैं।

व्यवहार--किसी विशेष व्यक्ति के साथ किया हुआ वर्त्ताव; जैसे, वह ग्राहकों के साथ रूखा व्यवहार करता है।

आकार, रूप

आकार--किसी वस्तु की आकृति जिसमें लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई या मोटाई शामिल की जावे ; जैसे, इस घड़े का आकार गोल है।

रूप--शारीरिक गठन। रूप में आकार, रंग और बनावट भी शामिल है।

आशंका, शंका, भय, आतंक, त्रास

आशङ्का--भविष्य में होने वाली किसी अमङ्गल सूचक घटना की सम्भावना से उत्पन्न होने वाले क्लेश-पूर्ण भाव; जैसे, यदि काश्मीर को सहायता न दी जाती तो यह आशङ्का थी कि आक्रमणकारी उसका पूर्ण विनाश कर देते।

शङ्का--अमंगल सूचक सन्देह-मिश्रित, भाव, जैसे, आपकी शङ्का निर्मूल है, वह युद्ध में अवश्य विजय प्राप्त करेगा।

ईर्ष्या, द्वेष, स्पर्द्धा, डाह

ईर्ष्या--दूसरों की उन्नति देखकर बिना कारण जलना, जैसे; राम सेवक सदैव प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होता है; इसलिये कृष्ण मूर्ति उससे ईर्ष्या करता है।

द्वेष–दूसरों से सकारण घृणा या शत्रुता करना, जैसे; फौजदारी के मामले में मैंने मोहन के विरुद्ध गवाही दी, तभी से वह मुझसे द्वेष करता है।

स्पर्द्धा–दूसरों की बढ़ती देखकर स्वयं भी उन्नति करने की इच्छा; जैसे, एक मील की दौड़ में देवेन्द्र और भीम की स्पर्द्धा है, देखें कौन विजय-पदक प्राप्त करता है ?

डाह–ईर्ष्या—जनित जलन; जैसे, जब मोहन किसी प्रकार देवेन्द्र को नीचा न दिखा सका, तब डाह के कारण उसने उसकी पुस्तकें नष्ट कर दीं।

उपकरण, उपादान

उपकरण–किसी कार्य को सिद्ध करने की सामग्री या साधन; सुख आत्मा का विषय है; सांसारिक उपकरणों से क्या लाभ ?

उपादान–किसी पदार्थ को बनाने वाली सामग्री; जैसे, मूर्ति-निर्माण के लिये केवल दो उपादानों की आवश्यकता पड़ती है—छेनी और प्रस्तर खंड।

भय, आतङ्क, त्रास

भय–कारण उपस्थित होने पर मानसिक संकोच; जैसे, डाकुओं के भय से अब कोई इस मार्ग से यात्रा नहीं करता।

आतङ्क–अत्यन्त व्यापक भय जिससे शरीर और मन की उप-चेतना जाती रहे; जैसे, रज़ाकारों ने सीमान्त गाँवों में आतङ्क फैला दिया है।

त्रास–किसी अनजान या जाने हुए व्यक्ति से कष्ट मिलने की भावना। त्रास से व्याकुलता होती है; जैसे, रावण के त्रास से मुनियों को दक्षिणावर्त्त छोड़ना पड़ा।

आनन्द, आल्हाद, आमोद, उल्लास

आनन्द–स्थायी और गम्भीर होता है। प्रायः धर्म के विचार से लोगों को आनन्द होता है; जैसे, शिवजी के दर्शन करके उनको परम आनन्द हुआ है।

आल्हाद–क्षणिक और तीव्र होता है। यह मानसिक कारणों से होता है। आल्हाद में मनुष्य अपने भाव भी प्रकट करता है; जैसे, 'सुमन जी' के कविता-पाठ से सबको परम आल्हाद हुआ।

आमोद–इन्द्रियों की तृप्ति से आमोद होता है। यह शारीरिक और मानसिक दोनों कारणों से होता है ; जैसे, वह आमोद-प्रमोद में जीवन व्यतीत करता है।

उल्लास–विजय के अनुभव से उल्लास होता है; जैसे, काश्मीर की विजय से भारतीय सेना में उल्लास छा गया।

उत्साह, उद्योग, उद्यम, प्रयास, यत्न, चेष्टा

उत्साह–वह प्रेरक शक्ति जिससे काम करने की इच्छा उत्पन्न हो; जैसे, बाबर का भाषण सुनकर सेना में नवीन उत्साह का संचार हुआ।

उद्योग–तन-मन से किसी कार्य को करने का प्रयत्न; जैसे, वह बिजली का काम सीखने में पूर्ण उद्योग कर रहा है।

उद्यम–लग कर उद्योग करना; जैसे, सब को धन कमाने के लिये उद्यम करना चाहिये।

प्रयास–कष्ट का अनुभव किये बिना कोई शारीरिक कार्य करना; जैसे, श्रीकृष्ण जी ने बिना प्रयास के ही गोवर्द्धन पर्वत उठा लिया।

चेष्टा--किसी कार्य को करने की इच्छा; जैसे, उसको कुमार्ग से हटाने की मेरी सारी चेष्टाएँ विफल हुईं।

यत्न—तन-मन से किया हुआ श्रम; जैसे, मैं गांधी-फंड के लिये धन एकत्रित करने का यत्न कर रहा हूं।

कृपा, दया, करुणा

कृपा—छोटों की सहायता करना कृपा है; जैसे, आपकी कृपा से लड़की के हाथ पीले हो गए।

दया—दूसरों के दुख दूर करने की स्वाभाविक इच्छा; जैसे, अश्वारोही की हीन दशा देख कर ममता को बड़ी दया आई।

करुणा—दुखी मनुष्य का दुःख दूर करने की आकुलता। करुणा से हृदय द्रवित हो जाता है।जैसे, मिथ्या की दुर्दशा देखकर कवित्व का हृदय करुणा से पिघल गया। पड़ौसी के बाल बच्चों को भूखा मरते देख मेरा हृदय करुणा से भर गया।

कष्ट, क्लेश, दुःख, खेद, वेदना, व्यथा, यातना, यन्त्रणा

कष्ट—शरीर और मन दोनों की असुविधा; जैसे विधवाओं को अनेक कष्ट झेलने पड़ते हैं।

क्लेश—शरीर सम्बन्धी कष्ट; जैसे, भीषण गर्मी के कारण भोजन बनाने में अति क्लेश रहता है।

दुःख—किसी वस्तु के अभाव से चित्त की व्याकुलता; जैसे, उसके कठोर व्यवहार से मुझे बड़ा दुःख हुआ।

खेद—किसी भूल या त्रुटि पर पश्चाताप जिससे मन की प्रसन्नता

कम हो जावे; जैसे, मुझे खेद है कि मैं उत्सव में सम्मिलित न हो सका।

शोक–किसी वस्तु के हाथ से निकल जाने से हृदय और चित्त की व्याकुलता; जैसे, गांधीजी की मृत्यु से सारा देश शोक-सागर में निमग्न हो गया।

वेदना–दुख की अनुभूति; जैसे, सुख-भोग होने पर भी विधवा ममता का जीवन वेदना पूर्ण था।

व्यथा–किसी हानि या आघात से उत्पन्न दुःख; जैसे, चोरी के अपराध में भाई को कारावास का दंड मिलने पर मोहन को बड़ी व्यथा पहुँची।

यातना–आघात करने से उत्पन्न पीड़ा; जैसे, राजनीतिक नेताओं को पुलिस ने अनेक यातनाएँ दीं।

यंत्रणा–असह्य दुःख के भार का अनुभव होना; जैसे, धूप में नंगे पैर चलने से बड़ी यंत्रणा हुई।

तट, तीर, पुलिन, सैकत

तट–नदी, तालाब, समुद्र अथवा किसी जलाशय के निकट कुछ दूर तक फैली हुई ज़मीन; जैसे, यमुना-तट पर साधुओं की झोंपड़ियाँ हैं।

तीर–पानी को छूती हुई जमीन; जैसे, उसने तीर पर खड़े हो कर जल में अपनी परछाईं देखी।

पुलिन–किनारे के पास पानी से भीगी ज़मीन।

सैकत–नदी के पास की वह जमीन जहाँ बालू हो।

निंदा, अपवाद, कलङ्क, अपयश

निन्दा–किसी पर ऐसा दोष लगाना जो वास्तव में सत्य हो; भरत ने चित्रकूट की सभा में कैकेयी की निन्दा की।

अपवाद–मिथ्या दोष; जैसे, सज्जन मनुष्य अपवादों की तनिक भी चिन्ता नहीं करते।

कलङ्क—निन्दा या अपवाद के कारण किसी को दोष लग जाना; जैसे, कुसंगति के कारण ही उस पर चोरी का कलङ्क लगा है।

अपयश—स्थायी दोष लग जाना; जैसे, उसे धन तो क्या मिला, वरन् भाई को विष देने का अपयश लग गया।

प्रेम, स्नेह, प्रणय, वात्सल्य

प्रेम—समान दशा या आयुवालों की स्वाभाविक प्रीति; जैसे, मोहन अपने मित्रों से प्रेम करता था।

स्नेह—बड़ों की छोटों पर प्रीति; जैसे, महाराज युधिष्ठिर सभी भाइयों से स्नेह करते थे।

प्रणय—स्त्री के प्रति प्रेम या दाम्पत्य स्नेह; जैसे, राम और सीता का प्रणय आदर्श था।

वात्सल्य—माता-पिता का सन्तान के प्रति प्रेम। गुरुजनों का छोटों पर पुत्रवत् स्नेह भी 'वात्सल्य' है; जैसे, गुरु का शिष्य के प्रति प्रेम।

प्रार्थना, निवेदन

प्रार्थना—बड़ों से अपनी किसी कार्य की स्वीकृति के लिये नम्रता से कहना; जैसे, मोहन ने प्रधानाध्यापक से छुट्टी के लिये प्रार्थना की।

निवेदन—नम्र शब्दों में कोई कथन; जैसे, मैंने गुरुजी से निवेदन किया कि विद्यार्थियों ने प्रश्नों के उत्तर नहीं लिखे हैं।

प्रणाम, नमस्कार, नमस्ते, अभिवादन

प्रणाम—पूज्य गुरुजनों के प्रति किया जाता है; जैसे, हम सबने गुरुजी को प्रणाम किया।

नमस्कार—समान अवस्था वालों में किया जाता है; जैसे, मेरे सहपाठियों ने मुझको नमस्कार किया।

नमस्ते—बड़े, छोटे और समान अवस्था वालों के प्रति किया जाता है।

अभिवादन—सम्माननीय व्यक्ति को हाथ जोड़कर; खड़े होकर अथवा कुछ निवेदन करते हुए अभिनन्दन करना; जैसे सभापति के पधारने पर सदस्यों ने खड़े होकर अभिवादन किया।

बन्धु, सुहृद, मित्र, सखा

बन्धु—जिसका वियोग सहन न किया जा सके अथवा जिसके बिना काम ही न चले; जैसे, श्रीकृष्ण जैसे बन्धु की मृत्यु से शोकातुर हो बलराम उनके मृत शरीर को छः मास तक पीठ पर लादे घूमते रहे।

सुहृद—बदले की आशा न करके सदा उपकार करने वाला और सहमत रहने वाला साथी, जैसे, भारतेन्दुजी भट्ट जी के सुहृद थे।

मित्र—प्रेमी और सहायक; जैसे सच्चा मित्र दुःख-सुख में साथ देता है।

सखा–बचपन का साथी; जैसे, सुदामा श्री कृष्ण के बचपन के सखा थे। वास्तव में सखा से तात्पर्य ऐसे मित्र से है जो सुख-दुःख में साथ दे, पथ-प्रदर्शन करे और 'एक प्राण दो शरीर' की कोटि का हो; जैसे, कर्ण दुर्योधन का सखा था।

भ्रम, प्रमाद

भ्रम–असावधानी या अज्ञान से कोई भूल करना; जैसे, अनेक विद्यार्थी तद्भव शब्दों में, भ्रम से तत्सम समझ कर, संस्कृत के प्रत्यय जोड़ते हैं; जैसे—अचानक से अचानकता।

प्रमाद–जान बूझ कर किसी कार्य को न करना अथवा परवाह न करने से जो भूल हो; जैसे, मैं प्रमाद वश आपके पत्र का उत्तर शीघ्र न दे सका।

मंत्रणा, परामर्श, युक्ति

मंत्रणा–गुप्त रूप से किसी कार्य को निश्चय करना; जैसे, मंत्रि-परिषद् ने मंत्रणा करके काश्मीर को सहायता भेजी थी।

परामर्श–ऐसा मत जिसको सोच समझ कर और भविष्य का अनुमान लगाकर दिया जावे; जैसे, वम्बई के प्रधान मंत्री हैदराबाद के सम्बन्ध में परामर्श लेने के लिये कल सरदार पटेल से मिले।

युक्ति–एक से अधिक मनुष्य परस्पर में जिस कार्य के लिये परामर्श करके कर्तव्य-निर्धारण करें; जैसे, काश्मीर के झगड़े को शान्ति पूर्ण युक्ति से सुलझाने में सुरक्षा-परिषद पूर्ण असफल हुई।

मुनि, ऋषि

दोनों ही शब्द 'तपस्वी' के अर्थ में प्रयुक्त किये जाते हैं; किन्तु वेदों को देखने वाले 'ऋषि' और मनन करने वाले—अर्थात् वेदों के तत्व के विचारक 'मुनि' कहलाते हैं।

महिला, पत्नी, स्त्री

महिला—सम्भ्रान्त कुल की स्त्री, चाहे वह विवाहिता, क्वारी या विधवा हो; जैसे, गांधी-फंड में अनेक महिलाओं ने दान दिया।

पत्नी—विवाहिता स्त्री। पति के नाम के साथ ही 'पत्नी' शब्द का प्रयोग होता है; जैसे, पं० जवाहरलाल की पत्नी, कमला नेहरू का देहावसान क्षय रोग से हुआ था।

स्त्री (नारी)—यह व्यापक शब्द है; प्रत्येक औरत के लिये प्रयुक्त होता है, जैसे, श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित ने स्त्रियों की सभा में आज व्याख्यान दिया।

राजा, सम्राट

राजा—किसी देश के स्वामी या अधिपति को कहते हैं। 'सम्राट' शाहंशाह या राजाओं का राजा होता है; जैसे, सम्राट हर्ष ने अनेक राजाओं को आमंत्रित किया।

विलाप, प्रलाप

विलाप–शोक के कारण रोते हुए मनोव्यथा को प्रकट करने की क्रिया; जैसे महाराज हरिश्चन्द्र ने देखा कि विलाप करती हुई एक स्त्री श्मशान में आई।

प्रलाप–खेद के कारण टूटे फूटे अस्पष्ट शब्दों में चित्तकी व्याकुलता

प्रकट करना। विक्षिप्त अवस्था या उन्माद में भी प्रलाप किया जाता है; जैसे, वह प्रलाप कर रहा था, "म··मे··· र··· रा···घर···नष्ट हो गया।" 'प्रलापोनर्थकं वचः' के अनुसार अनर्थक वचन को प्रलाप कहते हैं; जैसे, किसी के व्यर्थ बकने पर उसका कार्य प्रलाप मात्र है।

श्रद्धा, भक्ति

श्रद्धा--किसी विशेष गुण के कारण बड़ों के प्रति स्वयं उत्पन्न आदर एवं प्रेम; जैसे श्री. मैथिलीशरण गुप्त में हिन्दी-प्रेमियों की अपूर्व श्रद्धा है।

भक्ति--देवता या गुरुजनों के प्रति प्रेम; जैसे, महाराणा प्रताप की देश भक्ति में किसको सन्देह हो सकता है?

"धर्म की रसात्मक अनुभूति का नाम भक्ति है"--शुक्ल।

सेवा, शुश्रूषा

सेवा--निस्वार्थ भाव से गुरुजनों का कोई कार्य करना; जैसे, हमें माता-पिता की सेवा करना चाहिये।

शुश्रूषा--दुःखी अथवा बीमार की परिचर्या; जैसे, अस्पताल में रोगियों की शुश्रूषा नर्सें करती हैं।

सन्तोष, तृप्ति

सन्तोष--जो कुछ मिल जावे या अपने पास हो उसी को पर्याप्त समझकर अधिक की कामना न करना; जैसे, सन्तोष ही सुख का साधन है।

तृप्ति--इच्छाओं की क्षणिक पूर्ति। प्रायः इन्द्रियों के लिये तृप्ति का प्रयोग होता है; जैसे, उसका सुमधुर गान सुनकर अत्यन्त तृप्ति हुई।

संकोच, लज्जा, ग्लानि, व्रीड़ा

संकोच—नियम विरुद्ध किसी कार्य को करने में या किसी बात को प्रकाशित करने में हिचकिचाहट; जैसे, सेठजी ने मुझसे अनेक अपशब्द कहे; किन्तु संकोच वश मैं चुप ही रहा।

लज्जा—कोई अपराध होने पर या स्वभाव से दूसरों के सामने प्रकट न होने का प्रयत्न अथवा निन्दा या भय के कारण कोई कार्य न करना; जैसे अपराध प्रमाणित होने पर वह लज्जा से गड़ गया। स्त्रियों के शीलोचित व्यवहार को भी लज्जा कहते हैं; जैसे, लज्जा नारियों का आभूषण है।

ग्लानि—कोई अपराध होने पर मन में पश्चाताप होना; जैसे, कैकेयी के हृदय में ऐसी ग्लानि थी कि वह चित्रकूट में किसी से मिलने में भी सकुचाती थी।

व्रीड़ा—वह वाधा जो लोगों के सामने किसी अच्छे काम के प्रकट करने में उत्पन्न हो, अथवा वह लज्जा जो विना कारण ही दोष लगने पर उत्पन्न हो; जैसे, झूठा कहे जाने पर मोहन को अत्यन्त व्रीड़ा हुई।

स्वतंत्रता, स्वच्छन्दता, उच्छृंखलता

स्वतंत्रता—नियम और अनुशासन के साथ किसी कार्य को करने की आज़ादी; जैसे, वाणी और लेखनी की स्वतंत्रता वांछनीय है।

स्वच्छन्दता—अंकुश रहित स्वतंत्रता; जैसे, वायु स्वछचन्दता से बह रही थी।

उच्छृंखलता—उद्दंडता के साथ मनमाना व्यवहार; जैसे, उच्छृंखलता के कारण वह पाठशाला से निकाल दिया गया।

क्षमता, प्रभाव

क्षमता--किसी कार्य के करने की सामर्थ्य; जैसे, क्या इस बालक में पहाड़ पर चढ़ने की क्षमता नहीं है ?

प्रभाव--दूसरों पर धन, बल, मान या ज्ञान की शक्ति से पड़ने वाला असर; जैसे, पूज्य मालवीय जी के व्याख्यान का ऐसा प्रभाव पड़ा कि जनता ने सहस्रों रुपये हिन्दू-विश्वविद्यालय के लिये दान में दिये।

क्षोभ, विषाद

क्षोभ--इच्छित वस्तु के प्राप्त न होने पर अथवा अनिष्ट होने पर क्रोध और झुंझलाहट; जैसे, संयोगिताहरण से जयचन्द को बड़ा क्षोभ हुआ।

विषाद–वह तीव्र दुख जिसमें मनुष्य को कर्त्तव्याकर्त्तव्य का ज्ञान नहीं रहता; जैसे, पंजाब के हत्याकाण्ड से भारतीय नेताओं को बड़ा विषाद हुआ है।

हत्या, वध, आलभन, बलिदान, हिंसा, नाश

हत्या–छिपकर किसी को मारना; जैसे, अजात शत्रु अपने पिता, बिम्बसार की हत्या करके सिंहासन पर बैठा।

वध–प्रकट रूप से मारना; जैसे, औरंगजेब ने दारा का वध कराया।

आलभन–धोखे से मारना, काट-काट कर मारना; जैसे, मेवाड़ के राजकुमार अपने बहनोई के आलभन से परम धाम पहुँचे ?

बलिदान–किसी पवित्र उद्देश्य से प्राण देना; जैसे, भारतवर्ष के

स्वातन्त्र्य-युद्ध में सहस्रों वीरों ने सर्वस्व बलिदान कर दिया।

हिंसा–क्रोध या ईर्ष्या से किसी को मारना या कष्ट देना; जैसे, जीव हिंसा करना घोर पाप है।

नाश–एक से अधिक को नष्ट करना; जैसे, आक्रमण कारियों ने काश्मीर के अनेक समृद्ध नगरों का नाश कर दिया है।

त्रुटि, ह्रास

त्रुटि–किसी काम को करने में भूल या कमी; जैसे, इस लेख में अनेक त्रुटियाँ हैं।

ह्रास–बने बनाये काम के किसी अंग का बिगाड़; जैसे, औरंगजेब के पश्चात् मुगल साम्राज्य का ह्रास होने लगा।

अभ्यास

१—निम्न शब्दों के अर्थ-भेद बताओ और वाक्यों में प्रयोग करो:—

ज्ञान, विज्ञान; आधि, व्याधि; श्रान्त; क्लान्त; उपेक्षा, असावधानी; सहसा, हठात्, अकस्मात्; आयास, प्रयास; क्रन्दन, रोदन; वेदना, व्याकुलता, सहानुभूति; आराधना, पूजा; रुचि, स्वाद; द्वेष, ईर्ष्या; संतोष, शान्ति; ज्ञान, बुद्धि।

२—दीर्घाकार शब्दों के भिन्नार्थक स्पष्ट करो:—

(अ) जैसी करनी वैसी भरनी, आज किया **कल** पावेगा।
कभी न **कल** पावेगा वह जो औरों को **कलपावेगा**॥

(आ) **दई दई** क्यों करत है, **दई दई** सु कबूलि।

(इ) तीन **बेर** खातीं सों तो तीन **बेर** खाती हैं।

(उ) वह नित **कलपाता** है मुझे कान्त होके।
जिस बिन **कलपाता** है नहीं प्राण मेरा।

३—निम्न लिखित समोच्चारित शब्दों का वाक्य में प्रयोग करोः—

शंकर, संकर; शारद, सारद; मनोज, मनोज्ञ; परुष, पुरुष; लक्ष, लक्ष्य; शश, शशि; अनिष्ठ, अनिष्ट; ।

४—**रेखांकित** शब्द किन अनेकार्थों में प्रयुक्त किये गये हैं ?

(अ) **सारंग** ने **सारंग** गह्यो, **सारंग** बोल्यो आय ।
जो **सारंग** मुख ते कहे, **सारंग** निकरयो जाय ॥

(आ) **दधिसुतनी दधिसुत** लखो, **दधिसुत** लियो खाय ।
जो **दधिसुत** आवे नहीं, विधि के वाहन जाय ॥

(इ) रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून ।
पानी गये न ऊबरे, मोती मानुष चून ॥

(उ) **पुरुष पुरातन** की बधू, क्यों न चंचला होय ।

(ऊ) मूरति मधुर मनोहर देखी, मनहु **विदेह विदेह** विसेखी ।

(ए) **नवजीवन दो घनश्याम** हमें ।

(ऐ) बलिहारी नृप कूप की **गुण** बिनु बूँद न होय ।

५—हरि, नाग, पत्र, पतंग शब्द किन-किन अर्थों में प्रयुक्त होते हैं ।

६—निम्न लिखित शब्दों के विपरीतार्थक शब्द बताओ :—

पाश्चात्य, भद्र, वियोग, ऐश्वर्य अनुग्रह ।

७—इन शब्दों के पर्याय वाचक शब्द बताओ :—

कमल, चन्द्र, पृथ्वी, सिंह, हाथी ।

विशेष अर्थों में प्रयुक्त होने वाले संख्यावाचक शब्द

एक—ईश्वर।

दो—फल (जीव और ब्रह्म)

तीनकाण्ड—ज्ञान, कर्म, उपासना।

तीन अग्नि—वड़वाग्नि, जठराग्नि, दावाग्नि।

तीन नित्य पदार्थ—जीव, ब्रह्म, प्रकृति।

तीन गुण—सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण।

तीनऋण—देव-ऋण, ऋषि (या गुरु) ऋण, पितृ ऋण।

तीन शरीर—सूक्ष्म, स्थूल, कारण रूप।

तीन काल—भूत, भविष्यत्, वर्तमान।

तीन क्रिया—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक।

तीन धर्म के अंग—विद्या, दान, यज्ञ।

तीन दुःख—दैहिक, दैविक, भौतिक।

तीन प्रकार की वायु—शीतल, मन्द, सुगन्ध।

तीन लोक—आकाश, पाताल, मृत्यु लोक।

तीन देव—ब्रह्मा, विष्णु, महेश।

तीन दोष—वात, पित्त, कफ़।

तीन कर्म—सञ्चित, प्रारब्ध, क्रियमाण।

चार वेद—ऋक्, यजु, साम, अथर्व।

चार मुक्ति के प्रकार—सालोक्य, सामीप्य, सायुज्य, सादृश्य।

चार वर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र।

चार आश्रम—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ, संन्यास।

चार युग—सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग।

चार पदार्थ—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ।

चार अवस्थाएँ—जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, समाधि ।

चार योनियाँ—अण्डज, स्वेदज, उद्भिज, जरायज ।

चार नीति के उपाय—साम, दाम, दण्ड, भेद ।

चार सेना के अङ्ग—(चतुरङ्गिणी सेना) हाथी, घोड़े, रथ, पैदल।

चार मत—वैष्णव, शैव, शाक्त, वेदान्त ।

चार प्रकार के भक्त—दुखी जिज्ञासु, अर्थार्थी, ज्ञानी (आर्तो जिज्ञासु रर्थार्थी ज्ञानीच–गीता)

चार प्रमाण—प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान ।

चार रिपु—काम, क्रोध, लोभ, मोह ।

पंच भूत—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु आकाश ।

पांच ज्ञानेन्द्रियाँ—आँख, नाक, कान, जीभ, त्वचा ।

पांच कर्मेन्द्रियाँ—हाथ, पांव, वाणी, मल, और मूत्र के स्थान ।

पंचामृत—दूध, दही घी, शहद, शक्कर ।

पांच विद्यार्थी-लक्षण—काक चेष्टा, वक ध्यान, स्वान-निद्रा, अल्पाहार, गृह त्याग ।

काक चेष्टा वक-ध्यान; शुनो-निद्रः ।
स्वल्पाहारः गृह त्यागः विद्यार्थी पञ्च लक्षणः ॥

पंच यम—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह ।

पाँच कन्याएँ—अहिल्या, द्रौपदी तारा, कुन्ती, मन्दोदरी ।

पाँच शत्रु—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद ।

पाँच पिता—जनक, उपनेता, श्वसुर, अन्नदाता, भयत्राता ।

पाँच माताएँ—जननी, आचार्य पत्नी, सास, राजपत्नी, जन्मभूमि ।

पाँच प्राण—प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान ।

षट रस—कड़ुवा, कसैला, खट्टा, खारी, मीठा, चरपरा ।

छः ऋतुएँ—वसन्त (चैत-वैशाख), ग्रीष्म (ज्येष्ठ आषाढ़), वर्षा (श्रावण-भाद्रपद), शरद (कुआर-कार्तिक) हेमन्त, (अगहनपौष), शिशर (माघ-फागुन)।
छः ईतियाँ—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, शलभ (टीढ़ी), मूषक (चूहे) राजाक्रमण, खग-वृन्द।
छः दर्शन—न्याय, सांख्य, वैशेषिक, योग, वेदान्त, कर्म मीमांसा।
छः वेदाङ्ग—शिक्षा कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, छन्द निरुक्त।
छः दुःख—गर्भ दुःख, जन्म दुःख, रोग, जरा, क्षुधा, मरण।
छः जीव के गुण—इच्छा, द्वेष, ज्ञान, प्रयत्न, सुख दुःख।
(इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं विज्ञानं, चेतना धृतिः यत्नः)
सात द्वीप—जम्बू, शाक, कुश, क्रौञ्च, शाल्मली, गोमेद, पुष्कर।
सात सागर—लवण, इक्षु, दधि, क्षीर, मधु, सुरा, घृत।
सप्त महर्षि—कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, वशिष्ठ यमदग्नि।
सात तल—अतल, वितल, सुतल, महातल, तलातल, रसातल, पाताल।
सात विद्या-नाशक—निद्रा, आलस्य, स्वाद, सुख, काम, चिंता, केलि।
सात सुख—खान, पान, परिधान, ज्ञान, गान, शोभा, संयोग।
सात अंग (राजा के)—मन्त्री, शस्त्र, घोड़ा, हाथी, देश, कोष, गढ़ा
सात रंग—लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, आसमानी, बैंगनी।
अष्ट सिद्धियाँ—अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, आकाम्य, ईशत्व, वशित्व।
अष्ट छाप (व्रज के ८ कवीश्वर)—सूरदास, कृष्ण दास, परमानन्द, कुम्भनदास, चतुर्भुज, नन्ददास, छीतस्वामी, गोविन्द स्वामी।
अष्टाङ्ग प्रणाम—उर, सिर, जानु, भुजा, हस्त, चरण, मन, वचन।

अष्ट धातु—लोहा, जस्ता, सोना, तांबा, चांदी, रांगा, सीसा, पारा।

आठ लक्षण—(मूर्ख स्त्रियों के) "साहस, अनृत, चपलता, माया, भय, अविवेक, अशौच, अदाया।"

आठ विवाह—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस, पैशाच।

आठ वसु—सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, कुबेर, ।

आठ पहर—(१) दिन के चार पहर-पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न, सायँ। (२) रात के चार पहर, प्रदोष, निशीथ, त्रियामा, उषा।

आठ अंग (योग के)—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि।

नव ग्रह—रवि, सोम, मंगल, बुद्ध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु,।

नव निधि—महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व।

नव भक्ति—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य, आत्म-निवेदन।

नव रस—शृंगार, करुणा, हास्य, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, शांत, अद्भुत।

नव रत्न (विक्रम-सभा)—धन्वन्तरि, क्षपणक, अमर सिंह, वैताल, शंकु, वराह मिहर, घटकर्पूर, कालिदास।

नव रत्न (हिन्दी साहित्य)—चन्द्र वरदाई, सूरदास, तुलसी दास, केशव, बिहारीलाल, भूषण, मतिराम, देव, हरिश्चन्द्र।

दस लक्षण (धर्म)—धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध।

धृति क्षमा, दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रह :
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।—मनु०

दस अवतार—मत्स्य, कूर्म, बाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि।

दस दिशाएँ—उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, अध, ऊर्ध्व, नैऋत्य, वायव्य, ईशान और आग्नेय ।

बारह राशियाँ—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ, मीन ।

चौदह विद्याएँ—ब्रह्म ज्ञान, रसायन, स्वर-साधन, वेद पाठ, ज्योतिष, व्याकरण, शस्त्र-विद्या, जल-तरण, वैद्यक, काव्यकला, कोक शास्त्र, अश्वारोहण, समाधान-करण, चौर्य ।

चौदह रत्न--लक्ष्मी, रम्भा, विष, वारुणी, अमृत, शंख, ऐरावत, धनुष, धन्वन्तरि, कामधेनु, कल्प वृक्ष, चन्द्रमा, उच्चैश्रवा । (सूर्य का घोड़ा), मणि ।

"श्री, रम्भा, विष, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज ।
धनवन्तरि, धनु, धेनु, ससि, कल्प वृक्ष, मणि, बाजि" ॥

सोलह कलाएँ—अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका, कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्णा, पूर्णामृता ।

सोलह श्रृंगार--शौच, उबटन, स्नान, केश बन्धन, अंग राग, अंजन, महावर, दन्त रञ्जन, ताम्बूल, वसन, भूषण, सुगन्ध, पुष्पहार, कुंकुम, भाल-तिलक, चिबुक-बिन्दु ।

सोलह संस्कार--गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्त, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्त्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास, अन्त्येष्टि-संस्कार ।

अठारह पुराण--ब्रह्म, पद्म, विष्णु, शिव, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त्त, लिंग, बाराह, स्कन्द, बामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़, ब्राह्मण्य ।

तेतीस देवता--८ वसु, ११ रुद्र, १२ आदित्य, इन्द्र और प्रजापति ।

वाक्यांशों के समानार्थक शब्द

जो सब के अन्तःकरण की बात जानने वाला हो—सर्वान्तर्यामी
जो खाया जा सके—खाद्य।
जो पिया जा सके—पेय।
जो ईश्वर को मानता हो—आस्तिक।
जो ईश्वर को न मानता हो—नास्तिक।
जो निन्दा के योग्य हो—निंद्य।
जो वन्दना के योग्य हो—वन्दनीय।
जो कामना रहित हो—निष्काम।
जिसके टुकड़े न हो सकें—अखण्ड।
जो आगे की सोचता हो—दूरदर्शी।
जो सब को एक सा समझता हो—समदर्शी।
जो सर्वत्र विद्यमान हो—सर्वव्यापी।
जो इन्द्रियों द्वारा न जाना जा सके—अगोचर।
जो बुद्धि द्वारा जाना जा सके—बोधगम्य
जो मनुष्यों के योग्य न हो—अमानुषिक।
जो देवताओं के योग्य हो—दिव्य।
जो नवीन बात जानने का इच्छुक हो—जिज्ञासु।
जो कार्यरूप में न लाया जा सके—अव्यावहारिक।
जो दूसरों के बनाए हुए नियमों का पालन करे—परतन्त्र।
पृथ्वी से बने हुए पदार्थ—पार्थिव।
जो मोल लिया हुआ हो—क्रीत।
जो अपने ही बनाए हुए नियमों पर चले—स्वतन्त्र।
जो किसी नियम का पालन न करे—उच्छृंखल।
जो अपने ही नाम से प्रसिद्ध हो—स्वनामधन्य।

जो प्राप्त न होसके—अप्राप्य ।

जिसका आरम्भ हो न अन्त--अनादि-अनन्त ।

जिसका खडन न हो सके—अकाट्य ।

जिसका विश्वास किया जा सके--विश्वासपात्र, विश्वसनीय ।

जिसकी शका न की गई हो--अप्रत्याशित ।

जिसे सब पसन्द करें—लोकप्रिय ।

आशा से अधिक—आशातीत ।

मांस खाने वाला--मांसाहारी ।

माँस न खाने वाला—निरामिषी ।

एक ही समय में होने वाला—सम सामयिक ।

एक ही आदमी का अधिकार--एकाधिपत्य ।

अनुकरण करने वाला--अनुकरणीय ।

इतिहास के युग से पूर्व का--प्रागैतिहासिक ।

व्यर्थ खर्च करने वाला—अपव्ययी ।

कम खाने वाला--मिताहारी ।

जो जीव चलने वाले हैं--चर ।

जो किसी से न डरे—अभय ।

जो गोद लिया हुआ पुत्र हो—दत्तक ।

जो निजी पुत्र हो--औरस ।

पहाड़ का ऊपरी भाग—अधित्यका ।

पहाड़ का निचला भाग—उपत्यका ।

बालुकामय प्रदेश—मरुस्थल ।

स्त्री के वश में रहने वाला—स्त्रैण ।

मन पसन्द या चुना हुआ—मनोनीत ।

दूसरे के स्थान पर स्थायी रूप से रहने वाला—स्थानापन्न ।

जो व्यक्ति सांसारिक विषय भोग से रहित हो—निरीह ।

जो व्यक्ति पहले किसी पद पर रह चुका हो—भूतपूर्व ।
ऋषि निर्मित अथवा कथित—आर्ष ।
जो व्याकरण का जानने वाला हो—वैयाकरण ।
वह वस्तु जिसमें वाण रखे जाँय—तूणीर ।
जिसका कोई आधार न हो—निराधार ।
बिना वेतन काम करने वाला—अवैतनिक ।
कानून बनाने वाला—व्यवस्थापक ।
किसी के बाद उसका स्थान लेने वाला—उत्तराधिकारी ।
जो मार्ग पार करने में दुखमय प्रतीत हो—दुर्लंध्य ।
जिस शिक्षा में कोई फीस न ली जाय—निःशुल्क ।
जिसका वर्णन न होसके—वर्णनातीत ।
जो चिन्ता से रहित हो—निश्चिन्त ।

अभ्यास

१—निम्न वाक्यांशों के भाव प्रकट करने वाले शब्द लिखो:—
जो कम खर्च करने वाला हो, जिस पर विश्वास न किया जा सके, जो नित्य प्रति घटता हो, जिसके आने की कोई तिथि न हो, बिना किसी विघ्न के परीक्षा की जाँच करने वाला, किसी नवीन वस्तु का बनाना, जिसे अक्षर ज्ञान भी न हो, जिसे केवल अक्षरों का ज्ञान हो, जो जीता न जा सके, सब कुछ जानने वाला, जो नाश को प्राप्त होने वाला हो। वह स्थान जहाँ दूसरों के पढ़ने का प्रबन्ध हो, जो उपकारी का उपकार नहीं मानता, जिस स्त्री का पति जीवित हो।

२—निम्न शब्दों के भावों को वाक्यांशों में लिखो:—
सार्वजनिक, अन्तरराष्ट्रीय, लोकप्रिय, वेतनिक, अग्राह्य, विधवा, आशावादी, द्विरद, द्विज, अमिताहारी, निर्भय, पैतृक, तार्किक ।

शिष्टाचार सूचक शब्द

भारतीय शिष्टाचार के अनुसार प्रत्येक नाम के पूर्व अथवा पश्चात् कुछ आदर सूचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है; जैसे, ब्राह्मणों, वैश्यों, क्षत्रियों, कायस्थों, व्यापारियों के नाम के पूर्व क्रमशः पण्डित, लाला, ठाकुर, मुन्शी, साहू अथवा बाद में शर्मा, गुप्त (बिगड़ा हुआ रूप गुप्ता) वर्मा और साह का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार सरकार, जनता या किसी सस्था द्वारा दी गई पदवियाँ आदर प्रकट करने के लिए नाम के पूर्व अथवा पश्चात् लिखी जाती हैं; जैसे, राय साहब, राय बहादुर, महात्मा, नेताजी, जाति रत्न, कायदे आजम आदि कुछ शब्द नाम के पूर्व न लगाकर आदर सूचक सम्बोधन के रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं; जैसे, भाटों के लिए राय, भंगियों के लिए महतर, हरिजन या बाल्मीकि, चमारों के लिए रैदास या जाटव, कारीगरों के लिए मिस्त्री, जमीदार या ग्राम-पति के लिए मुखिया या नम्बरदार, नीच जातियों के प्रमुख पुरुषों के लिए चौधरी और कुम्हारों के लिए प्रजापति का प्रयोग होता है। यहाँ कुछ आदर सूचक शब्द दिये जाते हैं :—

श्री-श्रीयुत्-प्रत्येक पुरुष के नाम के पूर्व।

श्रीमती-प्रत्येक स्त्री के नाम के पूर्व।

श्रीमान्-सम्पन्न एवं आदरणीय व्यक्तियों के लिए।

सुश्री-शिक्षित महिलाओं के लिए।

सरदार-सिक्खों के लिए।

बाबू-शिक्षित व्यक्तियों के लिए। अब इसका प्रचलन कम हो रहा है।

सूचना—अपने नाम से पूर्व आदर सूचक शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

जवि--जन्तुओं की ध्वनि का बोध कराने वाले शब्द

ऊँट बलबलाता है।
कबूतर गुटर गूँ करता है।
कुत्ता भोंकता है।
कोयल कूकती है।
कुक्कुट (मुर्गा) बांग देता है।
गधा रेंकता है।
गाय रँभाती है।
गीदड़ हाव-हाव करता है।
घोड़ा हिन हिनाता है।
चिड़िया चहचहाती है।
झींगुर झिंगारता है।
तोता टें टें करता है।
पपीहा पी पी (पिउ पिउ) करता है।
बकरी मिमियाती है।
वन्दर खों खों करता है।
बिल्ली म्याऊँ-म्याऊँ करती है।
बुलबुल तराने भरती है।
मक्खी भिन भिनाती है।
मेंढक टर्राता है।
मोर कुहकता है।
साँप फुसकारता है।
सिंह गरजता है।
सूअर घुर घुराता (किकियाता) है।
हाथी चिग्घाड़ता है।

अन्य पदार्थों के ध्वनि-मूलक शब्द

आँखें चौंधियाती हैं।
गाड़ी धड़धड़ाती है।
घड़ी खट-खट करती है।
चारपाई चरचराती है।
जल कलकल शब्द करता है।
जीभ लपलपाती है।
झण्डा फहराता है।
तेल छनछनाता है।
तारे जगमगाते हैं।
नाव डग मगाती हैं।
नाड़ी धड़कन करती है।
पंख फड़फड़ाते हैं।
पत्ता खड़कता है।
बादल गरजते (गड़गड़ करते) हैं।
बिजली चमकती (कौंधियाती) है।
हवा सनसनाती है।

अभ्यास

१—समान अर्थ वाले पाँच शब्द युग्मों को वाक्य में प्रयुक्त करो।

२—भकभक, खड़खड़, गड़गड़, सनसन, टपटप, शब्द किन पदार्थों के ध्वनि सूचक हैं?

३—रिक्त स्थानों की पूर्ति करोः—

(१) तारे.....रहे थे। (२) युद्ध क्षेत्र में हाथियों की.....,रथों की....., घोड़ों की.....से आकाश गूंज रहा था। (३) रात्रि को दूरस्थ प्रदेश में झिल्लियाँ.....रही थीं, श्रृगाल.....कर रहे थे, पवन से पत्ते.....रहे थे, और उलूकों का घोर.....सुनाई दे रहा था।

(४).....महादेवी वर्मा की रहस्यवाद सम्बन्धी रचनाएं अति उत्तम हैं।

(५).....बलदेवसिंह सेना मंत्री हैं।

(६) वसन्त का भी दृश्य कैसा अनुपम होता है! पक्षियों का..... भौंरों की.....और कुसम समूह की.....से मन मोहित हो जाता है।

६—रेखांकित पदों के गूढ़ार्थ बतलाओ:—

(अ) राम राम सब कोइ कहे, दसरथ कहे न कोइ।
एक बार **दसरथ** कहे, कोटि यज्ञ फल होइ॥

(आ) थपि गोसाईं करी मेरी **आठ मध्ये छाप**—सूर।

(इ) अधर धरत हरि के परत, ओठ दीठि पट जोति।
हरित बाँस की बांसुरी **इन्द्र धनुष रंग** होति॥

(ई) अवसरु जानि **सप्त रिषि** आए। तुरतहिं विधि गिरि भवन पठाए।

(४) 'विकार' के अनुसार शब्द भेद

अर्थ के अनुसार वाक्यों में परिवर्तन हो जाता है। शब्दों के इस परिवर्तन को 'विकार' कहते हैं; जैसे, 'वह कल जायेगा' और 'वे कल जायेंगे'। इन दोनों वाक्यों में 'वह' और 'जायेगा' के स्थान में 'वे' और 'जायेंगे' परिवर्तन हो गया है; किन्तु 'कल' शब्द ज्यों का त्यों ही रहा। अतएव 'विकार' के अनुसार शब्दों के दो भेद हैं :—

(१) **विकारी**–वे शब्द हैं जिनके रूप में परिवर्तन हो जाता है; जैसे, मनुष्य, पुस्तक, हाथी, अच्छा, वह, खाता है।

(२) **अविकारी या अव्यय**–वे शब्द हैं जिनके रूप में किसी प्रकार के भी प्रयोग से परिवर्तन नहीं होता; जैसे—किन्तु, यहाँ, नीचे, और, आह आदि।

विकारी शब्द चार प्रकार के होते हैं :—

(१) **संज्ञा** (Noun)–किसी वस्तु के नाम को संज्ञा कहते हैं; जैसे—राम, गंगा, हाथी, पुस्तक, सौन्दर्य।

(२) **सर्वनाम** (Pronoun)–जो शब्द संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त हों; जैसे,—मैं, तू, वे, जो।

सर्वनाम से तात्पर्य है 'सब का नाम'—जो प्रत्येक वस्तु के लिये प्रयोग में आये।

(३) **विशेषण** (Adjective)–संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट करने वाले शब्दों को कहते हैं; जैसे–श्वेत, नीला; पाँच। विशेषण जिस संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट करता

है उसे 'विशेष्य' कहते हैं; जैसे, 'श्वेत पक्षी आकाश में उड़ रहे हैं। यहाँ 'श्वेत' विशेषण और 'पक्षी' विशेष्य है।

(४) **क्रिया** (Verb)–जिन शब्दों से किसी कार्य का करना या होना प्रकट हो; जैसे, जाता है, खाऊँगा आदि।

अव्यय अथवा अविकारी शब्दों के चार भेद हैं :—

(१) **क्रिया विशेषण** (Adverb)–वे शब्द हैं जो क्रिया, की विशेषता बतलायें जैसे—(अ) वह **धीरे धीरे** दौड़ता है। '(दौड़ता है' क्रिया की विशेषता) (आ) वह **अत्यन्त** भला आदमी है। ('भला' विशेषण की विशेषता) (इ) वह **बहुत** तेज़ दौड़ता है। ('तेज़' क्रिया विशेषण की विशेषता)

(२) **सम्बन्ध वाचक** (Preposition)–एक शब्द का वाक्य के दूसरे शब्दों के साथ सम्बन्ध प्रकट करने वाले शब्दों को कहते हैं; जैसे, ऊपर, नीचे, में, तक, निकट आदि।

(३) **समुच्चयबोधक** (Conjuction)–दो शब्दों अथवा वाक्यों को जोड़ने वाले शब्दों को कहते हैं; जैसे, और, अथवा, किन्तु, परन्तु।

(४) **विस्मयादिबोधक** (Interjection)–वे शब्द हैं जो मन के भाव—हर्ष, शोक, आश्चर्य, घृणा आदि को प्रकट करते

(४) 'विकार' के अनुसार शब्द भेद

अर्थ के अनुसार वाक्यों में परिवर्तन हो जाता है। शब्दों के इस परिवर्तन को 'विकार' कहते हैं; जैसे, 'वह कल जायेगा' और 'वे कल जायेंगे'। इन दोनों वाक्यों में 'वह' और 'जायेगा' के स्थान में 'वे' और 'जायेंगे' परिवर्तन हो गया है; किन्तु 'कल' शब्द ज्यों का त्यों ही रहा। अतएव 'विकार' के अनुसार शब्दों के दो भेद हैं :—

(१) **विकारी**–वे शब्द हैं जिनके रूप में परिवर्तन हो जाता है; जैसे, मनुष्य, पुस्तक, हाथी, अच्छा, वह, खाता है।

(२) **अविकारी या अव्यय**–वे शब्द हैं जिनके रूप में किसी प्रकार के भी प्रयोग से परिवर्तन नहीं होता; जैसे—किन्तु, यहाँ, नीचे, और, आह आदि।

विकारी शब्द चार प्रकार के होते हैं :—

(१) **संज्ञा** (Noun)–किसी वस्तु के नाम को संज्ञा कहते हैं; जैसे—राम, गंगा, हाथी, पुस्तक, सौन्दर्य।

(२) **सर्वनाम** (Pronoun)–जो शब्द संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त हों; जैसे,—मैं, तू, वे, जो।

सर्वनाम से तात्पर्य है 'सब का नाम'—जो प्रत्येक वस्तु के लिये प्रयोग में आये।

(३) **विशेषण**(Adjective)–संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट करने वाले शब्दों को कहते हैं; जैसे–श्वेत, नीला; पाँच। विशेषण जिस संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट करता

है उसे 'विशेष्य' कहते हैं; जैसे, 'श्वेत पक्षी आकाश में उड़ रहे हैं। यहाँ 'श्वेत' विशेषण और 'पक्षी' विशेष्य है।

(४) **क्रिया** (Verb)–जिन शब्दों से किसी कार्य का करना या होना प्रकट हो; जैसे, जाता है, खाऊँगा आदि।

अव्यय अथवा अविकारी शब्दों के चार भेद हैं :—

(१) **क्रिया विशेषण** (Adverb)–वे शब्द हैं जो क्रिया, की विशेषता बतलायें जैसे—(अ) वह **धीरे धीरे** दौड़ता है। '(दौड़ता है' क्रिया की विशेषता) (आ) वह **अत्यन्त** भला आदमी है। ('भला' विशेषण की विशेषता) (इ) वह **बहुत** तेज़ दौड़ता है। ('तेज़' क्रिया विशेषण की विशेषता)

(२) **सम्बन्ध वाचक** (Preposition)–एक शब्द का वाक्य के दूसरे शब्दों के साथ सम्बन्ध प्रकट करने वाले शब्दों को कहते हैं; जैसे, ऊपर, नीचे, में, तक, निकट आदि।

(३) **समुच्चयबोधक** (Conjuction)–दो शब्दों अथवा वाक्यों को जोड़ने वाले शब्दों को कहते हैं; जैसे, और, अथवा, किन्तु, परन्तु।

(४) **विस्मयादिबोधक** (Interjection)–वे शब्द हैं जो मन के भाव—हर्ष, शोक, आश्चर्य, घृणा आदि को प्रकट करते

हैं; जैसे-शाबाश, हाय अरे, छी छी।

अर्थ और प्रयोग की दृष्टि से शब्दों का उपर्युक्त वर्गीकरण **शब्द-भेद** (Parts of speech) कहलाता है।

अभ्यास

१—'विकार' अथवा 'परिवर्तन' की दृष्टि से शब्दों के कितने भेद हो सकते हैं ?

२—'विकारी' और 'अविकारी' शब्दों का क्या तात्पर्य हैं ?

३—क्रिया विशेषण और विशेषण में क्या अन्तर है ? उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

संज्ञा

संज्ञा के तीन भेद हैं :—

(१) **व्यक्तिवाचक**—उन शब्दों को कहते हैं जो एक ही पदार्थ अथवा प्राणी के नाम होते हैं, जैसे, आगरा, राम, यमुना।

(२) **जातिवाचक**—जिस संज्ञा से एक जाति के सभी पदार्थों का बोध होता है, जैसे, राम, मनुष्य, नदी।

(३) **भाववाचक**—जिस संज्ञा से किसी पदार्थ के गुण, स्वभाव, दशा या कार्य का बोध होता है, जैसे, पीड़ा, हँसी, बुढ़ापा ज्वर।

प्रकरण से शब्द विभिन्न संज्ञाओं का बोध कराते हैं। जैसे—

१—महात्मा गांधी महापुरुष थे। (व्यक्तिवाचक)

२—भारत में अनेक **गांधी** अवतार लेंगे। (जातिवाचक)

३—इस पुस्तक में कितने **पाठ** हैं ? (जातिवाचक)

४—इस कविता का **पाठ** करो। (भाववाचक)

५—साहसी व्यक्ति **कठिनाई** से नहीं डरते। (भाववाचक)

६—महाराणा प्रताप ने अनेक **कठिनाइयों** का सामना किया। (जातिवाचक)

भाववाचक संज्ञाएँ निम्न व्यापारों का बोध कराती हैं :—

(१) गुणों के; जैसे—मिठास, कठोरता, स्याही। (२) रोगों के—जैसे, ज्वर, ताऊन। (३) मन के भावों के—दया, क्षमा, क्रोध। (४) समय या समय विभागों के—दिन, रात, घण्टा। (५) विद्याओं के—व्याकरण, ज्योतिष, अर्थशास्त्र और (६) कार्य अथवा व्यापार—लड़ाई, स्वप्न, जागरण।

भाववाचक संज्ञाएँ निम्न लिखित शब्दों से बनती हैं :—

(१) जातिवाचक संज्ञाओं से; जैसे—

प्रभु से प्रभुता
बन्धु से बन्धुत्व, बन्धुता
मनुष्य से मनुष्यत्व, मनुष्यता
भ्राता से भ्रातृत्व, भाईचारा
सती से सतीत्व
चोर से चौर्य
शिशु से शैशव
युवा से यौवन
बुड्ढा से बुढ़ापा

मुनि से मौन
कुतुक से कौतुक
सुहृद् से सौहार्द
पंडित से पांडित्य, पंडिताई
सखा से सख्य
मित्र से मैत्री
विद्वान् से विद्वत्ता।
दूत से दौत्य
सुख से सौख्य

(२) **सर्व नाम से;** जैसे--अपना से अपनत्व। मन से ममत्व। निज से निजता।

(३) **विशेषण से;** जैसे--गुरु से गुरुत्व, गुरुता, गरिमा। गौरव। लघु से; जघुत्व, लघुता, लघिमा, लाघव। सुन्दर से सुन्दरता, सौन्दर्य। स्वस्थ से स्वास्थ्य, स्वस्थता। सरल से सरलता, सारल्य। मृदु से मृदुता, मार्दव। स्वतन्त्र से स्वतन्त्रता, स्वातंत्र्य। प्रबल से प्रबलता, प्राबल्य। गर्म से गर्मी। सुजन से सुजनता, सौजन्य। उदार से उदारता, औदार्य।

(४) **क्रिया से;** जैसे—

हँसना,—हँसी
रोना—रुलाई
पढ़ना--पाठ
दौड़ना—दौड़
चलना—चाल
दिखाना—दिखावा
पीटना—पिटाई
मारना--मार
गढ़ना--गढ़ाई, गढ़न्त

(५) **अव्यय से;** जैसे—समान से समानता। दूर से दूरी। समीप से सामीप्य, पृथक से पार्थक्य।

(६) क्रिया का सामान्य रूप भी भाववाचक होता है; जैसे--

हँसना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है। कभी-कभी सामान्य रूप में हेर-फेर भी कर दिया जाता है, जैसे, खाना-पीना से खान-पान, कूदना-फाँदना से कूद-फाँद।

शब्दों के अन्त में निम्नलिखित प्रत्यय लगाकर प्रायः भाववाचक संज्ञाएँ बनाई जाती हैं❀।

(१) ता, त्व, पन; जैसे—सरलता, मनुष्यत्व, बालकपन।
(२) ई; जैसे--लड़ाई, सर्दी, गर्मी।
(३) पा; जैसे—मुटापा, बुढ़ापा।
(४) क; जैसे—ठण्डक।

❀ "ता, ई, त्व, पन, हट, वट। भाववाचक के चिन्ह कहावत।"

(५) त; जैसे—लिखन्त, गढ़न्त।

(६) वट या हट; जैसे—थकावट, घबड़ाहट।

संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले शब्द—

(अ) विशेषण— **बड़ों** का सत्कार करो।

(आ) सर्वनाम—वह अपने घर है।

(इ) क्रिया विशेषण—**आगा पीछा** सोचो।

(ई) विस्मयादि बोधक—क्यों **हाय हाय** करते हो ?

अभ्यास

१—निम्न लिखित शब्द किस प्रकार की संज्ञाएँ हैं:—

(अ) हिमालय, गोदावरी, प्रयाग, कारण, नीति, विज्ञान; सुगन्ध, प्रतिभा मोह, विष, प्राण नीलिमा, चाँदनी, समुद्र।

(ब) प्रीति-रीति सबसे भली, बैर न हित-मित गोत।
रहिमन या ही जनम की, बहुरि न संगति होत।

(२) निम्न लिखित शब्दों से भाववाचक संज्ञा के रूप बनाओ:—
बड़ा, स्वामी, कठोर, पीटना, चलना।

लिंग

संज्ञा के जिस रूप से पुरुष अथवा स्त्री जाति का बोध होता है, उसे लिङ्ग कहते हैं। हिन्दी में लिङ्ग के दो भेद हैं:—

पुल्लिङ्ग—जिससे नर अथवा पुरुष जाति का बोध होता है; जैसे हाथी, घोड़ा, बालक।

स्त्रीलिंग--जिससे मादा अथवा स्त्री जाति का बोध होता है; जैसे, हथिनी, घोड़ी, बालिका।

लिङ्ग भेद के नियम :-

प्रायः सजीव पदार्थों की दो श्रेणियाँ हैं--पुरुष और स्त्री-जाति; किन्तु निर्जीव पदार्थों का लिङ्ग-भेद जानने में कठिनाई प्रतीत होती है। अतएव ऐसे शब्दों में लिङ्ग भेद के निम्न नियमों को ध्यान में रखना आवश्यक है :—

(१) विशेषण, सर्वनाम और क्रिया के आधार पर लिङ्ग-भेद किया जाता है; जैसे—'खटमल काटता है'। "काटता है" क्रिया के आधार पर 'खटमल' पुल्लिंग है।

(२) कुछ शब्दों का प्रयोग--नर और मादा का विचार न करके--सदैव एक विशेष लिङ्ग में होता है; जैसे, चीता, उल्लू, तोता, कौवा, बिच्छू, चींटा, खटमल, मच्छर आदि का प्रयोग पुल्लिङ्ग में और चींटी, मक्खी, मछली, मैना, चील, बतख़, छिपकली का प्रयोग स्त्रीलिंग में होता है।

(३) पहाड़ों के नाम (विन्ध्य, हिमालय), महीनों और दिनों के नाम (चैत्र, बुधवार), पृथ्वी के अतिरिक्त ग्रहों के नाम (सूर्य, चन्द्र); जामुन और खिरनी को छोड़ कर वृक्षों के नाम (आम, पीपल) पुल्लिंग में प्रयुक्त होते हैं।

(४) नदियों (गंगा, यमुना), तिथियों (दौज, तीज), भाषाओं (बंगला, हिन्दी) के नाम स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

(५) हिन्दी के आकारान्त शब्द—जैसे; लोटा, घड़ा—पुल्लिंग में और संस्कृत के आकारान्त शब्द--जैसे; सभा, लता, विद्या आदि—स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

(६) आव, पन, पा, त्व से अन्त होने वाली भाववाचक संज्ञाएँ, जैसे—महत्व, बचपन, लगाव—पुल्लिंग का और ता, ई, श, वट, हट, ईर से अन्त होने वाली भाववाचक संज्ञाएँ, जैसे—मित्रता, चिकनाई, मालिश, मिलावट, घबराहट, तदबीर आदि से स्त्रीलिंग का बोध होता है।

(७) वर्णमाला के समस्त अक्षर, केवल इ, ई, ऋ को छोड़ कर, और समस्त कारकों के नाम पुल्लिंग होते हैं।

(८) अनेक संस्कृत शब्दों के हिन्दी भाषा में प्रयुक्त होने पर लिङ्ग में परिवर्तन हो जाता है; जैसे—अग्नि, वायु, दारा (स्त्री), शपथ, सन्तान आदि संस्कृत में पुल्लिंग हैं; किन्तु हिन्दी में स्त्रीलिंग। इसी प्रकार तारा, देवता आदि सस्कृत में स्त्रीलिंग हैं और हिन्दी में पुल्लिंग। कुछ तत्सम शब्दों के तद्भव हो जाने से भी लिङ्ग में परिवर्तन हो जाता है; जैसे, बाहु, बिन्दु से बने बाँह और बूँद शब्द स्त्रीलिंग हैं।

(९) समान अर्थ के बोधक शब्दों का लिङ्ग भेद उनके नाम और प्रयोग के अनुसार होता है; जैसे—वायु (स्त्रीलिंग), पवन (पुल्लिंग); "सन सन पवन है बह रहा"—(श्री मैथिलीशरण)।

(१०) प्रान्तीय प्रयोगों के कारण कुछ शब्दों का प्रयोग कहीं पुल्लिंग के समान होता है तो अन्यत्र स्त्रीलिंग की भाँति; जैसे, सयुक्त प्रान्त के पूर्वीय भाग और बिहार में "हाथी जाती है;" "दही खट्टी है"; और "हवा चलता है" कहा जाता है। इसी प्रकार पजाब में—"कपास पैदा होती है," "तार आई", "अखबार पढ़ी गई" और "गेहूं बिकी" के प्रयोग होते हैं। विभिन्न भाषाओं में भी लिङ्ग भेद हो जाता है; जैसे, (उर्दू में) शाम

हुआ; चर्चा चलता है। किन्तु स्थानीय बोल चाल के आधार पर लिङ्ग भेद नहीं करना चाहिये। ऐसे शब्दों का लिङ्ग उनके व्यापक व्यवहार के आधार पर ही मानना समुचित है।

पुल्लिङ्ग से स्त्रीलिङ्ग बनाने के कुछ नियम

(१) संस्कृत अकारान्त शब्दों में आ जोड़कर; जैसे–शिव से शिवा।

(२) पदवी वाचक शब्दों में आइन जोड़कर; जैसे, पंडित से पडिताइन, लाला से ललाइन।

(३) अन्त में 'नी' जोड़ने से; जैसे, जाट से जाटिनी।

(४) पशु-पक्षियों में लिङ्ग भेद करने के लिए शब्दों के पूर्व 'नर'–'मादा' का प्रयोग करते हैं; जैसे—नर मोर, मादा मोर।

(५) व्यवसाय सूचक शब्दों के अन्त के 'अ', 'आ', 'ई' के स्थान है में 'इन' का प्रयोग करने से; जैसे, जोलाहा से जोलाहिन, चमार से चमारिन, तेली से तेलिन।

(६) कुछ आकारान्त पुल्लिंग शब्दों में 'आ' का लोप करके 'इया' जोड़ते हैं; जैसे, कुत्ता से कुतिया, बछवा से बछिया।

(७) कहीं कहीं अन्त के 'आ' के स्थान पर 'अ' कर दिया जाता है; जैसे, भैंसा से भैंस।

(८) अकारान्त पुल्लिंग शब्दों में 'ई' जोड़ने से और आकारान्त शब्दों में 'आ' के स्थान में 'ई' जोड़ने से; जैसे, दास से दासी, घोड़ा से घोड़ी।

(९) अनेक शब्द जोड़ों के रूप में प्रयुक्त होते हैं; जैसे, वर-वधू, माता-पिता, पुत्र-कन्या।

(१०) कुछ शब्द स्त्रीलिंग और पुल्लिंग दोनों में प्रयुक्त होते हैं; और वाक्य में प्रयोग द्वारा उनका लिङ्ग भेद किया जाता है; जैसे, शिक्षक, शत्रु, मित्र, भक्त, पशु, प्राणी, पक्षी, परिवार, शिशु, चित्रकार, अतिथि, गवाह, साक्षी, विजयी, लोभी, गुणी आदि। जैसे—मीरा श्रीकृष्ण जी की **भक्त** थीं। वह मेरी **मित्र** है।

अभ्यास

(१) निम्न शब्दों के स्त्रीलिंग रूप बताओः—

राजा, पुरोहित, श्रीमान्, देव, देवर, तपस्वी, चौधरी, सिंह, बैल, मगर, मुर्गा, बाबू, जेठ, क्षत्रिय, अज, फूफा, पाठक, दुबे।

(२) निम्न शब्दों के पुल्लिंग रूप बताओः—

मौसी, पत्नी, तेलिन, सास, मादा, वेश्या, बहिन, वधू, ननद।

(३) धातुओं, रत्नों, भोजन के पदार्थों, वस्त्रों, रोगों, शारीरिक अंगों, पेड़ों, और अन्य दैनिक व्यवहार की और घरेलू वस्तुओं के नाम लिखकर उन्हें पुल्लिंग और स्त्रीलिंग में विभाजित करो।

वचन

वचन (Number) से एक वस्तु अथवा अधिक का बोध होता है। हिन्दी में दो वचन होते हैं:—

१—**एक वचन** (Singular)—संज्ञा के जिस रूप से एक का बोध होता हो ; जैसे, स्त्री, लड़का, गाय।

२—**बहुवचन** (Plural)—संज्ञा के जिस रूप से एक से अधिक का बोध होता हो ; जैसे स्त्रियाँ, लड़के, गायें।

वचन का प्रयोग

(१) 'आदर' या 'श्रद्धा प्रकट करने के लिये एक वचन का प्रयोग बहुवचन की भाँति होता है; जैसे, पिताजी बम्बई **गये** हैं। इस विद्यालय के प्रधानाध्यापक **कहाँ हैं** ?

(२) संख्या की अधिकता प्रकट करने के लिये भी बहुवचन के स्थान में एक वचन का प्रयोग करते हैं, जैसे स्वतन्त्रता-समारोह के जलूस में बड़ा **आदमी** था। प्रयाग मे बड़ा **साधु** एकत्रित हुआ।

(३) कहीं कहीं एकवचन ही बहुवचन के अर्थ में प्रयुक्त होता हैं; जैसे, प्रयाग में बहुत **अमरूद** होता है। उसका सब **रुपया** चुक गया। उसने **मिठाई** खाई।

(४) कुछ शब्द सदा बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं, जैसे, दशरथ ने पुत्र-वियोग में **प्राण** देदिये। क्या तुम्हें **पकवान** मिले ? आपके **दर्शन** बड़े भाग्य से मिले। क्या आपने **हस्ताक्षर** कर दिये ?

(५) गण, जन, वृन्द, वर्ग, समूह, समुदाय, लोग जोड़कर भी बहुवचन का बोध कराया जाता है; जैसे, नागरिक-जन, बाल-वृन्द, नारी-समुदाय, गुरु-जन, सभ्य-गण, मातृ-वर्ग, राजा लोग।

(६) व्यक्तिवाचक और भाववाचक संज्ञाएँ सदा एक वचन में प्रयुक्त होती हैं, जब इनका प्रयोग बहुवचन में होता है तो ये जातिवाचक हो जाती हैं। केवल जातिवाचक संज्ञाओं के दो वचन होते हैं, जैसे—

१—उसका हृदय दया-**भाव** से पिघल गया (भाववाचक)

२—हृदय में अनेक **भाव** उठे। (जातिवाचक)

(७) विदेशी भाषाओं के शब्दों का प्रयोग जब बहुवचन रूप में किया जावे तो हिन्दी भाषा के व्याकरण से अनुशासित करके ही किया

जावे, जैसे,लेडीज के स्थान में लेडियाँ या लेडियों, मकानात के स्थान में मकानों।

बहुवचन बनाने के नियम

१–बहुवचन का प्रयोग, शब्दों के रूप में परिवर्तन न करके उनके आगे एक, दो, चार आदि लगाकर, किया जाता है, जैसे एक बालक, चार बालक।

२–स्त्री लिंग अकारान्त शब्दों के अन्त में 'अ' के स्थान में 'एँ' और आकारान्त शब्दों के अन्त में 'यें' लगाकर बहुवचन बनाते हैं; जैसे, आँख से आँखें, माता से मातायें।

३–कुछ स्त्रीलिंग आकारान्त शब्दों में अनुस्वार लगा देते हैं, जैसे; गुड़िया से गुड़ियाँ, चिड़िया से चिड़ियाँ।

४–पुल्लिग आकारान्त शब्दों में 'आ' के स्थान पर 'ए' लगा देते हैं; जैसे, लड़का से लड़के, कपड़ा से कपड़े।

५–स्त्रीलिंग इकारान्त शब्दों में 'याँ' और ईकारान्त में 'ई' का लोप करके 'इयाँ' जोड़ने से बहुवचन बनता है; जैसे, लिपि से लिपियाँ; रानी से रानियाँ।

६–स्त्रीलिंग उकारान्त शब्दों में 'एँ' या 'यें' और ऊकारान्त शब्दों में 'ऊ' का लोप करके 'उएँ' अथवा 'उयें' लगाते हैं; जैसे धातु से धातुयें बहू से बहुएँ।

७–पुल्लिग संज्ञायें जिनके अन्त में इ, ई, उ, ऊ, ए और औ होता है, उनके रूप दोनों वचनों में एक से ही रहते हैं जैसे, एक ऋषि, दो ऋषि, एक गुरु, दो गुरु, एक चाकू, पाँच चाकू।

अभ्यास

१–वचन से क्या समझते हो ? वचन के भेद बताओ।

२–विदेशी भाषा के शब्दों को बहुवचन रूप में प्रयोग करने में किस नियम का पालन करना चाहिये ?

३– निम्न लिखित शब्दों के बहुवचन बनाओ :—

अंगूठी, घोड़ा, कुर्सी, वृक्ष, सूत, रस्सी, लड़का, थाली, चक्षु, झील, सोता, डाकू, भाषा, दुवे, आत्मा।

कारक

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उनका सम्बन्ध वाक्य के अन्य शब्दों से, विशेषतः क्रिया से ज्ञात होता है उसे कारक (Case) कहते हैं। प्रत्येक कारक का एक चिह्न होता है, उसे विभक्ति कहते हैं; जैसे, ने, को, से।

कारक आठ हैं :—

(१) कर्त्ता कारक (Nominative Case)–**जिस कारक से क्रिया के करने वाले का बोध होता हो; जैसे, श्याम ने गाय को देखा।**

कर्त्ता कारक की विभक्ति 'ने' है; किन्तु कभी-कभी 'ने' का लोप हो जाता है; जैसे, मोहन आता है। वह सुन्दर है। १-होना, पड़ना चाहिये, क्रियाओं के साथ 'को' विभक्ति का प्रयोग होता है; जैसे बालकों को गुरुजनों की आज्ञा माननी चाहिये। राम को जाना पड़ा। मोहन को जाना होगा। २-लाना, भूलना, बोलना के भूत कालिक रूपों के साथ और जिन क्रियाओं के साथ 'जाना', 'चुकना', 'लगना' 'सकना'

लगते हैं, वहाँ 'ने' का लोप होजाता है; जैसे, रामदत्त फल लाया। वह न जा सका। ३- कर्म वाच्य और भाववाच्य में 'ने' के स्थान में 'से' का प्रयोग होता है; जैसे, रावण राम से मारा गया। कृष्ण से द्वारिका की दुर्दशा न देखी गई।

(२) **कर्म कारक** (Objective Case)—संज्ञा का वह रूप है जो क्रिया के व्यापार का आश्रय होता है! जैसे, कृष्ण ने **कंस को मारा**। इस कारक की विभक्ति 'को' है, जिसका कभी लोप होता है और कभी नहीं; जैसे, हरि ने मोहन को पीटा। उसने भोजन किया। कभी कभी सकर्मक क्रिया के दो कर्म होते हैं; जैसे, अध्यापक ने बालकों को पाठ पढ़ाया। यहाँ 'बालकों' **गौण** और 'पाठ' **प्रधान** कर्म है। अतएव प्रधान कर्म के साथ को' का प्रयोग नहीं होता।

(३) **करण कारक**—संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से क्रिया के साधन का बोध हो; जैसे श्रीकृष्ण ने चक्र से शिशुपाल का वध किया। यहाँ 'चक्र से' करण कारक में है, क्योंकि 'चक्र' द्वारा वध करने का कार्य हुआ। इस कारक की विभक्ति 'से' है। 'से' का प्रयोग कभी होता है और कभी नहीं; जैसे, (१) उसने विद्रोहियों को तोप से उड़ा दिया। (२) हमने यह घटना न आँखों देखी न कानों सुनी।

(४) **सम्प्रदान कारक**—संज्ञा का वह रूप है जिसके लिए कर्त्ता कुछ कार्य करता है; जैसे, मोहन अपने पुत्र के लिए धोती लाया। यहाँ 'पुत्र के लिए' सम्प्रदान कारक है। इस कारक

की विभक्ति **'को'** या **'के लिए'** है, मोहन **'को'** यह पुस्तक दे दो। भविष्य के लिए धन जोड़ो।

(५) अपादान कारक—संज्ञा का वह रूप जिससे पृथक्ता का बोध हो ; जैसे, वह **'छत से'** गिर गया। इस कारक की विभक्ति **'से'** है। 'से' के स्थान में **'सन'** और **'सों'** का प्रयोग भी काव्य में पाया जाता है।

करण और अपादान कारकों की समान विभक्ति 'से' है; किन्तु करण कारक की विभक्ति 'से' से साधन का अर्थ होता है; अपादान कारक की विभक्ति 'से' से जुदाई या पृथकता का भाव प्रकट होता है; जैसे,

१–वह **बाण से** मारा गया। (करण) २– पेड़ से फल गिरा। (अपादान)

अपादान कारक का प्रयोग

१–वियोग पृथ्कता या भिन्नता प्रकट करने के लिए; जैसे; सोहन भाई से अलग हो गया।

२–दूरी का बोध कराने के लिए; जैसे; **आगरे** से देहली दो सौ मील दूर है ।

३–तुलना प्रकट करने के लिए; जैसे, वह अपने **भाई से** बुद्धिमान है ।

४–उत्पत्ति या निकास बतलाने के लिए; जैसे कमल कीचड़ से उत्पन्न हुआ। यमुना **हिमालय से** निकलती है।

५–कार्यारम्भ या समय प्रकट करने के लिए; जैसे, वह **रविवार से** बीमार है।

६– घृणा, लज्जा और उदासीनता के भाव में; जैसे, वधू **वर से** लजाती है। **पाप से** घृणा करो।

७–मृत्यु का कारण बताने के लिए; जैसे, वह शराब पीने से मरा।

८–रक्षा के अर्थ में; जैसे, बालक को **साँप से** बचाओ।

(९) वैर-विरोध या पराजय के अर्थ में; जैसे, कर्ण **अर्जुन से** हारा।

(१०) 'जिससे पढ़ते हैं' के अर्थ में; जैसे, मैं **गुरुजीसे** पढ़ता हूँ।

(६) सम्बन्ध कारक (Possessive Case)—संज्ञा का वह रूप है जिससे एक वस्तु का सम्बन्ध दूसरी वस्तु के साथ प्रकट हो; जैसे, राम की पुस्तक। सम्बन्ध कारक की विभक्तियाँ का, की, के, ना, नी, ने, रा, री, रे हैं; जैसे, तुम्हारी पुस्तक, राम की भक्ति, अपनी सेवा।

सम्बन्ध कारक स्वत्व, उपादान, कारण, सम्बन्ध, आधार आदि अर्थों के प्रकट करने वाले शब्दों के साथ प्रयुक्त होता है; जैसे, राम की घड़ी, बीमारी का मारा, गङ्गा का पानी। सम्बन्ध कारक की विभक्ति के आगे 'द्वारा' लगाने से करण कारक और 'लिए', 'वास्ते' 'प्रति' के योग से सम्प्रदान कारक बन जाता है; जैसे, नदी **के द्वारा**, पुत्र **के लिए**, पिता **के प्रति**। इसी प्रकार भीतर, बाहर, ऊपर, नीचे, आदि शब्द जोड़ने से अधिकरण कारक का बोध होता है; जैसे, पेड़ के **नीचे**।

(७) अधिकरण कारक—संज्ञा का वह रूप जिससे क्रिया के आधार का बोध होता है। इसकी विभक्तियाँ 'में' और 'पर' हैं; जैसे, ईश्वर में विश्वास रखो। सत्य और अहिंसा पर

निर्भर रहो। अधिकरण कारक समय, स्थान, दूरी, कारण, तुलना मूल्य आदि आधार सूचक भावों को प्रकट करने के लिये प्रयुक्त होता है; जैसे, वह दिन में सोता है; वह भारत में रहता है; चोरी के अपराध में यह दंड दिया गया; पाँच मील की दूरी पर; मोहन सब लड़कों में अच्छा है; तीस रुपये में घड़ी आदि।

(८) **सम्बोधन कारक** (Vocative Case)—संज्ञा का वह रूप जो सचेत करने अथवा पुकारने में प्रयुक्त होता है। इस कारक के चिह्न 'हे' 'हो' 'अरे' 'ओ' 'अय' हैं; जैसे; हे भाई, अरे राम। इस कारक का सम्बन्ध वाक्य के अन्य शब्दों के साथ नहीं होता।

समान कारकीय या समानाधिकरण (case-in- apposition)—पूर्व में आये हुए किसी शब्द का विवरण या व्याख्या करने वाले शब्दों को कहते हैं। दूसरे शब्द का भी वही कारक होता है जो पहले का है; जैसे, बसुदेव के पुत्र, बलराम के भ्राता, कृष्ण ने कंस को मारा। यहाँ पुत्र, भ्राता और कृष्ण तीनों शब्द समानाधिकरण हैं। विभक्ति 'ने' का प्रयोग अन्तिम-शब्द के साथ हुआ है।

विभक्ति सहित कारकों के भेद

कारक	विभक्ति	उदाहरण
कर्त्ता	ने	राम ने
कर्म	को	रावण को

करण	से	बाण से
सम्प्रदान	को, के लिए	सीता के लिए
अपादान	से	चित्रकूट से जाकर
सम्बन्ध	का, की, के	सुग्रीव की सहायता
अधिकरण	में, पर, पै	से लंका में मारा
सम्बोधन	हे, हो, अरे	हे भ्राता!

अभ्यास

१—कारक से क्या समझते हो? कारक कितने प्रकार के होते हैं?

२—कर्त्ता कारक की विभक्ति क्या है? इस का लोप कब होता है?

३—दो ऐसे वाक्य बनाओ जिनमें समस्त कारकों का प्रयोग हो?

४—अपादान कारक किन अर्थों में प्रयुक्त होता है?

५—करण कारक और अपादान कारक में क्या भेद है?

६—दीर्घाकार शब्दों के कारक बताओः—

भाइयो, अपना कर्तव्य सोचो। **मोहन सोहन से** छोटा है। **धर्म से** बड़ा कौन है? **गान्धीज़ी द्वारा** यह **कार्य** सम्पन्न हुआ। आज **मोहन घर** न जा सका। भारतीय **सेना** के **दस्तों को** आदेश दिया गया है कि **वे** आक्रमण कारियों के **डर से** छिपे हुए **नागरिकों को** ढूँढें और उन्हें सुरक्षित **स्थानों में** पहुंचादें।

७—विभक्ति से क्या समझते हो? प्रत्येक कारक की विभक्ति बताओ।

सर्वनाम

सर्वनाम के भेद :—

(१) **पुरुषवाचक** (Personal Pronoun)–जिस सर्वनाम का प्रयोग पुरुष के स्थान पर किया जावे। पुरुष तीन होते हैं :—

(१) **उत्तम पुरुष** First Person)–जो बोलने वाले या लिखने वाले पुरुष के सूचक हों; जैसे—मैं, हम।

(२) **मध्यम पुरुष** (Second Person)–उस पुरुष को सूचित करते हैं जिससे बात की जावे अथवा सुनने या पढ़ने वाले के सूचक हों; जैसे—तू, तुम, आप।

(३) **अन्य पुरुष** (Third Person)–उस पुरुष के सूचक सर्वनाम जिसके सम्बन्ध में बात की जावे; जैसे—वह, वे।

'मैं' और 'हम' का प्रयोग—'मैं' एक वचन है और एक ही व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है। "हम" बहु वचन है; किन्तु कभी कभी इसका प्रयोग एक वचन के समान होता है; जैसे—(१) समाचारपत्रों के सम्पादक, राजा-महाराजा और पुस्तक लेखक अपने लिये 'हम' का प्रयोग करते हैं; जैसे—'हमारा आदेश है ····।' (२) जब एक पुरुष अनेक पुरुषों का प्रतिनिधित्व करता है; जैसे, हमारा कर्तव्य है कि चोर बाज़ार समाप्त करने में हम सरकार का साथ दें। (३) अभिमान और रोष में भी 'हम' का प्रयोग एक वचन के लिये होता है, जैसे, अच्छा, हम तुम्हें देख लेंगे।

'तू,' 'तुम' और 'आप' का प्रयोग—

'तू' मध्यम पुरुष एक वचन है; किन्तु इसका प्रयोग प्रायः (१) ईश्वर के लिये (हे ईश्वर! तू अन्तर्यामी है।); (२) प्रेम के

साथ छोटों या मित्रों के लिये (तू बड़ा शैतान है।); (३) अनादर और क्रोध प्रकट करने के लिये (तू बड़ा अधर्मी है।); (४) साधु-सन्यासियों द्वारा भक्तों के लिये (ला, तू क्या देता है ?) और (५) कवियों द्वारा काव्य में योद्धाओं या राजाओं की प्रशंसा करने के लिये प्रयुक्त किया जाता है; जैसे—हे राजन्, तू कर्ण के समान दान वीर है।

'तुम' बहुवचन मध्यम पुरुष है। इसका प्रयोग एक वचन के समान छोटों के लिए होता है। बहुत्व सूचित करने के लिए 'तुम' के साथ 'लोग' शब्द लगा देते हैं; जैसे, तुम लोग कब जाओगे ? भारतीय शिष्टाचार के अनुसार 'तुम' के स्थान पर प्रायः बहु वचन पुरुष वाचक 'आप' का प्रयोग होता है।

'वह' का प्रयोग एक वचन में और 'वे' का बहु वचन में होता है; किन्तु आदर प्रकट करने के लिये 'वह' के स्थान में 'वे' का भी प्रयोग करते हैं; जैसे—पिताजी घर नहीं हैं, वे बम्बई गए हैं।

(२) **निश्चयवाचक सर्वनाम** (Demonstrative Pronoun)–**वे सर्वनाम हैं जो किसी निश्चित वस्तु का बोध कराते हैं; जैसे, यह अच्छा लड़का है। वह तुच्छ विचार है। यह, ये, वह, वे, सो, एक, दूसरा, दोनों, इस, उस, इसी, उसी आदि निश्चयवाचक सर्वानाम हैं।**

यह, वह, वे, ये, का प्रयोग —

'यह' और 'ये' निकटवर्ती और 'वह' और 'वे' दूरस्थ वस्तु का बोध कराते हैं। 'यह' (१) पूर्व कथित वाक्य अथवा आगे आने वाले वाक्य का बोध कराता है, जैसे, सोहन ने पुस्तक चुराई, यह मैंने स्वयं देखा था। वह यह कहता था कि मैं नहीं जाऊँगा। (२) वाक्यांश के

स्थान पर प्रयुक्त होता है; जैसे धन धाम पर गर्व करना, यह अच्छी बात नहीं है। (३) पूर्व कथित वस्तुओं में से प्रथम के लिए 'यह' और दूसरी के लिये 'वह' का प्रयोग होता है; जैसे, भीम और अर्जुन दोनों ही वीर थे, यह मल्ल विद्या में निपुण थे और वह धनुर्धारी थे?

'सो' बहुधा सम्बन्ध वाचक सर्वनाम 'जो' के साथ आता है। इसका रूप एक वचन और बहुवचन दोनों में समान रहता है और 'वह' और 'वे' के समान अर्थ देता है; जैसे, जो सोयेगा सो खोयेगा।

(३) **अनिश्चयवाचक सर्वनाम** (Indefinite Pronoun)–वे सर्वनाम हैं जिनसे निश्चित वस्तुओं का ज्ञान नहीं होता है; जैसे, (१) दही में **कुछ** पड़ा है। (२) इस राजनीतिक चाल से **सब** चकित रह गये। (३) इस कार्य को **कोई** भी कर सकता है।

कुछ, कोई और सब अनिश्चयवाचक सर्वनाम हैं।

कोई और कुछ का प्रयोग—'कुछ' का प्रयोग निर्जीव पदार्थों और "कोई" का सजीव पदार्थों के लिए होता है। "कोई का प्रयोग सातों कारकों और दोनों वचनों में होता है; किन्तु कुछ का प्रयोग कर्त्ता और कर्म कारकों में ही होता है; जैसे यहाँ 'कुछ' है (कर्त्ता), कुछ सुनो तो सही (कर्म)। 'कोई' का दो बार प्रयोग करने से बहुत्व का बोध होता है, जैसे, कोई-कोई तीर्थ स्थानो में मनोरंजन के लिये जाते हैं। किसी बात का निश्चय ज्ञान कराने केलिये 'कोई' के साथ 'न कोई' का प्रयोग करते हैं, जैसे–कोई न कोई अवश्य जायगा।

(४) **सम्बन्धवाचक** (Relative pronoun)—**वे सर्वनाम**

हैं जो संज्ञा शब्दों से सम्बन्ध प्रकट करते हैं ; जैसे, जो चढ़ेगा सो गिरेगा। 'जो' सम्बन्धवाचक सर्वनाम है।

'जो' का प्रयोग :— 'जो' प्रायः 'सो या 'वह' के साथ प्रयुक्त होता है। एक वचन में इसका रूप 'जिस' और बहुवचन में 'जिन्हें' होजाता है। कभी कभी 'जो' के साथ संज्ञा का भी प्रयोग होता है ; जैसे, जो मनुष्य दान करेगा सो फल पावेगा। जिस कार्य में मैं हाथ डालता हूं, तुम उसी का विरोध करते हो।

(५) प्रश्नवाचक (Interrogative pronoun)- वे सर्वनाम जिनसे प्रश्न का बोध होता हो; जैसे, **कौन** गया है ? तुमने **क्या** खाया है ? "कौन" और "क्या" प्रश्न वाचक सर्वनाम हैं। मनुष्यों तथा बड़े प्राणियों के लिए 'क्या' का प्रयोग होता है ; जैसे,(१) तुम्हारे पास **क्या** है ? (२) तुम्हारे यहाँ **कौन** आया है ?

'क्या का प्रयोग'— क्रिया विशेषण (धमकी, आश्चर्य, असमर्थता या निश्चय प्रकट करने के लिये), समुच्चय बोधक और विस्मयादि बोधक की भाँति भी होता है; जैसे —

(१) क्या ही कठिन प्रश्न है ! (विस्मय)
(२) क्या हाथी क्या चींटी सब परमेश्वर की माया है। (समुच्चय)
(३) क्या हँसते हो, सब देख लूंगा। (क्रिया विशेषण)

(६) निजवाचक सर्वनाम (Emphatic pronoun)- वह सर्वनाम है जिस से कर्त्ता के साथ अपनापन प्रकट होता हो; जैसे, वह **आप** वहाँ गया। आप, अपना, अपनी, निजवाचक सर्वनाम हैं।

निज वाचक 'आप' पुरुष वाचक 'आपसे' भिन्न होता है ।

(१) पुरुष वाचक 'आप' केवल मध्यम और अन्य पुरुष के साथ प्रयुक्त होता है; किन्तु निजवाचक 'आप' तीनों पुरुषों के साथ प्रयुक्त होता है। (२) पुरुषवाचक 'आप' एक का वाचक होने पर भी सदा बहुवचन में प्रयुक्त होता है। निजवाचक 'आप' एक ही रूप में दोनों वचनों में प्रयुक्त होता है। (३) पुरुष वाचक 'आप' अकेला वाक्य में प्रयुक्त होता है, किन्तु निजवाचक 'आप' अन्य सर्वनामों के साथ आता है; जैसे, आप कहाँ जा रहे हैं? (पु.वा.) वह अपनी पुस्तक पढ़ता है। (नि.वा.)

सर्वनामों का रूपान्तर

१—सर्वनामों में लिङ्ग के कारण रूपान्तर नहीं होता; केवल वचन और कारक के कारण रूपान्तर होता है। सर्वनाम रूप स्त्रीलिंङ्ग और पुल्लिंग दोनों में एक समान रहता है; उनके लिङ्ग क्रिया आदि के रूपों से जाने जाते हैं; जैसे, (१) वह जाता है। (२) वह जाती है। यहाँ प्रथम 'वह' पुल्लिंग और द्वितीय 'वह' स्त्रीलिंग है।

२—संज्ञाओं के समान सर्वनामों में भी दो वचन होते हैं; जैसे, मैं, हम, वह, वे।

३—सर्वनाम में केवल सात कारक होते हैं; सम्बोधन नहीं होता है।

४—मैं, हम, तू, तुम, आप के अतिरिक्ति अन्य सर्वनाम सदा अन्य पुरुष में ही प्रयुक्त होते हैं।

'कौन' का रूपान्तर

कारक	एक वचन	बहुवचन
कर्त्ता	कौन, किसने	कौन, किन्होंने
कर्म	किसको, किसे	किनको, किन्हें
करण	किससे	किनसे
सम्प्रदान	किसके लिए	किनके लिए
अपादान	किससे	किनसे
सम्बन्ध	किसका (की, के)	किनका (की, के)
अधिकरण	किसमें, (पै, पर)	किनमें (पै, पर)

अभ्यास

१–निम्न लिखित सर्वनामों के रूपान्तर कारकों और वचनों के अनुसार लिखो—जो, सो, यह, सब, क्या, तू, आप,वह।

२–सर्वनाम छाँटो और कारक सहित उनके भेद बतलाओ :—

(अ) उसने आज कुछ न खाया। (आ) ऐसा कौन है जो मुझे युद्ध से विमुख करे ? (इ) जो बोयेगा सो काटेगा। (ई) कोई-कोई इतने दरिद्र हैं कि उनका ईश्वर ही रक्षक है। (उ) मैं आप ही चला जाऊँगा, आप किसलिये क्रोधित होते हैं? (ए) जो अपना है सो सपना है कोई नहीं पराया। किसके ममता में भूले हो किसने दुख न उठाया

विशेषण

भेद—

(१) **गुणवाचक** (Adjective of Quality)—जो विशेषण संज्ञा और सर्वनाम की विशेषताएँ—रंग, अवस्था, गुण और आकार प्रकट करें ; जैसे--(१) पीला, लाल, श्वेत, काला ; (२) स्वस्थ, निर्बल, प्रबल, प्रौढ़, बलहीन ; बुरा, भला, धर्मात्मा ; (४) गोल, नुकीला, सुडौल ।

गुण वाचक विशेषण के प्रयोग-- [अ] कभी-कभी संज्ञा भीं विशेषण के स्थान पर प्रयुक्त होती है; जैसे, **वैश्य-कुल**, **कमल—चरण**, [आ] संज्ञा के साथ 'नाम', 'नामक', 'रूपी', 'सम्बन्धी' लगा देने से भी गुण वाचक विशेषण बन जाता है, जैसे, **चन्द्र** रूपी मुख, **परीक्षा** सम्बन्धी कार्य, **दशरथ** नामक राजा । [इ] गुणवाचक विशेषण का प्रयोग विशेष्य का लोप करके कर्त्ता के समान भी होता है, जैसे, इस समय **निर्धन** अति दुखी हैं । [ई] 'सा' लगाने से गुणवाचक विशेषण के अर्थ में कुछ न्यूनता प्रकट होती है ; जैसे —काला सा कम्बल ।

(२) **संख्यावाचक** (Adjective of Number)—वे विशेषण हैं जो संज्ञा की संख्या सूचित करें ; जैसे, (१) **पांच** रत्न, (२) **प्रथम** श्रेणी, (३) **चारों** पदार्थ, (४) **चौगुने** दाम (५) **कुछ** मनुष्य, (६) **कई** सज्जन, (७) **थोड़े** आम (८) **सब** बातें ।

संख्या वाचक विशेषण के दो भेद हैं:—

(क) **निश्चित संख्या वाचक विशेषण**—जो निश्चित संख्या का बोध करावें ; जैसे,—उपर्युक्त उदाहरणों में—पाँच, प्रथम, चारों और चौगुने। निश्चित संख्या से (१) गणना—एक, दो, तीन ; (२) क्रम—प्रथम, द्वितीय, पहला, दूसरा, आठवाँ (३) आवृति—दुगुना, तिगुना, दुहरा, तिहरा ; (४) समुदाय—दोनों, तीनों ; और (५) विभाग—प्रत्येक, हरएक आदि प्रकट होते हैं।

(ख) **अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण**—जिस विशेषण से निश्चित संख्या का बोध नहीं होता ; जैसे—कुछ, सब, थोड़े, बहुत, अधिक, कई, कम, अनेक। निश्चित संख्याओं में लगभग, कोई, करीब लगाने से अथवा दो निश्चित संख्याओं का प्रयोग करने से अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण बन जाते हैं, जैसे—लगभग दो सौ विद्यार्थी, कोई दस गाँव, दो चार फल, दस ठो आम।

(३) **परिमाणवाचक** (Adjective of Quantity)—जिन विशेषणों से संज्ञा की नाप, तोल या परिमाण का बोध होता है ; जैसे, **थोड़ा** बल, **कुछ** दूध।

परिमाण वाचक विशेषण के दो भेद हैं:—

(क) **निश्चित परिमाणवाचक**--जैसे—सेर भर दूध, एक पाव तेल।

(ख) **अनिश्चित परिमाणवाचक**--जैसे—कुछ, सब, थोड़ा, कम, बहुत।

आधिक्यावस्था प्रकट करने के लिये 'अधिक', 'न्यून', 'कम' शब्द संज्ञा से पूर्व लगाते हैं। संस्कृत में 'तर' का प्रयोग होता है; जैसे, महत् से महत्तर। अतिशयावस्था प्रकट करने के लिये संस्कृत में 'तम' और हिन्दी में 'सबसे', 'अति', 'अत्यन्त', 'बहुत', 'बहुत ही' का प्रयोग करते हैं; जैसे— निकृष्ट तम, अति कोमल, बहुत ही रूखा आदि। कभी कभी विशेषण को अपादान कारक में रख कर उसी विशेषण की द्विरुक्ति करने से भी अतिशयावस्था सूचित की जाती है, जैसे—कठिन से कठिन समस्या, उत्तम से उत्तम प्रकृति।

विशेषणों का रूपान्तर

(१) विशेषणों के लिंग, वचन और कारक उनके विशेष्यों के अनुकूल होते हैं; जैसे, **गुणवान्** पुरुषों का समाज में आदर है। **लम्बी** यात्रा में हम थक गये।

(२) विशेषण जब संज्ञा के समान प्रयुक्त होते हैं तो विभक्ति 'ने' लगती है; जैसे, **विद्वानों** ने कहा है।

विशेषणों का वाक्यों में प्रयोग :—

(१) पूर्ववर्ती (Attributive)--जब विशेषण का प्रयोग विशेष्य के ठीक पहले हो: जैसे, **विद्वान्** मनुष्य।

(२) परवर्ती (Predicative)–जब विशेषण विशेष्य के पश्चात् प्रयुक्त हो और विधेय का कार्य करें; जैसे, यह लड़का **अच्छा** है। सर्वनामों की विशेषता प्रकट करने वाले विशेषण परवर्ती होते हैं; जैसे, वह **दुष्ट** है।

विशेषण बनाने के नियम

(१) संज्ञा से—(क) 'इक' प्रत्यय अन्त में लगाकर शब्दों के प्रथम लघुस्वर को दीर्घ कर देते हैं :—

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
काल	कालिक	मास	मासिक	वर्ष	वार्षिक
सप्ताह	साप्ताहिक	पक्ष	पाक्षिक	प्रकृति	प्राकृतिक
कल्पना	काल्पनिक	नगर	नागरिक	शरीर	शारीरिक
संसार	सांसारिक	धर्म	धार्मिक	तर्क	तार्किक
अर्थ	आर्थिक	समय	सामयिक	वेद	वैदिक
लोक	लौकिक	योगिक	यौगिक	पुराण	पौराणिक
पितृ	पैत्रिक पैतृक	मुख	मौखिक	उदर	औदरिक

(ख) ईन या ईण जोड़ने से; जैसे—कुल से कुलीन, ग्राम से ग्रामीण

(ग) मान्, वान, भर, रहित, सहित, हीन, पूर्वक, युक्त, अनुसार, सम्बन्धी, वाला, हारा, ईय लगाने से; जैसे :—

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
बुद्धि	बुद्धिमान्	धन	धनवान, धनी
मुट्ठी	मुट्ठी भर (भरा)	विष	विष भरा
जल	जल रहित	गर्व	गर्व सहित
धन	धन हीन	श्री	श्री युक्त
शक्ति	शक्ति अनुसार	गृह	गृह सम्बन्धी
भैंस	भैंस वाला	चूड़ी	चुड़िहारा
देश	देशीय	राष्ट्र	राष्ट्रीय

(घ) संज्ञाओं के साथ 'सा', 'सी', 'सरीखा', 'नामी' या रूपी लगाने से; जैसे–चन्द्र सा मुख, द्रोपदी सी स्त्री, कर्ण सरीखे दानी, दशरथ नामी राजा, यश रूपी धन।

(ङ) व्यक्तिवाचक संज्ञाओं में 'ई' या 'इया' जोड़कर; जैसे, पंजाब से पजाबी, मथुरा से मथुरिया।

(च) सस्कृत शब्दों में कुछ परिवर्तन से; जैसे–गुण से गौण, मुख से मौख्य, पर्वत से पार्वत्य, वायु से वायव्य, सूर्य से सौर्य, सौर।

(छ) शब्दों से पूर्व सु, नि, अ जोड़कर ; जैसे, नाथ से अनाथ या सनाथ, भय से निर्भय या अभय, कर्म से सुकर्म।

(२) क्रिया से ; लड़ना से लड़ाकू, सोना से सोने वाला, पीसना से पिसन हारी।

(३) अव्यय से ; जैसे, कल से कल वाली, उधर से उधर वाली, वहाँ से वहाँ का, अवश्य से आवश्यक।

(४) कभी कभी संज्ञाएँ ही विशेषण की भाँति प्रयुक्त होती हैं ; जैसे—छत्रिय-वंश में क्षत्रिय।

अभ्यास

[१] विशेषण और विशेष्य से क्या समझते हो ? उदाहरण दो।

[२] विशेषण और सर्वनाम में क्या अन्तर है ?

[३] अनिश्चित संख्या वाचक और परिमाण वाचक विशेषणों में क्या विभेद है ?

[४] मिम्न शब्दों के विशेषण बनाओः— मन, दिन, संसार, देह, ग्राम, नगर, स्त्री, पश्चिम, भारत, नीति, इतिहास, उपनिवेश, लोक।

[५] विशेषणों के साथ 'सा', 'ही', 'भर', जोड़ने से क्या विशेषता प्रकट होती है ?

क्रिया

धातु–क्रिया से किसी व्यापार के करने या होने का बोध होता है ; जैसे, खाना, पीना, सोना इत्यादि। इन व्यापार सूचक शब्दों में से 'ना' का लोप करने से जो मूल रूप शेष रहता है उसे धातु कहते हैं, जैसे, खा, पी, सो इत्यादि।

क्रिया के भेद—क्रिया से दो अर्थ प्रकट होते हैं—(१) व्यापार (२) व्यापार का फल, जैसे, कृष्ण ने कंस को मारा। यहाँ 'मारा' क्रिया का कार्य 'कृष्ण' ने किया और उसका प्रभाव या फल 'कंस' पर पड़ा। अतएव व्यापार का करने वाला 'कृष्ण' कर्त्ता है और फल का आधार 'कंस' कर्म हुआ।

कार्य और प्रभाव के विचार में क्रिया के दो भेद हैं :—

(१) अकर्मक—(Intransitive) जिस क्रिया का करने वाला और उसके फल का आधार कर्त्ता होता है, जैसे—मोहन रोता है।

(२) सकर्मक—(Transitive verb) वह क्रिया है जिस के व्यापार का फल कर्त्ता के अतिरिक्त कर्म पर आश्रित हो, जैसे, मैं फल खाता हूँ।

प्रायः क्रिया के पूर्व "कौन" रखकर प्रश्न करने से उत्तर में कर्त्ता और 'क्या' और 'किसको' से कर्म की पहचान की जाती है। जैसे कौन फल खाता है? उत्तर-मैं (कर्त्ता); मैं क्या खाता हूँ? उत्तर—फल (कर्म)

अर्थ के अनुसार अनेक क्रियाएँ अकर्मक और सकर्मक दोनों होती हैं। जैसे—

अकर्मक　　　　　　　　　　　　सकर्मक

१. घबड़ाता– तुम क्यों घबड़ाते हो? रूस की प्रबल शक्ति नें मित्र राष्ट्रों कों घबरा दिया है।

२. खुजलाना– उसकी पीठ खुजलाती है वह फोड़ा खुजलाता है।

३. घिसना– रस्सी से पत्थर घिस गया है। तुम चन्दन घिसते हो।

४. ललचाना– आभूषण देखकर दासी का मन ललचाया धन का लोभ देकर तुमने इस मनुष्य को ललचाया।

५. बदलना–विपत्ति में मित्रों की आँखे बदल जाती हैं। क्षत्रिय अपना प्रण न बदलते थे।

६. लजाना– तुम बोलने में भी लजाते हो। कुपुत्र के कर्म माता-पिता को लजाते हैं।

७. ऐंठना– इतना क्यों ऐंठते हों? कपड़े को अधिक मत ऐंठो।

(३) संयुक्त क्रियाएँ—(Compound Verbs) जब दो या दो से अधिक भिन्न अर्थ वाली क्रियाएँ मिलकर एक क्रिया बन जाती हैं और विशेष अर्थ को प्रकट करती हैं, तो उसे संयुक्त क्रिया कहते हैं। जैसे, मैंने यह कार्य **कर लिया** है। यहाँ **कर लिया** क्रिया करना और लेना—दो भिन्न अर्थ सूचक क्रियाओं से बनी है।

संयुक्त क्रिया में मुख्य अर्थ सूचक प्रथम क्रिया को **मुख्य या प्रधान क्रिया** (Principal Verb) और दूसरी को **सहायक क्रिया** (Helping या Auxiliary Verb) कहते

हैं। उपर्युक्त वाक्य में 'कार्य करना' मुख्य और 'लिया है' सहायक क्रियाएँ हैं।

कुछ सहायक क्रियायें ये हैं :— [१] अधिक निश्चय सूचक, जैसे — उठना, बैठना, आना, लेना, पड़ना, जाना, देना— वह चला गया ; तुम सब फल ले आये। [२] शक्ति सूचक ; जैसे, सकना, — तुम इतना नहीं चल सकते। [३] समाप्ति सूचक; चुकना, डालना, — वह कार्य कर चुका ; तुमने सब फल खा डाले। [४] निरन्तरता सूचक ; जैसे रहना – वह पत्र लिख रहा है।]५] आकस्मिक घटना सूचक ; जैसे, पड़ना—वह हँस पड़ा।

चुकना और सकना को छोड़ कर उपर्युक्त सब क्रियायें अन्य सहायक क्रियाओं से मिल कर संयुक्त क्रियाओं की भाँति प्रयुक्त की जा सकती हैं।

(४) प्रेरणार्थक क्रिया—(Causative Verb) साधारण क्रिया का कर्त्ता जब अन्य किसी से क्रिया के लिए अथवा कर्म-रूप में प्रयुक्त किया जाता है, तब क्रिया प्रेरणार्थक होती है ; जैसे—साधारण क्रिया—सेवक ने दवा दी।

प्रेरणार्थक क्रिया—वैद्य ने सेवक से दवा दिलवाई।

(५) द्विकर्मक क्रिया—जब सकर्मक क्रिया अर्थ पूर्ति के लिये दो कर्म लेती है तो उसे द्विकर्मक क्रिया कहते हैं; जैसे, अध्यापक बालकों को इतिहास पढ़ाते हैं। इस वाक्य में 'बालकों' और 'इतिहास' दो कर्म हैं। **निर्जीव वस्तुओं के सूचक प्रधान कर्म और प्राणी सूचक गौण कर्म** कहलाते हैं। इनकी पहचान यह है कि क्रिया के पूर्व 'क्या' रखने में उत्तर मिले तो प्रधान कर्म और 'किसको' से गौण कर्म होता है।

कुछ अकर्मक, सकर्मक और प्रेरणार्थक क्रियाओं के उदाहरण नीचे दिये जाते हैं :—

अकर्मक	सकर्मक	प्रेरणार्थक
गिरना	गिराना	गिरवाना
जलना	जलाना	जलवाना
डूबना	डुबाना	डुबवाना
जागना	जगाना	जगवाना
खेलना	खिलाना	खिलवाना
सोना	सुलाना	सुलवाना
बिकना	बेचना	बिकवाना
जाना	भेजना	भिजवाना

नाम धातु—कभी कभी संज्ञा, सर्वनाम विशेषणता और अनुकरण सूचक शब्दों से, कुछ परिवर्तन करके और "ना" जोड़कर क्रियाएँ बनाली जाती है, इन्हें 'नाम धातु' कहते हैं; जैसे, मोटा से मुटियाना, छपछप से छपछपाना, दुःख से दुखाना आदि।

अपूर्ण क्रियाएँ और पूरक

(Incomplete verbs and their complements)

यदि अकर्मक और सकर्मक क्रियाएँ अर्थ को पूरा करने के लिये किसी अन्य शब्द की आवश्यकता रखती हैं तो उन्हें **अपूर्ण अकर्मक** और **अपूर्ण सकर्मक** क्रियाएँ कहते हैं। जो शब्द अर्थ पूर्ति के लिये जोड़े जाते हैं वे **पूरक** कहलाते हैं। अकर्मक क्रिया का पूरक **कर्त्ता पूरक** और सकर्मक क्रिया का पूरक **कर्मपूरक** अथवा **विधेय पूरक** कहा जाता है।

अपूर्ण अकर्मक क्रिया–(१) पं० नेहरू प्रधान मन्त्री हैं। (२) वह अच्छे हो गए। इन वाक्यों में "हैं" और "हो गए" क्रियाऐं अपूर्ण अकर्मक हैं। वाक्य का अर्थ तभी स्पष्ट होता है जब "प्रधान मन्त्री" और 'अच्छे' –पूरक शब्दों को जोड़ा जाता है।

अपूर्ण सकर्मक क्रिया–कर्म के अतिरिक्त अर्थ पूरा करने लिये "पूरक" शब्द लेती हैं; जैसे, (१) जनता ने उसे राजा बनाया। (२) मुसलमानों ने गांधीजी को मित्र समझा था। इन वाक्यों में 'बनाया' और 'समझा था' क्रियाओं का अर्थ पूरा करने के लिये 'राजा' और 'मित्र'—पूरक शब्दों को जोड़ा गया है।

विधि क्रिया

क्रिया के जिस रूप से आदेश (आज्ञा), परामर्श (सलाह), अनुमति, प्रार्थना, अथवा निमन्त्रण-आमन्त्रण का बोध होता है उसे **विधि क्रिया** कहते हैं; जैसे, (१) तुमको प्रतिदिन व्यायाम करना चाहिये (आज्ञा)। (२) पत्र भेजते रहना (अनुमति)। (३) आप तुरन्त चले जाइये (सलाह)। (४) कृपया मेरे साथ घर चलो (प्रार्थना)। (५) आप उत्सव में अवश्य पधारिये। (६) आइए, मेरे साथ चलिये।

विधि क्रिया का कर्त्ता मध्यम पुरुष में होता है जो प्रायः छिपा रहता है; किन्तु कहीं कहीं संकेत करने के लिये कर्त्ता का प्रयोग भी किया जाता है। जब कर्त्ता 'तू' या 'तुम' होता है तो क्रिया के धातु

रूप में 'इयो', 'ते रहियो' या 'ते रहना' लगा कर विधि क्रिया बनाते हैं। आदर सूचक 'आप' के साथ 'इये' या 'इयेगा' लगाते हैं ; जैसे तू वहाँ जाइय, तुम पढ़ते रहना, आप आइये, आप कृपा करते रहियेगा आदि।

विधि क्रिया कभी कभी भूतकाल में भी प्रयुक्त की जाती है ; जैसे, आप को यह बालक इतना न पीटना चाहिये था। आज्ञा के अतिरिक्त शक्ति औरप्रेरणा के भाव प्रकट करने के लिये भी विधि-क्रिया का प्रयोग होता है ; जैसे, तुम्हें आज सहायता करनी ही पड़ेगी।

पूर्वकालिक क्रिया

वाक्य में जो क्रिया मुख्य क्रिया से पहले घटित होती है; किन्तु जिसपर वाक्य समाप्त नहीं होता—अर्थात् कर्त्ता दूसरी मुख्य क्रिया को करने से पूर्व जिसे करता है—उसे **पूर्वकालिक क्रिया** कहते हैं; जैसे, वह खाना खाकर स्कूल जाता है।

पूर्व कालिक क्रिया वचन; लिङ्ग और पुरुष से रहित होती है। इसका काल मुख्य क्रिया के समान होता है। धातु के आगे के', 'कर' अथवा 'करके' लगाने से पूर्व-कालिक क्रिया के रूप बनते हैं; जैसे, पाना, पाकर. पाके, पा करके।

क्रियाओं के रूपान्तर

क्रियाओं के रूप (१) काल (२) वाच्य (३) लिङ्ग (४) वचन और (५) पुरुष की अपेक्षा परिवर्तित हो जाते हैं; जैसे :—

(१) काल—कृष्ण पढ़ता है। कृष्ण ने पढ़ा। कृष्ण पढ़ेगा।

(२) वाच्य–कृष्ण ने पुस्तक पढ़ी। पुस्तक कृष्ण से पढ़ी गई।

(३) लिङ्ग–कृष्ण घर गया। मोहिनी घर गई।

(४) वचन–लड़का सो रहा है। लड़के सो रहे हैं।

(५) पुरुष–मैं घर जाता हूँ। तुम घर जाते हो। वे घर जाते हैं।

काल (Tense)

क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार का समय जाना जाय उसे क्रिया का काल कहते हैं। काल तीन हैं:–

(१) **भूतकाल**—(Past tense)—क्रिया के जिस रूप से उसके व्यापार का बीते हुए समय में होना ज्ञात हो, वह क्रिया भूतकाल में होती है; जैसे, वह भोजन कर चुका था।

(२) **वर्तमानकाल**—(Present tense)—क्रिया के जिस रूप से यह प्रकट हो कि व्यापार इस समय घट रहा है; जैसे, वह पढ़ रहा है।

(३) **भविष्यत्काल**—(Future tense)—क्रिया के जिस रूप से उसके व्यापार का आगे आने वाले समय में होना जाना जाय, वह क्रिया भविष्यत् काल में होती है, जैसे, हम घर जावेंगे।

१—भूतकाल

भूतकाल के छः भेद हैं :—

(१) सामान्यभूत—क्रिया का वह रूप जिससे भूतकाल की सामान्यता प्रकट हो; किन्तु जिससे निश्चित समय का बोध न हो; जैसे, उसने पाठ याद **किया**। तुमने कहानी **सुनी**।

सामान्य भूत साधारण क्रियाओं से कुछ हेर फेर से बनता है। जैसे, (१) पढ़ना से पढ़ा, पढ़े; लिखना से लिखा लिखे; (२) देना से दिया, दिये; (३) छूना से छुआ, छुए; (४) रोना से रोया, रोये; (५) जाना से गया, गये; गईं आदि।

(२) आसन्नभूत—जिस भूतकाल से यह प्रकट होता है कि काम भूतकाल में प्रारम्भ होकर अभी वर्तमान काल में समाप्त हुआ है; जैसे, उसने पाठ याद किया है; उसने कहानी सुनी है।

आसन्न भूत का प्रयोग तीन प्रकार से होता है :—

(अ) निकटवर्ती भूतकाल में प्रारम्भ होने वाले कार्य का बोध कराने के लिये; जैसे--उसने कहानी सुनाई है।

(आ) दूरवर्ती भूतकाल में प्रारम्भ हुए कार्य का बोध कराने के लिये; जैसे—अशोक ने शिलालेख खुदवाये हैं।

(इ) किसी कार्य के फल की स्थिति वर्तमान में भी प्रकट करने के लिये; जैसे, तुलसीदास जी ने रामचरितमानस की रचना की है।

आसन्नभूत बनाने के लिये सामान्य भूत में 'है' अथवा "हैं" लगाते हैं; जैसे– मैंने पत्र लिखा [सामान्य] मैंने पत्र लिखा है [आसन्न] कार्य की समाप्ति पर जोर [Emphasis] देने के लिये

'लेना' या 'चुकाना' लगा कर संयुक्त क्रिया बना लेते हैं; जैसे—उसने पाठ याद कर लिया है।

[३] पूर्ण भूत—जिस भूतकाल से यह प्रकट हो कि किसी कार्य को समाप्त हुए अधिक समय हो चुका है; जैसे, उसने पाठ याद किया था; तुमने कहानी सुनी थी।

पूर्णभूत बनाने के लिये सामान्यभूत की क्रिया में 'था', 'थे' (पुल्लिंग में) और 'थी', 'थीं' (स्त्रीलिंग में) जोड़ते हैं।

(४) **अपूर्णभूत**—क्रिया का वह रूप है जिससे यह प्रकट होता है कि कार्य भूतकाल में समाप्त नहीं हुआ था; जैसे, (१) वह पाठ याद **कर रहा था** (२) वह पाठ याद **करता था**।

अपूर्णभूत के अन्त में 'ता था', 'रहा था', 'ते थे', 'रहे थे' (पुल्लिंग में) और 'ती थी', 'रही थी', 'ती थीं', 'रही थीं' (स्त्रीलिंग में) प्रयुक्त किये जाते हैं।

(५) **संदिग्धभूत**—भूतकाल का वह रूप है जिससे कार्य के होने में सन्देह प्रकट होता है; जैसे (१) उसने पाठ याद किया होगा। (२) तुमने कहानी सुनी होगी।

सामान्य भूत के अन्त में 'होगा', 'होंगे', 'होगी' लगाने से संदिग्ध भूत बनता है। संदिग्ध भूत अन्य भूतकालीन वाक्य पर निर्भर होता है; जैसे तुम्हारे आश्रम पहुँचने से पूर्व विद्यार्थी चले गए होंगे।

(६) **हेतुहेतुमद्भूत**—इस भूतकाल से प्रकट होता है कि किसी व्यापार का भूतकाल में होना सम्भव था किन्तु अन्य

किसी कार्य अथवा हेतु के न होने के कारण पूर्ण न हुआ; जैसे, यदि वह आता तो मैं जाता। हेतुहेतुमद्भूत बनाने के लिये धातु में 'ता', 'ती', 'तीं', ते जोड़ते हैं।

(२) वर्तमानकाल

वर्तमान काल के भेद :—

(१) सामान्य वर्तमान—क्रिया का वह रूप है जो किसी कार्य का साधारण रूप से निश्चित समय न बता कर वर्तमान काल में होना प्रकट करे; जैसे, वह जाता है।

सामान्य वर्तमान का निम्न अर्थों में प्रयोग होता है:—

(अ) किसी क्रिया का वर्तमान काल में सामान्य वर्णन करने के लिये; जैसे—वह पशुओं को देखता है।

(आ) किसी कल्पित या ऐतिहासिक घटना अथवा किसी साधारण तथ्य का वर्णन करने के लिये; जैसे, (१) अशोक कलिङ्ग देश पर आक्रमण करता है। (२) पृथ्वी सूरज के चारों ओर घूमती है।

(इ) स्वभाव अथवा प्रकृति का वर्णन करने के लिये; जैसे पक्षी उड़ा करते हैं।

सामान्य वर्तमान बनाने के लिये; धातु में 'ता हैं', 'ते हैं', 'ती हैं', 'तीं हैं' जोड़ते हैं।

(२) अपूर्ण या तात्कालिक वर्तमान—जिससे यह प्रकट होता है कि क्रिया का व्यापार अभी समाप्त नहीं हुआ वरन्

वर्तमान काल में चल रहा है; जैसे, वह पुस्तक पढ़ रहा है। धातु के आगे 'रहा है', 'रहे हैं', 'रही है' और 'रही हैं' लगाने से अपूर्ण वर्तमान बनता है।

(३) संदिग्ध वर्तमान—क्रिया का वह रूप है जिससे किसी कार्य के वर्तमान काल में होने में सन्देह प्रकट होता है; जैसे--वह खेलता होगा। शायद वह खेलता हो।

(३) भविष्यत् काल

भविष्यत् काल के दो भेद हैं:—

(१) सामान्य भविष्यत्—जो भविष्यत् क्रिया का सामान्य रूप से आने वाले समय में होना प्रकट करे; जैसे, वह घर जावेगा।

(२) सम्भाव्य भविष्यत्--जो भविष्यत् क्रिया के होने की आगे आने वाले समय में केवल सम्भावना प्रकट करे; जैसे—संभव है हम गंगा स्नान को जावें। कदाचित् वह भोजन करे।

'कालों' का तुलनात्मक विवेचन

	काल	प्रत्यय	रूप	उदाहरण
भूतकाल	सामान्यभूत	आ, या	पढ़ा-पढ़ी	मोहन ने पुस्तक पढ़ी।
	आसन्नभूत	है	पढ़ा है	मोहन ने पुस्तक पढ़ी है।
	पूर्ण भूत	था	पढ़ा था	मोहन ने पुस्तक पढ़ी थी।
	अपूर्णभूत	रहा था ता था	पढ़ रहा था; पढ़ता था	मोहन पुस्तक पढ़ रहा था (पढ़ता था)
	संदिग्धभूत	होगा	पढ़ा होगा	मोहन ने पुस्तक पढ़ी होगी
	हेतुहेतुमद्भूत	ता	पढ़ता	मोहन पढ़ता तो सोहन भी पढ़ता।
वर्तमान	सामान्यवर्तमान	ता है	पढ़ता है	मोहन पढ़ता है।
	अपूर्ण वर्तमान	रहा है	पढ़ रहा है	मोहन पढ़ रहा है
	संदिग्धवर्तमान	ता होगा	पढ़ताहोगा	मोहन पढ़ता होगा।
भविष्यत्	सामान्य भविष्यत्	गा,गे,गी;	पढ़ेगा	मोहन पुस्तक पढ़ेगा
	सम्भाव्य ,,	ये, वे	पढ़े	संभव है मोहन पढ़े।
	विधिक्रिया	ये, वें	पढ़; पढ़े	पुस्तक पढ़; मोहन को पुस्तक पढ़ना चाहिए।
	पूर्वकालिक क्रिया	करके,	पढ़ कर	मोहन पुस्तक पढ़ कर घरगया

वाच्य (Voice)

वाच्य—क्रिया के उस रूपान्तर को वाच्य कहते हैं जिससे यह जाना जाता है कि किसी क्रिया का मुख्य कर्त्ता किस कारक में प्रयुक्त किया गया है—अर्थात् वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्त्ता या कर्म है अथवा भाव मात्र है। वाच्य तीन हैं :—

(१) **कर्तृवाच्य** (Active Voice)—क्रिया का वह रूप है जिसमें कर्त्ता और कर्म क्रमशः प्रथम और द्वितीय विभक्तियों में रहते हैं। इसमें क्रिया का मुख्य कर्त्ता कर्त्ताकारक में रक्खा जाता है; जैसे, प्रधान मन्त्री ने व्याख्यान दिया। यहाँ वाक्य का उद्देश्य "प्रधान मन्त्री" कर्त्ता है और कर्त्ता के ही विषय में विधान है। अतएव "दिया" क्रिया कर्तृवाच्य है।

(२) **कर्मवाच्य** (Passive Voice)—क्रिया का वह रूप है जिसमें कर्त्ता तृतीय विभक्ति और कर्म प्रथम विभक्ति में रहता है। इसमें क्रिया का मुख्य कर्त्ता करण कारक में और उसका कर्म कर्ता कारक में होते हैं; जैसे, मोहन से पत्र लिखा गया। यहाँ वाक्य का उद्देश्य 'पत्र' कर्म है और कर्म के विषय में ही विधान है। अतएव "लिखा गया" क्रिया कर्मवाच्य है।

(३)**भाववाच्य** (Impersonal Voice)—क्रिया का वह रूप है जिसमें क्रिया का उद्देश्य कर्त्ता अथवा कर्म में से कोई नहीं होता; जैसे हमसे नहीं दौड़ा जाता। यहाँ वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्त्ता या कर्म नहीं है। क्रिया का मुख्य कर्त्ता करण कारक में है और केवल भाव का विधान हुआ है। अतएव "दौड़ा जाता" क्रिया भाववाच्य है

कर्तृवाच्य में क्रिया के कर्त्ता की प्रधानता रहती है और इसका प्रयोग अकर्मक और सकर्मक दोनों क्रियाओं में होता है। कर्मवाच्य में क्रिया के कर्म की प्रधानता रहती है और इसका प्रयोग केवल सकर्मक क्रिया में होता है। कर्मवाच्य में कर्त्ता कभी कभी लुप्त रहता है; जैसे, पत्र दिया गया।

भाववाच्य का प्रयोग केवल अकर्मक क्रिया में होता है। यह असमर्थता अथवा निषेध प्रकट करता है; जैसे, धूप में कैसे खेला जायगा ? (२) मुझसे नहीं दौड़ा जाता।

वाच्य परिवर्तन के नियम।

(१) कर्तृवाच्य की क्रिया जब सकर्मक हो तो कर्मवाच्य और अकर्मक हो तो भाव-वाच्य बनता है।

कर्तृवाच्य	--परिवर्तन
(क) अकर्मक क्रिया से	कर्म-वाच्य
अरुण पुस्तक **पढ़ता** है	पुस्तक अरुण से पढ़ी जाती है
(ख) अकर्मक क्रिया से	भाव-वाच्य
मैं नहीं हँसता	मुझ से नहीं हँसा जाता

(२) कर्मवाच्य बनाने के लिए कर्म को कर्त्ताकारक में और कर्त्ता को करण कारक में रखते हैं।

(३) क्रिया का रूपान्तर—कर्मवाच्य रूप बनाने के लिए मुख्य क्रिया के सामान्य भूतकाल के रूप में 'जाना' क्रिया का अभीष्ट काल, पुरुष, वचन और लिङ्ग के अनुसार रूप जोड़ा

जाता है। जैसे--

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
(१) राम पत्र पढ़ता है।	राम से पत्र पढ़ा जाता है।
(२) राम पत्र पढ़ रहा है।	राम से पत्र पढ़ा जारहा है।
(३) राम पत्र पढ़ चुका है।	राम से पत्र पढ़ा जाचुका है।
(४) राम ने पत्र पढ़ा।	राम से पत्र पढ़ा गया।
(५) राम पत्र पढ़ रहा था।	राम से पत्र पढ़ा जारहा था।
(६) राम ने पत्र पढ़ा था।	राम से पत्र पढ़ा गया था।
(७) राम पत्र पढ़ेगा।	राम से पत्र पढ़ा जायगा।
(८) राम पत्र पढ़ता रहेगा।	राम से पत्र पढ़ा जाता रहेगा।
(९) राम पत्र पढ़ चुकेगा।	राम से पत्र पढ़ा जा चुकेगा।
(१०) पत्र पढ़ो (विधि क्रिया)	पत्र पढ़ा जाय।
(११) राम पत्री पढ़ता है।	राम से पत्री पढ़ी जाती है।
(१२) राम पत्रियाँ पढ़ेगा।	राम से पत्रियाँ पढ़ी जायँगी।
(१३) राम अक्षर पढ़ता है।	राम से अक्षर पढ़े जाते हैं।
(१४) राम अक्षर पढ़ेगा।	राम से अक्षर पढ़े जायँगे।

(४) उपर्युक्त ११-१२ वाक्य देखो। जब कर्म स्त्री-लिङ्ग में होता है तो क्रिया दोनों वचनों में 'पढ़ी' ही रहती है।

(५) द्विकर्मक क्रियाओं के वाच्य परिवर्तन में प्रधान कर्म को कर्त्ता-कारक के स्थान में रखते हैं और गौण-कर्म का रूप नहीं बदला जाता, जैसे, अध्यापक ने बालकोंको भूगोल पढ़ाया।

यहाँ 'भूगोल' प्रधान कर्म है, अतएव वाच्य-परिवर्तन में 'अध्यापक द्वारा बालकों को भूगोल पढ़ाया गया' होगा।

(६) कर्मवाच्य बनाने में कर्म के अनुसार क्रिया का पुरुष बदल जाता है, जैसे-- वह तुम्हें पीटेगा (अन्य पुरुष) से तुम उससे पीटे जाओगे (मध्यम पुरुष) होगा।

(६) भाव-वाच्य बनाने के लिए कर्त्ताकारक को करण कारक में बदल देते हैं किन्तु क्रिया का रूप सदा अन्य पुरुष, पुल्लिङ्ग, एक वचन ही रहता है, जैसे—

कर्तृवाच्य	भाववाच्य
हम यहाँ नहीं सोते।	हम से यहाँ नहीं सोया जाता
मनुष्य प्रातःकाल नहीं उठेंगे	मनुष्यों से प्रातःकाल नहीं उठा जायगा।

क्रिया के लिङ्ग, वचन और पुरुष

क्रिया के लिङ्ग, वचन और पुरुष कर्तृवाच्य में कर्त्ता के और कर्मवाच्य में कर्म के अनुसार होते हैं।

अभ्यास

[१] धातु से क्या समझते हो? आना, बैठना, सूँघना, हँसना के धातु रूप लिखो।

[२] सकर्मक और अकर्मक में क्या भेद है? चार ऐसी क्रियाओं का वाक्य में अकर्मक और सकर्मक के रूप में प्रयोग करो।

[३] कराना + चाहना, गिरना + जाना, हँसना + लगना, रोना + पड़ना, उठना + सकना को संयुक्त क्रियाओं के रूप में वाक्यों में प्रयुक्त करो।

[४] पीना, खेलना, भेजना, खिलाना और हँसना क्रिया के सकर्मक और प्रेरणार्थक रूप लिखो।

[५] पूरक से क्या समझते हो? क्या सकर्मक क्रिया भी 'पूरक' लेती है ? उदाहरण दो।

[६] निम्न वाक्यों को कर्मवाच्य अथवा भाववाच्य में बदलो:—

[१] उसने न खाना खाया न पानी पिया। [२] वह पुस्तकें गिन चुका हैं। [३] पैसा दे दो।। (४) मैं इस लेखिनी से कुछ नहीं लिख सकता। (५) गाँधी जी ने प्रार्थना पढ़ी। (६) मैं यहाँ नहीं पढ़ सकता। (७) दवात में स्याही डाल दो। (८) यह लड़का नहीं हँसता। (९) मैं इस समय कुछ नहीं लिखता। (१०) क्या आप इस समय पढ़ते हैं ?

(७) निम्न वाक्यों को कर्तृवाच्य के रूप में बदलो:—

(१) उसे कहाँ भेजा गया है ? (२) तुमको दस फल दिये गए। (३) देवेन्द्र से खाया नहीं जाता। (४) उसके कपड़े फाड़ दिए गए और शरीर घावों से छलनी कर दिया गया। (५) विद्रोहियों द्वारा नागरिकों को लूटा गया, निरीह बालकों को मारा गया और स्त्रियों को अपमानित किया गया। (६) कंस किससे मारा गया ? (७) रामायण तुलसीदास द्वारा रची गई है। (८) हमसे इतना नहीं हंसा जा सका। (९) १९४२ के जन-आन्दोलन में सहस्रों देश भक्त मौत के घाट उतार दिये गए। (१०) गर्मी के कारण किसी से काम नहीं किया गया।

अव्यय अथवा अविकारी शब्द

(क्रिया विशेषण)

क्रिया विशेषण के भेदः—

(१) **कालवाचक**—क्रिया के व्यापार का समय बतलाते हैं; जैसे—अब, जब, तब, कल, आज, परसों, अभी, फिर, पीछे, शीघ्र, पहले, सदा, निदान, तुरन्त, आदि।

(२) **स्थान वाचक**—स्थान का बोध कराते हैं, जैसे—वहाँ, कहाँ, जहाँ, तहाँ, नीचे, ऊपर, भीतर, बाहर, पास, दूर, सामने, पीछे, अलग आदि।

(३) **परिमाण वाचक**—परिमाण का बोध कराते हैं; जैसे, इतना, उतना, थोड़ा, कुछ, अति, बहुत, सर्वथा, अत्यन्त, लगभग, पूर्णतया, बस, काफी, ठीक, कदाचित्, अधिक।

(४) **रीति वाचक**—रीति या विधि प्रकट करते हैं, जैसे-जैसे, तैसे, यथा, धीरे-धीरे, ऐसे, वैसे, वृथा, क्रम से, बारी बारी, ध्यान पूर्वक, परस्पर, यों, योंही आदि।

(५) **कारण वाचक**—कारण प्रकट करते हैं; जैसे—क्यों, अतएव, इसलिए, काहे को।

(६) **स्वीकार वाचक**—स्वीकृति का बोध कराते हैं; जैसे हाँ, जी हाँ, ही, तो अवश्य आदि।

(७) **निषेध वाचक**—निषेध प्रगट करते हैं; जैसे—नहीं, न, मत।

(८) **प्रश्न वाचक**—'प्रश्न' का बोध कराते हैं; जैसे—क्यों, कहाँ, क्या, कब, कैसे।

('क्या' प्रश्न वाचक सर्वनाम भी होता है जब वह किसी संज्ञा के लिये प्रयुक्त होता है; जैसे—तुम्हारे पास क्या है ? किसी वस्तु के लिये न आने पर 'क्या' क्रिया विशेषण होता है, जैसे—क्या तुम वहाँ जाओगी ?

(९) **निश्चय वाचक**— निश्चय का बोध कराते है; जैसे ज्यों ही, ज्यों ज्यों, अवश्य, यथार्थ में, सचमुच, निस्सन्देह, मुख्यतः।

(१०) **अनिश्चय वाचक**—जो निश्चय का बोध नहीं कराते हैं; जैसे—संभव, यथासंभव,कदाचित् शायद,बहुत करके।

(२) सम्बन्ध वाचक अव्यय

जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम का सम्बन्ध अन्य शब्दों के साथ प्रकट करते हैं, वे सम्बन्ध वाचक अव्यय हैं, जैसे, घर के पीछे, उपवन के **निकट**, विद्यालय के आगे।

सम्बन्ध वाचक अव्यय प्रायः सम्बन्ध कारक के साथ आते हैं। कभी कभी अन्य विभक्तियों के साथ भी प्रयुक्त होते हैं, जैसे—निर्णय के अनुसार, भरत **ऐसा** भाई, बुद्धि से **परे**, सूर्य का **सा** प्रकाश, लक्ष्मण **सरीखा** भ्राता, मंत्री **सहित** आदि।

कुछ सम्बन्ध वाचक अव्यय ये हैं:—अनुसार, अनुकूल, आगे, आसपास, उपरान्त, ऊपर, ओर, कारण, तले, द्वारा, नाईं, समान, सरीखा, निकट, निमित्त, पूर्वक, प्रति, प्रतिकूल, लगभग, रहित, विरुद्ध, सदृश, साथ आदि।

(३) समुच्चय बोधक अव्यय

भेद—

(१) **संयोजक**—वे शब्द हैं जो दो शब्दों, वाक्यांशों अथवा वाक्यों को एक दूसरे से जोड़ते हैं और साथ ही उनके अर्थों को भी जोड़ते हैं; जैसे, और, व, तथा, तथैव, एवं, भी, तो, तो भी, फिर, तथापि, पुनः, यदि, जो आदि।

(२) **वियोजक**—वे शब्द हैं जो दो शब्दों अथवा वाक्यों को जोड़ते हुए उनके अर्थों का विभाजन या निषेध करते हैं; जैसे, या, वा, अथवा, किंवा, या, चाहे, नकि, नहीं तो, वरन्, किन्तु, पर, परन्तु, लेकिन, बल्कि आदि।

(३) **परिमाणदर्शक**—वे शब्द हैं जो दो वाक्यों को जोड़ते हुए यह प्रकट करें कि दूसरे वाक्य का अर्थ पहले वाक्य के अर्थ का फल है; जैसे, अतएव, सो, अतः, अतएव, क्योंकि, जोकि, कि आदि।

(४) **व्याख्यावाचक**—वे शब्द हैं जो ऐसे शब्दों या वाक्यों को जोड़ते हैं जिनमें पहले शब्द या वाक्य की व्याख्या दूसरे शब्द या वाक्य से होती है; जैसे, अर्थात्, कि, जो, मानो, यानी।

(४) विस्मयादि बोधक अव्यय

विस्मयादि बोधक अव्यय भिन्न भिन्न भावों को प्रकट करता है; जैसे—

(१) **विस्मय**—हैं; अरे, ओहो, क्या।

(२) **हर्ष**--वाह वाह, धन्य धन्य, अहा, शाबाश।

(३) **शोक-पीड़ा**--हा हा, हाय हाय, राम राम, बाप रे।

(४) **घृणा**--धिक् धिक्, छी छी।

(५) **स्वीकृति**--हाँ हाँ, ठीक।

(६) **आशीर्वाद**--जय हो, चिरंजीव रहो, जीते रहो।

(७) **अनुमोदन**—हाँ हाँ ! बहुत अच्छा !

अन्य शब्द, वाक्यांश अथवा पूर्ण वाक्य भी कभी कभी मन के भावों को प्रकट करते हैं; जैसे—

(१) **संज्ञा**--राम राम ! बापरे ! हरे हरे !

(२) **सर्वनाम**--कौन ! क्या !

(३) **विशेषण**--अच्छा ! भला ! अच्छा भला !

(४) **क्रिया**--चल ! हट ! दौड़ियो ! दौड़ियो ! चलियो !

(५) **क्रिया विशेषण**--दूर दूर ! वहीं वहीं !

(६) **समुच्चय बोधक**--तो !

(७) **वाक्यांश**--मर गया रे ! क्या है ! धन्य महाराज ! हाय मरे ! शाबाश !

विस्मयादि बोधक का चिह्न (!) यह है जो शब्द अथवा वाक्य के अन्त में लगाया जाता है।

अभ्यास

(१) रिक्त स्थानों में समुच्चय बोधक अव्यय लगाओ:—

(अ) अरुण जावेगा—प्रभा ? (आ) मैं गंगा स्नान को अवश्य जाता—बीमार हूँ। (इ) वह तीर्थ यात्रा को नहीं गया—उसके पास धन न था। (उ) दाल रोटी खाओगे—पूड़ियाँ। (ऊ) परिश्रम करो—सफलता प्राप्त करो। (ए)—वह निर्धन है—ईमानदार है।

(२) धन्य-धन्य, हे भगवान, छिः छिः, हाँ हाँ, जी हाँ, शाबाश—

इन विस्मयादि बोधक अव्यय शब्दों को वाक्य में प्रयोग करो।

(३) समीप, विपरीत, साथ, समान, पूर्व, पूर्वक, मारे, लगभग—

इनका सम्बन्ध वाचक अव्यय की भाँति वाक्य में प्रयोग करो।

(४) निम्न वाक्यों में क्रिया विशेषण, सम्बन्ध वाचक और समुच्चय बोधक अव्यय छांटो:—(१) या तो तुम कक्षा में आते ही नहीं, यदि आते भी हो तो पीछे बैठते हो। (२) तुम तो अवश्य मेरे साथ चलोगे। (३) आपके पास इतना भी समय नहीं कि बच्चों की देख भाल कर सको ? (४) मैं मेले में न जा सका क्योंकि मेरे पास पैसा नहीं था। (५) ध्यान पूर्वक पढ़ो नहीं तो परीक्षा में सफलता प्राप्त नहीं कर सकते।

शब्दों के विभिन्न प्रयोग

कुछ शब्द वाक्य में विभिन्न शब्द भेदों में प्रयुक्त किये जा सकते हैं। ऐसे शब्दों के कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं।

अच्छा

विशेषण—**अच्छे** कार्यों से संसार में यश मिलता है।

क्रिया विशेषण—तुमने पाठ **अच्छी** प्रकार याद नहीं किया।

संज्ञा—सदैव **अच्छों** की संगति में बैठो।

आगे

संज्ञा—मनुष्य को **आगे** के लिए बचत करना चाहिए।

सम्बन्ध-वाचक अव्यय—नेहरू मंत्रि-मण्डल के **आगे** अनेक समस्याएँ हैं।

कालवाचक क्रिया विशेषण—जो **आगे** होगा सो कोई नहीं जानता।

स्थानवाचक ,, ,, —हम इस घाटी में **आगे** नहीं बढ़ सकते।

उलटा

विशेषण—तुम्हारे **उलटे** कामों से अपयश मिला।

क्रिया विशेषण—अरुण **उलटा** ही सोचता है।

सम्बन्धवाचक अव्यय—भलाई का **उलटा** बुराई है।

एक

विशेषण—**एक** चना भाड़ को नहीं फोड़ सकता।

सर्वनाम—**एक** करता है, सब को बुराई मिलती है।

क्रिया विशेषण—**एक** तुम्हारे ही लिए मैं यहाँ नहीं ठहर सकता।

ऐसा

संज्ञा—**ऐसों** से बात करना भी उचित नहीं।

विशेषण—**ऐसे** कार्य तुम्हें शोभा नहीं देते।

क्रिया विशेषण—**ऐसा** कठिन काम मैंने कभी नहीं किया।

और

संज्ञा—**औरों** की बातों में मत आओ।

विशेषण—हम को **और** काम करने हैं।

समुच्चय-बोधकअव्यय—हम **और** तुम दोनों परीक्षा में सफल होंगे।

कुछ

संज्ञा—दूध में **कुछ** पड़ा है।

विशेषण—**कुछ** काम करो, कुछ काम करो, जग में रहके कुछ नाम करो।

क्रिया विशेषण—इतना दूध **कुछ** कम रहेगा।

समुच्चय-बोधक अव्यय—(१) यह तुम्हारा काम है, **कुछ** हमारा नहीं। (२) कुछ प्रभा ने किया, **कुछ** सीता करेगी।

केवल

विशेषण—**केवल** शक्ति से ही सफलता नहीं मिलती।

क्रिया विशेषण—भारतवासी **केवल** लड़ते ही रहे, संगठन की ओर ध्यान तनिक भी नहीं दिया।

समुच्चय बोधक—जो चाहो सो करो, **केवल** हम से कुछ मत माँगो।

कोई

सर्वनाम—कल **कोई** आया था।

विशेषण—क्या **कोई** मनुष्य ऐसा भी होगा जो स्वयं अपने घर में आग लगादे।

क्रिया विशेषण—इस संस्था में **कोई** दो चार व्यक्ति ही ऐसे हैं जो स्वार्थ त्यागी हैं।

क्या

सर्वनाम—आप **क्या** चाहते हैं ?

विशेषण—आजकल आप **क्या** कार्य कर रहे हैं।

क्रिया विशेषण—**क्या** आपने 'मेरी कहानी' पढ़ी है ?

समुच्चय-बोधक—क्या हिन्दू **क्या** मुसलमान सब गाँधी जी का आदर करते थे।

जो

सर्वनाम—**जो** सोयेगा सो खोयेगा।

विशेषण—तुमने **जो** नीति निश्चित की है,वह उचित नहीं।

समुच्चय-बोधक—क्या भारतीय इतने अनुदार हैं जो शरणार्थियों को आश्रय न देंगे।

यह

सर्वनाम--यह मेरी शक्ति से बाहर है।

विशेषण--यह मनुष्य विश्वास के योग्य नहीं।

क्रिया विशेषण--लोगों ने देखा कि नदी में कूदते ही वह यह डूबा।

साथ

संज्ञा--सच्चे मित्र दुःख में भी साथ देते हैं।

क्रिया विशेषण—राम और कृष्ण साथ-साथ रहते हैं।

सम्बन्ध-वाचक अव्यय—सब के साथ मिलकर रहो।

सीधा

विशेषण—यह सीधा मार्ग है।

क्रिया विशेषण--यहाँ से वह सीधा गया था।

संज्ञा—आजकल सीधे ही ठगाते हैं।

हां

संज्ञा—तुम ने हां की और वह सिर हुआ।

क्रिया विशेषण—हां, तुम चले जाना।

विस्मयादि बोधक—हां-हां, तुम जो चाहो सो करो।

पदान्वय (Parsin

वाक्य में किसी शब्द का प्रकार, पुरुष, लिङ्ग, वचन काल की दृष्टि से उसका प्रयोग और वाक्य के अन्य शब्दों के साथ उसका सम्बन्ध आदि विवरण बतलाने का नाम पदान्वय है। पदान्वय को **पद परिचय, पदव्याख्या या शब्दनिरुक्ति** भी कहते हैं।

(१) **संज्ञा का पदान्वय** करने में (१) संज्ञा का प्रकार, (२) लिङ्ग, (३) वचन, (४) कारक और (५) क्रिया अथवा अन्य शब्दों के साथ सम्बन्ध बताना चाहिये। उदाहरण:—

(क) **देवेन्द्र, तुम्हारी बहिन, शीला** ने **विज्ञान** की **पुस्तकें मेज पर** रख दी हैं।

देवेन्द्र—व्यक्तिवाचक संज्ञा, एकवचन, पुल्लिंग, सम्बोधन कारक।

बहिन—जातिवाचक संज्ञा, एक वचन, स्त्रीलिंग, कर्त्ताकारक, 'शीला' के साथ 'समानाधिकरण'।

शीला ने—व्यक्तिवाचक संज्ञा, एकवचन, स्त्रीलिंग, कर्त्ताकारक में, 'रख दी हैं' क्रिया का कर्त्ता।

विज्ञान—भाववाचक संज्ञा, एक वचन, पुल्लिंग, सम्बन्धकारक, 'पुस्तकें' से सम्बन्ध।

पुस्तकें—जातिवाचक संज्ञा, बहुवचन, स्त्रीलिंग, कर्मकारक, 'रख दी हैं' क्रिया का कर्म।

मेज पर—जातिवाचक संज्ञा, एकवचन, स्त्रीलिंग, अधिकरण कारक, 'रख दी हैं' क्रिया के लिये।

सर्वनाम का पदान्वय

सर्वनाम का पदान्वय भी संज्ञा की ही भाँति होता है। अतएव (१) प्रकार, (२) वचन, (३) लिङ्ग, (४) कारक और (५) वाक्य के

अन्य शब्दों के साथ सम्बन्ध बताने के अतिरिक्त (६) पुरुष (केवल पुरुषवाचक सर्वनाम में) और बताना चाहिये।

उदाहरण:—**मैंने उनसे यह** कहा, "**आप क्या** कहते हैं और **कौन** सुनता है ? आप **किसी** से **कुछ** न कहें। **जो** करता है, **वह अपने** ही स्वार्थ के लिये।"

मैंने—पुरुषवाचक सर्वनाम, उत्तम पुरुष, पुल्लिङ्ग, एक वचन, कर्त्ताकारक, 'कहा' क्रिया के लिये।

उनसे—पुरुषवाचक सर्वनाम, अन्य पुरुष, बहुवचन, पुल्लिंग, करण कारक, 'कहा' क्रिया के लिये।

यह—निश्चय वाचक सर्वनाम, एकवचन, पुल्लिंग, कर्मकारक, 'कहा' क्रिया का कर्म।

आप—प्रश्नवाचक सर्वनाम, अन्य पुरुष, पुल्लिंग, एक वचन, कर्म, कारक, "कहते हैं" क्रिया का कर्म।

कौन—प्रश्नवाचक सर्वनाम, पुल्लिंग, एक वचन, कर्त्ताकारक, "सुनता है" क्रिया का कर्त्ता।

किसी से—अनिश्चयवाचक सर्वनाम, अन्यपुरुष, पुल्लिंग, एकवचन, करण कारक, 'कहें' क्रिया के लिये।

कुछ—अनिश्चयवाचक सर्वनाम, पुल्लिंग, एकवचन, कर्मकारक, 'कहें' क्रिया का कर्म।

जो—सम्बन्धवाचक सर्वनाम, पुल्लिंग, एकवचन, कर्त्ताकारक, "करता है" क्रिया का कर्त्ता।

वह—निश्चयवाचक सर्वनाम, पुल्लिंग, एकवचन कर्त्ताकारक, 'करता है' क्रिया (लुप्त) का कर्त्ता।

अपने—निजवाचक सर्वनाम, अन्यपुरुष, पुल्लिंग, एक वचन, सम्बन्ध कारक, 'स्वार्थ' से सम्बन्धित।

विशेषण शब्दों का पदान्वय

विशेषण के पदान्वय में (१) प्रकार (२) लिङ्ग और वचन (३) सम्बन्ध—वह विशेष्य जिसकी विशेषता प्रकट करे; और (४) अवस्था (Degree) दी जाती है।

उदाहरण—**जिस** मनुष्य के कार्य में सत्यता होती है उस पर प्रलोभनों का कभी **कोई** प्रभाव नहीं पड़ता; परन्तु **कुछ** मनुष्य चाहे **कितना** ही धन रखते हों, **चार** पैसा के लिये भी **निन्दनीय** कार्य करने से नहीं हिचकते।

जिस—संकेतवाचक विशेषण, पुल्लिंग, एकवचन, इसका विशेष्य 'मनुष्य' है।

कोई—परिणाम वाचक विशेषण, 'प्रभाव' इसका विशेष्य है।

कुछ—अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण, 'मनुष्य' इसका विशेष्य है।

कितना—परिणाम वाचक विशेषण, 'धन' विशेष्य है।

चार—निश्चित संख्या वाचक विशेषण, "पैसों" इसका विशेष्य है।

निन्दनीय—गुणवाचक विशेषण, 'कार्य' की विशेषता प्रकट करता है।

क्रिया का पदान्वय

क्रिया के पदान्वय में (१) प्रकार, (२) वाच्य, (३) काल, (४) लिङ्ग, (५) वचन और (६) सम्बन्ध-क्रिया का कर्त्ता, कर्म या परक से सम्बन्ध बतलाना चाहिये।

उदाहरण—गुरु जी ने **कहा** कि युवकों को यही उचित है कि वे अपने लिये वही काम **सोचें** जिसे वे भली भाँति **कर सकें**।

कहा—सकर्मक क्रिया, सामान्य भूतकाल, अन्य पुरुष, पुल्लिङ्ग एक वचन, कर्तृवाच्य, इसका कर्त्ता 'गुरुजी' और कर्म 'युवकों को यही उचित है,—है'।

है—अकर्मक क्रिया, कर्तृवाच्य, सामान्य वर्तमान, पुरुष, लिङ्ग और वचन कर्त्ता 'युवकों' के अनुसार है और 'उचित' पूरक है।

सोचें—सकर्मक क्रिया, कर्तृवाच्य, सामान्य भविष्यत् काल, इसके पुरुष, लिङ्ग और वचन कर्त्ता 'वे' के अनुसार और 'काम' इसका कर्म है।

कर सकें—संयुक्त क्रिया, कर्तृवाच्य, सामान्य भविष्यत् काल, इसके पुरुष, लिङ्ग, वचन कर्त्ता 'वे' के अनुसार हैं।

अव्यय का पदान्वय

(१) क्रिया विशेषण के पदान्वय में (१) प्रकार और (२) सम्बन्ध—वह क्रिया जिसकी विशेषता प्रगट की गई हो—बताना चाहिये।

(२) सम्बन्ध वाचक अव्यय के पदान्वय में उनके प्रकार लिख कर उन संज्ञा या सर्वनामों को बताना चाहिये, जिन के लिये वे प्रयुक्त हुए हैं।

(३) समुच्चय बोधक अव्यय के पदान्वय में उनके प्रकार लिखकर उन शब्दों, वाक्यों अथवा वाक्यांशों को भी बताना चाहिये जिन को वे जोड़ते अथवा अलग करते हैं।

(४) विस्मयादिबोधक के पदान्वय में शब्दों के प्रकार लिख कर यह बताना चाहिये कि वे किन भावों को सूचित करते हैं।

उदाहरण—अरे ! आप उधर जा रहे हैं और मैं यहां राज भवन के भीतर सुख भोगूँ ?

अरे—विस्मयादि बोधक अव्यय, आश्चर्य प्रकट करता है।

उधर—स्थान वाचक क्रिया विशेषण, 'जा रहे हैं' क्रिया की विशेषता प्रकट करता है।

और—संयोजक समुच्चय बोधक अव्यय, 'आप·····हैं' तथा 'मैं·····भोगूँ'—इन दोनों वाक्यों के अर्थों को जोड़ता है।

यहाँ—स्थान वाचक क्रिया विशेषण, 'भोगूँ' क्रिया की विशेषता प्रकट करता है।

भीतर—सम्बन्ध वाचक अव्यय, 'राज भवन' का सम्बन्ध वाक्य में प्रकट करता है ।

विशेष शब्दों का पदान्वय

(१) मोहन हमारी कक्षा का **राम मूर्ति** है।

राम मूर्ति—व्यक्ति वाचक संज्ञा, एक वचन, पुल्लिंग, जाति वाचक संज्ञा के समान प्रयुक्त, "है" क्रिया का पूरक।

(२) **दुराचारी** क्या नहीं कर सकता ?

दुराचारी—गुणवाचक विशेषण, जाति वाचक संज्ञा के समान प्रयुक्त, एक वचन, पुल्लिंग, 'कर सकता' क्रिया का कर्त्ता।

(३) "मैं" शब्द सर्वनाम है।

मैं—व्यक्तिवाचक संज्ञा, पुल्लिंग, एकवचन, कर्त्ताकारक, इसकी क्रिया "है" है।

(४) तुमको अभी बाजार जाना है।

तुमको—पुरुषवाचक सर्वनाम, मध्यम पुरुष, बहुवचन, पुल्लिंग, इसका रूप 'कर्म' कारक के समान है, किन्तु प्रयोग में कर्त्ता कारक है; इसकी क्रिया "जाना है" है।

(५) उसकी आँखें बड़ी-बड़ी हैं।

बड़ी-बड़ी—गुणवाचक विशेषण, स्त्री लिंग, बहुवचन, अपने विशेष्य 'आँखें' से परवर्ती, द्विरुक्ति।

(६) उसे मोहन को धक्का न देना चाहिये।

देना चाहिये—क्रिया सकर्मक, अन्य पुरुष, पुल्लिंग, एकवचन, कर्तृवाच्य, इसका कर्त्ता 'उसे' और कर्म 'धक्का' है। विधि क्रिया—कर्तव्य प्रकट करती है।

अभ्यास

[१] पदान्वय से क्या समझते हो? इसके अन्य क्या नाम हैं?

[२] निम्नलिखित वाक्यों के प्रत्येक शब्द का पदान्वय करो:—

(१) क्यों बकते हो? (२) क्यों क्यों मत कहो (३) परिश्रम कभी मनुष्य का महत्त्व नहीं घटा सकता। (४) तुलसीदास को उनकी स्त्री के एक ही मर्म भेदी वाक्य ने इतना बड़ा महात्मा और कवि बनादिया था। (५) जो लोग अधिक प्रतिभाशाली होते हैं; उनकी प्रवृत्ति किसी प्रकार दबाए दब ही नहीं सकती। (६) हाँ, हाँ, वही वारि जो

मुझसे हरण किया जाता है। (७) कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है। (८) यहाँ से हट जाओ नहीं तो मैं पीट दूँगा। (९) क्या आपको ज्ञात है कि आज स्वतंत्रता समारोह है? (१०) सेवा करे सो मेवा खाय

(३) निम्नलिखित रेखांकित पदों की शब्द-निरुक्ति करोः—

(अ) काजर की **कोठरी** में कैसो हू **सयानो** जाय,
एक लीक काजर की **लागि** है पै लागि है।

(आ) चिन्ता अधिक चिता अहै, दहै देह सब काल।
यासों चिन्ता ना करिय, धरिय धीर हर हाल॥

हिन्दी में शब्द-निर्माण

शब्दों के मूल रूप में सन्धि, समास, उपसर्ग और प्रत्यय के प्रभाव से अनेक परिवर्तन होकर उनका निर्माण होता है। 'संधि' का विवेचन किया जा चुका है, आगे उपसर्ग, प्रत्यय और समास के प्रकरण दिये गये हैं।

उपसर्ग और प्रत्यय

शब्दांश (affix)–उस ध्वनि को कहते हैं जिसका स्वतन्त्र अर्थ नहीं होता; किन्तु अन्य शब्दों के संयोग से नवीन सार्थक शब्द बना देती है; जैसे; अभाव में 'अ' और मिठास में 'स'।

शब्दांश के दो भेद हैंः—(१) उपसर्ग और (२) प्रत्यय।

उपसर्ग (Prefix)—वह शब्दांश है जो किसी शब्द के प्रारम्भ में जुड़कर भिन्न अर्थसूचक शब्द बनाता है; जैसे, अपमान में 'अप'।

प्रत्यय(Suffix)–वह शब्दांश है जो किसी शब्द के अन्त में

जुड़कर भिन्न अर्थसूचक शब्द बना देता है; जैसे, लौकिक में "इक"।

(उपसर्ग और प्रत्यय अकेले प्रयुक्त नहीं होते और न कोई स्वतन्त्र अर्थ रखते हैं। इनको स्वतन्त्र शब्द अथवा अक्षर भी नहीं कहा जा सकता। इनका कार्य यही है कि अन्य शब्दों के साथ जुड़कर अर्थ में कुछ विशेषता प्रकट करते हैं अथवा उनके आशय को पूर्ण रूप से परिवर्तित कर देते हैं, जैसे, जय (साधारण जीत); विजय (विशेष जीत); स्वार्थ-निस्वार्थ। संस्कृत में उपसर्ग की तुलना दीपक से की गई है। जिस प्रकार दीपक किसी वस्तु को केवल प्रकाशित ही करता है, बनाता नहीं, उसी प्रकार उपसर्ग शब्दों के विभिन्न अर्थों को यथाक्रम प्रकाशित करते हैं।)

उपसर्ग

(संस्कृत उपसर्ग)

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
अति	अधिकता	अतिशय, अत्युक्ति
अधि	प्रधानता, श्रेष्ठता	अधिपति, अध्यक्ष, अधिकार
अनु	सादृश्य, पश्चात्, क्रम	अनुरूप, अनुज, अनुशासन
अप	हीनता, लघुता	अपमान, अपशब्द
अभि	अधिकता, ओर, सामने	अभ्युदय, अभिमुख
अव	अनादर, पतन, विस्तार	अवगुण, अवनति, अवकीर्ण

आ	विरोध, सीमा, सङ्केत	आगमन, आजीवन, आजन्म
उत्	ऊपर, ऊँचा, श्रेष्ठ	उत्थान, उत्तम, उन्नति
उप	समीपता, लघुता, समानता	उपवन, उपकूल, उपमंत्री
दुस्, दुर	बुरा	दुस्साहस, दुर्जन
निः, निस्	निषेध	निर्दोष, निस्सन्देह
परा	विपरीत. सीमा, अधिकता	पराजय, पराकाष्ठा, पराक्रम
परि	अतिशय, चारोंओर	परिपूर्ण, परिभ्रमण
प्र	अतिशय, उत्कर्ष, आगे	प्रबल, प्रसिद्ध, प्रस्थान
प्रति	प्रत्येक, समानता, विरोध	प्रतिक्षण, प्रतिनिधि, प्रतिवादी
वि	भिन्नता, हीनता, विशेषता	वियोग, विदेश विधवा, विज्ञान
स,-सम्	संयोग, पूर्णता	संकल्प, संसर्ग
सु	अच्छा, सहज	सुकर्म, सुगमता, सुकृत, सुयश

कभी कभी एक ही शब्द में दो तीन उप सर्ग लगाकर नए शब्द निर्माण किये जाते हैं; जैसे, निरपराध (निः + अप + राध), अनुसन्धान (अनु + सम + धान), प्रत्युपकार। (प्रति + उप + कृ), दुर्व्यवहार (दुः + वि + अव + हार)।

संस्कृत के कुछ अव्यय और विशेषण शब्द भी उपसर्गों के समान प्रयुक्त होते हैं; जैसे—

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
अ	अभाव, निषेध	अज्ञान, अधर्म, अनीति
अन्	नहीं, अनेक	अनजान, अनन्तर
अधः	नीचे, निम्न	अधोमुख, अधःपतन
अन्तः, अन्तर	दूसरा, भीतर	पाठान्तर, अन्तःकरण
इति	ऐसा	इतिवृत्त, इतिहास
कु, का	बुरा	कुशकुन, कापुरुष
चिर	बहुत, सदैव	चिर वियोग, चिरकाल, चिरायु
न	अभाव	नपुंसक, नास्तिक
नाना	बहुत	नाना रूप, नाना प्रकार
पुरस	पूर्व, आगे	पुरोहित, पुरस्कार, पुरोवर्ती
पुरा	पहला, प्राचीन	पुरातन, पुरातत्व
पुनर्	फिर, दुबारा	पुनर्जीवन, पुनरुद्धार
प्रातः	सवेरे	प्रातःकाल, प्रातःगमन
बहिर	बाहर	बहिर्जगत, बहिर्मुख
स	सहित	सनाथ, सजीव
सत्	अच्छा	सज्जन, सत्पात्र, सच्चरित्र
सह	साथ	सहकारी, सहगमन

स्व	अपना	स्वकर्म, स्वदेश
स्वयं	अपने आप	स्वयंरुह, स्वयंवर

हिन्दी उपसर्ग

कुछ हिन्दी शब्दांश जो संस्कृत विशेषण तथा अव्ययों के अपभ्रंश रूप हैं; तद्भव शव्दों के आगे उपसर्ग की भाँति प्रयुक्त किये जाते हैं :—

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
अ	अभाव, निषेध	अथाह
अध	आधा	अधपका, अधमरा
अन	अभाव, निषेध	अनमेल, अनमना, अनपढ़
अप	बुरा, हीन	अपसगुन, अपजस
उन	एक कम	उनसठ, उनचास
औ	हीनता, बुरा	औगुन, औघट
क, कु	बुराई, नीचता	कपूत, कुटेव, कुनाज
दु	बुरा, हीन	दुबला, दुकाल
नि	निषेध, अभाव	निडर, निधड़क, निकम्मा
बिन	निषेध	बिनकाम, बिनजाने
भर	पूर्ण	भरसक, भरपेट
स, सु	उत्तमता, साथ	सगुन, सरस, सकुशल, सुराज, सुगात

विदेशी भाषाओं के उपसर्ग

अरबी, फ़ारसी, और अंग्रेज़ी आदि विदेशी भाषाओं के संसर्ग से हिन्दी में इन के उपसर्ग भी प्रयुक्त होते हैं; जैसेः—

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
कम	थोड़ा	कमज़ोर, कम अक्ल
ख़ुश	उत्तम	ख़ुशबू, ख़ुशदिल, ख़ुशकिस्मत
ग़ैर	निषेध	ग़ैर हाज़िर, ग़ैर कानूनी
दर	में	दरअसल, दरकार
ना	नहीं	नालायक, नापसन्द, नाखुश
ब, बा	साथ, अनुसार	बदौलत, बाकायदा
बद	बुरा	बदनाम, बदबू, बदमाश
बे, ला	बिना	बेईमान, बेइज़्ज़त, लापरवाह
सर	मुख्य	सरहद, सरपंच
हम	समान	हमदर्द, हमराह
हर	प्रत्येक	हररोज, हरसाल, हरएक

अंगरेज़ी-उपसर्ग

डिप्टी (छोटाई का सूचक)—डिप्टी कमिश्नर

सब (,, ,, ,,)—सब-जज, सब-रजिस्ट्रार

हेड (उच्चता का सूचक) हेड पंडित, हेड क्लर्क

सूचना—उपसर्ग जोड़ने में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जिस भाषा के शब्द हों उनके पूर्व उसी भाषा के उपसर्ग लगाना चाहिए।

प्रत्यय

प्रत्यय के दो भेद हैं:--(१) कृत और (२) तद्धित।

(१) **कृत**—क्रिया अथवा धातु के अन्त में जो प्रत्यय लगाये जाते हैं उन्हें कृत प्रत्यय कहते हैं और उनके संयोग से जो शब्द बनते हैं उन्हें **कृदन्त** कहते है, जैसे, बोलने वाला, घबराहट

(२) **तद्धित**--संज्ञा और विशेषण शब्दों के अन्त में जो प्रत्यय लगते हैं उन्हें तद्धित और उनके संयोग से बने शब्दों को **तद्धितान्त** कहते हैं। जैसे, लघुता, धनवान्।

कृदन्त

कृदन्त शब्दों के पांच भेद हैं:—

(१) कर्तृवाचक-वे कृदन्त हैं जो क्रिया के करने वाले का बोध कराते हैं; जैसे, गायक (गै + अक)। इसके मुख्य प्रत्यय ये हैं:--

(क) **वाला**—लिखने वाला, पढ़ने वाला, भागने वाला।

(ख) **हारा**—मारनहारा, पालनहारा। (ग) **क**—गायक पूजक, तैराक, विचारक। (घ) **इया**—जड़िया। (ङ) **वैया**—गवैया, नचवैया। (च) **हुआ** (अकमर्क क्रियाओं में)—सोया हुआ, गाया हुआ। (छ) संस्कृत **'त'**—सुप्त बालक, नत मनुष्य।

(ज) ऊ--खाऊ, कमाऊ, उड़ाऊ। (झ) इयल--मरियल, अड़ियल। (ञ) ओड़ा—हँसोड़ा। (ट) ऐत—फिकैत।

(२) कर्मवाचक— जो कृदन्त सकर्मक क्रिया के सामान्य भूत में 'हुआ', 'हुई' लगाकर बनाये जाते हैं; जैसे, सुना हुआ, देखी हुई। संस्कृत सकर्मक क्रियाओं में 'त' लगने से भी कर्मवाचक शब्द बनते हैं; जैसे, कथित, वर्णित, आविष्कृत।

(३) करण वाचक--जो क्रिया के साधन का बोध कराता है; जैसे, रेती, झाड़ू, कसौटी। क्रियाके चिन्ह 'ना' का लोप करके आ, आनी, ई, ऊ, औटी, न, नी, पा जोड़ने से करणवाचक कृदन्त संज्ञाएं बनती हैं, जैसे, झूलना से झूला, फूलना से फूला, मथना से मथानी, रेतना से रेती, झाड़ना से झाड़ू कसना से कसौटी, बेलना से बेलन, फूँकना से फूँकनी, ढकना से ढकनी,। कभी कभी क्रिया के सामान्य रूप में अथवा उसमें कुछ हेर फेर करने से भी ऐसे शब्द बनते हैं; जैसे, ओढ़ना से ओढ़ना, बिछाना से बिछौना, ढकना से ढक्कन,।

(४) **भाव वाचक**—जो भाव सूचक शब्द है; जैसे, महत्त्व, दिखावा।

भाववाचक कृदन्त बनाने के नियम:—

(अ) क्रिया के 'ना' का लोप करके केवल 'धातु' ही भाववाचक का रूप प्रकट करती है; जैसे, खेलना से खेल, दौड़ना से दौड़, झपटना से झपट।

(आ) धातु में आ, आई, आन, आप, आव, आवा, ई, औनी, त, ती, न, वट, हट आदि प्रत्ययों के जोड़ने से भाव-

वाचक कृदन्त बनते हैं; जैसे, (१) फेरना से फेरा, घेरना से घेरा (२) हँसना से हँसाई, पढ़ना से पढ़ाई, लड़ना से लड़ाई। (३) उड़ना से उड़ान, उठना से उठान, थकना से थकान, (४) मिलना से मिलाप (५) खिंचना से खिंचाव, बहना से बहाव; चढ़ाव, छिड़काव आदि। (६) बुलाना से बुलावा; दिखाना से दिखावा; भुलाना से भुलावा। (७) बोलना से बोली; हँसना से हँसी। (८) मिलना से मिलौनी, मिलनी। (९) बचना से बचत; खपना से खपत (१०) घटना से घटती, बढ़ना से बढ़ती (११) लेना से लेन; देना से देन; लगना से लगन। (१२) मिलावट, बनावट, चिल्लाहट।

(इ) क्रिया का सामान्य रूप भी भाववाचक का काम देता है; जैसे, लड़ना-भिड़ना; खाना-पीना, खेलना-कूदना।

(५) क्रिया द्योतक—वे कृदन्त शब्द जो क्रिया के होने का अर्थ प्रकट करते हों। इन कृदन्तों के बनाने के लिये—

(१) 'ते' या 'ते हुए' लगाते हैं; जैसे, जाते समय खाते हुए।

(२) हेतुहेतुमद् भूत के रूप में 'हुआ' प्रत्यय के संयोग से बनते हैं; जैसे— रोता हुआ; खाता हुआ।

(३) क्रिया का सामान्य रूप भी इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे—सोना, पढ़ना, घूमना; पढ़ना आवश्यक है।

तद्धित

तद्धित संज्ञाओं के मुख्य छः भेद हैं :—

अपत्यवाचक–जिन शब्दों से सन्तानत्व अथवा अनुयायी अर्थ का बोध होता हो, जैसे, सुमित्रा से सौमित्र, शिव से शैव। अपत्य-वाचक शब्द बनाने के लिए :—

(क) किसी संज्ञा के आगे 'ई, य, आयन, एय, इक' जोड़ते हैं, जैसे, रामानन्द से रामानन्दी, बदर से बादरायण, राधा से राधेय, चणक से चाणक्य, रेवती से रैवतक, कुन्ती से कौन्तेय।

(ख) संज्ञा के पूर्व लघु स्वर को दीर्घ करने के साथ अन्त के 'उ' को 'अव' कर देते हैं, जैसे, कुरु से कौरव, रघु से राघव, पाण्डु से पाण्डव, विष्णु से वैष्णव, वसुदेव से वासुदेव, यदु से यादव, मनु से मानव।

(२) **कर्तृवाचक**–जिन शब्दों से काम के करने वाले का ज्ञान होता हो, जैसे, लकड़ी से लकड़हारा। कर्तृवाचक शब्द हारा, वाला और इ या प्रत्यय लगाने से बनते हैं; जैसे, लकड़हारा, गाड़ी वाला, पनिहारा, रोकड़िया, फेरी वाला, चुड़िहारा।

(३) **स्त्रीवाचक**—जिन शब्दों से स्त्रीत्व प्रकट होता है, जैसे, शिव से शिवा। स्त्री-वाचक शब्द बनाने के लिए ई, आ, आइन आदि प्रत्यय जोड़ते हैं, जैसे, देव से देवी, बालक से बालिका, नर से नारी, कमल से कमला, ठाकुर से ठकुराइन, ग्वाला से ग्वालिन, बाल से बाला, करी से करिणी आदि।

(४) **ऊन-वाचक**—ये शब्द लघुता, ओछापन या हीनता व्यंजित करते हैं, जैसे; लाठी से लठिया, रस्सा से रस्सी। आ, ई, टी, डी, री, इया आदि प्रत्यय संज्ञा के आगे जोड़कर ऊन-वाचक शब्द बनाये जाते हैं। जैसे, लल्लू से ललुआ, कटोरा से कटोरी, टाँग से टँगड़ी, कोठा से कोठरी, डिब्बा से डिबिया आदि।

(५) **सम्बन्ध-वाचक**—स्वामित्व, (अधिकार) के सम्बन्ध का बोध कराने वाले प्रत्यय जोड़ने से कुछ शब्द बनते हैं; जैसे, धन से धनिक, धनवान्, धनी; गुण से गुणवान्, गुणी आदि।

(६) **भाववाचक**—जिन शब्दों से 'भाव' व्यंजित होता है। जैसे, सज्जनता, बुढ़ापा, भलाई, मित्रता आदि।

(७) **गुण-वाचक**—जिन शब्दों से किसी वस्तु के गुण का बोध होता हो; जैसे, दयालु। गुण-वाचक विशेषण संज्ञा शब्दों के अन्त में आ, ई, ऊ, ला, इक, इत, ऐल, आलु, वान्, ईला, ऐला, बंल, वान् आदि प्रत्यय जोड़ने से बनते हैं, जैसे; प्यास से प्यासा; दुख से दुखी, पेट से पेटू, देव से दैविक, लोक से लौकिक, इतिहास से ऐतिहासिक, दुःख से दुःखित, दबाव से दबैल, कृपा से कृपालु, गुण से गुणवान्, छवि से छबीला, वन से बनैला, धन से धनवान्; श्री से श्रीमान् आदि।

सूचना—भाववाचक संज्ञा और विशेषण बनाने के नियम संज्ञा और विशेषण के प्रकरण में देखो।

अभ्यास

(१) शब्दांश से क्या समझते हो? शब्दांश के कितने भेद हैं?

(२) उदाहरणों द्वारा स्पष्ट करो कि उपसर्ग और प्रत्यय से शब्दों में किस प्रकार परिवर्तन हो जाते हैं ?

(३) नीचे लिखे शब्दों में उपसर्ग लगाने से क्या विशेषता आगई है ? निर्धन-निष्फल । उपकार-उपमंत्री । आवास-आजानु। विज्ञान विकार ।

(४) 'अनु' उपसर्ग किन अर्थों में प्रयुक्त होता है ? गामी, सरण, रूप, ज, शासन, ताप, चर, मान, करण, ग्रह और गमन लगाने से कौन कौन अर्थ निकलते हैं ?

(५) निम्न शब्दों के उपसर्ग अलग करो:—
अत्युक्ति, अध्यक्ष, अनुष्ठान, अपहरण, अपकर्ष, अभ्यागत, अभ्युदय, अवज्ञा, उन्नति, उद्भव, दुर्लभ, निश्चल, निर्दोष, प्रख्यात, प्रत्यक्ष, प्रत्येक, संकल्प, संस्कृत, स्वागत ।

(६) निम्न शब्दों के अर्थ में क्या भेद है ?
प्रधान-परिधान । अवज्ञा-आज्ञा । विभव-पराभव । आग्रह-अनुग्रह । आदान-प्रदान । प्रचार-प्रसार ।

(७) 'कृत' प्रत्यय का क्या प्रयोग है ? निम्नलिखित क्रियाओं से कृदन्त बनाओ:—लिखना, गाना, मरना, कसना, चढ़ना, लूटना, भूलना ।

(८) 'तद्धितान्त' से क्या तात्पर्य है ? निम्न संज्ञाओं से तद्धितान्त पद बनाओ:—पति, कुरु, पंजाब, विष्णु, समाज, शक्ति, दयानन्द, तरुण, शरीर, शिल्प ।

(९) निम्नलिखित शब्दों से अपत्यवाचक संज्ञाएँ बनाओः—
सूर्य (सौर), वसुदेव, दशरथ, पृथा (पार्थ-अर्जुन), कौशल्या, केकय, मगध, कुन्ती दिति, पृथ्वी (प्रथु, पार्थिव), जिन, बुद्धि।

(१०) ऊनवाचक शब्द बनाओः—बक्स, सन्दूक, पहाड़, पंखा, आम, फाँक, थाल, मटका, हथौड़ा।

(११) भाव वाचक संज्ञाएँ बनाओ—स्वस्थ, प्रचुर, हँसना, सरल, बालक, महान्, सुख, समीप, गढ़ना, शिशु।

(१२) विशेषण बनाओ—धर्म, उदर, भूख, पीड़ा, तृषा, इधर, आकर्षण, बाजार, ताँगा, मैल।

समास

उपसर्ग और प्रत्यय लगाने से नवीन शब्द बन जाते हैं; उसी प्रकार दो या दो से अधिक समान पदों या शब्दों के मेल से (प्रत्यय या विभक्ति के लोप से) समास बनते हैं; जैसे,रामानुज (राम + अनुज)।

सामासिक पदों को प्रत्यय या विभक्ति सहित अलग-अलग करने का नाम विग्रह है; जैसे, कृष्णावतार = कृष्ण + अवतार

समास छः प्रकार के होते हैं:---(१) अव्ययीभाव, (२) तत्पुरुष, (३) कर्मधारय, (४) द्विगु, (५) द्वन्द्व, और (६) बहुब्रीहि।

(१) अव्ययी भाव–अव्यय और संज्ञा शब्दों के मिलने से अव्ययीभाव समास बनते हैं और अव्यय की भाँति प्रयुक्त होते

हैं। इस समास में प्रथम पद प्रधान होता है और संपूर्ण पद क्रिया विशेषण अव्यय होता है। यथाशक्ति, यथाविधि, प्रतिदिन आजन्म, यावज्जीवन, आजानु, उपकूल, अनुकूल, निर्विघ्न, आदि अव्ययीभाव समास के उदाहरण हैं।

द्विरुक्ति अर्थात् जब कोई शब्द दो बार प्रयुक्त होकर क्रिया विशेषण का कार्य करता है तो वह पद भी अव्ययी भाव समास होता है; जैसे, धीरे-धीरे, गली-गली, घड़ी-घड़ी, चट-पट। कभी-कभी दोनों शब्दों के बीच में 'ही' लगाते हैं; जैसे मन ही मन, घर ही घर, बात ही बात।

हिन्दी, उर्दू और फारसी के शब्द भी अव्ययीभाव समास के समान प्रयुक्त होते हैं; जैसे—(हिन्दी में) निधड़क, भरपेट, अनजाने, एकाएक, हाथोंहाथ; (उर्दू में) हर रोज, बेशक, बखूबी नाहक, बेख़ौफ; (हिन्दुस्तानी में) हर घड़ी, हरदिन, बेकाम, बेखटके, हरसाल, भरपूर आदि।

(२) तत्पुरुष--जिस समास में दूसरा पद मुख्य होता है उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। इस समास में प्रथम पद प्रायः संज्ञा अथवा विशेषण शब्द होता है और विग्रह करने में इस शब्द के साथ कर्त्ता और सम्बोधन कारकों के अतिरिक्त शेष कारकों की बिभक्तियाँ लगती हैं; जैसे, **'गृह स्वामिनी'** का प्रबन्ध उत्तम है। यहाँ कहने वाले का तात्पर्य 'स्वामिनी' से है, गृह से नहीं। अतएव दूसरा पद 'स्वामिनी' मुख्य है और प्रथम पद 'गृह की' में सम्बन्ध कारक है। यहाँ सम्बन्ध कारक की विभक्ति 'की' लुप्त है। अतएव गृह स्वामिनी सम्बन्ध तत्पुरुष है।

कारकों की अपेक्षा से तत्पुरुष छः प्रकार के होते हैं:—

कर्म तत्पुरुष—जिसमें प्रथम पद कर्मकारक का अर्थ देता हो। इसमें दूसरा शब्द प्रायः क्रिया या कर्तृवाचक संज्ञा होती है। जैसे, पतित पावन (पतितों को पवित्र करने वाला) मनोहर, (मन को हरने वाला), जीवन दाता (जीवन देने वाला), माखन चोर (माखन को चुराने वाला)। इसी प्रकार कठफोड़ा, चिड़ीमार, गठकटा, जगत्राता, स्वर्ग प्राप्त, आशातीत, देशगत, सुख प्राप्त आदि कर्म तत्पुरुष हैं।

कभी-कभी दूसरा पद संस्कृत धातु 'पा' (रक्षा करना) 'दा' (देना), 'ज्ञा' (जानना) के संक्षिप्त रूप प, द और ज्ञ में से कोई होता है, जैसे—भूप (पृथ्वी को पालने वाला), सुखद (सुख देने वाला), गुणज्ञ (गुण को जानने वाला)। कभी-कभी 'द' के स्थान में 'प्रद' भी लगाते हैं। जैसे—हानिप्रद, शिक्षाप्रद। 'गत' से अन्त होने वाले शब्द, जैसे, करतलगत (हथेली में आया हुआ) कर्म तत्पुरुष होते हैं।

करण तत्पुरुष—जिसमें प्रथम पद से करण कारक का अर्थ निकले, जैसे, ईश्वरदत्त, (ईश्वर से दिया हुआ), कपड़छन (कपड़े से छना हुआ)। इसी प्रकार तुलसी कृत, मदान्ध, भक्तिवश, कष्ट साध्य, मुँह माँगा, मदमाता, भय कम्पित, वाणाहत, मनमाना भी करण तत्पुरुष हैं।

सम्प्रदान तत्पुरुष—जिसमें प्रथम पद के साथ सम्प्रदान कारक की विभक्ति लुप्त हो, जैसे, शरणागत (शरण के लिए

आया हुआ), देश भक्ति (देश के लिए भक्ति), बलि पशु (बलि के लिए पशु) कृष्णार्पण (कृष्ण + अर्पण), पाठशाला, रसोई घर, हथकड़ी, रण निमन्त्रण, ठकुर सुहाती, स्नान घर, साधु दक्षिणा आदि ।

अपादान तत्पुरुष—जिसमें अपादान कारक की विभक्ति 'से' का लोप हो, जैसे, जन्मान्ध (जन्म से अन्धा), ऋण मुक्त (ऋण से मुक्त), काम चोर (काम से भागने वाला), देश निकाला, पद च्युत, जन्म रोगी, बुद्धिहीन, जाति भ्रष्ट, धर्म विमुख, भव-तारण, गुरु भाई आदि ।

सम्बन्ध तत्पुरुष—जिसमें 'का', 'की', 'के' आदि सम्बन्ध कारक की विभक्तियों का लोप होता है, जैसे, राजपुत्र (राजा का पुत्र), राज मन्दिर, पराधीन, घुड़दौड़, अमचूर, मृग छौना, नरेश, महीप । जिन समासों में दूसरा पद 'अर्थ' हो अथवा पदवी वाचक हो, वे सम्बन्ध तत्पुरुष होते हैं, जैसे, स्नेहार्थ, शिक्षार्थ, गोपीनाथ, प्रेमसागर, धर्मावतार इत्यादि । कुछ सम्बन्ध तत्पुरुषों का अन्तिम पद (अ) संख्या सूचक (आ) आदर सूचक अथवा (इ) योग्य, योग या जोग पद होता है, जैसे, काल-कोटि, स्तोत्र शतक, ताप-त्रय, नर-सहस्र, मुनिराय, तीर्थ-राज, कथन योग्य, सम्मान योग्य आदि ।

अधिकरण तत्पुरुष—जिन समासों में 'में, पै, पर' विभक्तियों का लोप होता है, जैसे, नगर वास, (नगर में वास), घोड़ चढ़ा (घोड़े पर चढ़ा हुआ), स्वर्गवासी, निशाचर, कला-प्रवीण, गृह प्रवेश, ग्रामवास, आप बीती आदि ।

तत्पुरुष समास में विग्रह करने पर शब्दों के क्रम में परिवर्तन हो जाता है; जैसे, पण्डित राज या राजपण्डित का विग्रह होगा पंडितों का राजा, मँझधार का धारा के मध्य आदि। संस्कृत में 'बन' शब्द के 'न' का 'ण' हो जाता है; जैसे, आम्रवण (आमों का बन)।

कभी-कभी 'पाल', 'चढ़ा', 'ज्ञ', 'तोड़', 'कर', 'कारक' आदि कृदन्तों के संयोग से तत्पुरुष समास बनता है, जैसे, पृथ्वीपाल, विशेषज्ञ, लाभ कर, हानिकारक, कृतज्ञ, सुखदायी, लोकप, अनुज, घसकटा, बतकहा, घुड़चढ़ा, चिड़ीमार,गाड़ीवान, कोंचवान, आदि।

कुछ शब्दों के आदि में 'अ' और 'अन' लगाने से तत्पुरुष समास बनता है; जैसे, अ + कर्म (अकर्म), अन + उपस्थिति (अनुपस्थिति)। किन्तु सन्दर्भ से ऐसे समास बहुव्रीहि भी होते हैं, जैसे, अब्राह्मण, नहीं है ब्राह्मण जो । इसी प्रकार अन्याय, अनर्थ, अनबन, ना-खुश, अजान आदि शब्द भी संदर्भ से तत्पुरुष और बहुब्रीहि दोनों समास हो सकते हैं।

(३) **कर्मधारय**—विशेषण-विशेष्य और उपमेय तथा उपमान के संयोग से जो समास बनता है, उसे कर्मधारय कहते हैं। इस समास में दोनों ही पद प्रधान होते हैं। विशेषण अथवा विशेषण की भाँति प्रयुक्त होने वाला शब्द प्रथम या द्वितीय दोनों पदों के स्थान पर आसकता है। कभी-कभी दोनों पद विशेषण होते हैं। जैसे—

(क) प्रथम पद विशेषण—सद्गुण, सज्जन, रक्त कमल, पीताम्बर, परमेश्वर, महाजन, महापाप।

(ख) द्वितीय पद विशेषण—नराधम, मुनिवर्य, ऋषिवर।

(ग) दोनों पद विशेषण—श्वेतरक्त, रक्तपीत, भला बुरा, नीच ऊँच, खट मिट्ठा, स्याह सफेद, लाल काला।

कर्मधारय समास के दो भेद हैं:—

(अ) विशेषता वाचक–जिस समास से विशेष्य-विशेषण भाव सूचित हो; जैसे, परमानन्द (परम + आनन्द—इसमें 'परम' विशेषण और 'आनन्द' विशेष्य है), पुरुषोत्तम (पुरुष + उत्तम), दुर्वचन।

(आ) उपमानवाचक–जो समास उपमान और उपमेय से मिलकर बना हो। ऐसे समासों में दोनों पद संज्ञा शब्द होते हैं और उनके बीच में 'रूपी' तथा 'एवं' आदि शब्दों का लोप होता है; जैसे, मुखचन्द्र (मुख रूपी चन्द्र अथवा मुख ही है चन्द्र), चरण कमल, वज्रदेह, प्राणप्रिय, घनश्याम, पुरुष-रत्न, पाणि पल्लव, कमल लोचन, कर्पूर गौर आदि।

कु, दुः, सु के संयोग से भी कर्मधारय समास बनते हैं; जैसे, कुसंग, दुर्व्यवहार, सुसमाचार, दुर्वचन, दुर्जन, का पुरुष (कु + पुरुष), कदन्न (कु + अन्न)।

कभी-कभी कर्मधारय समास में 'सम्बन्ध सूचक मध्यम पद' का लोप रहता है, जैसे घृतान्न (घृत से बना हुआ अन्न), पर्णकुटी (पत्तों की बनी हुई कुटी)।

(४) द्विगु—जिस समास का प्रथम पद संख्या वाचक विशेषण और द्वितीय पद मुख्य हो उसे द्विगु समास कहते हैं। इसमें

प्रथम पद समुदाय या समूह का सूचक होता है; जैसे, नवग्रह—इसमें 'नव' संख्यावाचक विशेषण और 'ग्रह' मुख्य पद है। इसी प्रकार त्रिभुवन, षट्पद, सतनजा, चौबोला, पंसेरी, सप्ताह, त्रिफला आदि द्विगु समास हैं।

सूचना—किसी शब्द में प्रथम पद के संख्या वाचक होने पर ही द्विगु समास नहीं होता; जैसे, दशानन (दश हैं मुख जिसके—रावण)। इसमें प्रथम पद 'दश' संख्यावाचक होने पर भी 'समूह' का सूचक नहीं और 'आनन' पद भी मुख्य नहीं; वरन् 'दश + आनन' पदों से भिन्न अन्य पद 'रावण' प्रधान है। अतएव विग्रह में आये हुए पदों में 'समूह' का भाव न हो और उनका अर्थ प्रधान न होकर सम्मिलित पदों के अर्थ से प्रकट होने वाला अन्य अर्थ ही प्रधान हो तो बहुव्रीहि समास होगा।

(५) द्वन्द्व समास—जिस समास में प्रथम और द्वितीय दोनों पद प्रधान हों और दोनों पदों के बीच समुच्चय बोधक अव्यय 'और', 'या', 'अथवा' का लोप हो, उसे द्वन्द्व समास कहते हैं; जैसे, राम-लक्ष्मण (राम और लक्ष्मण), पाप-पुण्य, घर-द्वार, रात-दिन, तन-मन धन, धर्माधर्म (धर्म अथवा अधर्म), सत्यासत्य, जय-पराजय, संग-कुसंग, सर्दी-गर्मी, आबहवा आदि।

(६) बहुव्रीहि समास—जिस समास में कोई भी पद प्रधान नहीं होता वरन् अन्यार्थ पद प्रधान होता है और समस्त पद किसी दूसरी संज्ञा का विशेषण होता है, उसे बहुव्रीहि समास कहते हैं; जैसे, पीताम्बर = पीत + अम्बर। यहाँ दोनों शब्दों—पीत और अम्बर में से किसी का अर्थ मुख्य नहीं हैं; किन्तु इन दोनों को जोड़ने से एक नवीन अर्थ—'पीत है

अम्बर जिसका' अर्थात् 'कृष्ण' होता है। दोनों पद मिलकर कृष्ण की विशेषता सूचित करते हैं। इसी प्रकार 'वज्रायुध' (वज्र है आयुध जिसका वह-इन्द्र), जितेन्द्रिय (जीती गई हैं इन्द्रियां जिससे), चन्द्रमौलि (चन्द्र है मौलि में जिसके वह-शिव), पंचानन (पंच है आनन जिसके वह—शिव) भी बहुव्रीहि समास हैं।

अर्थ भेद और पूर्वापर सम्बन्ध (सन्दर्भ) से ही बहुव्रीहि समास की पहचान होती है, जैसे—'पीताम्बर लाओ. वाक्य में 'पीताम्बर' कर्मधारय समास है; किन्तु 'पीताम्बर कृष्ण ने गोपियों से कहा' में पीताम्बर बहुव्रीहि समास है।

जिन शब्दों से मिलकर बहुव्रीहि समास बनते हैं वे या तो संज्ञा होते हैं; जैसे, चन्द्रशेखर (चन्द्र है शिरोभूषण जिसका वह-शिव) अथवा विशेषण-विशेष्य; जैसे—मिठबोला (मीठा है बोल जिसका) अथवा उपसर्ग और संज्ञा; जैसे—सपुत्र (साथ है पुत्र जिसका); दुर्भाग्य (दुष्ट है भाग्य जिसका)। अन्तिम प्रकार के समासों में अ, अन्, निः, दुः, वि, परा, सु, कु, स, सह आदि उपसर्ग बहुव्रीहि के पूर्व पद होते हैं; जैसे, अपुत्र (नहीं है पुत्र जिसका), अनादि (नहीं है आदि जिसका), सहोदर (समान है उदर—माता का पेट जिसका) निर्मोही, कुमति, सुमुखी, विमुख, निर्गुण आदि। कुछ फारसी शब्द भी नेक, बद, खुश, ख़ूब, कम, ला को पूर्व में रखकर बहुव्रीहि समास बनाते हैं; जैसे, नेकनियत (नेक है नियत जिसकी), बदमाश, खुशदिल, ख़ूबसूरत, कमबख्त, लाजवाब आदि।

इस समास के विग्रह करने में दोनों शब्दों के अन्त में सम्बन्ध वाचक सर्वनाम ' जो ' अथवा 'वाला' शब्द कर्त्ता, कर्म और सम्बोधन कारकों को छोड़कर लगाया जाता है। अतएव कारकों के विचार से बहुव्रीहि के निम्न प्रकार रूप बनेंगे।

शब्द	विग्रह	'जो' का रूप	नाम
जितेन्द्रिय	जीती गई हैं इन्द्रियाँ जिससे (वाला)	जिससे	करण बहुव्रीहि
दत्तधन	दिया गया है धन जिसके लिये	जिसके लिये	सम्प्रदान ,,
हृतधन	हृत है धन जिससे	जिससे	अपादान ,,
यशोधन	यश है धन जिसका	जिसका	सम्बन्ध ,,
चतुरानन	चार हैं मुख जिसके (वाला)	जिसके	,, ,,
प्रफुल्लकमल	फूले हैं कमल जिसमें	जिसमें	अधिकरण ,,

बहुव्रीहि और अन्य समास

प्रसंग अथवा अर्थ भेद से एक ही शब्द अन्य समास तथा बहुव्रीहि में प्रयुक्त होता है। ऐसे उदाहरण पहले भी दिए जाचुके हैं। कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं :—

कर्मधारय और बहुव्रीहि

स्वच्छ-तोया = स्वच्छ जल–कर्मधारय।

स्वच्छ-तोया = स्वच्छ है तोय जिसका वह–बहुव्रीहि।

महाशय = महान् है आशय–कर्मधारय।

महाशय = महान् है आशय वह–बहुव्रीहि।

अतएव जहाँ दोनों पद मिलकर किसी शब्द के विशेषण हो जावें वहाँ बहुव्रीहि होता है, किन्तु जहाँ दोनों पदों में से कोई एक ' विशेष्य ' होवे वहाँ ' कर्मधारय '।

द्विगु और बहुव्रीहि

त्रिनेत्र = तीन हैं जो नेत्र–द्विगु।

त्रिनेत्र = तीन हैं नेत्र जिसके वह (शिव)–बहुव्रीहि।

षडानन = षट + आनन–द्विगु।

षडानन = षट हैं आनन जिसके वह (कार्तिकेय)–बहुव्रीहि।

जहाँ 'समूह' या 'समुदाय' का अर्थ हो वहाँ द्विगु और जहाँ अन्य अर्थ प्रधान हो वहाँ बहुव्रीहि समास होता है।

अव्ययीभाव और बहुव्रीहि

अकारण = बिना कारण–अव्ययी-भाव।

अकारण = नहीं है कारण जिसका–बहुव्रीहि।

अनर्गल = अर्गला के बिना–अव्ययीभाव।

अनर्गल = नहीं है अर्गला जिसके लिए–बहुव्रीहि।

अव्ययी-भाव में शब्द क्रिया विशेषण का ही काम करता है और बहुव्रीहि में समस्त शब्द संज्ञा के विशेषण का। अव्ययी-भाव में 'अव्यय' संज्ञा के पूर्व एवं सम्पूर्ण पद विभक्ति रहित रहता है तथा बहुव्रीहि में सम्पूर्ण पद संज्ञा की विभक्ति को ग्रहण कर लेता है। अव्ययी-भाव में उसका लिङ्ग नहीं होता, परन्तु बहुव्रीहि में विशेषण के अनुसार लिङ्ग होता है।

समास के सामान्य नियम

१—एक समास में प्रायः एक ही भाषा के शब्द प्रयुक्त किये जाते हैं। कभी-कभी इसका अपवाद भी होता है, जैसे, धन दौलत, रेल गाड़ी।

२—एक ही समास अर्थभेद अथवा पूर्वापर सम्बन्ध (संदर्भ) के अनुसार अथवा विग्रह की रीति से कई प्रकार का होता है, जैसे :—

सत्यव्रत = सत्य और व्रत–द्वन्द्व समास।
सत्यव्रत = सत्य का व्रत–तत्पुरुष।
सत्यव्रत = सत्य ही है व्रत–कर्मधारय।
सत्यव्रत = सत्य है व्रत जिसका–बहुव्रीहि।

(३) जब किसी शब्द में दो से अधिक पद हों तो अन्तिम पद वाला समास ही प्रधान समास माना जाता है। जैसे--

सादर-सास-ससुर-पद पूजा में—
सादर = स + आदर (आदर सहित)–तत्पुरुष।
सास-ससुर = सास और ससुर–द्वन्द्व।
सास-ससुर-पद = सास-ससुर के पद–तत्पुरुष।
सादर सास-ससुर-पद-पूजा = तत्पुरुष।
प्रधान समास--तत्पुरुष।

समास और विग्रह की रीति

१—एक कंगाल राजा से कहने लगा कि हे **लोकनाथ** मैं भी **लोकनाथ** हूँ।

२—**जितेन्द्रिय** मनुष्यों से ही **धर्माधर्म** का निर्णय होता है।

पद	विग्रह	समास
१—लोकनाथ	लोकों का नाथ	सम्बन्ध तत्पुरुष
२—लोकनाथ	लोक हैं नाथ जिसके अर्थात् अनाथ	सम्बन्ध बहुव्रीहि
३—जितेन्द्रिय—	जीती गई हैं इन्द्रियाँ जिनसे	करण बहुव्रीहि
४—धर्माधर्म	धर्म या अधर्म	द्वन्द्व समास

पुनरुक्ति से बने शब्द

(१) एक ही शब्द की पुनरुक्ति—आधिक्य, पृथकता अथवा अर्थ में विशेषता प्रकट करने के लिए किसी शब्द का दो बार प्रयोग किया जाता है। कभी कभी शब्दों की पूर्ण पुनरुक्ति की जाती है और कभी आदि या अन्त के शब्द में कुछ परिवर्तन से ऐसे शब्दों का निर्माण किया जाता है। यहाँ कुछ शब्द दिये जाते हैं :—

(क) संज्ञा शब्दों की पुनरुक्ति—जैसे, पानी-पानी, भाई-भाई, हँसी-हँसी, कौड़ी-कौड़ी, घर-घर, हाथों-हाथ, । **प्रयोग**—तुम **भाई-भाई** होकर लड़ते हो। आज कल **गांव-गांव** में फूट है। वह **बात-बात** में लड़ता है।

(ख) सर्वनाम की पुनरुक्ति—अपना-अपना, निज-निज, जो-जो, जिस-जिस, किस-किस, कोई-कोई, क्या-क्या, कुछ-कुछ। **प्रयोग**—(१) सब **अपना-अपना** स्वार्थ देखते हैं। (प्रत्येक

का अर्थ) (२) किस-किस से कहा जाय ? (भिन्नता) (३) मैंने भी कुछ-कुछ सुना है (न्यूनता) ।

(ग) **विशेषण की पुनरुक्ति**—नया-नया, काले-काले, फूले-फूले, खट्टी-खट्टी, एक-एक, किस-किस, जो-जो, क्या-क्या, आदि। **प्रयोग**—(१) काश्मीर ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों से घिरा है। (अतिशय) (२) उसकी **छोटी-छोटी** अँगुलियाँ सितार पर थिरकती हैं । (न्यूनता) (३) हरी-हरी पत्तियाँ तोड़ लो। (विभिन्नता) (४) दो-दो विद्यार्थी एक साथ जावें । (क्रम) (५) छोटे-छोटे बालक आगे बैठे थे। (एक जातीयता)

(घ) **क्रिया की पुनरुक्ति**—मारा-मारा, पूछता-पूछता, लिखते-लिखते, आइए—आइए, देखो-देखो ।

प्रयोग—(१) नौकरी छोड़कर वह मारा-मारा फिरता है। (दशा)
(२) वह जायगा, जायगा, फिर जायगा ।(हठ के अर्थ में)
(३) हँसते-हँसते पेट फूल गया । (अतिशय)
(४) आइए आइए, आपकी ही देर थी। (आदर)

(ङ) **क्रिया विशेषण और विस्मयादि बोधक की पुनरुक्ति**—धीरे-धीरे, पास-पास, आगे-आगे, जहाँ-जहाँ, अभी-अभी, अरे-अरे, हाय-हाय आदि।

(च) **विभक्ति के साथ पुनरुक्ति**—साथ ही साथ, घर का घर, कहीं का कहीं, आगे ही आगे।

प्रयोग—गांधीजी ने देशोत्थान के साथ ही साथ समाज-सुधार की की ओर भी ध्यान दिया ।

(२) समानार्थक शब्दों की पुनरुक्ति—अर्थ में विशेषता प्रकट करने के लिए समान अर्थ रखने वाले शब्दों की पुनरुक्ति भी की जाती है; जैसे, अनेक **अनुनय-विनय** करने पर भी उनका हृदय न पसीजा। कुछ ऐसे शब्द-युग्म यहाँ दिये जाते हैं :—

अनुनय-विनय, आमोद-प्रमोद, ऋद्धि-सिद्धि, ऐसा-वैसा, काम-काज, काम-धन्धा, करनी-करतूत, खान-पान, खेल-कूद, घर-द्वार, घास-पात, चमक-दमक, चाल-ढाल, छान-बीन, जैसे-तैसे, जीव-जन्तु, झाँसा-पट्टी, ठोक-पीट, धन-धान्य, बन्धु-बान्धव, बनाव शृगार, बीच-बचाव, भरा-पूरा, राह-रस्म, रीति-रिवाज श्रद्धा-भक्ति, सेवा-सुश्रूषा, हृष्ट-पुष्ट।

(३) सार्थक और निरर्थक शब्दों के मेलसे बनने वाले शब्द—

(क) सार्थक और निरर्थक शब्दों के मेल से—अदल-बदल, काम-धाम, टाल-मटोल, पूछ-ताछ, भीड़-भाड़, खोद-खाद, टेढ़ा-मेढ़ा।

(ख) दो निरर्थक शब्दों के मेल से—अंट-संट, अगड़-बगड़, टीम-टाम, चीं-चपड़, हट्टा-कट्टा, सटर-पटर।

(ग) अनुकरण वाचक शब्द—सनसन, भनभन, गड़गड़ाना, हिनहिनाना, दनादन, चींचीं, तड़तड़ आदि।

शब्द निर्माण सम्बन्धी अशुद्धियों का परिशोधन

दृष्टि दोष और असावधानी से होने वाली लिपि-सम्बन्धी अशुद्धियों का परिशोधन पहले किया जा चुका है। यहाँ उन

अशुद्धियों का विवेचन किया जाता है जो शब्दों का निर्माण करने में की जाती हैं। पहले हम कुछ संस्कृत शब्दों के शुद्ध रूप देते हैं जो प्रायः अशुद्ध लिखे जाते हैं:—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
आधीन	अधीन	दुर्गन्धि	दुर्गन्ध	सुगन्धि	सुगन्ध
श्राप	शाप	महत्व	महत्त्व	सृजन	सर्जन
परिणित	परिणत	उपरोक्त	उपर्युक्त	उपलक्ष	उपलक्ष्य
ध्वंश	ध्वंस	रुग्न	रुग्ण	मुहूर्त्त	मुहूर्त
परिस्कृत	परिष्कृत	संकित	शंकित	श्रीवान	श्रीमान्
लक्ष्मीमान्	लक्ष्मीवान्	पैत्रिक	पैतृक	बादाविवाद	वादविवाद

(१) **प्रत्यय सम्बन्धी अशुद्धियां :—**

(क) भाववाचक संज्ञाओं में पुनः प्रत्यय नहीं लगाने चाहिए। ऐसे कुछ शब्द यहाँ दिये जाते हैं :—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अधिक्यता	आधिक्य	धैर्यता	धैर्य
ऐक्यता	ऐक्य, एकता	मालिन्यता	मालिन्य
वैरता	वैर	सौहार्द्रता	सौहार्द
आलस्यता	आलस्य	गौरवत्व	गौरव
लावण्यता	लावण्य	बाहुल्यता	बाहुल्य
सौन्दर्यता	सौन्दर्य	सौजन्यता	सौजन्य, सुजनता

(ख) यदि बहुव्रीहि समास युक्त पदों से अभीष्ट अर्थ निकलता हो, तो उनमें प्रत्यय नहीं लगाना चाहिए, जैसे, **निर्धनी** पुरुष, **निर्गुणी** बालक, **निर्दोषी** युवक, **अनाथिनी** स्त्री, अशुद्ध रूप हैं; इनके शुद्ध रूप **निर्धन** पुरुष, **निर्गुण** बालक,

अनाथा स्त्री हैं। इसी प्रकार नीरोगी, सुकेशिनी, हतभागिनी के स्थान पर नीरोग, सुकेशी और हतभागा का प्रयोग करना चाहिए।

(ग) किसी विशेषण शब्द के पीछे विशेषार्थक प्रत्यय का प्रयोग नहीं करना चाहिए; जैसे, अभीष्ट, आवश्यक, पूज्य (पूजनीय), माननीय (मान्य) के लिए अभीष्टित, आवश्यकीय, पूज्यनीय, मान्यनीय के प्रयोग अशुद्ध हैं।

(घ) जिन शब्दों के पूर्व स, सहा, यथा और बाद में पूर्वक, अनुसार अथवा वशतः लगाया जाता है, उनके प्रयोग करने में भी अशुद्धियाँ की जाती हैं; जैसे, योग्यतानुसार, कातर, चल, सविनय (विनय पूर्वक), सशङ्क (शंकित), स्पष्ट और सादर (आदर पूर्वक) को योग्यानुसार, सकातर, सचल, सविनय पूर्वक, सशंकित, सस्पष्ट और सादरतापूर्वक की तरह प्रयुक्त करना अशुद्ध है।

(ङ) समूह वाचक शब्दों में वर्ग, समूह आदि नहीं जोड़ना चाहिए; जैसे, परिषत् (पारिषद् वर्ग) और सेना (सैन्य समूह) को परिषद् वर्ग और सेना समूह की भाँति प्रयुक्त करना अशुद्ध है।

(च) जिन शब्दों के अन्त में ‘ य ’ हो, उनमें ‘ यी ’ या ‘ यिनी ’ जोड़कर शब्द बनाए जाते हैं; जैसे, विजय से विजयी न्याय से न्यायी, विनय से विनयी। ऐसे शब्दों में ‘ ई ’ लगाना अशुद्ध है।

(छ) ‘ तर ’, ‘ तम ’ के प्रत्यय जोड़कर तुलनात्मक विशेषण बनाए जाते हैं; जैसे, महत् से महत्तम्। किन्तु कुछ शब्दों

में ऐसे अपेक्षार्थ प्रत्यय जोड़ना अशुद्ध है; जैसे, श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम, ज्येष्ठ से ज्येष्ठतम। श्रेष्ठ और वृहत् 'सब से उत्तम' या 'सब से बड़े' के सूचक हैं। ऐसे स्थानों में जहाँ किसी पदार्थ को सब से श्रेष्ठ कहा जाय, 'सर्वश्रेष्ठ' का प्रयोग करना चाहिए।

(२) **सन्धि-सम्बन्धी अशुद्धियां** सन्धि के नियमों का ध्यान न रखने से भी शब्दों के रूप विकृत हो जाते हैं। जैसे—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अत्याधिक	अत्यधिक	किम्वा	किंवा	ज्योतिष-विद्या	ज्योतिर्विद्या
स्वयम्वर	स्वयंवर	मनहर	मनोहर	सम्वाद	संवाद
किम्वदन्ती	किंवदन्ती	जगवन्धु	जगद्वन्धु	दुरावस्था	दुरवस्था
सन्मान	सम्मान	रीत्यानुसार	रीत्यनुसार	प्रियम्वद	प्रियंवदा

(३) यौगिक शब्दों का निर्माण मनमाने ढंग से किया जाता है; जैसे, सजाप्राप्त, नमूनार्थ, जाँच कर्त्ता, मंजूरी पत्र; इनमें विभिन्न भाषाओं के शब्दों का योग है। यौगिक शब्दों के निर्माण में इस नियम का पालन आवश्यक है कि एक ही भाषा के दो शब्दों का मेल हो। इसी प्रकार कुछेक, हरेक आदि के शुद्ध रूप कुछ एक; हर एक लिखना अधिक उपयुक्त है।

(४) सामासिक पदों को भी भूल से अशुद्ध लिखा जाता है। जैसे—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
कृतघ्नी	कृतघ्न	गुणीगण	गुणिगण
भ्रातागण	भ्रातृगण	महाराजा	महाराज
हस्तीयूथ	हस्तियूथ	मातपिताहीन	मातृपितृहीन
पिता भक्ति	पितृ भक्ति	राजागण	राजगण

अभ्यास

१—समास से क्या समझते हो ? उदाहरण दो।

२—कर्मधारय और द्विगु समास में क्या भेद है ?

३—एक ही शब्द भिन्न भिन्न समास कैसे हो सकता है ? उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

४—नीचे लिखे सन्दर्भों में समासों को छाँटो और उनका विग्रह करके उनके प्रकार बताओः—

(अ) भारतवर्ष में अनेक धर्मोपदेशक, असंख्य महात्मा, महाप्रतापी दिग्विजयी योद्धा और आत्मत्यागी महापुरुष अवतीर्ण हुए हैं।

(आ) उस समय राज-सूत्र अधर्मी राजाओं के हाथमें था, चातुर्वर्ण्य व्यवस्था बिगड़ गई थी।

(इ) अपनी मनोकामना पूरी होने से शोकातुर कवित्व कृतकृत्य होगया।

(ई) कृष्ण की साकार अनन्त-सौन्दर्य शालिनी मूर्ति उनके हृदय पटल पर अमिट अंकित है।

(उ) जाति-विशेष के उत्कर्षापकर्ष का और उसके ऊँच-नीच भावों का प्रतिबिम्ब साहित्य में ही मिल सकता है।

५—निम्न शब्दों में विग्रह करके समास बताओः—निर्जन, पुरुषरत्न, उपहृत पशु, कपड़छन, पतझड़, दत्तचित्त, पाप-पुण्य, पंचवटी, आजन्म।

६—पुनरुक्ति से क्या समझते हो ? ऐसे पाँच शब्दों को वाक्यों में प्रयुक्त करो और बतलाओ कि वे किन विशेष अर्थों को सूचित करते हैं।

(७) निम्न वाक्यों के शुद्ध रूप लिखो:—

(१) मैं आवश्यकीय कार्य से घर गया था। (२) बिना एक्यता के स्वतन्त्रता स्थिर नहीं रह सकती। (३) उन्होंने सविनय पूर्वक निवेदन किया। (४) प्रत्येक विद्यार्थी को योग्यातानुसार पुरस्कार दिया गया। (५) भारतीय सेना समूह काश्मीर में लड़ रहा है। (६) पृथ्वीराज के प्राण-पखेरू सदा-सर्वदा को उड़ गये। (७) हम ताज महल की सौन्दर्यता देखकर मुग्ध हो गये। (८) ऐसी दुर्गन्धि में कौन बैठ सकता है? (९) उन्हें सादरतापूर्वक लिवा लाओ। (१०) यह प्रान्त ग्वालियर नरेश के अधीनस्थ है। (११) प्रत्यय सम्बन्धीय नियम लिखो। (१२) 'काश्मीर के शेर' को विविध प्रकार के प्रलोभन दिये गये। (१३) इस अनाथिनी स्त्री का कोई रक्षक नहीं। (१४) उनकी सौजन्यता से मैं प्रभावित हो गया। (१५) पूज्यनीय पिताजी को प्रणाम। (१६) श्रवणकुमार की पिता-भक्ति सराहनीय है।

वाक्य-विचार

वाक्य(Sentence)—भाषा का निर्माण वाक्यों से और वाक्य शब्दों में बन सकते हैं। अपने भाव और विचार प्रकट करने के लिए मनुष्य शब्द-समूह का प्रयोग करता है। अतएव वाक्य से तात्पर्य उस शब्द-समूह से है जो सार्थक हो और जिस का पूरा पूरा अभिप्राय समझ में आ जावे।

उद्देश्य और विधेय—प्रत्येक वाक्य अर्थपूर्ण होता है-अर्थात् वाक्य में एक पूर्ण भाव या विचार शामिल रहता है। अतएव प्रत्येक वाक्य के दो भाग होते हैं :—(१) कर्त्ता-जिसके सम्बन्ध में कुछ वर्णन किया जाता है; और (२) क्रिया-जो कर्त्ता के सम्बन्ध में कुछ वर्णन करे; जैसे, (१) मोहन हँसता है। (२) मेघ पानी बरसाते हैं। (३) सिंह दहाड़ता है। इन वाक्यों में 'मोहन', 'मेघ' और 'सिंह' के सम्बन्ध में कुछ कहा गया है। 'मोहन' के विषय में कहा है कि वह 'हँसता है'; 'मेघ' के विषय में कहा है कि 'वे पानी बरसाते हैं' और 'सिंह' के विषय में कहा गया है कि वह जंगल में दहाड़ता है।'

इस प्रकार प्रत्येक वाक्य के दो भाग होते हैं :—

(१) **उद्देश्य** (Subject)—वाक्य का वह भाग है जिसके सम्बन्ध में कुछ कहा जाय; जैसे, मोहन, मेघ, सिंह।

विधेय (Predicate)—वाक्य का वह भाग है जो उद्देश्य के सम्बन्ध में कहा जाय; जैसे, हँसता है, पानी बरसाते हैं और दहाड़ता है।

कभी कभी वाक्य में उद्देश्य अथवा कर्त्ता का लोप रहता है; जैसे, 'पत्र लिखो'। यहाँ कर्त्ता 'तुम' लगाने से वाक्य का पूर्ण आशय प्रकट हो जाता है।

वाक्यांश (Phrase)—कभी-कभी किसी सार्थक शब्द-समूह से पूरा आशय प्रकट नहीं होता, उससे केवल पूरे भाव या विचार का एक अंश ही प्रकट होता है; ऐसे शब्द-समूह को

वाक्यांश कहते; जैसे, राम का बन-गमन। इस शब्द-समूह से पूरा वाक्य नहीं बनता क्यों कि इसमें क्रिया का अभाव है।

वाक्य या वाक्यांश में यही भेद है कि वाक्य में कोई एक पूरा भाव या विचार रहता है; किन्तु वाक्याँश में किसी विचार का अंश मात्र। "मोहन सोता है"—एक पूरा वाक्य है क्योंकि यह एक पूरे भाव को स्पष्ट करता है। मोहन की पुस्तक, भारत वर्ष में, स्वतन्त्रता-समारोह जैसे शब्द-समूह क्रिया के अभाव में केवल वाक्यांश हैं और पूर्ण आशय प्रकट नहीं करते। इनसे-मोहन की पुस्तक खो गई; भारतवर्ष में प्रजा का राज्य है; आज स्वतन्त्रता समारोह मनाया गया—वाक्य बनते हैं।

वाक्य-विभेद

१—रचना या स्वरूप के अनुसार वाक्य भेद

रचना के अनुसार वाक्य तीन प्रकार के होते हैं:—

(१) **सरल या साधारण वाक्य** (Simple sentence) वह शब्द समूह है जिसमें एक ही उद्देश्य और क्रिया का प्रयोग होता है; जैसे, सोहन गाना **गाता** है। इस वाक्य में केवल एक उद्देश्य और एक विधेय है तथा "गाता है" मुख्य क्रिया है।

(२) **मिश्रित** (Complex sentence)—वह वाक्य है जिसमें एक साधारण वाक्य और उसके आश्रित एक अथवा अधिक सहायक उपवाक्य रहते हैं; जैसे, यह वही विद्यार्थी है जिसने परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की है। इस वाक्य को दो भागों या उपवाक्यों में बाँटा जा सकता है:—(१) यह वही

विद्यार्थी है; और (२) जिसने परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की है। इसमें प्रथम उपवाक्य स्वतन्त्र अर्थ रखता है और दूसरे वाक्य पर निर्भर नहीं है। अतएव यह स्वतन्त्रता अर्थ रखने वाला वाक्य प्रधान या मुख्य उपवाक्य कहलाता है। दूसरा उपवाक्य-जिसने परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की है—अपना स्वतन्त्र आशय नहीं रखता। उसका अर्थ तभी स्पष्ट होता है जब वह प्रथम उपवाक्य के साथ मिलाकर पढ़ा जाय। अतः यह प्रथम उपवाक्य पर निर्भर है; इस लिए **आश्रित उपवाक्य** कहलाता है और प्रधान उपवाक्य के आधीन है।

आश्रित वाक्य **सहायक, आनुषङ्गिक** अथवा **उपवाक्य** भी कहलाता है। मुख्य उपवाक्य स्वतन्त्र और अर्थ की दृष्टि से से पूर्ण होता है; किन्तु आश्रित उपवाक्य अर्थ की दृष्टि से पूर्ण नहीं होता और मुख्य वाक्य पर आश्रित रहता है।

(३) **संयुक्त वाक्य** (Compound sentence)—जिस वाक्य में दो या दो से अधिक प्रधान उपवाक्य हों; जैसे, (अ) मैं प्रातःकाल उपवन की सैर को गया और फूल तोड़े। (आ) गांधी जी ने भारत की अखंडता के लिए अनेक प्रयत्न किये; किन्तु सफल न हो सके।

इन दोनों वाक्यों को दो भागों में बाँटा जा सकता है:—

(अ) (१) मैं प्रातःकाल उपवन की सैर को गया; (२) मैंने फूल तोड़े। (आ) (१) गांधी जी ने भारत की अखंडता के लिए अनेक प्रयत्न किये; (२) वे सफल न हो सके। इन दोनों वाक्यों को "और" तथा "किन्तु" जोड़ते है। प्रत्येक वाक्य में दो स्वतन्त्र उपवाक्य हैं। प्रत्येक उपवाक्य स्वतन्त्र अर्थ रखता है; एक

दूसरे पर आश्रित नहीं है। प्रत्येक वाक्य के दोनों ही उपवाक्य **समान पद** रखते हैं। अतएव ये **प्रधान उपवाक्य** अथवा समानपदी हैं।

संयुक्त वाक्य में (१) दो या दो से अधिक प्रधान या समान पदी उपवाक्य रहते हैं अथवा (२) दो या दो से अधिक प्रधान उपवाक्य और उनके आश्रित उपवाक्य भी रहते हैं; जैसे,

(१) मैं घर गया और भोजन किया।
 (अ) मैं घर गया—प्रधान उपवाक्य।
 (आ) (और) मैंने भोजन किया—प्रधान उपवाक्य।
(२) मैं बन में गया और देखा कि मोर नाच रहे हैं।
 (अ) मैं बन में गया—प्रधान उपवाक्य।
 (आ) (और) मैंने देखा—प्रधान उपवाक्य।
 (इ) (कि) मोर नाच रहे हैं—आश्रित उपवाक्य।

२—अर्थ के अनुसार वाक्य-भेद

अर्थ के अनुसार वाक्य सात प्रकार के होते हैं:—

(१) **वर्णनात्मक या विधानार्थक** (Assertive sentence)—ऐसा वाक्य जिसमें किसी बात का वर्णन पाया जावे; जैसे, वह घर जाता है। मैंने पत्र नहीं लिखा।

वर्णनात्मक वाक्य दो प्रकार के होते हैं:—

(अ) विधि सूचक (Positive or Affirmative)—ऐसा वाक्य जिससे किसी घटना या कार्य का विधान या होना पाया

जाय; जैसे,

(१) सरल वाक्य—अरुण ने घर जाकर भोजन किया।

(२) मिश्रित वाक्य—जब अरुण घर गया तब भोजन किया।

(३) संयुक्त वाक्य—अरुण घर गया और भोजन किया।

(आ) निषेध सूचक (Negative)—ऐसा वाक्य जो किसी बात का निषेध या अभाव प्रकट करे; जैसे—

(१) सरल वाक्य—अरुण घर नहीं गया।

(२) मिश्रित वाक्य—जब अरुण घर नहीं पहुँचा तब उसके पिता ने उसको इधर-उधर तलाश किया।

(३) संयुक्त वाक्य—अरुण न घर गया और न उसने भोजन किया।

(२) आज्ञार्थक (Imperative)—ऐसा वाक्य जो आज्ञा, आदेश या प्रार्थना सूचित करे; जैसे, तुम घर जाओ। यहाँ मत बैठो। आप ऐसी कठोरता न करें।

आज्ञार्थक वाक्य के दो भेद हैं :—

(अ) **विधि सूचक आज्ञार्थक**—जिसमें किसी कार्य के करने की आज्ञा दी गई हो; जैसे—

सरल वाक्य—खूब परिश्रम करो।

मिश्रित वाक्य—खूब परिश्रम करो जिससे परीक्षा में सफलता प्राप्त कर सको।

संयुक्त वाक्य—खूब परिश्रम करो और परीक्षा में सफलता प्राप्त करो।

(आ) निषेध सूचक आज्ञार्थक--जिसमें किसी कार्य के करने के लिए निषेध किया जावे; जैसे—

सरल वाक्य—कुएँ के पास मत खेलो ।

मिश्रित वाक्य—कुएँ के पास मत खेलो नहीं तो गिर पड़ोगे ।

संयुक्त वाक्य—कुएँ के पास न दौड़ो और न खेलो ।

(३) प्रश्नार्थक वाक्य--(Interrogative Sentence) ऐसा वाक्य जिससे किसी प्रश्न का बोध हो, जैसे, क्या तुम घर जाते हो ? क्या तुमने पुस्तक पढ़ी ?

प्रश्नार्थक वाक्य दो प्रकार के होते हैं :—

(अ) विधिसूचक प्रश्नार्थक, जैसे,

सरल वाक्य—वह कहाँ गया है ?

मिश्रित वाक्य—क्या आप जानते हैं कि वह कहाँ गया है ?

संयुक्त वाक्य—वह कहाँ गया है और उसे किसने भेजा है ?

(आ) निषेध सूचक प्रश्नार्थक, जैसे,

सरल वाक्य--क्या केशव ने पुस्तक नहीं पढ़ी ?

मिश्रित वाक्य—क्या आपको विदित नहीं है कि केशव ने पुस्तक क्यों नहीं पढ़ी ?

संयुक्त वाक्य—क्या आप ने ताज महल नहीं देखा और न उसके विषय में कुछ पढ़ा है ?

(४) संकेतार्थक–(Conditional Sentence)—ऐसा वाक्य जिससे संकेत अथवा शर्त का बोध होता हो, जैसे—

पानी बरसेगा तो अनाज पैदा होगा। तुम साथ न होते तो मैं इतनी दूर न आता। आप आज्ञा दें तो मैं चला जऊँ।

संकेतार्थक वाक्य दो प्रकार के होते हैं :—

(अ) **विधिसूचक संकेतार्थक**—जैसे, परिश्रम करोगे तो सफलता प्राप्त करोगे। आप कहें तो मैं उसे दस रुपये दे दूँ।

(आ) **निषेधसूचक संकेतार्थक**—जैसे, वायुयान न होते तो आकाश की सैर करना सम्भव न था। भारत का विभाजन न होता तो काश्मीर पर आक्रमण न होता।

सूचना—संकेतार्थक वाक्य सदैव मिश्रित ही होता है। इस में सरल और संयुक्त वाक्य नहीं बनते।

(५) **संदेहार्थक वाक्य**—(Doubtful Sentence)—ऐसा वाक्य जो संदेह का बोध करावे, जैसे, केशव ने पुस्तक पढ़ी होगी। अंधेरे में कहीं ठोकर न लग जावे।

संदेहार्थक वाक्य दो प्रकार के होते हैं :—

(अ) **विधिसूचक संदेहार्थक**—जैसे,

सरल वाक्य—भारतीय सेना वीरता से लड़ी होगी।

मिश्रित वाक्य—यदि भारतीय सेना वीरता से लड़ी होगी, तो आक्रमणकारी भाग गए होंगे।

संयुक्त वाक्य—भारतीय सेना वीरता से लड़ी होगी और आक्रमणकारियों को भी परास्त किया होगा।

(आ) **निषेध सूचक संदेहार्थक**—जैसे,

सरल वाक्य—छत पर सोने से उसे सर्दी न लग जावे।

मिश्रित वाक्य-शायद वह छत पर न सोवे जिससे सर्दी लग जाय।

संयुक्त वाक्य-वह कहीं रात्रि में न चलदे और मार्ग न भूल जावे।

सूचना--संदेहार्थक वाक्य कभी-कभी कदाचित्, शायद, स्यात्, कहीं न से भी बनते हैं; जैसे, वह कदाचित् घर पर हो। सोहन स्यात् पुस्तक ले आये। वह कहीं भाग न जाय।

(६) **इच्छा बोधक वाक्य**–(Optional Sentence) ऐसा वाक्य जिसमें इच्छा प्रकट की जाय अथवा आशीर्वाद दिया गया हो; जैसे, (१) ईश्वर तुम्हें सफलता प्रदान करे। (२) आप चिरायु हों। (३) हे भगवान, मुझे किसी की दासता न करनी पड़े।

१–२ वाक्य विधि सूचक इच्छा बोधक और (३) निषेध सूचक इच्छा बोधक वाक्य हैं।

(७) **विस्मयादि बोधक वाक्य**--वह वाक्य जो मन के भाव हर्ष, शोक, घृणा आदि का बोध करावे, जैसे, कितनी सुन्दर इमारत है। राम-राम! तुम्हारी यह कैसी दशा है। ओहो! आप आ गए।

नीचे दी हुई सारिणी द्वारा वाक्य-विभेद समझाया गया है ।

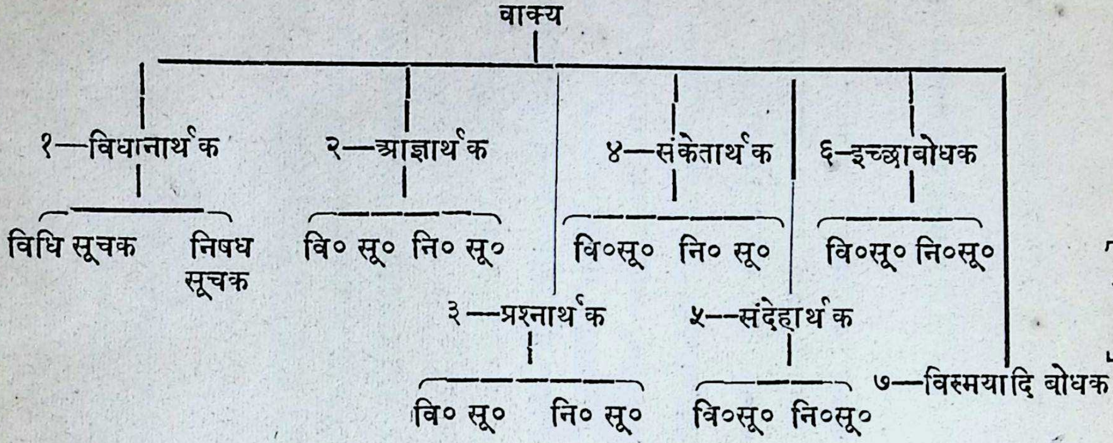
वाक्य
१—विधानार्थक
विधि सूचक
निषध सूचक
२—आज्ञार्थक
वि० सू० नि० सू०
३—प्रश्नार्थक
वि० सू० नि० सू०
४—संकेतार्थक
वि०सू० नि० सू०
५—संदेहार्थक
वि०सू० नि०सू०
६—इच्छाबोधक
वि०सू० नि०सू०
७—विस्मयादि बोधक

एक ही भाव भिन्न भिन्न प्रकार के वाक्यों द्वारा भी प्रकट किया जा सकता है, जैसे,

(१) विधानार्थक—(अ) सत्कर्मों से सुयश मिलता है ? (विधि)

(अ) यह बात नहीं कि सत्कर्मों से सुयश न मिलता हो।
(निषेध)

(२) प्रश्नार्थक—क्या सत्कर्मों से सुयश नहीं मिलता है ?

(३) आज्ञार्थक—(अ) सुयश प्राप्त करने के लिए सत्कर्म करो।

(आ) सुयश प्राप्त करने के लिए सत्कर्म करना चाहिए।

(इ) सत्कर्म करो और सुयश प्राप्त करो।

(ई) न सत्कर्म करोगे न सुयश प्राप्त होगा।

(४) संकेतार्थक—(अ) यदि सत्कर्म किया जाय तो सुयश मिलता है।

(आ) यदि सत्कर्म न किया जाय तो सुयश नहीं मिलता है।

(४) संदेहार्थक-(अ) सत्कर्म करने से शायद सुयश प्राप्त हो।

(आ) सत्कर्म न करने से शायद सुयश प्राप्त न हो।

(६) इच्छा बोधक-परमात्मा करे सत्कर्म करने से उसे सुयश प्राप्त हो।

(७) विस्मयादि बोधक-आहा ! सत्कर्म करने से कितना सुयश मिलता है।

३–क्रिया के अनुसार वाक्य भेद

क्रिया के अनुसार वाक्य के तीन भेद होते हैं :—

(१) **कर्तृ प्रधान**--जिस वाक्य में कर्त्ता के अनुसार क्रिया का लिङ्ग; वचन और पुरुष बदलता हो, जैसे, वह फल खाता है।

(२) **कर्मप्रधान**--वह वाक्य है जिसमें कर्त्ता करण के रूप में और कर्म कर्त्ता के रूप में प्रयुक्त हो तथा क्रिया कर्मवाच्य हो, जैसे, उससे फल खाये गए।

(३) **भावप्रधान**--वह वाक्य है जिसमें अकर्मक क्रिया का मुख्य कर्त्ता करण कारक में हो, जैसे, मुझ से नहीं जाया जाता।

(वाच्य परिवर्तन के नियम क्रिया के प्रकरण में देखो)

४–वाक्य के साहित्यिक भेद

(१) **संयत वाक्य**--वह वाक्य है जिसका अन्तिम भाग महत्त्व पूर्ण होता है। इस प्रकार के वाक्य में मुख्य बात को अन्त में प्रकट किया जाता है। इससे पाठक की जिज्ञासा आदि से अन्त तक बनी रहती है; जैसे, जिस धन को मैंने जीवन भर संचित किया, जिस धन के लिए मैंने अनेक आपत्तियाँ उठाई, जिस धन को मैंने प्राणों से भी प्रिय समझा, जिस धन के लिए दूसरों के वाक्य प्रहार सहे, उसी धन का नश्वर रूप देखकर मेरा हृदय बैठ गया। इस वाक्य के अन्तिम अंश में मुख्य भाव को प्रकट किया गया। रचना की दृष्टि से ऐसे वाक्य उत्तम समझे जाते हैं। ऐसे वाक्यों को 'वाक्योच्चय' भी कहते हैं।

(२) **शिथिल वाक्य**--ऐसे वाक्यों में मुख्य भाव पहले ही रख दिया जाता है। इससे पाठक या श्रोता के हृदय में कोई जिज्ञासा उत्पन्न नहीं होती। एक उदाहरण देखिये—'मानव स्वार्थ का पुतला है, उसके सभी कार्य स्वार्थवश होते हैं, स्वार्थ से अन्धा होने पर उसे भले बुरे का ज्ञान नहीं रहता।' ऐसे वाक्यों में संयत वाक्यों के समान रमणीयता, ओज और सौन्दर्य नहीं होता।

(३) **सन्तुलित वाक्य**—ऐसे वाक्य समूह के अन्तर्वाक्य परस्पर सन्तुलन के साथ हृदय पर अपना प्रभाव डालते हैं। ऐसे वाक्य उच्चकोटि के समझे जाते हैं। जैसे—"करुणा, मानव-हृदय की उदारता है, क्रोध उसका सङ्कोच है, करुणा से हृदय द्रवित होजाता है और क्रोध से कठोर।"

विद्यार्थियों को आरम्भ में सरल वाक्यों का ही प्रयोग करना चाहिए। धीरे-धीरे सन्तुलित वाक्य-रचना का अभ्यास करना चाहिए।

अभ्यास

१—निम्नलिखित वाक्य साधारण हैं अथवा मिश्रित?

(१) यह कथा सुनकर महाराज परीक्षित अत्यन्त प्रभावित हुए। (२) एक बार तो नवीन विचारों की चिन्ता में ही सवेरा हो गया। (३) पूना में रानडे से पहले एक सभा थी जो मराठी भाषा में पुस्तकों का अनुवाद करती थी। (४) वेन जानसन का यह कहना, कि बोलने से ही मनुष्य के रूप का साक्षात्कार होता है, बहुत ही उचित जान पड़ता है। (५) पढ़े लिखे हुए तो शेक्सपियर, मिल्टन, मिल और

स्पेंसर उनकी जीभ के आगे नाचा करेंगे। (६) जैसा बोओगे वैसा काटोगे।

२—मिश्रित और संयुक्त वाक्यों में क्या अन्तर है? उदाहरण द्वारा स्पष्ट करो।

३—निम्न लिखित वाक्यों को उपवाक्यों में विभाजित करके उनके भेद (प्रधान अथवा आश्रित उपवाक्य) बताओः—

(१) धन कमाना सहज है; किन्तु व्यय करना कठिन। (२) जो मनुष्य स्वसंस्कार में लगा हो, उसे अपने मिलने-जुलने वालों के आचरण पर भी दृष्टि रखनी चाहिए। (३) मैं संसार को असार नहीं समझता; वरन् उसे आत्मोन्नति का साधन समझता हूँ। (४) वह परीक्षा में असफल हुआ, क्योंकि उसने परिश्रम नहीं किया था। (५) समाज एक परेड है जहाँ हम चढ़ाई करना सीखते हैं।

४—वाक्य और वाक्यांश में क्या भेद है? उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

५—नीचे लिखे वाक्यों के उपभेद (अर्थ के अनुसार) बताओः—

१—हिमालय भारतवर्ष के उत्तर में स्थित है। २—सेवा करोगे तो पुरस्कार मिलेगा। ३—सत्य बोलो किन्तु अप्रिय सत्य मत बोलो। ४—बिना कर्म किये फल की प्राप्ति नहीं हो सकती। ५—यदि सुख चाहते हो तो धन कमाओ। ६—क्या धन कमाना ही जीवन का एक मात्र उद्देश्य है? ७—मैं साँसारिक झगड़ों में नहीं पड़ना चाहता। ८—आह! तुम कुछ क्षण पहले आये होते। ९—शायद आज रात्रि में वर्षा हो। १०—विद्या पढ़ो और पढ़ाओ।

६—निम्न लिखित वाक्यों के भावों को विभिन्न प्रकार के वाक्यों में प्रकट करोः—

(१) धर्म ही सुख का साधन है। (२) गुरु जनों की आज्ञा मानना

विद्यार्थियों का कर्त्तव्य है। (३) ताजमहल संसार की इमारतों में सर्व श्रेष्ठ है। (४) सेवा कार्य अत्यन्त कठिन है। (५) साहसी व्यक्ति कठिनाइयों से कभी नहीं डरता।

वाक्य-विग्रह

वाक्य के प्रत्येक अंग को अलग-अलग करके उनका सम्बन्ध प्रकट करना **वाक्य-विग्रह** कहलाता है। वाक्य-विग्रह से शब्दों और वाक्यों का परस्पर सम्बन्ध ज्ञात होता है और वाक्यार्थ समझने में सहायता होती है। **वाक्य विग्रह को वाक्य-विश्लेषण, वाक्य-व्याख्या वाक्यच्छेद** अथवा **वाक्य पृथक्करण** भी कहते हैं।

साधारण वाक्य

साधारण वाक्य के दो मुख्य अंग होते हैं—(१) उद्देश्य। (२) विधेय।

उद्देश्य और उसके भाग

(१) उद्देश्य का मुख्य अंश **कर्त्ता** होता है। कभी-कभी सरल वाक्य में केवल **कर्त्ता** होता है और कभी-कभी कर्त्ता की व्याख्या करने वाले या विशेषता प्रकट करने वाले विशेषण आदि शब्द भी होते हैं; इन्हें **कर्त्ता का विस्तार** कहते हैं। इस प्रकार उद्देश्य के दो भाग हैं—(१) कर्त्ता और (२) कर्त्ता का विस्तार।

(१) **कर्त्ता**—प्रायः संज्ञा या सर्वनाम शब्द **कर्त्ता** होते हैं, परन्तु कभी-कभी अन्य शब्द या पद भी कर्त्ता के स्थान में

प्रयुक्त होते हैं। जैसे—

(१) **संज्ञा–हरीश** सड़क पर दौड़ रहा है।

(२) **सर्वनाम–वह** प्रतिदिन घूमने जाता है।

(३) **विशेषण–बड़ों** का सत्कार करो।

(४) **क्रिया का सामान्य रूप (क्रियार्थक संज्ञा)– हँसना** मनुष्य के लिए परम आवश्यक है।

(५) **वाक्यांश–सेवा का पुरस्कार** अवश्य मिलता है।

(६) **कृदन्त**—(१) पुलिस को देखते ही **लड़ने वाले** भाग गए। (२) **मरे हुओं को** कोसना ठीक नहीं।

(७) **भाववाच्य में** (करण कारक में) **प्रयुक्त कर्त्ता— हम से** ऐसा अनर्थ नहीं किया जासकता।

(८) कर्त्ताकारक का अर्थ देने वाला शब्द जिसका रूप कर्मकारक के समान हो--**विद्यार्थियों को** गुरुजनों की आज्ञा माननी चाहिए।

(२) **कर्त्ता का विस्तार** या **कर्तृ-विशेषण**--(Adjuncts to Subject) निम्न शब्द कर्त्ता की व्याख्या करते हैं अथवा उसकी विशेषता बतलाते हैं :—

(१) **विशेषण–गुणवान** मनुष्यों का सर्वत्र आदर होता है।

(२) **सम्बन्ध कारक में प्रयुक्त संज्ञा या सर्वनाम–मेरे** भाई ने प्रतियोगिता में प्रथम पद प्राप्त किया है। (२) **मुन्ना की** बहिन पढ़ने गई है।

(३) समान कारकीय शब्द—(Case in appsition)—वसुदेव के पुत्र, श्रीकृष्ण ने कालिय-दमन किया।

(४) कृदन्त—(१) फलने वाला वृक्ष आँधी से उखड़ गया। (२) भागा हुआ चोर पकड़ लिया गया।

(५) वाक्यांश—परिश्रम से एकत्र किया हुआ धन लुट गया।

विधेय और उसके भाग—

विधेय का मुख्य अवयव क्रिया है। क्रिया के स्थान में अन्य शब्द प्रयुक्त नहीं हो सकते। कभी क्रिया अकेली आती है; जैसे, मुन्नी चली गई; किन्तु जब क्रिया सकर्मक होती है तो कर्म लेती है; द्विकर्मक क्रिया के दो कर्म होते हैं, और अपूर्ण क्रिया अर्थ पूर्ति के लिए 'पूरक' लेती है। कभी-कभी वाक्य में क्रिया की विशेषता प्रकट करने वाले शब्द भी होते हैं। इस प्रकार विधेय के पाँच भाग हो जाते हैं :—

(१) क्रिया (२) क्रिया का विस्तार (३) कर्म (४) कर्म का विस्तार (५) पूरक।

[२] क्रिया का विस्तार—क्रिया विशेषण (अथवा वे शब्द जो क्रिया विशेषण के स्थान पर प्रयुक्त होते हैं) क्रिया की विशेषता प्रकट करते हैं। क्रिया की विशेषता प्रकट करने वाले निम्न शब्द हो सकते हैं :—

[१] क्रिया विशेषण—मोहन धीरे-धीरे पढ़ता है।

[२] संज्ञा—देवेन्द्र पाठशाला गया।

[३] विशेषण--तुम अच्छा लिखते हो।

[४] कृदन्त--उसने मुस्कराते हुए भेंट ली।

[५] क्रिया विशेषण वाक्यांश--तुम इतनी देर से कहाँ थे ?

(६) करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण कारकों में प्रयुक्त संज्ञाएँ या सर्वनाम—

(१) उसने बाण से हरिण मारा। (२) श्रीकृष्ण ने प्रजा की रक्षा के लिए कंस को मारा। (३) अमुस्लिम पाकिस्तान से भाग रहे हैं। (४) भारतवर्ष में सर्वत्र शान्ति है।

(३) कर्म—जो शब्द कर्त्ता के स्थान में प्रयुक्त होते हैं, वें कर्म के स्थान में भी प्रयुक्त हो सकते हैं; जैसे :—

(१) संज्ञा—वह मोहन को पीट रहा है। उसने फल खाए

(२) सर्वनाम--हरि ने मुझे पुकारा था।

(३) विशेषण--दुखी को सहायता दो।

(४) क्रिया का सामान्य रूप (क्रियार्थक संज्ञा)-वह खाना जानता है, बनाना नहीं।

(५) कृदन्त—(१) तुम ने खेलते हुओं को रुला दिया। (२) पानी वालों को मत जाने दो।

(६) वाक्यांश--तुम समाज सेवा करने वालों को दबाना जानते हो ?

कर्म का विस्तार--कर्तृ विशेषणों की भाँति कर्म का विस्तार करने वाले शब्द भी विशेषण अथवा विशेषण के स्थान में प्रयुक्त होने वाले शब्द होते हैं; जैसे, प्रकाश ने **मीठे** फल मोल लिए हैं। कैकेयी ने **कौशल्या के पुत्र** राम को बनवास दिया।

पूरक और उसका विस्तार, (Complement and its adjuncts)--संज्ञा अथवा संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त होने वाले विशेषण 'पूरक' होते हैं, जैसे--

(१) प्रजा ने राम को **महाराज** बनाया। (२) पं० नेहरू बड़े **कर्मवीर** हैं। (३) वह परीक्षा में पूर्ण **सफल** हुआ। (४) भरत राम के लघु **भ्राता** थे।

इन वाक्यों में 'राजा', 'कर्मवीर', 'सफल' और 'भ्राता' 'पूरक शब्द हैं' महा, बड़े, पूर्ण, और लघु शब्द पूरकों के विस्तार हैं।

साधारण वाक्यों का विग्रह

(१) विद्यार्थियों को सदा गुरुजनों की आज्ञा माननी चाहिए।

(२) अवसर खोने वाला मनुष्य कभी उन्नति नहीं कर सकता।

(३) मुगल सम्राट औरंगजेब ने हिन्दुओं पर अनेक अत्याचार किए।

(४) इन अदूरदर्शी व्यक्तियों ने विश्व-वंद्य महात्मा गांधी को कभी अपना हितैषी नहीं समझा था।

(५) तुलसी ने राम-चरित का आश्रय लेकर जीवन की अनेक परिस्थितियों तक अपनी पहुँच दिखलाई है।

(युक्त प्रान्त १९३५)

उदाहरण

क्रम संख्या	उद्देश्य		विधेय			
	कर्त्ता	कर्त्ता का विस्तार	क्रिया	कर्म और उसका विस्तार	पूरक और उसका विस्तार	क्रिया का विस्तार
१	विद्यार्थियों की		माननी चाहिए	गुरुजनों की आज्ञा		सदा
२	मनुष्य	अवसर को खोने वाला	कर सकता	उन्नति		कभी नहीं
३	औरंगजेब ने	मुगल सम्राट	किए		अनेक अत्याचार	हिन्दुओं पर
४	व्यक्तियोंने	इन अदूरदर्शी	समझा था	विश्व-वंद्य महात्मा गांधी	अपना हितैषी	कभी नहीं
५	तुलसी ने		दिखलाई है	अपनी पहुँच		१–राम चरित का आश्रय लेकर २–जीवन की अनेक परिस्थियों तक

मिश्रित वाक्य

(१) देवेश ने कहा कि मैं कल जाऊँगा। (२) हमने देखा कि आक्रमण करने वाले भाग रहे हैं। (३) यह वही पुस्तक है जो मैंने पढ़ी थी। (४) यह चित्र जो मैंने देखा, अत्यन्त सुन्दर था। (५) मैं अब तुम्हें नहीं पढ़ाऊँगा, क्योंकि तुम परिश्रम नहीं करते। (६) वह इतना तेज़ दौड़ा कि गिर पड़ा।

उपर्युक्त वाक्यों में प्रत्येक वाक्य दो उप-वाक्यों में बाँटा जा सकता है। प्रथम वाक्य के दो भाग हैं—(१) देवेश ने कहा। (२) मैं कल जाऊँगा। 'देवेश ने कहा'—स्वतन्त्र अर्थ रखता है और अन्य किसी वाक्य पर निर्भर नहीं हैं। इसलिए यह प्रधान (उप-वाक्य है। द्वितीय वाक्य-(कि) मैं कल जाऊँगा' का अर्थ तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक यह प्रधान उपवाक्य के साथ मिलाकर न पढ़ा जावे। इसलिए यह आश्रित उप-वाक्य है। यह उपवाक्य 'कि मैं कल जाऊँगा' 'कहा' क्रिया का कर्म है और संज्ञा का कार्य करता है। अतएव यह संज्ञा उप-वाक्य है। इसी प्रकार दूसरा वाक्य—हमने देखा कि आक्रमण करने वाले भाग रहे हैं—भी दो उप-वाक्यों से मिलकर बना है। 'हमने देखा'—प्रधान उप-वाक्य और (कि) 'आक्रमण करने वाले भाग रहे हैं'—आश्रित उपवाक्य है और वाक्य में संज्ञा का कार्य करता है।

अब तीसरे और चौथे वाक्यों को देखो। इनमें (१) यह वही पुस्तक है और (२) वह चित्र अत्यन्त सुन्दर था—प्रधान उपवाक्य हैं; किन्तु 'जो कल मैंने पढ़ी थी' और 'जो मैंने

देखा'—दोनों आश्रित उप-वाक्य 'पुस्तक' और 'चित्र' की विशेषता प्रकट करते हैं। अतएव ये विशेषण उपवाक्य हैं।

पाँचवें और छठे वाक्य भी दो दो उप-वाक्यों से मिलकर बने हैं। (१) मैं अब तुम्हें नहीं पढ़ाऊँगा और (२) वह इतना तेज दौड़ा—दोनों वाक्य प्रधान उपवाक्य हैं। और (१) (क्योंकि) तुम परिश्रम नहीं करते हो, और (२) (कि वह) गिर पड़ा—आश्रित उपवाक्य हैं और 'पढ़ाऊँगा' तथा 'दौड़ा' क्रिया की विशेषता प्रकट करते हैं। अतएव ये क्रिया विशेषण उपवाक्य हैं।

इस प्रकार आश्रित उपवाक्य तीन प्रकार के होते हैं—**[१] संज्ञा-उपवाक्य, [२] विशेषण उपवाक्य और [३] क्रिया विशेषण उपवाक्य।**

[१] संज्ञा-उपवाक्य (Noun clause)—जो वाक्य में संज्ञा का कार्य करता हो, जैसे :—

[१] अंग्रेज़ों ने भारतवर्ष का शोषण किया यह सत्य है। (२) कौन जानता था कि **भारतवर्ष का विभाजन होगा** ? (३) यह ख़बर कि **आज स्वतन्त्रता समारोह मनाया जायगा** सत्य है। (४) आशा है कि **अब भारतवर्ष में शान्ति और समृद्धि का साम्राज्य होगा।**

उपर्युक्त चारों वाक्य संज्ञा का कार्य करते हैं। प्रथम कर्त्ता

के समान, दूसरा कर्म के समान, तीसरा समान कारक में और चौथा वाक्य पूरक के समान प्रयुक्त हुआ है।

[२] **विशेषण उपवाक्य** (Adjective clause)—जो वाक्यांश वाक्य में किसी संज्ञा या सर्वनाम के विशेषण का काम करता हो; जैसे—(१) वह मनुष्य **जो चरित्र-हीन है**, कभी आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकता। (२) उनके लिए फूल पत्तियों में कोई सौन्दर्य नहीं **जो इन्द्रिय विषयों में ही लिप्त हैं।**

पहले वाक्य में 'जो चरित्र-हीन है'—विशेषण उपवाक्य है और 'मनुष्य' शब्द की विशेषता प्रकट करता है। दूसरे वाक्य में 'जो इन्द्रिय विषयों में ही लिप्त है'—विशेषण उपवाक्य है और 'उनके' सर्वनाम की विशेषता प्रकट करता है।

विशेषण उपवाक्य प्रायः जो, जिनको, जिनसे, जिन्होंने, जिनके लिए आदि सम्बन्ध वाचक सर्वनामों से वाक्य में जुड़े रहते हैं।

(३) **क्रिया-विशेषण उपवाक्य**—वह वाक्यांश है जो क्रिया की विशेषता और समय, स्थान, कारण, परिणाम, रीति, प्रयोजन आदि का निर्देश करता है; जैसे :—

(१) **जब एक बार मनुष्य अपना पैर कीचड़ में डाल देता है,** तब वह अपना हिताहित नहीं देखता (समय प्रकट करता है)।

(२) **जहां आग होती है,** वहाँ धुआँ भी होता है। (स्थान)

(३) यदि तुम चित्रपट देखने जाओगे, तो मैं तुम्हारे साथ नहीं रह सकता (शर्त या बन्धन)

(४) वह परीक्षा में असफल हो गया; क्योंकि उसने जी लगा कर अध्ययन न किया था। (कारण)

(५) सरदार पटेल ऐसे ही चतुर राजनीतिज्ञ हैं; जैसे देश भक्त मेजिनी थे। (तुलना)

(६) यद्यपि वह निर्धन है तथापि उदार है। (विषमता)

(७) कुछ बालक इतने सरल होते हैं कि दुष्ट मनुष्य उन्हें कुमार्ग की ओर ले जाते हैं। (परिणाम)

(८) बुद्ध जी ने संसार छोड़ दिया, ताकि वे मुक्ति प्राप्त कर सकें। (प्रयोजन)

(९) जैसा त्याग भामाशाह ने किया, वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। (रीति)

(१०) जहां तक मुझे ज्ञात है, उन्होंने किसी से अपशब्द नहीं कहे। (मर्यादा)

(१) क्रिया-विशेषण उपवाक्य प्रायः जब, जहाँ, यदि, क्योंकि, चाहे, जो, ताकि, कि, जैसा, जहाँ तक शब्दों से प्रारम्भ होते हैं।

(२) उपर्युक्त शब्दों से संज्ञा और विशेषण उपवाक्य भी प्रारम्भ होते हैं किन्तु क्रिया विशेषण उपवाक्य सर्वदा क्रिया या वाक्य की विशेषता प्रकट करेगा, अन्य उपवाक्य नहीं।

संयुक्त वाक्य

संयुक्त वाक्य में एक से अधिक प्रधान उपवाक्य होते हैं और एक दूसरे पर आश्रित नहीं होते, वरन् स्वतंत्र अर्थ प्रकट करते हैं। ये उपवाक्य समुच्चय बोधक अव्यय द्वारा जुड़े रहते हैं। यहाँ कुछ समुच्चय बोधक अव्यय शब्द, जो प्रधान उपवाक्यों को जोड़ते हैं, दिये जाते हैं:—

(१) संयोजक—और, वा, तथा, एवं, भी,

(२) विभाजक—या, वा, अथवा, किंवा, या—वा, चाहे, क्या-क्या, न-न, नकि, नहीं तो।

(३) विरोध-दर्शक—पर, परन्तु, किन्तु, लेकिन, मगर, बल्कि, वरन्।

(४) परिमाण—दर्शक—अतः, अतएव, इसलिए।

उदाहरण

(१) कुछ लोग गुणवान् बनना चाहते हैं और इसके लिये प्रयत्न भी करते हैं। (संयोजक)

(२) आप अभी चले जावें, नहीं तो मैं मार बैठूँगा। (विभाजक)

(३) इस प्रश्न का उत्तर दो अथवा यहाँ से चले जाओ। (विभाजक)

(४) पं० जवाहर लाल नेहरू केवल महान् राजनीतिज्ञ ही नहीं, वरन् कुशल शासक भी हैं। (विरोध-दर्शक)

(५) प्रेमचन्द जी का बाल्य जीवन आपत्तियों से परिपूर्ण था; अतः वे निराशावादी थे। (परिणाम-दर्शक)

मिश्रित और संयुक्त वाक्यों में भेद

(१) मिश्रित वाक्य में एक से अधिक प्रधान उपवाक्य नहीं होते; किन्तु संयुक्त वाक्य में एक से अधिक प्रधान उपवाक्य रहते हैं।

(२) संयुक्त वाक्य में आश्रित उपवाक्यों का होना आवश्यक नहीं। उसमें कभी-कभी आश्रित उपवाक्य नहीं होते हैं और केवल दो या अधिक समान पदी प्रधान उपवाक्य ही होते हैं। किन्तुमिश्रित वाक्य में आश्रित वाक्यों का होना आवश्यक है।

समानाधिकरण उपवाक्य

(Co-ordinate clauses)

(१) वह सभा में चुपके से आया, चुपके से एक किनारे बैठ गया और चुपके से उठकर चला गया।

(२) मैंने देखा कि कुछ मनुष्य यमुना-तट पर खड़े हैं और कुछ नदी में तैर रहे हैं।

(३) यह वही महान् आत्मा थी जिसने भारतवासियों को जागृत किया, उन्हें स्वतन्त्रता का मार्ग दिखाया और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

प्रथम वाक्य को देखो। इसमें तीन उपवाक्य हैं—(१) वह सभा में चुपके से आया। (२) (वह) चुपके से एक किनारे बैठ गया। (३) और (वह) चुपके से उठकर चला गया। ये तीनों ही वाक्य स्वतन्त्र अर्थ रखते हैं और प्रधान उपवाक्य

हैं। सब का स्थान (अधिकरण) समान है । अतएव प्रथम उपवाक्य प्रधान उपवाक्य है और दूसरा तथा तीसरा उपवाक्य प्रथम उपवाक्य के समानाधिकरण (Co-ordinates) कहलाते हैं। सम्पूर्ण वाक्य संयुक्त वाक्य है।

द्वितीय वाक्य को देखो। इसमें भी तीन उपवाक्य हैं--(१) मैंने देखा—प्रधान उपवाक्य है (२) कि कुछ मनुष्य यमुना-तट पर खड़े हैं—संज्ञा उपवाक्य 'देखा' क्रिया का कर्म है। (३) और कुछ नदी में तैर रहे हैं--यह भी संज्ञा उपवाक्य है और 'देखा' क्रिया का कर्म है। अतएव दूसरा और तीसरा दोनों उपवाक्य समानाधिकरण हैं और सज्ञा का कार्य करते हैं।

तृतीय वाक्य को देखो। इसमें चार उपवाक्य हैं। (१) यह वही महान् आत्मा थी—प्रधान उपवाक्य है । (२) जिसने भारतवासियों को जागृत किया—विशेषण उपवाक्य ; 'आत्मा' की विशेषता प्रकट करता है। (३) (जिसने) उन्हें 'स्वतन्त्रता' का मार्ग दिखाया। विशेषण उपवाक्य ; 'आत्मा' की विशेषता प्रकट करता है। (४) और (जिसने) आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया—विशेषण उपवाक्य ; 'आत्मा' की विशेषता प्रकट करता है।

अतएव २–३–४ आश्रित उपवाक्य समानाधिकरण उपवाक्य हैं, क्योंकि तीनों ही 'आत्मा' संज्ञा की विशेषता प्रकट करते हैं।

इस प्रकार समानाधिकरण उपवाक्यों के दो भेद हैं :—

(१) समानाधिकरण उपवाक्य जो प्रधान उपवाक्य से सम्बन्धित हों।

(२) समानाधिकरण उपवाक्य जो किसी आश्रित उपवाक्य से सम्बन्धित हों।

वाक्य विग्रह के नियम

(१) सम्पूर्ण वाक्य में से मुख्य क्रियाएँ छाँटो। जितनी मुख्य क्रियाएँ होंगी, उतने ही उपवाक्य होंगे। पूर्व-कालिक क्रियाएँ (जैसे—करके खाकर, करते हुए) मुख्य क्रियाएँ नहीं होती।

(२) वाक्य में कभी क्रिया, कभी कर्त्ता, कभी कर्म, कभी विशेषण और कभी अन्य शब्द लुप्त रहते हैं। वाक्यों का विश्लेषण करने में उन सब छिपे हुए शब्दों को जोड़ लेना चाहिए। इसी प्रकार वाक्यों को जोड़ने वाले समुच्चय-बोधक अन्य छिपे हों तो उन्हें भी यथा स्थान रखकर उपवाक्यों को अलग करना चाहिए।

(३) विशेषण उपवाक्य प्रायः वाक्य में इस प्रकार बीच में प्रयुक्त होते हैं कि वे पहिचाने नहीं जासकते। उन्हें ध्यान पूर्वक अलग कर लेना चाहिए।

(४) समानाधिकरण उपवाक्यों (co-ordinate clauses) में यह विभेद कर लेना चाहिए कि वे उपवाक्य से अथवा आश्रित उपवाक्यों से सम्बन्धित हैं।

(५) अन्त में यह बताना भी आवश्यक है कि समस्त वाक्य मिश्रित है अथवा संयुक्त।

मिश्रित और संयुक्त वाक्यों का वाक्य-विश्लेषण

उदाहरण-(१)-यदि किसी ऐसे व्यक्ति से कहा जाय, जो अपने देश के इतिहास से बिल्कुल अनभिज्ञ हो, कि तुम्हें अपने देश के सम्बन्ध में अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए, तो वह कुछ न कर सकेगा। (युक्त प्रान्त, १९३६)

(अ) वह कुछ न कर सकेगा—प्रधान उपवाक्य।

(आ) यदि किसी ऐसे व्यक्ति से कहा जाय—क्रिया-विशेषण उपवाक्य। 'अ' उपवाक्य के अधीन है।

(इ) (जो) अपने देश के इतिहास से बिल्कुल अनभिज्ञ हो—विशेषण उपवाक्य। 'आ' उपवाक्य के 'व्यक्ति' शब्द की विशेषता प्रकट करता है।

(ई) (कि) तुम्हें अपने देश के विषय में अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए—संज्ञा उपवाक्य। 'आ' उपवाक्य में 'कहा जाय' क्रिया का कर्म है।

सम्पूर्ण वाक्य 'मिश्रित' है।

(२) वह तप आध्यामिक उन्नति या मुक्ति के उद्देश्य से नहीं किया था वरन् इस कामना से कि भौतिक सुख को भोगने के लिए वह इस शरीर से अमर हो जाय। (युक्त प्रान्त-१९३७)

(अ) वह तप आध्यात्मिक उन्नति या मुक्ति के उद्देश्य से नहीं किया था—प्रधान उपवाक्य।

(आ) वरन् (वह तप) इस कामना से किया था—प्रधान उपवाक्य, 'अ' उपवाक्य का समानाधिकरण (समान पदी)।

(इ) (कि) भौतिक सुख भोगने के लिए वह इस शरीर से अमर

हो जाय—संज्ञा उपवाक्य। प्रधान उपवाक्य 'अ' के अधीन।

सम्पूर्ण वाक्य 'संयुक्त' है।

(३) यदि वे बालक जिन्हें आज बधाइयाँ मिल रही हैं नियमानुसार काम न करते रहते तो उन्हें यह शुभ अवसर कदाचित् न मिलता। (युक्त प्रान्त, १९३८)

(अ) उन्हें यह शुभ अवसर कदाचित् न मिलता-प्रधान उपवाक्य।

(आ) यदि वे बालक नियमानुसार काम न करते रहते—क्रिया विशेषण उपवाक्य। 'अ' उपवाक्य के अधीन।

(इ) जिन्हें आज बधाइयाँ मिल रही हैं—विशेषण उपवाक्य। 'आ' उपवाक्य में आये हुए 'वे बालक' की विशेषता प्रकट करता है।

सम्पूर्ण वाक्य 'मिश्रित' है।

(४) तुमको निस्सन्देह भलाई की आशा रखनी चाहिए, क्योंकि तुमने ऐसी निर्दय माँ को मारा और घोर कष्ट से बच्चों को छुड़ाया। (युक्त-प्रान्त, १९३९)

(अ) तुमको निस्सन्देह भलाई की आशा रखनी चाहिए—प्रधान उपवाक्य।

(आ) क्योंकि तुमने ऐसी निर्दय माँ को मारा—क्रिया विशेषण उपवाक्य। 'अ' उपवाक्य के अधीन।

(इ) (और) ऐसे घोर कष्ट से बच्चों को छुड़ाया—क्रिया विशेषण उपवाक्य। 'आ' उपवाक्य का समानाधिकरण।

सम्पूर्ण वाक्य 'मिश्रित' है।

(५) यदि वे युवक जो जीवन यात्रा सफल बनाने के इच्छुक हों, उद्योग और संयम का व्रत ले लें, तो साधारण कठिनाइयाँ उनके मार्ग में विशेष बाधा नहीं डाल सकतीं।

(युक्त-प्रान्त, १६४४)

(क) साधारण कठिनाइयाँ उनके मार्ग में बाधा नहीं डाल सकतीं—प्रधान उपवाक्य।

(ख) यदि वे युवक उद्योग और संयम का व्रत ले लें—क्रिया-विशेषण उपवाक्य; शर्त का बोध कराता है और 'क' उपवाक्य में "डाल सकती" क्रिया की विशेषता प्रकट करता है।

(ग) जो अपनी जीवन यात्रा सफल बनाने के इच्छुक हों—विशेषण उपवाक्य। 'ख' उपवाक्य के 'युवक' संज्ञा की विशेषता प्रकट करता है।

सम्पूर्ण वाक्य 'मिश्रित' है।

अभ्यास

१-(अ) निम्न लिखित वाक्यो में संज्ञा उपवाक्य छांटो और उनका वाक्य में कार्य निर्दिष्ट करो:—

(१) श्री कृष्ण व्यभिचारी थे यह गलत है। (२) कवित्व ने यह देख कर कहा, "आह! जगत में इस मिथ्या के समान और कोई हत भागिनी स्त्री न होगी।" (३) सच तो यह है कि संसार क्षणभंगुर है। (४) कौन जानता था कि पंजाब में ऐसे बर्बरता पूर्ण कार्य होंगे।

(५) यह आशा कि अंग्रेज़ भारत छोड़ देंगे अन्त में पूर्ण हुई। (६) यह बात कि उसने ऐसा घोर अपराध किया होगा, समझ में नहीं आती। (७) इच्छा है कि आज हम पंत जी का व्याख्यान सुनने जावें। (८) मुझे विश्वास है कि तुमने मेरी आज्ञा का कभी उल्लंघन न किया होगा।

(आ) निम्नलिखित वाक्यों में विशेषण उपवाक्य छांटो और उनके विशेष्य बताओ।

(१) ताजमहल, जो विश्व की अलौकिक कृति है, भारतीय कला का परिचय देता है। (२) कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो अपने मन में किसी गुण के न रहने पर भी गुणवान बनना चाहते हैं। (३) जो मनुष्य सत्य बोलता है वह आडंबर से दूर भागता है। (४) जिसने प्रजा की कमाई में छठा भाग लिया उसे विश्राम कहाँ? (५) ऐसे भीषण काण्ड, जो कभी हूणों ने किए थे, आज देखने में आ रहे हैं।

(इ) निम्नलिखित वाक्यों में क्रिया-विशेषण उपवाक्य छांटो और बतलाओ कि वे क्रिया की क्या विशेषता प्रकट करते हैं:—

(१) यदि ऐसे जान पहचान के लोगों से कुछ हानि न होगी तो लाभ भी न होगा। (२) जब श्री कृष्ण का जन्म हुआ, तब सर्व साधारण के विलक्षण भाव थे। (३) श्री कृष्ण की बाल लीलाओं का जितना विशद वर्णन सूरदास ने किया उतना हिन्दी के अन्य किसी कवि ने नहीं किया। (४) जैसे-जैसे मैं कहूँ वैसे-ही-वैसे तुम कार्य करो। (५) जितना जितना तुम अध्ययन करोगे, उतना ही उतना तुम्हारा ज्ञान

बढ़ेगा। (६) भारतवर्ष की सभ्यता उतनी ही प्राचीन है जितनी मिश्र और वेबीलोन की। (७) यद्यपि भारतवर्ष अन्य देशों की दलबन्दी के दल दल में नहीं पड़ना चाहता, तथापि वह अकेला भी नहीं रह सकता। (८) भारतवर्ष ने काश्मीर की रक्षा का भार लिया है, जिससे वहाँ बर्बरता का अन्त हो। (९) अंग्रेजों ने भारतवर्ष को सत्ता सौंप दी; क्योंकि वे अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों से विवश थे। (१०) जहाँ चाहो वहाँ जाओ।

२—निम्न लिखित साधारण वाक्यों का वाक्य-विग्रह करो:—

(१) मैं जीवन को न तो दुखःमय और न सुखमय बतलाना चाहता हूँ।

(२) प्रातःस्मरणीय हिन्दूपति वीरशिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह का नाम राजपूताने के इतिहास में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

(३) वह स्वतन्त्रता का पुजारी केवल थोड़े से स्वदेश भक्त और कर्त्तव्य परायण राजपूतों और भीलों की सहायता से अपने देश की स्वतन्त्रता की रक्षा को तुरन्त कटिबद्ध हो गया।

(४) कभी कभी राजनैतिक प्रभुत्व के कारण विजित देशों की भाषाओं को जेता जाति की भाषा दबा लेती है।

(५) रोहतास दुर्ग के एक प्रकोष्ठ में बैठी हुई युवती ममता, शोण के तीक्ष्ण गम्भीर प्रवाह को देख रही थी।

३—निम्न लिखित वाक्यों का वाक्य-विश्लेषण करो:—

(१) सच तो यह है, जो ऐसे अपराध क्षमा किए जाँय तो संसार के सारे काम बिगड़ जाँय और लोग ईश्वर से न डरा करें।

(संयुक्त-प्रान्त, १९४०)

(२) प्रायः देखने में आता है कि गाँवों में से जो लोग नगरों में जीविका आदि के लिए आते हैं, उनका जी बहुत दिन तक संगी-साथी न रहने से बहुत घबराता है और कभी उन्हें ऐसे लोगों का साथ कर लेना पड़ता है, जो उनकी रुचि के अनुकूल नहीं होते। (संयुक्त-प्रान्त, १६४१)

(३) जिस कवि के जीवन ने हमारे दिलों में अपना घर कर लिया हो उसकी स्मृति बनाए रखना हमारा परम कर्तव्य है। ✓ (संयुक्त प्रान्त, १६४२)

(४) यद्यपि विशालकाय मन्दिर ही भगवान की पूजा के स्थान माने जाते हैं; परन्तु वास्तव में भगवान दीन के हृदय में ही निवास ✓ करते हैं। (संयुक्त-प्रान्त, १६४५)

(५) यदि जीवन एक प्रहसन ही है जिसमें तुम गा बजाकर और हँसी-ठट्ठा करके समय को काटो, तब जो कुछ उसके महत्त्व के विषय में मैंने कहा है, सब व्यर्थ ही है।✓

(६) मैं जीवन को न तो दुःखमय और न सुखमय बतलाना चाहता हूँ, बल्कि उसे एक ऐसा अवसर समझता हूँ जो हमें कुछ कर्तव्यों के पालन के लिए दिया गया है, जो परलोक के लिए कुछ कमाई करने के लिए दिया गया है।

(७) इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेव जी ने राजा से कहा कि महाराज! यह चरित्र देख श्री रुक्मिणी समेत आठों पटरानियाँ और सोलह सहस्र एक सौ रानियाँ और सब यदुवंशी, जो उस समय वहाँ थे मन ही मन में यों कहने लगे कि इस दरिद्री, वस्त्रहीन ब्राह्मण ने ऐसा क्या अगले जन्म पुण्य किया था, जो त्रिलोकी नाथ ने इसे इतना माना।

(८) किसी युवा पुरुष की संगत यदि बुरी होगी तो वह उसके पैर में बंधी चक्की के समान होगी जो उसे दिन-दिन अवनति के

गड्ढे में गिराती जायगी; और यदि अच्छी होगी तो साहस देने वाली बाहु के समान होगी जो उसे निरन्तर उन्नति की ओर उठाती जायगी।

(९) इसका कारण यह है कि सब धर्म चाहे किसी देश से सम्बंधित हों, परमात्मा की सर्व व्यापक शक्ति में विश्वास रखते हैं और समझते हैं कि उस शक्ति की अवहेलना उचित नहीं है।

(१०) युवकों को उचित है कि वे अपने लिये वही काम सोचें जिसका करना उनकी शक्ति के बाहर न हो।

(११) जिन लोगों में ऐसी ईश्वर-प्रदत्त योग्यता न हो, उन्हें उचित है कि वे अपने विचारों को उत्तमतर बनावें और राग, ईर्ष्या, द्वेष आदि से सदा दूर रहें।

(१२) शत्रुओं ने ज्यों ही सुना कि नादिरशाह आ पहुँचा, त्यों ही उनके हौसले पस्त हो गए।

(१३) वह रोहतास दुर्गपति के मंत्री चूड़ामणि की अकेली दुहिता थी, फिर उसके लिए कुछ अभाव होना असम्भव था, परन्तु वह विधवा थी—तब उसकी विडंबना का कहाँ अन्त था ?

(१४) सूर वास्तव में जन्मान्ध नहीं थे, क्योंकि शृंगार तथा रूप-ंगादि का जो वर्णन उन्होंने किया है वैसा कोई जन्मान्ध नहीं कर सकता।

(१५) यह ठीक है कि लोक के सम्बन्ध में गंभीर व्याख्याएँ सूरदास ने अधिक नहीं कीं, पर मनुष्य जीवन मे कोमलता, सरसता और सरलता भी उतनी ही प्रयोजनीय है, जितनी गंभीरता।

(१६) यद्यपि राजपूतों ने विदेशियों का वीरता के साथ सामना किया, तथापि वे उनको रोकने में असफल रहे; क्योंकि वे उस युद्ध-प्रणाली से, जो अति प्राचीन थी, लड़ते थे।

(१७) जो लोग कुछ किया चाहते हैं वे अपने अभिलषित स्थान पर तभी पहुँच सकते हैं, जब उसे सत्य मान लें जो प्राचीन काल में सत्य ठहराया गया है और बहाव में कभी यहाँ और कभी वहाँ धीमा सा घुमाव दे दें, न कि उसमें बांध बाँधें अथवा उसको किसी नूतन स्रोत की ओर बरबस ले जायँ।

(१८) यदि आप बालक को सत्य भाषण की शिक्षा देना चाहते हों तो सच बोलने को आकर्षक बनाइये. (संयुक्त प्रान्त, १९४२)।

(१९) यह प्रायः देखा जाता है कि बहुत से युवक जो जीवन-संग्राम में पुस्तकों का बोझ लादे बिना प्रवेश करते हैं; अपनी व्यावहारिक कार्यशीलता के कारण अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त कर लेते हैं। (संयुक्त प्रान्त, १९४३)

वाक्य के गुण

(अ) रचना की दृष्टि से—भाषा भावों एवं विचारों के प्रकाशन का साधन है। भाषा वाक्यों से बनती है। मनुष्य भी वाक्यों में सोचता है और वाक्यों से ही विचार विनिमय करता है। वाक्य के सरल और स्पष्ट होने से अर्थ और भाव भी सहज में बोधगम्य होता है, अन्यथा नहीं। वाक्य सार्थक शब्दों से बनते हैं। अतएव अर्थ और भाव की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए प्रत्येक शब्द को वाक्य में उचित स्थान पर प्रसंगानुकूल रखना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वाक्य के शब्दों में परस्पर तीन गुणों—आकाँक्षा, योग्यता और क्रम (आसत्ति) का होना नितान्त आवश्यक है। इन गुणों के होने से वाक्य में सरलता और स्पष्टता रहती है और इनके अभाव में वाक्य का अर्थ

और सौन्दर्य नष्ट हो जाता है। अतएव यहाँ हम इन गुणों का विवेचन करेंगे।

(१) **आकांक्षा**—पूर्ण वाक्य को सुनकर ही वाक्य का अर्थ स्पष्ट होता है। वाक्य के एक पद को सुनकर, पूरा अर्थ समझने के लिए, वाक्य के दूसरे पद को भी सुनने की स्वाभाविक इच्छा होती है। इसी इच्छा को 'आकांक्षा' कहते हैं। 'मैं पुस्तक पढ़ना चाहता हूँ—इस वाक्य के केवल 'मैं' को सुनकर जिज्ञासा शान्त नहीं होती, वरन् पूरा भाव समझने के लिए आगे के शब्दों को सुनने की आकाँक्षा होती है। जब 'पुस्तक पढ़ना चाहता हूँ' पद भी सुन लिया जाता है तो अर्थ स्पष्ट होता है और जिज्ञासा शान्त हो जाती है। अच्छा वाक्य वही है जिससे आकाँक्षा की भली भाँति पूर्ति हो सके।

(२) **योग्यता**—वाक्य की शब्द योजना का दूसरा गुण है कि उस से अर्थ पूर्ण स्पष्ट हो जाए। अर्थ में किसी प्रकार की गड़बड़ी न होना ही वाक्य की योग्यता है। "मोहन दूध से कपड़े धोता है' यह वाक्य शब्द विन्यास की दृष्टि से ठीक है। किन्तु अर्थ समझने में बाधा होती है, क्योंकि योग्यता के अनुसार पद विन्यास ठीक नहीं। दूध से कपड़े नहीं धोए जाते। धोने का मेल दूध के साथ नहीं, वरन् पानी और साबुन के साथ है। अतएव 'मोहन साबुन से कपड़े धोता है' वाक्य ही सार्थक होगा। इसलिए आकाँक्षा के साथ-साथ वाक्य के प्रत्येक पद में योग्यता का होना भी आवश्यक है।

(३) **क्रम**—अर्थ की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए वाक्य में शब्दों की योजना या क्रम भी ठीक होना चाहिए। यदि पदों या शब्दों का क्रम ठीक नहीं होता तो अर्थ अस्पष्ट होजाता है। कभी-कभी शब्दों का ठीक क्रम न होने से वाक्य का अर्थ ठीक नहीं लगता। जैसे, 'जाता पाठशाला मोहन है'। इस वाक्य का कुछ भी अर्थ नहीं है क्योंकि इसमें पदों का क्रम ठीक नहीं है। अगर यही शब्द-योजना 'मोहन पाठशाला जाता है' में परिवर्तित कर दी जावे तो अर्थ स्पष्ट होजाता है।

वाक्य में शब्दों के उचित स्थान पर न रखने से वाक्य की स्पष्टता और सरलता नष्ट होजाती है। उदाहरण के लिए 'मोहन ने गन्ना खाते हुए हाथी को देखा'। इस वाक्यके दो भाव हैं—(१) मोहन ने हाथी को गन्ना खाते हुए देखा। (२) जब मोहन गन्ना खा रहा था, तब उसने हाथी को देखा। अतएव एक ही भाव को प्रकट करने के लिए इस वाक्य के शब्दों का क्रम इस प्रकार होना चाहिए। (१) गन्ना खाते हुए मोहन ने हाथी को देखा, (२) मोहन ने हाथी को गन्ना खाते हुए देखा।

(आ) वाक्य के साहित्यिक गुण :—

(१) **स्पष्टता**—वाक्य भावानुकूल सरल, सुबोध और स्पष्ट होना चाहिए। उसमें शब्दों या पदों का यथास्थान सत्प्रयोग हो।

(२) **एकता**—वाक्य में मुख्य भाव को प्रधान और इसके अन्तर्गत अन्य वाक्यांशों को उसके सहायक के रूप में रखना चाहिए। मुख्य भाव से भाव-पार्थक्य प्रकट करने वाले असम्बन्धित वाक्यांशों को अलग रखना चाहिए।

(३) **ओज या बल**—वह शक्ति है जिससे वाक्य सजीव और प्रभाव-पूर्ण हो जाते हैं। उपयुक्त शब्दों के चुनाव, अनावश्यक पदों के अभाव और उपमादि अलंकारों के प्रयोग से वाक्य में सबलता आती है।

(४) **धारावाहिकता**—वाक्य विन्यास में लय-पूर्ण प्रवाह होना आवश्यक है जिससे पाठक बिना रुके हुए एक सी गति से पढ़ता चला जाय। इसके लिए वाक्य में सुव्यवस्थित और सुगठित पदों का रखना वांछनीय है।

(५) **लालित्य**—वह गुण है जिससे वाक्य में रोचकता और मधुरता आती है। परिष्कृत और शिष्ट भाषा, मंजुल और मधुर शब्दों के प्रयोग और विराम चिह्नों के यथास्थान प्रयोग से रचना में लालित्य आता है।

वाक्य सुधार

ओजस्विनी और प्रभाव पूर्ण भाषा का निर्माण सुन्दर और सुसंगठित वाक्य-योजना पर निर्भर है। दूषित और अनियमित वाक्य रचना से भाषा भी दोषपूर्ण हो जाती है। यहां कुछ ऐसे दोषों का विवेचन किया गया है जो प्रायः विद्यार्थियों की रचना में पाये जाते हैं।

(१) **शब्द-योजना की अशुद्धियां**—वाक्य में शब्दों की योजना प्रसंगानुकूल होनी चाहिए। शब्द इतने सरल, अर्थपूर्ण और स्वाभाविक हों कि पाठक को प्रतिपादित विषय के समझने में कठिनाई न हो। शब्दों का प्रयोग करते समय नीचे दिये हुए नियमों पर ध्यान देना चाहियेः—

(क) **एक ही भाव या अर्थ को प्रकट करने वाले शब्दो की पुनरुक्ति न हो;** जैसे (१) तुम **वापस** क्यों **लौट** आये ? (२) उसने अपनी **ताकत** के **बल** पर मेरे साथ अशिष्ट व्यवहार किया। पहले वाक्य में 'वापस' और 'लौटना' तथा दूसरे वाक्य में 'ताक़त, और 'बल' समान भाव के सूचक शब्द हैं। इनमें से केवल एक शब्द रखने से भी अर्थ स्पष्ट होजाता है। एक ही भाव या शबद को निरर्थक दुहराने से 'पुनरुक्तिदोष' हो जाता है।

(ख) **वाक्य में आरम्भ और अन्त के शब्दों का अर्थ एक सा हो;** जैसे उन्होंने इस **कठिनाई** की उत्तम **दवा** निकाली है। इस वाक्य में 'कठिनाई' और 'दवा' दो विभिन्न अर्थ सूचक पदोंका सन्निवेश है। 'दवा' रोग के लिए होती है; 'कठिनाई' दूर करने के लिए 'उपाय' आवश्यक है।

(ग) **एक ही वाक्य में दो विरोधी अर्थ रखने वाले शब्दों का प्रयोग न हो;** जैसे, (१) तब **शायद** वह **अवश्य** आवेगा। (२) रुपये देने के विषय में वे बिल्कुल **मौन** हैं और **कहते** हैं कि आप नालिश कर दीजिये। प्रथम वाक्य में 'शायद' और 'अवश्य' विरोधी भावों को सूचित करने वाले शब्द हैं। दूसरे वाक्य में 'मौन' होकर भी 'कहते हैं।'

(घ) **निरर्थक पदों का सन्निवेश** करने से वाक्य में शिथिलता आजाती है, जैसे, (१) मैं ऐसे धन को **ठोकर से ठुकराता** हूँ। (२) भामाशा ने कई सहस्र के मूल्य की सम्पत्ति महाराणा

प्रताप को सौंपदी । (३) महाराजा हरिश्चन्द्र ने विलाप करके रोती हुई स्त्री का शब्द सुना । इन वाक्यों में रेखांकित पद अनावश्यक हैं क्योंकि उनके भाव 'ठुकराना' 'सम्पत्ति' और 'रोती हुई' में आ जाते हैं ।

(ङ) **अप्रचलित और अनुपयुक्त शब्दों का प्रयोग;** जैसे, माताजी ने आज पूजा करी थी । (२) इतने में सीटी की आवाज कानमें सुनाई पड़ी (३) पारसी लोगों में जो लोग अत्यन्त धर्म-परायण थे, वे भारतवर्ष चले आये । (४) पहले दिन लड़कों का टैस्ट हुआ । प्रथम वाक्य में 'करी थी' अप्रचलित प्रयोग है। इसकी जगह 'की थी' का प्रयोग होना चाहिए। दूसरे में 'कान में' पद अनावश्यक है। तीसरे वाक्य में 'लोगों' और 'लोग' का प्रयोग अनुपयुक्त है । इस वाक्य का शुद्ध रूप 'पारसियों में जो अत्यन्त धर्म परायण थे········।'—होगा । चौथे वाक्य में 'टैस्ट' शब्द के स्थान पर 'परीक्षा' का प्रयोग होना चाहिए। वाक्य में रोमन या नागरीं लिपि में लिखे हुए अप्रचलित अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग सर्वथा अवांछनीय है। प्रचलित पारिभाषिक शब्दों को भी नागरी लिपि में ही लिखना चाहिए।

(च) **पदों का अभाव**—वाक्य में किसी ऐसे पद का अभाव न होना चाहिए जिससे वाक्य का अर्थ अधूरा या भ्रम पूर्ण प्रतीत हो, जैसे—अँगरेज़ी साहित्य में जो स्थान मिल्टन का है वही सूरदास का है। इस वाक्य का अर्थ स्पष्ट नहीं है; क्योंकि 'वही' के पश्चात् 'हिन्दी में' पद का अभाव है।

(छ) **अश्लील और अशिष्ट शब्दों का प्रयोग न करना चाहिए;** जैसे, तुम रात्रि में भोजन करते हो—निशाचर हो। 'निशाचर' का प्रयोग अशिष्ट है। भाषा में ऐसे प्रयोगों से 'ग्राम्यदोष' आजाता है।

(ज) समानार्थ बोधक दो शब्दों का एक ही अर्थ में प्रयोग करना ठीक नहीं; जैसे, वह **स्वयं आप** वहाँ गया। आपके **स्वत्वाधिकार** को कौन छीन सकता है? स्वयं और आप तथा स्वत्व और अधिकार एक ही अर्थ के सूचक हैं। इसी प्रकार द्रव्य; सामग्री; साक्षात्; प्रत्यक्ष; भक्ष्य, भोज्य; विविध, प्रकार; सदा, सर्वदा; सम, तुल्य; वर्ग, समूह आदि समानार्थक शब्द हैं। इनमें से एक शब्द के प्रयोग से ही भाव स्पष्ट होजाता है। कभी-कभी विशेष अर्थ का बोध कराने के लिए ऐसे शब्द-युग्म प्रयुक्त किये जाते हैं। जैसे, किसी से **वैर-विरोध** करना ठीक नहीं। शुभ कार्यों में **बाधा-विघ्न** उपस्थित होते रहते हैं। अनेक **अनुनय-विनय** करने पर भी उसका हृदय न पसीजा।

(झ) **अनेकार्थक शब्दों के प्रयोग में अशुद्धियां**— जैसे, (१) इस बार पुस्तक लम्बे **रूप** में छपी है। (२) डाक्टरी **परीक्षा** के पश्चात् उसे विद्यालय में भर्ती किया जायगा। (३) इस सभा में कितनी **पत्नियां** उपस्थित थीं। इन वाक्यों में 'रूप', 'परीक्षा' और 'पत्नियों' के स्थान पर 'आकार' 'जाँच', 'महिलाएँ' शब्दों का प्रयोग होना चाहिए। ऐसे शब्दों के चुनाव और प्रयोग में सतर्क रहना चाहिए। अनेकार्थक

शब्दों का विभेद पहले बतलाया जा चुका है।

(३) लिखने या कहने का ढंग सरल हो; उसमें जटिल प्रयोग न किये जावें; जैसे, उसने अनेक पुस्तकों का विक्रय किया। इस वाक्य को सरल ढंग से इस प्रकार लिखा जा सकता है—उसने अनेक पुस्तकें बेचीं।

(३) प्रत्येक भाषा की अपनी शैली होती है। वाक्य योजना में हिन्दी शैली को ही अपनाना चाहिए। स्थानीय, प्रान्तीय और विदेशी ढंगों से भाषा का स्वरूप विकृत होजाता है, जैसे, वे दुकान नहीं खोले थे। तुमने कहीं जाना है ? तुमने गेहूँ बेचना था, वह इस तरह मानेगा क्या ? बगैर किसी की तालीम दिये उसने तरक्की करली। ये वाक्य बिहारी, पंजाबी, और उर्दू शैली के उदाहरण हैं। हिन्दी में इनका शुद्ध रूप होगा, उन्होंने दुकान नहीं खोली थी। तुमको कहाँ जाना है ? तुमने गेहूँ बेचा था। क्या वह इस तरह मानेगा ? किसी से शिक्षा प्राप्त किये बिना उसने उन्नति की थी।

आजकल अँगरेजी भाषा का अनुकरण करके विलक्षण प्रयोग किये जाते हैं। जैसे, (१) यह बात उन्होंने हमें डराने के लिए कही है, ऐसा हमारा ख्याल है। (२) उसने कहा कि वह उसकी किताब पढ़ता है। पहले वाक्य की शब्द योजना ठीक नहीं; दूसरे वाक्य में 'उसमें', 'वह', 'उसकी' सर्वनामों का का प्रयोग अशुद्ध है। इन वाक्यों का शुद्ध रूप इस प्रकार होगा—(१) हमारा विचार है कि यह बात उन्होंने हमें डराने के लिए कही है। (२) उसने कहा कि मैं अपनी किताब पढ़ता हूँ।

(४) वाक्य में प्रत्येक शब्द का अपना स्थान होता है। शुद्ध और शिष्ट वाक्य वही है जिसमें सब शब्द अपने उचित स्थान पर हों। पद्य में वाक्य-विन्यास परिवर्तित हो जाता है, पर गद्य में शब्दों को उचित क्रम से ही रखा जाता है; जैसे, 'खाना खाकर आते हैं हम' का शुद्ध क्रम होगा–'हम खाना खाकर आते हैं'। जहाँ, वाक्य में पदों को क्रम से नहीं रखा जाता, वहाँ दुष्क्रम दोष आजाता है; जैसे, उसने प्राण और धन का बलिदान कर दिया। इस वाक्य में पद क्रम ठीक नहीं है। धन को प्राण से पूर्व रखना चाहिए।

शब्द के क्रम के साथ-साथ वाक्य में **अन्वय**(Agreement) का ध्यान रखना चाहिए—अर्थात् वाक्य का प्रत्येक शब्द लिंग वचन, पुरुष, कारक, काल आदि की दृष्टि से अन्य शब्दों के साथ संगति रखे, जैसे, 'राम और कृष्ण गया' वाक्य अशुद्ध है। 'राम' और 'कृष्ण' दो कर्त्ता हैं, अतएव कर्त्ता के अनुरूप 'गये' क्रिया होनी चाहिए।

निष्कर्ष यह है कि वाक्य योजना में शब्दों के क्रम और अन्वय का विचार रखना चाहिए, शब्दों का प्रयोग इस भाँति हो कि अर्थ के समझने में बाधा न पड़े और वाक्य विन्यास सरल, स्पष्ट, प्रवाह युक्त और मधुर हो।

क्रम और अन्वय के कुछ नियम–

(अ) कर्त्ता, कर्म और क्रिया का सम्बन्ध—(१) जब कर्त्ता 'ने' विभक्ति के बिना आता है, तब क्रिया के लिंग और वचन कर्त्ता के अनुसार होते हैं, जैसे, हम जा रहे हैं। वह खाना खाता है।

(२) यदि वाक्य में एक ही क्रिया के समान लिंग वाले एक से अधिक कर्त्ता हों तो क्रिया उसी लिंग की होगी और बहुवचन होगी, जैसे, पुस्तक और कलम रक्खी हैं। घोड़ा और बैल जा रहे हैं। पुस्तक और कलमें रक्खी हैं।

(३) यदि कर्त्ताओं के लिङ्ग असमान हों तो क्रिया अन्तिम कर्त्ता के अनुसार और बहुवचन में होगी, जैसे, घोड़े और गाएँ खड़ी हैं । गाएँ और घोड़े खड़े हैं।

(४) समान लिंग वाले कर्त्ताओं के पीछे समुदाय वाचक शब्द आने पर क्रिया कर्त्ताओं के लिङ्ग के अनुसार और बहुवचन में होगी, जैसे, भाई, भतीजे, लड़के सभी पढ़ने जाते हैं। माँ, बेटी, बहिन सभी जाती हैं । किन्तु असमान लिङ्ग सूचक कर्त्ताओं के साथ क्रिया पुल्लिंग और बहुवचन होगी; जैसे, भाई, बहिन सभी स्कूल जाते हैं। इस स्कूल में लड़के और लड़कियाँ सभी पढ़ते हैं।

(५) जब कर्त्ता विभक्ति सहित हो, किन्तु कर्म का चिह्न 'को' लुप्त हो तो क्रिया का रूप कर्म के अनुसार होता है। जैसे, मैंने घोड़े देखे। ('घोड़े' के अनुसार क्रिया का रूप है।)

(६) दो या अधिक कर्त्ताओं के बीच 'या' 'अथवा' आदि शब्दों का प्रयोग करने से उनमें एक का ही बोध होता है; अतएव क्रिया का रूप लिंग, वचन, पुरुष में अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होता है, जैसे, तुम या मैं जाऊँगा ।

(७) आदर प्रकट करने के लिए एक वचन कर्त्ता की क्रिया भी बहुवचन होती है, जैसे, पिता जी घर गए हैं।

(८) यदि वाक्य में विभिन्न पुरुष वाची सर्वनाम कर्त्ता एक साथ प्रयुक्त हुए हों तो सब से अन्त में उत्तम पुरुष, उससे पूर्व मध्यम पुरुष, और प्रारम्भ में अन्य पुरुष रखना चाहिए, जैसे, वह, आप और मैं जाऊँगा। तुम और हम चलेंगे।

(९) यदि दो कर्त्ताओं में एक संज्ञा और दूसरा सर्वनाम हो, तो क्रिया पिछले आने वाले कर्त्ता के अनुसार होगी, जैसे, देवेन्द्र और तुम पढ़ोगे। तुम और देवेन्द्र पढ़ेंगे।

(इ) **सर्वनामों का प्रयोग**—(१) वाक्य में एक ही व्यक्ति, वस्तु या घटना के सूचक सब सर्वनाम एक प्रकार के होने चाहिए। यदि किसी व्यक्ति के लिए एक स्थान पर 'आप' का प्रयोग है तो दूसरे स्थल पर उसके लिए 'उसका', 'उनका' या 'वह' नहीं होना चाहिए। जैसे—(१) मैं प्रातःकाल घूमने गया था पर वर्षा होने के कारण हम लौट आये। (२) प्रतिमा बड़ी मनोज्ञ थी, हमने उनके दर्शन किये।

(२) सर्वनाम के साथ क्रिया का रूप भी शुद्ध होना चाहिये; जैसे, हम खायगा। क्या तुम वहाँ जायगा? आप जो कुछ सुनो सो ठीक है। आप इसका क्या मूल्य दोगे?—ये वाक्य अशुद्ध हैं

(३) वह, यह, वे, ये के प्रयोग प्रायः अशुद्ध किये जाते हैं; जैसे—वह लोग कल चले गये। यह सब कलमें खराब हैं। 'वह' और 'यह' के स्थान पर 'वे' और 'ये' का प्रयोग करना चाहिए।

(४) कहीं-कहीं सर्वनामों का अनावश्यक प्रयोग किया जाता है; जैसे, तुम्हारा यह उत्तम विचार, जिस पर तुम्हारे पिताजी ने

भी राय दी है, उसको पढ़कर चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ। यहाँ 'उसको' का प्रयोग निरर्थक है।

(५) अनुपयुक्त सर्वनामों का प्रयोग; जैसे, चलते चलते उसे दिखाई दिया। 'उसे' के स्थान में 'उसको' होना चाहिए।

(६) उचित सर्वनामों का अभाव होने से भी वाक्य में स्पष्टता नहीं आती; जैसे,(१) सत्याग्रही जेल से बाहर आये और रचनात्मक कार्य शुरू किया। यहाँ "और" के पश्चात् 'उन्होंने' के प्रयोग से वाक्य में सुन्दरता आ जाती है। (२) वह मेरे पास आया और कहा। इस वाक्य का शुद्ध रूप होगा—वह मेरे पास आया और उसने कहा या वह मेरे पास आया और बोला।

(६) एक संज्ञा के पश्चात् वाक्य में उसी संज्ञा को दुहराना भी ठीक नहीं है; जैसे, 'संज्ञा और संज्ञा के भेद' के स्थान पर 'संज्ञा और उसके भेद' होना चाहिए।

(८) अपना, मेरा, हमारा का प्रयोग सतर्कता से करना चाहिए। एक के स्थान में दूसरे का प्रयोग करने से अर्थ में हेर फेर हो जाता है; जैसे—मेरी स्त्री अपने भाई के यहाँ गई है। मेरी स्त्री मेरे भाई के यहाँ गई है।

(ई) सापेक्ष शब्दों का प्रयोग—कुछ शब्द साथ साथ प्रयुक्त होते हैं; जैसे, यद्यपि के साथ तथापि, यदि के साथ तो, ज्यों के साथ त्यों, जैसे के साथ तैसे, जहाँ के साथ वहाँ, जब के साथ तब इत्यादि। यहाँ कुछ उदाहरण दिये जाते हैं:—

अशुद्ध	शुद्ध
(१) यदि वह पास होता तब यहाँ आता।	यदि वह पास होता तो यहाँ आता।
(२) तुमने जहाँ पुस्तक रक्खी हो, उसी जगह तुम्हें देखना चाहिए।	तुमने जहाँ पुस्तक रखी हो वहाँ ही तुम्हें देखना चाहिए
(३) जिस प्रकार नेताजी ने आत्मोत्सर्ग किया उस तरह अन्य कोई कर सकता है ?	जिस प्रकार नेताजी ने आत्मोत्सर्ग किया उस प्रकार क्या कोई कर सकता है ?

(उ) विशेषणों का प्रयोग----संज्ञा के ठीक ठीक स्वरूप का बोध कराने के लिए किया जाता है। अतएव उनके अर्थ और वाक्य में स्थान पर ध्यान रखना चाहिए। वाक्य में विशेषण के स्थान परिवर्तन से अर्थ में भी बड़ा हेर फेर हो जाता है; जैसे, नई दिल्ली का बाजार और दिल्ली का नया बाजार। विशेषणों का प्रयोग जहाँ आवश्यकता हो वहीं करना चाहिए। (१) निरर्थक विशेषणों के प्रयोग से भाषा मे शिथिलता आ जाती है; जैसे, (१) यह कमल बहुत सुन्दर है। (२) राम को बहुत भूख लगी है। इन वाक्यों में 'बहुत' का प्रयोग कोई विशेष अर्थ नहीं रखता। (३) "ताजमहल सुन्दर शोभा धारण कर रहा था।" "शोभा" सौन्दर्य सूचक शब्द है। उसमें 'सुन्दर' जोड़ने से वाक्य में कोई रमणीयता नहीं आती।

(२) कभी कभी दो विरोध सूचक विशेषणों का अशुद्ध प्रयोग किया जाता है; जैसे, इस बग्घी के लिए यह **बड़ा** छोटा घोड़ा है।

(३) क्रिया विशेषण के स्थान पर विशेषण का प्रयोग करना उचित नहीं; प्रायः 'बड़ा' और 'बहुत' के प्रयोग में ऐसी असावधानी की जाती है; जैसे, यह **बड़ा** अच्छा लड़का है। यह **बड़ी** सुन्दर घड़ी है। इन वाक्यों में 'बड़ा' और 'बड़ी' के के स्थान पर 'बहुत' का प्रयोग करना चाहिए। 'बड़ा' विशेषण है और उसका प्रयोग केवल संज्ञाओं से पूर्व ही हो सकता है। 'बहुत' का प्रयोग विशेषण और क्रिया विशेषण दोनों प्रकार हो सकता है; जैसे, उसके पास **बहुत** पुस्तकें हैं (विशेषण)। उसके पास **बहुत** बड़ी पुस्तक है (क्रिया विशेषण)।

(४) विशेषण के स्थान पर संज्ञा का प्रयोग करना भी अशुद्ध है; जैसे, घर के घर फूट से **नाश** हो जाते हैं। क्या आपने **निश्चय** रूप से व्यापार करने का इरादा किया है? इन वाक्यों में 'नाश' और 'निश्चय' के स्थान में 'नष्ट' और 'निश्चित' होना चाहिए।

(५) **संस्कृत विशेषणों** के प्रयोग में भी सावधानी रखना चाहिए; जैसे, तुमने अपनी **निर्दयी** माँ को मारा। इन **निरपराधी** किसानों को दण्ड दिया गया। वह अनेक रोगों से **ग्रसित** है। यह नियम सर्वत्र **व्यापित** है। दीर्घाकार शब्दों के स्थान पर निर्दय, निरपराध, ग्रस्त और व्याप्त का प्रयोग करना चाहिए।

(ऊ) **वचन का प्रयोग**–(१) वचन से किसी वस्तु की संख्या का बोध होता है, मात्रा या परिमाण का नहीं; जैसे, सेर भर मटर का साग और दो बोरी शक्कर के लिए सेर भर मटरों का साग और दो बोरियाँ शक्कर कहना अशुद्ध है।

(२) एकवचन कर्त्ता के साथ बहुवचन सूचक पदार्थों का प्रयोग नहीं करना चाहिए; जैसे, मैं **मोटरों** पर सवार होकर गया था। फूल **वृक्षों** पर खिल रहा था। 'मोटरों' और 'वृक्षों' के स्थान पर 'मोटर' और 'वृक्ष' होना चाहिए।

(३) एकवचन संज्ञा के लिए बहुवचन सूचक सर्वनाम का प्रयोग करना अशुद्ध है, जैसे; यह श्याम ही है, **जिन्होंने** आपत्तियों में भी तुम्हारा साथ दिया। हम में से **प्रत्येक** पद-लोलुप हो सकते हैं। पहले वाक्य में एकवचन 'श्याम' के साथ 'जिन्होंने' का प्रयोग अशुद्ध है। दूसरे वाक्य में 'प्रत्येक' एक का सूचक है; उसके साथ 'होसकता है' क्रिया का प्रयोग होना चाहिए।

(३) प्राण, दर्शन, हस्ताक्षर, आँसू आदि कुछ शब्द सदैव बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं, इनको एक वचन में प्रयुक्त करना अशुद्ध है; जैसे, इस संधि-पत्र पर किसने हस्ताक्षर किया। सिंह का दर्शन करते ही मेरा प्राण निकल गया। इन दोनों वाक्यों का शुद्ध रूप होगा—इस संधि-पत्र पर किसने हस्ताक्षर किये। सिंह के दर्शन करते ही मेरे प्राण निकल गये।

(४) बहुवचन सूचक अनेक, सब और आदि को, अनेकों, सबों और आदियों की भाँति प्रयुक्त करना अशुद्ध है; जैसे,

अनेकों मनुष्यों ने गाँधी जी समाधि पर फूल चढ़ाए।

(५) 'सामग्री', 'द्रव्य' आदि कुछ समूह सूचक संज्ञाएँ एकवचन हैं। ये एकवचन में प्रयुक्त की जाती हैं, उनको बहुवचन के रूप में प्रयुक्त करना अशुद्ध है, जैसे, अनेक सज्जनोंने मंदिर में **सामग्रियां** दीं। 'सामग्रियों' के स्थान पर सामग्री' होना चाहिए।

(६) विदेशी शब्दों के बहुवचन रूप, जैसे, 'फ़ीट' कागज़ात, महलात, अफसरान, गवर्नर्स् आदि का प्रयोग करना अशुद्ध है। हिन्दी व्याकरण के अनुसार शुद्ध रूप—'फुटों, कागज़ों, महलों, अफसरों और गवर्नरों'—होंगे।

(ए) लिंग सम्बन्धी अशुद्धियां—

(१) प्रत्येक शब्द के लिंग जानना चाहिए। लिंग जानने के नियम पहले बताए जा चुके हैं। लिंग की अशुद्धि से वाक्य भी अशुद्ध होजाता है; जैसे, **उसकी लालच** से यह अनर्थ हुआ। **तुम्हारी झूठ ने** सब कार्य बिगाड़ दिया, आम **गर्मी की मौसिम** में फलता है। दीर्घाकार वाक्याँशों के लिए क्रमशः 'उसके लालच' 'तुम्हारे झूठ' और 'गर्मी के मौसम' का प्रयोग करना चाहिये।

(२) (१) देवेन्द्र की पत्नी गुणवान स्त्री है। (२) मैंने **श्रीमान् रानी** की सेवा में निवेदन किया था। (३) इस सभा में अनेक विद्वान् स्त्री उपस्थित थीं। यह **बुद्धिमान् बालिका** प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई है। भवभूति के काव्यों में **मूर्तिमय करुणा** के दर्शन होते हैं। इन वाक्यों में श्रीमान्, गुणवान्, विद्वान्, बुद्धिमान् और मूर्तिमय का अशुद्ध प्रयोग है। इनके स्थान पर श्रीमती, गुणवती, विदुषी, बुद्धिमती और मूर्तिमयी का प्रयोग करना चाहिये।

(ऐ) विभक्तियों का प्रयोग–(१) विभक्तियाँ वाक्य में एक शब्द का दूसरे के साथ सम्बन्ध प्रकट करती हैं; जैसे, राम का घर। 'का' राम और घर में सम्बन्ध सूचित करता है। विभक्तियों के अभाव से वाक्य अशुद्ध हो जाता है; जैसे, आप क्या कह रहे हैं, कुछ समझ नहीं पड़ता। आप सन्ध्या पधारें। इन वाक्यों का भाव तभी स्पष्ट होता है जब 'समझ' और 'सन्ध्या' के पश्चात् क्रमशः 'में' और 'को' विभक्तियों का प्रयोग किया जाय।

(२) विभक्तियों के अनावश्यक प्रयोग से भी वाक्य में शिथिलता आ जाती है; जैसे, क्या इस मकान को आपने बनवाया है? तुमने इस पुस्तक को क्यों फेंका? इन वाक्यों को इस प्रकार लिखना अधिक शुद्ध है—क्या यह मकान आपने बनवाया है? तुमने यह पुस्तक क्यों फेंकी?

(३) दुहरी विभक्तियों अथवा कृदन्तों के प्रयोग से भी वाक्य अशुद्ध हो जाता है; जैसे, हमारा वाला कलम, तुम्हारी वाली पुस्तक। सर्वनामों के साथ 'रा', 'री' विभक्तियाँ लगने पर 'वाला' या 'वाली' लगाना अशुद्ध है।

(४) एक ही वाक्य में किसी एक विभक्ति का अनेक बार प्रयोग करना भी ठीक नहीं; जैसे, हमको विद्यार्थियों को पढ़ाने को सूचित किया गया था। इसी वाक्य को—'हमें विद्यार्थी पढ़ाने को सूचित किया गया था'—कहना उचित होगा।

(५) 'ने' विभक्ति का प्रयोग सदा भूतकाल में और केवल सकर्मक क्रियाओं के साथ होता है। वर्तमान या भविष्यत् काल

अथवा अकर्मक क्रियाओं के साथ 'ने' का प्रयोग नहीं होता; जैसे, आपने क्यों हँस दिया ? इस वाक्य का शुद्ध रूप होगा—आप क्यों हँसे ?

(६) कभी कभी 'में', 'पर', 'से' के लिये 'के अन्दर' या 'के बीच', 'के ऊपर' और 'के साथ' के अशुद्ध प्रयोग किये जाते हैं; जैसे, इस पुस्तक के अन्दर, तुलसी की कविता के अन्दर, लड़ाई के बीच, घोड़े के ऊपर, हँसी खुशी के साथ। इनकी जगह 'इस पुस्तक में', 'तुलसी की कविता में', 'लड़ाई में', 'घोड़े पर' और 'हँसी खुशी से' का प्रयोग करना अधिक उपयुक्त है।

(ओ) **क्रियाओं का प्रयोग**–(१) वाक्य में कई अर्थ और कार्य सूचक संज्ञाएँ होने पर उनके अन्त में एक ही क्रिया का अशुद्ध प्रयोग किया जाता है; जैसे, चित्रकार चित्र और संगतराश मूर्तियाँ गढ़ता है। यहाँ 'गढ़ता है' क्रिया का प्रयोग चित्रकार के लिए भी किया गया है। 'चित्र' खींचे जाते हैं, गढ़े नहीं जाते। अतएव वाक्य का शुद्ध रूप होगा—चित्रकार चित्र खींचता और संगतराश मूर्तियाँ गढ़ता है।

(२) एक वाक्य में आदि से अन्त तक एक ही रूप की क्रियाएँ न रखने से वाक्य-रचना शिथिल-सी प्रतीत होती है; जैसे—यदि आप यह धर्म-ग्रंथ दे देते तो मैं स्वाध्याय कर लूँगा। 'दे देते' की जगह 'दे देंगे' रखने से ही 'कर लूँगा' के साथ संगति बैठती है। इसी प्रकार वाक्य के आरम्भ में अकर्मक और अन्त में सकर्मक क्रिया न रखना चाहिए।

(३) पर्यायवाची क्रियाओं में पर्याप्त अन्तर होता है; एक भाव के लिए दूसरी क्रिया का प्रयोग करना उचित नहीं है;

जैसे, मैं **टहल रहा हूँ;** मैं **भ्रमण** कर रहा हूँ। पुलिस को देखते ही चोर **भाग गये;** वह परिश्रम करने से भागता है; मैं प्रातःकाल **दौड़ता** हूँ। टहलना और भ्रमण करना अथवा भागना और दौड़ना का अन्तर इन वाक्यों से स्पष्ट हो जायेगा।

(४) पूर्वकालिक क्रिया को प्रायः मुख्य क्रिया से पूर्व रखते हैं, किन्तु अर्थ भेद से वाक्य के भिन्न भिन्न स्थानों पर भी इसे रखा जाता है; जैसे, उसने **पूजा करके** खाना खाया। **पूजा करके** वह घर आया।

(५) ऐसी संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग नहीं करना चाहिए जिनसे भ्रम उत्पन्न हो; जैसे, क्या तुमने वह कुटिया भी देखी जहाँ तुलसीदास रह रहे थे। 'रह रहे थे' की जगह 'रहे थे' के प्रयोग से अर्थ स्पष्ट होता है।

(औ) **अध्याहार**—कभी कभी वाक्य रचना में ऐसे शब्दों को छोड़ दिया जाता है जिनके प्रयोग न करने से भी अर्थ स्पष्ट हो जाता है। जैसे—"सज्जन पुरुष स्वार्थ पूर्ति को इतना महत्त्व नहीं देते जितना परोपकार को"। इस वाक्य के अन्त में 'देते हैं' शब्द समूह न रखने से भी आशय स्पष्ट हो जाता है।

(अ) **अवधारण** (Emphasis)—कभी कभी किसी भाव को महत्त्व देने के लिये वाक्य में शब्दों के क्रम को बदल भी दिया जाता है; जैसे, वह तुम्हारी **प्रशंसा** करता है; तुम्हारी प्रशंसा वह करता है। प्रथम वाक्य में साधारण भाव प्रकट किया गया है, किन्तु दूसरे में 'वह' पर जोर दिया गया है। इस वाक्य का

आशय यह है कि तुम्हारी प्रशंसा 'वह' ही करता है—अन्य कोई नहीं।

इस प्रकार वाक्य में शब्दों के हेर फेर से अनेक भाव प्रकट किये जा सकते हैं। प्रकरण के अनुकूल जिस भाव की विशेषता प्रकट की जावे, उसी क्रम से शब्दों को वाक्य में रखना चाहिए।

अभ्यास

१—दीर्घाकार पदों के स्थान में उपयुक्त शब्दों का प्रयोग करो:—
(क) उसी समय से भारतवर्ष के **गले में** पराधीनता की बेड़ियाँ पड़ गईं। (ख) इस समय उसकी **आयु** तीस वर्ष की है। (ग) यदि अति वृष्टि हुई तो अकाल का **सन्देह** है। (घ) कल स्त्रियों में खूब युद्ध हुआ। (ङ) इस सुकार्य में ग्राम की **समस्त जन संख्या ने भाग लिया**। (च) इन दोनों चित्रों में बहुत **मेल** है। (छ) मुझे **दुख** है कि मैं आपके पत्र का उत्तर न दे सका। (ज) **निवेदन** है कि आप प्रीति भोज में अवश्य आवें। (झ) महान् पुरुष सबसे **आदरित** होते हैं। (ञ) उस सभा में नगर के अनेक **लब्ध-प्रतिष्ठित** व्यक्ति उपस्थित थे।

२—नीचे के वाक्यों में मोटे टाइप के सर्वनामों का प्रयोग अशुद्ध है। क्यों ?

(क) ऐक्सिमो जाति के घर बड़े विचित्र होते हैं। **वे** उत्तरी प्रदेशों में फैले हुए हैं। (ख) यदि काश्मीरी आक्रमणकारियों को पराजित नहीं कर सकते तो भारत सरकार को **उनका** नाश करना चाहिए। (ग) उन्होंने भारतवर्ष को अन्न के दो जहाज भेजने की व्यवस्था की थी, पर **वे** बीच में ही पाकिस्तान ने रोक लिए। (घ) यद्यपि आप हिन्दी के परम हितैषी थे तथापि अल्प व्यय में ही **उनका**

देहावसान हो गया। (ङ) यह सब आम किसने खा डाले ? (च) जब वे पिटेंगे तब उन्हें यह भी समझ में आ जायगा। (छ) मेरी आँखों पर मेरा ही विश्वास नहीं होता था। (ज) वह विक्रेता नित्य अपना अखबार दे जाता था।

३—निम्न लिखित वाक्यों के शुद्ध रूप लिखो :—

(क) इस दुर्घटना में ही दो स्त्रियों और एक पुरुष की मृत्यु हुई। (ख) तुम्हें कितनी पुस्तक और रुपयों का पारितोषिक मिला। (ग) इस दीवार को चिनते तुम्हें कितने दिन हो गये ? (घ) तुम को इस रहस्य को जानने को भेजा गया था। (ङ) वे हमसे कहे थे कि कल आना। (च) वह यह सुनते ही हँस पड़ा और कहा। (छ) मैं धर्मशाला बनवाया। (ज) जहाँ मैं देखता हूँ, वहाँ मनोहर दृश्य देखे। (झ) मोटर के नीचे दबकर लड़के की मौत हो गई। (ञ) मजदूरों ने आज हड़ताल मनाई है। (ट) उसने इस घर को क्यों त्याग दिया है ? (ठ) यह लड़की अपनी माता से भी बड़ी है। (ड) यह पेन्सिलें विद्यार्थियों को प्रदान हुई हैं। (ढ) यह बड़ा लम्बा मैदान है। (ण) उसकी आँखों से आँसू बह रहा था। (त) किन्हीं लोगों ने उसे पीट दिया है। (थ) ज्यों ही उसने घर से पैर निकाले, डाकुओं का दल उस पर टूट पड़ा। (द) केवल तुम्हारे कहने मात्र से मैं यह नहीं कर सकता। (ध) तुमने अपनी निर्दयी मां को मारा। (न) यह नियम सर्वत्र व्यापित है। (प) इन निरपराधी किसानों को दण्ड दिया गया। (फ) वह अनेक रोगों से ग्रसित है। (ब) जैसा व्यवहार तुमने किया उस प्रकार करने से कौन प्रसन्न न होता। (भ) यदि तुम उदार होते तब उसे अवश्य आश्रय देते। (म) न केवल यही, बल्कि वे हमको धमकी भी देते हैं (य) उस साध्वी स्त्री की ओर कौन आँख उठाने का उत्साह कर सकता है। (र) इस गर्म आग पर क्यो रक्खा है ? (ल)

उन्होंने अपनी कविता स्वयं आप पढ़कर सुनाई। (व) उसने अपनी ताकत के बल पर मेरे साथ अशिष्ट व्यवहार किया। (श) पुलिस द्वारा जाली नोटों की टकसाल पकड़ी गई है। (ष) अनेकों लोगों ने गाँधी फंड में दान दिया। (स) मेरे को यह बात नहीं रुचती। (ह) रस ही साहित्य का प्राण है। (क्ष) हम बहुत सोचें, हम कहें। (त्र) तुम इस पर क्यों क्षोभित होते हो? (त्र) लेकिन फिर भी वह घर से चला गया। (ज्ञ) कृपया पत्रोत्तर देने का तुरन्त अनुग्रह करें।

४—निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध कीजिए :—

(अ) हमने कलकत्ते जाना है। (आ) मेरे को तो यह बात मालुम नहीं है। (इ) अनेकों राजे-महाराजे वहाँ पधारे थे। (ई) ताजमहल की सौन्दर्यता पर हम लोंग मुग्ध हो गए। (युक्त प्रान्त, १९४५)

५—नीचे लिखे वाक्यों के यथायोग्य पदों को यथा स्थान रखते हुए फिर से लिखिए:—

(क) पढ़कर पुस्तक बातें बहुत सी जान सकते हैं हम।

(ख) उपकारी है बड़ा अभ्यास, पढ़ने से अच्छी-अच्छी पुस्तकों के क्योंकि बढ़ता है ज्ञान एक तो दूसरे और सुधारता है चरित्र।

(ग) बन पड़ता एकता से नही जो नहीं है काम ही ऐसा कोई।

(घ) अनुराग है आदमियों को पढ़ने में बहुत से ऐसा कि उनको लगता है पढ़ना अच्छा दिन रात।

(ङ) करते हैं काम एक साथ मिलकर जो क्यों न हों चाहे निर्बल दरिद्र ही वा लेते हैं कर ही काम वे वह।

(एडमिशन परीक्षा, १९२५)

विराम-चिह्न (Punctuations)

बातचीत करते समय वक्ता को किसी पद, वाक्यांश अथवा वाक्य के पश्चात् अपने आशय को अधिक स्पष्ट करने के लिए ठहरना पड़ता है। इस रुकने को 'विराम' कहते हैं। लिखने में भी भाव स्पष्ट करने के लिए ऐसे स्थानों पर कुछ चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। ये विराम-चिह्न कहलाते हैं।

विराम चिह्नों का प्रयोग भाषा की स्पष्टता के लिए नितान्त आवश्यक है। इन का उचित प्रयोग न करने से अर्थ स्पष्ट नहीं होता अथवा ठीक ठीक भाव समझने में भ्रम हो जाता है। शव्दों, वाक्यांशों और वाक्यों का सम्वन्ध भी विराम चिह्नों द्वारा स्पष्ट होता है। ये लेखक की विचार-श्रृंखला के क्रम को स्पष्ट करते हैं। इन के विभिन्न स्थानों पर उचित प्रयोग न करने से अर्थ में जो विभिन्नता आ जाती है वह नीचे के उदाहरणों से स्पष्ट हो जावेगी:—

(१) (अ) आगे बढ़ो, मत रुको। (आ) आगे बढ़ो मत, रुको।

(२) "मित्र निकट जिसके नहीं, धूप चाँदनी ताहि।
मित्र निकट जिसके, नहीं धूप चाँदनी ताहि॥"

हिन्दी के प्रचलित विराम-चिह्न निम्नलिखित हैं:—

(१) पूर्ण विराम	।	(७) विस्मय सूचक चिह्न	!
(२) अल्प विराम	,	(८) अवतरण या उद्धरण चिह्न	"..."
(३) अर्द्ध विराम	;	(९) सम्बन्ध सूचक या योजक	-
(४) कोलन	:	(१०) कोष्ठक–	(), { }, [ ]
(५) प्रश्न-सूचक	?	(११) लोप-निर्देशक	....
(६) निर्देशक–	—	(१२) संक्षेप-सूचक	०

(१) पूर्ण विराम (Full Stop)—वर्णनात्मक और आज्ञात्मक वाक्यों के पूर्णान्त में लगाया जाता है। जैसे,

वर्णनात्मक—इस समय हिन्दी भाषा की दुर्दशा की जा रही थी। अनेक लेखक भाषा का अशुद्ध प्रयोग करते थे।

आज्ञात्मक—आप जाइए। मुझसे अशिष्ट बातें न करिए।

विशेष—कभी कभी अपूर्ण वाक्यों या केवल शब्दों से ही भाव स्पष्ट हो जाता है। ऐसे वाक्यों के अन्त में भी पूर्ण विराम का चिह्न प्रयुक्त करना चाहिए। जैसे—

राम—चलो सैर करें।
मोहन—नहीं।
राम—क्यों ?
मोहन—यह पढ़ने का समय है, सैर का नहीं।

(२) अल्प विराम (Comma)—वाक्य में बहुत थोड़ी देर रुकने के लिए इसका प्रयोग होता है। आगे दिए हुए स्थलों पर इसका प्रयोग किया जाता है :—

(अ) एक ही प्रकार के अनेक शब्दों के बीच में—(१) राम, मोहन और सोहन मन लगा कर पढ़ते थे। (२) जीवन में सुख, दुख, कष्ट, पीड़ा सभी का सामना करना पड़ता है।

(आ) संयुक्त और मिश्रित वाक्यों में प्रधान उपवाक्य से आश्रित उपवाक्योंको अलग करने के लिए; जैसे—यदि यह ज्ञात होता कि तुम्हारा वैवाहिक जीवन सुखद नहीं है, तो मैं यह प्रश्न ही न करता।

(इ) समान वाक्यों अथवा समान-पदी शब्दों को अलग करने के लिए—(१) भारत के राष्ट्र-पिता, महात्मा गांधी की सेवाओं का मूल्यांकन सरल कार्य नहीं है। (२) अगर किसी को संसार में सबसे दुखी, जीवन से निराश, चिन्ताग्नि में जलते हुए प्राणी की मूर्ति देखनी हो, तो उस युवक को देखे, जो साइकिल पर बैठा हुआ, अल्फ्रेड पार्क के सामने चला जा रहा है।

(उ) सम्बोधन किये जाने वाले शब्द के पश्चात् अल्प विराम चिह्न लगाया जाता है। विस्मय सूचक चिह्न लगाना अशुद्ध है। जैसे, हे मित्र, परोपकार बदले की भावना से नहीं किया जाता।

(ऊ) भाव प्रबलता प्रकट करने अथवा किन्ही शब्दों पर जोर देने के कारण वाक्य अथवा पदों को दुहराया जावे तो उनको अल्प विराम चिह्न से पृथक करना चाहिए। जैसे, तुम्हें तो बार-बार सिनेमा, सिनेमा की रट लगी है।

(ए) अवतरण (Direct Speech) के पूर्व अल्प विराम चिह्न प्रयुक्त किया जाता है। जैसे, मोहन ने कहा, "आज अवकाश का दिन है।

(३) अर्द्ध-विराम-(Semi Colon)—इस चिह्न का प्रयोग उन स्थलों पर किया जाता है, जहाँ अल्प विराम से कुछ अधिक और पूर्ण विराम से कुछ कम समय तक रुका जाये। प्रायः समानाधिकरण वाक्यों को अलग करने के लिए अथवा विपरीत भावों को प्रकट करने वाले संयुक्त या मिश्रित वाक्यों को अथवा सम्बन्धित वाक्यांशों को एक दूसरे से पृथक करने के

लिए अर्द्ध-विराम का प्रयोग किया जाता है। जैसे, (१) पिता जी बीमार हैं; माताजी घर पर नहीं हैं; भाई घर से भाग गया है; सभी ओर से संकट में हूँ। (२) योरप में हानि-कारिणी धार्मिक रुढ़ियों का उत्पाटन साहित्य हीने किया है; जातीय स्वातन्त्र्य के बीज उसी ने बोये हैं; व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य के भावों को भी उसी ने पाला, पोसा और बढ़ाया है।

(४) **कोलन**—(Colon) इस चिह्न का प्रयोग कथोपकथन में, कहे हुए वाक्य के पूर्व, अथवा उद्धृत वाक्य या वाक्यों के पूर्व लगाया जाता है। किसी कथन की पुष्टि में, एक से अधिक उदाहरण देने में और जैसे, उदाहरणार्थ, अर्थात् शब्दों के स्थान में कोलन का प्रयोग होता है। किसी भाव को संक्षेप में व्यक्त करने के लिए भी कोलन का प्रयोग किया जाता है। जैसे—

१—उसने मेरी ओर दीनता से देखा और कहा : मुझे भूख लगी है, कुछ भोजन दीजिए। १—जीवन के तीन लक्ष्य हैं : श्रम, सेवा और संतोष। ३—घना अन्धकार छाया हुआ था, हाथों हाथ नहीं सूझता था, पल-पल पर बिजली कड़कती थी : बड़ी भयानक रात्रि थी।

(५) **प्रश्न सूचक चिह्न**—(Note of Interrogation)- **प्रश्नात्मक वाक्यों के अन्त में प्रयुक्त किया जाता है। जैसे, क्या तुम कल चले जाओगे ?**

विशेष—(क) मिश्रित वाक्य में आश्रित वाक्य के पूर्व प्रश्न होने पर भी इस चिह्न का प्रयोग नहीं किया जाता। जैसे, मैं कैसे कह सकता हूँ कि वह तुम्हें ऋण दे देगा अथवा मैं नहीं जानता कि वह क्या करेगा।

(ख) एक से अधिक प्रश्नात्मक वाक्यों में यदि प्रत्येक पर ज़ोर देना आवश्यक है तो प्रत्येक के अन्त में प्रश्न सूचक चिह्न रखना चाहिए अन्यथा नहीं। जैसे—दूसरों से अपनी मानसिक व्यथा कहने से क्या लाभ ? क्या कोई आपकी सहायता करेगा ? क्या दूसरों के आगे रोंने से दुख हलका हो जावेगा ?

(ग) व्यंग्य अथवा सन्देह का भाव प्रकट करने के लिए भी कभी कभी वाक्य में कोष्ठक के भीतर प्रश्न सूचक चिह्न का प्रयोग करते हैं। जैसे, अंगरेजी शासन से भारतीयों को अनेक सुख (?) प्राप्त हुए हैं।

(६) विस्मय अथवा भाव सूचक चिह्न—(Note of Exclamation) **विस्मय, भय, आश्चर्य, घृणा, कौतूहल, हर्ष, आज्ञा, प्रार्थना आदि मनोवेगों के प्रकट करने वाले शब्दों के पश्चात् प्रयुक्त किया जाता है। जैसे, अरे ! यह क्या !**

विशेष—(अ) सम्बोधन सूचक शब्दों के पश्चात् इस चिह्न का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इस चिह्न का प्रयोग वहीं उचित है जहाँ तीव्र मनोवेग के कारण कुछ देर रुकना पड़ता है।

(आ) मनोवेग को प्रकट करने वाले प्रश्नात्मक वाक्य के अन्त में प्रश्न-सूचक चिह्न न लगाकर विस्मय सूचक-चिह्न लगाना चाहिए। जैसे, कैसासुन्दर फल है !

(इ) व्यंग्य अथवा उपहास को सूचित करने के लिए वाक्य के अन्त में विस्मय-सूचक-चिह्न का प्रयोग करना चाहिए। जैसे, खार की खान ! संसार भर के नीचे ! सारी पृथ्वी के विकार !

(७) निर्देशक—(Dash) **(क) इस चिह्न का प्रयोग विचार-श्रृंखला में परिवर्तन अथवा रुकावट (गतिरोध) प्रकट करने के लिए किया जाता है। जैसे, और यह सब किसकी देन है ?—तुम्हीं सोचो।**

(ख) शोक, खेद अथवा अत्यन्त भावोद्रेक से जब कोई पात्र हिचककर या हकलाकर बोलता है तो स्थान-स्थान पर निर्देशक चिह्न का प्रयोग करना चाहिए। जैसे, न—न मैं—ने—जैसा—किया—वैसा पाया।

(ग) किसी लेखक या कवि की कोई उक्ति उद्धृत करके उनके नाम देने से पूर्व निर्देश-चिह्न प्रयुक्त किया जाता है, जैसे,

जे न मित्र दुःख होंहिं दुखारी।
तिनहिं विलोकत पातक भारी ॥ —तुलसीदास

(घ) वार्तालाप में पात्रों के नाम के पश्चात् भी निर्देश चिह्न प्रयुक्त किया जाता है। जैसे,

सागर—और मैं जो उसे रोज विश्राम देता हूँ।

मेघ—उसके बदले तो वह तेरा जल शोषण करता है।

(ङ) कभी-कभी समानपदी वाक्यांशों के आगे पीछे भी तथा कोलन और कोष्ठक के स्थान में अथवा वाक्यों के बीच में देर तक रुकने के लिए निर्देश-चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे, तुम—अपराध की साक्षात् मूर्ति—ईश्वर भक्ति का ढोंग करते हो।

(२) अवतरण या उद्धरण चिह्न—(Inverted Commas) किसी वार्तालाप अथवा उद्धृत वाक्य या रचना को अवतरण चिह्नों के अन्तर्गत रखा जाता है। कभी-कभी पुस्तकों के नाम विदेशी शब्द अथवा कुछ ऐसे शब्द जिन पर जोर दिया जावे—इकहरे अवतरण चिह्नों के अन्तर्गत रखे जाते हैं। जैसे; (१) मैंने चुपके से उनके कान में कहा, "महाशय, कुछ परवा नहीं, आपकी मदद के लिए मैं हूँ। आपके जी में जो आवे, आरम्भ

कीजिए, फिर तो मैं सब कुछ निबाह लूंगा।" (२) मेरी माता अविकृत 'अव्यय' घराने की है। (३) इस वाक्य को गाँठ बाँधो कि चाल वह चल कि 'पसेमर्ग' (मरने के बाद) मुझे याद करें। (४) कवि ने यथार्थ कहा है, "काचः कांचन संसर्गाद्धन्ते मरकतींद्युतिम्।"

(६) योजक या सम्बन्ध चिह्न (Hyphen)— सामासिक पदों अथवा एक ही शब्द को दो बार प्रयुक्त करने पर योजक-चिह्न लगता है। जैसे, स्नेह-भाजन, सादर सास-ससुर-पद-पूजा, धीरे-धीरे।

(१०) कोष्ठक—(Brackets) नाटक में आदेश सूचक वाक्यांश अथवा संकेत और वाक्य में वे उप वाक्य जिनका मुख्य वाक्य से सम्बन्ध नहीं होता, किन्तु भाव स्पष्ट करने के लिए उनका होना आवश्यक होता है--कोष्ठक में रखे जाते हैं। जैसे, (१) राणा—(राजकुमार के प्रति) देखो, कुँवर जी! अपने धर्म और देश रक्षार्थ मैंने जो कष्ट सहे हैं, तुमने अपनी आंखों से देखे हैं।

(२) सिक्खों की बंदूकों की बाढ़ ने पहले धावे को रोका। दूसरे को रोका। पर यहाँ थे आठ (लहनासिंह तक तक कर मार रहा था—वह खड़ा था, और, और लेटे हुए थे) और वे सत्तर।

(११) लोप-निर्देशक–वार्तालाप में वाक्य पूर्ण होने से पूर्व ही प्रत्युत्तर प्राप्त हो जावे अथवा उद्धृत् वाक्य का अर्द्धांश लिया जावे तो लोप-चिह्न का प्रयोग किया जाता है। जैसे,

(१) झोंपड़ी के दीपालोक में एक स्त्री पाठ कर रही थी—"अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते..."

(२) मेघ—हाँ मैं गरजता हूँ तो बरसता भी हूँ। तू तो...

(१२) **संक्षेप-सूचक या लाघव चिह्न**—(Initial)—प्रायः पदवी वाचक शब्दों (जो संक्षेप में लिखे जाते हैं) के पश्चात् इन चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। जैसे, रा० ब० (रायबहादुर); पं० (पंडित); एम० ए० आदि।

गौण विराम-चिह्न

(क) पुनरुक्ति-सूचक चिह्न (Ditto) ,,—ऊपर लिखे हुए शब्दों और वाक्यों को न लिख कर इस चिह्न का प्रयोग करते हैं। जैसे,

∵ १००) का एक वर्ष का व्याज ५ रु० है।

∴ २००) ,, ,, ,, ,, ५ रु० × २ = १० रु०

(ख) फुट नोट अथवा पाद टिप्पणी-सूचक चिह्न—ये अनेक चिह्न हैं। जैसे, * सितारा (Star), † कटार (dagger) ‡ दोहरी कटार (Double dagger), पारा (Section) आदि। जब लेखक मूल रचना में आए हुए कुछ शब्दों की व्याख्या करना चाहता है तो उन शब्दों के साथ इन चिह्नों का प्रयोग करता है।

(ग) हंस पद ($\overset{\vee}{\wedge}$)—जहाँ मूल में भूल से कुछ छूट जाता है तो यह चिह्न लगा कर ऊपर छूटा हुआ अंश लिख देते हैं। जैसे, मेरे पास इस समय कुछ भी नहीं है।
∧

(घ) तुल्यता-सूचक चिह्न (=)— समानता के अर्थ में प्रयुक्त होता है; जैसे, १ मन = ४० सेर। कार्य = काम।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित गद्यखंडों में उपयुक्त विराम-चिह्न लगाओः—

(अ) भामाशा अन्नदाता यह आप क्या कहते हैं परम स्वार्थी भामाशा ने आपके लिए क्या किया अरे आपके अन्न से पला हुआ यह शरीर सुख से काल क्षेप करे और आप बन बन की लकड़ीं चुनें और पहाड़ पहाड़ टकरायें।

(आ) किन्तु मनुष्य के भूमि अधिकारों के आगे पशुओं ने सिर नहीं झुकाया है। मनुष्य की राजनीति राष्ट्र विभाजन भूमि क्षेत्र पशुओं के लिए मान्य नहीं

(इ) संसार में अनेक महापुरुष उत्पन्न हुए हो रहे और आगे भी होंगे पर अब तक जो हुए हैं उनमें कोई भी ऐसा नहीं हैं जिसके साथ श्री कृष्ण की तुलना की जा सके भारतवर्ष में भगवान बुद्ध देव सर्व संग परित्यागी धर्मोपदेशक परिव्राजकाचार्य श्रीमन् शंकराचार्य जैसे धर्म-संस्थापक राजा हरिश्चन्द्र जैसे सत्यवादी दधीचि जैसे आत्मत्यागी शिवाजी जैसे गो ब्राह्मण प्रतिपालक स्वराज्य स्रष्टा हुए हैं।

(२) अल्पविराम, निर्देशक और अवतरण-चिह्न कहाँ प्रयुक्त होते हैं? उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

अनुच्छेद (Paragraphing)

अनुच्छेद या प्रघट्टक से तात्पर्य उस सुसम्बन्धित वाक्य समूहसे है जो एक ही भाव अथवा विचार को प्रकट करता है। किसी भी रचना जैसे, कहानी, लेख और निबन्ध को लिखने से पूर्व लेखक के मस्तिष्क में अनेक विभिन्न विचार आते हैं। विभिन्न दृष्टिकोणों से उत्पन्न विभिन्न विचारों को एक क्रम सम्बन्ध और युक्ति से भिन्न भिन्न अनुच्छेदों में विकसित कर, से रचना में सौंदर्य आ जाता है। साथ ही पाठक को लेखक के भाव समझने में सरलता होती है; एक ही भाव का अनेक बार पिष्टपेषण नहीं होता और शैली में रोचकता आ जाती है। अतएव समस्त रचना को इस प्रकार छोटे छोटे अनुच्छेदों में विभाजित कर लेना चाहिए जिससे एक विचार का एक हसं अनुच्छेद में विवेचन किया जा सके।

किसी रचना के अनुच्छेद निर्णय और विस्तार के लिए इन नियमों को ध्यान में रखना आवश्यक है :—

(१) अनुच्छेद में केवल एक ही विचार का विवेचन और विकास हो। मुख्य भाव से असम्बन्धित अन्य अप्रागिक भावों को नहीं रखना चाहिए।

(२) प्रत्येक अनुच्छेद के आरम्भ में या अन्त में मुख्य भावी का सार रखना चाहिए और अन्य वाक्यों द्वारा उसका विवेचन इस प्रकार हो कि पाठक लेखक के अभिप्राय को भली भाँति समझ जावे।

३—प्रत्येक अनुच्छेद का पूर्व के अनुच्छेदों से इस प्रकार सम्बन्ध होना चाहिए कि समस्त रचना में एक क्रम-बद्ध विचार श्रृंखला का युक्ति पूर्ण विकास हो जावे।

४—विभिन्न पात्रों के वार्तालाप को अलग-अलग अनुच्छेदों में लिखना चाहिए।

५—नवीन अनुच्छेद प्रारम्भ करते समय कुछ स्थान छोड़कर लिखने से रचना में सौन्दर्य आजाता है।

उदाहरण के लिए यदि वर्षा–वर्णन करना है तो पूरे विषय को इन विचार स्तम्भों में बाँटा जा सकता है—(१) भीषण गर्मी के पश्चात् वर्षा ऋतु का आगमन; (२) वर्षा में प्राकृतिक सौन्दर्य; (३) वर्षा ऋतु की भयानक रात्रि; (४) वर्षा से लाभ और (५) वर्षा से हानियाँ। अब प्रत्येक भाव का एक अथवा अधिक अनुच्छेदों में परस्पर सम्बन्धित वाक्यों द्वारा क्रम से वर्णन करना होगा। एक अनुच्छेद में एक ही भाव का समावेश होना चाहिए, किन्तु आवश्यकतानुसार एक भाव के विभिन्न अंगों का अधिक अनुच्छेदों में वर्णन किया जा सकता है, जैसे, वर्षा के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन तीन अनुच्छेदों में किया जासकता है। प्रत्येक अनुच्छेद का विचार-स्तम्भ इस भाँति होगा:– (अ) नदियों का वेग; (आ) वन उपवन की शोभा; (इ) क्रीड़ा करते हुए पशु, पक्षियों और नर नारियों की शोभा।

अभ्यास

१—निम्नलिखित गद्यांश को समुचित अनुच्छेदों में विभाजित करके लिखिये:—

बालको ! मनुष्य की आत्मा पारे के समान इधर-उधर फिसलती रहती है। मंजु के भावों में ऐसा महान परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक और अनिवार्य था। उसने शीघ्र ही अपने विचारानुसार कार्य करने की ठान ली। दूसरे दिन मंजु ने भोज को बुलाकर अपने साथ भोजन करने का आग्रह किया। अबोध भोज पिता तुल्य पितृव्य की आज्ञा अस्वीकार न कर सका। उसने भोजन करना स्वीकार कर लिया। भोज ने प्रथम ग्रास मुँह में रखने के लिए जैसे ही हाथ उठाया कि एक ओर से आवाज आई—"सावधान ! राजकुमार......"

२—निम्नलिखित भावों को अनुच्छेदों में प्रकट करो:—

(अ) देवनागरी लिपि परम वैज्ञानिक है।

(आ) वर्षा से ज़हाँ अनेक लाभ हैं, वहाँ हानियाँ भी हैं।

(इ) बुरों के साथ भलाई करना सज्जनों का ही काम है।

(ई) आगरा ऐतिहासिक इमारतों के लिए प्रसिद्ध है।

३—निम्नलिखित वार्तालाप को अनुच्छेदों मे लिखोः—

लहना का सिर अपनी गोदी में रखे वजीरासिंह बैठा है। जब मांगता है, तब पानी पिला देता है। आध घंटे तक लहना चुप रहा, फिर बोला—"कौन ? कीरतसिंह ?" वज़ीरा ने कुछ समझ कर कहा—"हाँ।" "भइया, मुझे और ऊंचा कर ले। अपने पट्ट पर मेरा सिर रख ले।" वज़ीरा ने वैसा ही किया।

मुहावरे और कहावतें

मुहावरों और कहावतों के प्रयोग से भाषा में सजीवता आती है। इनमें अधिक से अधिक भावों को थोड़े शब्दों में व्यक्त करने की क्षमता होती है। इनके प्रयोग से शैली में एक अनूठा चमत्कार आजाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी निस्वार्थ सेवा करने वाले को लोग बुराई देते हैं तो उसका यह कहना कि 'भाई, होम करते हाथ जलते हैं'—अधिक साहित्यिक, भावपूर्ण और मानसिक निराशा को पूर्ण-रूप से अभिव्यक्त करने वाला है। उपन्यास-सम्राट श्री प्रेमचन्द की मुहावरेदार भाषा बड़ी सरस और सजीव है। 'वज्रपात' नामक कहानी के इस स्थल को देखिये :—

"शेर ने दिल पर चोट की। पत्थर में भी सूराख होते हैं; पहाड़ों में भी हरियाली होती है; पाषाण-हृदयों में भी रस होता है। इस शेर ने पत्थर को भी पिघला दिया।

हिन्दी कवियों ने भी अपने काव्य में लोकोक्तियों का प्रयोग करके भाषा को चमत्कार पूर्ण बनाया है। जैसे—

"एक दिन हम भी किसी के लाल थे।
आँख के तारे किसी के थे कभी।
बूँद भर गिरता पसीना देख कर,
था बहा देता घड़ों लोहू कोई" —रामचन्द्र शुक्ल।

"अहा ! आर्य के विपिन-राज्य में सुख पूर्वक सब जीते हैं।
सिंह और मृग एक घाट पर आकर पानी पीते हैं।"
—मैथिलीशरण गुप्त।

"वृथा मरहु जनि गाल बजाई,
मन मोदकनि कि भूख बुझाई।"—तुलसीदास।

"ऊधो कारे सबै बुरे।
कारे की परतीति न करिये, विष के बुते छुरे।
कारोअंज़न देत दृगन में, तीखी सान धरे॥ —सूर

मुहावरों और लोकोक्तियों में अन्तर

मुहावरे से तात्पर्य उस वाक्यांश से है जिसका शब्दार्थ न लेकर अन्य कोई विलक्षण अर्थ ग्रहण किया जाता है; जैसे, 'पीठ दिखाना'। इसका साधारण अर्थ से भिन्न लाक्षणिक अर्थ 'हार कर भागना' ग्रहण किया जाता है। इसी प्रकार टेढ़ी खीर, जान पर खेलना, गले का हार आदि मुहावरे हैं।

कहावत या लोकोक्ति एक स्वतन्त्र वाक्य होता है जिसमें एक पूर्ण सत्य अथवा विचार निहित होता है। 'कहावत के सुनते ही एक विचार-शृंखला हृदय में गूँजने लगती है; जैसे, खोदा पहाड़ निकली चुहिया; हथेली पर सरसों नहीं जमती, नाम बड़े और दर्शन थोड़े आदि।

निष्कर्ष यह है कि मुहावरा एक वाक्यांश है। वाक्य में प्रयुक्त किये जाने पर ही उसका चमत्कार स्पष्ट होता है। कहावत एक वाक्य के समान होती है और स्वतन्त्र अर्थ रखती है। महापुरुषों द्वारा कथित उक्तियाँ भी कभी-कभी सिद्धान्त वाक्यों के समान प्रयुक्त किये जाने के कारण कहावतों के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं; जैसे, सठ सुधरेहु सत् संगति पाई; समरथ को नहिं दोष गुसाईं; सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग।

यदि मुहावरे वाक्य में चमत्कार उत्पन्न करते हैं तो कहावतें किसी कथन की पुष्टि करने या उपदेश देने के लिए कही जाती हैं। गंभीर व्यंग्य को अप्रत्यक्ष रूप से श्रोता के गले में उतारने अथवा कड़वी बात को शिष्टता पूर्वक व्यक्त करने के लिए कहावत अत्युत्तम साधन है।

मुहावरों और कहावतों के भेद

कुछ मुहावरे शारीरिक क्रियाओं पर निर्भर हैं और वे प्रायः साधारण बोल चाल में प्रयुक्त किये जाते हैं; जैसे, पीठ फेरना, दाँत तले उँगली दबाना, मुँह मोड़ना।

कुछ मुहावरे और कहावतें कहानियों से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे, टेढ़ीखीर, निन्यानवे का फेर, भगवान जब देते हैं छप्पर फाड़कर देते हैं आदि। कुछ मुहावरे और कहावतें पौराणिक अन्तर्कथाओं के आधार पर बनी हैं, जैसे, कर्णदान, भगीरथ परिश्रम, शबरी के बेर आदि। प्राचीन कवियों की उक्तियाँ भी कहावतों के समान प्रयुक्त की जाती हैं। कुछ कहावतों में मनुष्य जीवन के अनुभव सूत्र रूप में व्यक्त किये गये हैं, जैसे, सब धान बाईस पंसेरी, सस्ता रोवे बार बार मँहगा रोवे एक बार आदि।

मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग

मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग में निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिए :—

१—इनका शब्दार्थ ग्रहण नहीं किया जाता वरन् लाक्षणिक अर्थ लिया जाता है। अतएव इनके अर्थ को भली भाँति समझकर ही इनका प्रयोग करना चाहिए :—

२—कहावतों या मुहावरों के जैसे रूप होते हैं उनका वैसा ही प्रयोग किया जाता है। उनके शब्दों में पर्याय वाची शब्दों से परिवर्तन नहीं किया जा सकता जैसे, 'हाथ डालना; का तात्पर्य प्रारम्भ करना है; इसके स्थान पर 'कर डालना; या हस्त रखना आदि प्रयोग अशुद्ध हैं।

३—कहावतों और मुहावरों का प्रयोग अनूकूल प्रसंग या प्रकरण देकर करना चाहिए जिससे उनका वास्तविक अर्थ भली भाँति स्पष्ट हो जाय। प्रयोग करने से पूर्व उनका अर्थ भी दे दिया जावे तो अत्युत्तम है। जैसे; पौ बारह होने का अर्थ है 'बहुत लाभ होना'। यदि इसका प्रयोग इस तरह किया जावे कि तुम्हारे पौ बारह हो रहे हैं तो यह उपयुक्त प्रयोग नहीं हुआ क्योंकि इसमें प्रकरण के अभाव से अन्य अर्थ भी ग्रहण कर लिए जा सकते हैं। यदि इसी का प्रयोग नीचे लिखी भाँति किया जावे तो ठीक अर्थ स्पष्ट हो जावेगा :—

१—देश में संगठन और प्रेम की कमी है, राजनीतिक जागृति का पूर्ण अभाव है; इस कारण विदेशियों के **पौ बारह** हो रहे हैं।

२—युद्ध के कारण सभी वस्तुओं के भाव चढ़ गये हैं, अतएव व्यापारियों के **पौ बारह** हैं।

मुहावरों का प्रयोग

अङ्गार उगलना = क्रोध में कठोर वचन बोलना। यह सब आपके भाई की करतूत है। मुझ पर आप क्यों अंगारे उगलते हैं।

अँगुली पकड़कर पहुँचा पकड़ना = थोड़ा मिल जाने पर अधिक लेने की चेष्टा करना। भोजन सामग्री दी; अब रुपये माँगते हो। तुम तो अँगुली पकड़ कर पहुंचा पकड़ते हो।

अंगुली पर नचाना=तंग करना; वश में करना। नूरजहाँ जहाँगीर को अँगुली पर नचाती थी।

अंगूठा दिखाना=साफ़ मना करना। मेरी पुस्तक देने में भी आप अँगूठा दिखाते हैं।

अंगूठी में नग-सा जड़ना=सुन्दर बना देना। दीवाल में यह चित्र अँगूठी में नग–सा जड़ा हुआ है।

अपना उल्लू सीधा करना=स्वार्थ साधना। व्यापारी को हानि हो या लाभ; दलाल अपना उल्लू सीधा करते हैं।

अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना=अपनी प्रशंसा स्वयं करना। आप मुझे अपने मुँह मियां मिट्ठू बननेका दोष न लगावें, यथार्थ बात तो कहनी ही पड़ती है।

आँखें बिछाना=प्रेम से स्वागत करना। नेहरूजी के लिये जनता आँखें बिछाये खड़ी थी।

आंखों में धूल झोंकना=धोखा देना। पहरेदार की आँखों में धूल झोंककर शिवाजी चम्पत हो गये।

आँखों में चर्बी छाना=अधिक घमण्ड होना। धन के मद से उसकी आँखों में चर्बी छागई है।

आटे दाल का भाव मालूम होना=कठिनाई का अनुभव होना। अभी अपने पिताजी की कमाई पर गुलछर्रे उड़ा रहे हो; उनके पीछे आटे दाल का भाव मालूम पड़ेगा।

कटे पर नमक छिड़कना=दुखी को अधिक दुखी करना। पहले बिना कारण मारा; अब उसे चिढ़ाते हो। क्यों कटे पर नमक छिड़क रहे हो?

कलई खुलना=गुप्त भेद या दोष प्रकट होना। जब सदस्यों ने संस्था का हिसाब देखा तो मंत्रीजी की सारी कलई खुल गई।

कीचड़ फेंकना = बदनाम करना। भाई-भाई होकर एक दूसरे पर क्यों कीचड़ फेंक रहे हो?

काटो तो खून नहीं=भय से सन्न होना। सशस्त्र डाकुओं को देखकर मेरी यह दशा थी कि काटों तो खून नहीं।

किंकर्तव्य विमूढ़ होना=क्या करें यह निश्चय न कर सकने की स्थिति। फिलिस्तीन की परिस्थिति ने सुरक्षा परिषद के सदस्यों को किंकर्तव्य विमूढ़ कर दिया है।

कुएँ में भंग पड़ना=सबकी बुद्धि भृष्ट होना। यहाँ तो कुएँ में भंग पड़ी है; जिसे देखो वही आपस में लड़ रहा है।

खाँड़े की धार पर चलना=अत्यन्त कठिन काम करना। राज्य प्रबन्ध करना खाँड़े की धार पर चलना है।

गुल खिलना=भेद प्रकट होना। पुलिस की जाँच से इस मामले में अनेक गुल खिलेंगे।

घाट-घाट का पानी पीना=अनेक स्थानों से अनुभव प्राप्त करना। आप हमसे चाल चलते हैं; हमने घाट-घाट का पानी पिया है।

चोटी हाथ में होना=वश में होना। वह जायगा कहाँ? उसकी चोटी तुम्हारे हाथ में है।

छाती पर मूँग दलना=कष्ट पहुंचाना। दुष्ट लड़के सदा अपने मां बाप की छाती पर मूँग दलते हैं।

छाती पर साँप लोटना=ईर्ष्या करना। पाण्डवों का वैभव देख कर दुर्योधन की छाती पर साँप लोटने लगा।

जमीन पर पाँव न रखना=बहुत अभिमान करना। प्रथम श्रेणी में आप उत्तीर्ण क्या हुए, अब तो ज़मीन पर पैर भी नहीं रखते।

जान पर खेलना=प्राण संकट में डालना। वीर चन्द्रावत ने जान पर खेल कर महाराणा प्रताप की रक्षा की।

जीती मक्खी निगलना=जान बूझकर अन्याय करना या सहना। तुमने उत्तर-पुस्तिका में कुछ लिखा नहीं ; मैं उसमें अंक कैसे दे दूँ ? इस प्रकार मैं जीती मक्खी नहीं निगल सकता।

टट्टी की आड़ में शिकार खेलना=छिपे छिपे किसी के विरुद्ध कुछ करना। काश्मीर पर कबाइलियों ने आक्रमण नहीं किया, वरन् पाकिस्तान टट्टी की आट शिकार खेल रहा है।

डंके की चोट कहना=स्पष्ट कहना। बम्बई अधिवेशन में काँग्रेस ने अँग्रेजों से डंके की चोट कह दिया कि 'भारत छोड़ दो'।

डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पकाना या डेढ़ ईंट की मसजिद अलग बनाना=मिलकर काम न करना; भिन्न मत रखना। सभा के कार्य में सभी सहयोग दे रहे हैं, केवल मोहन की डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पक रही हैं।

तीन तेरह होना=तितर बितर होना। लाल पगड़ी को देखते ही झगड़ा करने वाले तीन तेरह होगये।

तीन पाँच करना=झगड़ा करना। चाहे कितनी ही तीन पाँच करो, खरीदा हुआ माल वापस न किया जायगा।

दाँत काटी रोटी होना=घनिष्ठ प्रेम होना। मोहन और गोपाल सुख दुख में एक दूसरे की सहायता करते हैं; अतएव उनमें दाँत काटी रोटी है।

दांत खट्टे करना=परास्त करना। जर्मनों ने युद्ध में फ्राँसीसियों के दाँत खट्टे कर दिये थे।

दाँत तले उँगली दबाना=आश्चर्य करना। ताजमहल की अद्भुत शिल्प कला देखकर बड़े-बड़े कारीगर दाँत तले उंगली दबाते हैं।

दांतों पसीना आना=कठिन परिश्रम करना। 'मेरे दर्जे में

आओगे तो दाँतों पसीना आजायगा, जब अलजबरा और ज्योमेट्री के लोहे के चने चबाने पड़ेंगे।

दाँत से कौड़ी पकड़ना=अत्यन्त कंजूसी दिखाना। दाँत से कौड़ी पकड़ने वाले इन सेठ जी से चन्दे की आशा करना व्यर्थ है।

दिये तले अँधेरा होना=गुणी व्यक्ति के पास गुण का अभाव होना। जो भारतवर्ष संसार का गुरु था, वहाँ आज निरक्षरता का साम्राज्य है। सच है 'दिये तले अंधेरा।'

दूज का चांद होना=कभी कभी या अधिक समय के पश्चात् दिखाई देना। एक समय था जब राजा-प्रजा मिलकर आनन्द मनाते थे; किन्तु अब तो दूज के चाँद की भाँति राजाओं के दर्शन भी दुर्लभ हैं।

दो नावों पर पैर रखना या दो घोड़ों पर सवार होना = द विभिन्न पक्षों का अवलम्बन करना। तुम तो व्यापार और सरकारी नौकरी दोनों करना चाहते हो। इस प्रकार दो नावों पर पैर रखकर क्या लाभ उठा सकते हो?

धाक जमाना = ऐसा प्रभावित करना कि लोग महत्ता स्वीकार करें। शंकराचार्य ने अनेक विद्वानों को शास्त्रार्थ में परास्त करके अपनी धाक जमादी।

नाकों चने चबवाना = खूब तंग करना। गुरिल्ला युद्ध करके शिवाजी ने औरंगजेब की सेना को नाकों चने चबवा दिये थे।

नौ दो ग्यारह होना = भाग जाना। पुलिस को देखते ही चोर नौ दो ग्यारह हो गये।

पांचों घी में होना = अधिक लाभ होना। सेठ रामधन व्यापार में तो लाभ हुआ ही है, पुत्र के विवाह में भी बहुत माल मिला है। इस समय उनकी पाँचों घी में हैं।

पानी पानी होना = अत्यन्त लज्जित होना ; नम्रता से बातें करना। जब बाल्मीकिजी को अपनी भूल ज्ञात हुई तो वे सप्त ऋषियों के सामने पानी पानी हो गये।

पानी भरना = अत्यन्त तुच्छ प्रतीत होना ; फीका लगना। ताजमहल के शिल्प चातुर्य के सामने अन्य इमारतें पानी भरती हैं।

पीठ दिखाना = लड़ाई से भाग जाना। राणा साँगा की विशाल सेना के सामने मुग़ल पीठ दिखाकर भाग गये।

पीठ फेरना = भाग जाना ; उपेक्षा करना। (१) ज्योंही मुग़ल सैनिकों ने युद्ध से पीठ फेरी, शिवाजी ने सिंहगढ़ पर अधिकार कर लिया। (२) उसने मुझे देखते ही पीठ फेर ली।

पैरों तले से जमीन निकल जाना = हक्का बक्का होना। परदेश में चोरी हो जाने से मेरे पैरों तले की जमीन निकल गई।

बगलें झाँकना = निरुत्तर होना। ज्योंही मैंने उससे दो चार प्रश्न किये वह बगलें झाँकने लगा।

बहती गंगा में हाथ धोना = साधन मिलने पर शुभ कार्य करना। इस औषधालय की सहायता करके आप भी बहती गंगा में हाथ क्यों नहीं धोते ?

बाल की खाल निकालना = व्यर्थ गहरी छानबीन करना। जब इस कविता का अर्थ समझ गये हो तो बाल की खाल निकालने से क्या लाभ ?

बाल बाँका न होना = थोड़ी सी भी हानि न होना। "जाको राखे साइयाँ, मार न सकिहै कोइ। बाल न बाँका करि सकै, जो जग बैरी होइ।"

बालू पर भीत बनाना=बिना दृढ़ आधार के कोई काम करना। घृणा के प्रचारकों से प्रेम की आशा करना बालू पर भीत बनाना है।

मक्खी पर मक्खी मारना= (संस्कृत के 'मक्षिका स्थाने मक्षिकों का रूपान्तर) = बिना सोचे समझे नक़ल करना। इन विद्यार्थियों ने रामनाथ के लेख की अशुद्धियों को भी ज्यों का त्यों उतार लिया है; केवल मक्खी पर मक्खी मारने की चेष्टा की है।

मुँह मोड़ना = छोड़ना; इन्कार करना। विपत्ति में घनिष्ठ मित्र भी मुँह मोड़ लेते हैं।

मुँह लगाना = आवश्यकता से अधिक स्वतंत्रता देना। 'मुंह लगाई डोमिनी गावे ताल-बेताल।'

रंग में भंग पड़ना या रस में विष घोलना = आनन्द में विघ्न आना या डालना। कैकेयी ने राम को बनवास देकर रस में विष घोल दिया।

लोहे के चने चबाना = कठिन कार्य करना। आधुनिक शस्त्रों से सुसज्जित लुटेरों को काश्मीर से मार भगाना भारतीय सैनिकों के लिए लोहे के चने चबाना था।

सिर उठाना = विद्रोह करना; बलबन के सिंहासन पर बैठते ही बंगाल के शासक ने सिर उठाया किन्तु उसका दमन कर दिया गया। (२) प्रतिष्ठा के साथ खड़ा होना; ऋण न चुकाओगे तो उनके सामने तुम कैसे सिर उठा सकते हो? (३) ऊधम मचाना; छुट्टी के दिन तुम घर भर को ऐसा सिर पर उठाते हो कि किसी की सुनते ही नहीं। (४) विरोध करना; भारत वासी इतने निष्प्राण हो गये थे कि अत्याचार सहते हुए भी सिर नहीं उठा सकते थे।

सुरखाब का पर लगना = विशेषता होना; आपके क्या सुरखाब के पर लगे हैं जो आपको ही साहित्य सभा का मंत्री चुना जाय?

सूरज को दीपक दिखाना = किसी विख्यात् व्यक्ति का परिचय देना। गुप्ता जी की प्रशंसा करना सूरज को दीपक दिखाना है।

हथेली पर सरसों जमाना = अधिक समय के कार्य को तुरन्त कर देना। खाना बनाने में कुछ देर तो लगेगी ही; आप तो हथेली पर सरसों जमाना चाहते हैं।

हाथ-पैर बचाना = सावधानी से कार्य करना। आजकल समय खराब है। हाथ पैर बचाकर काम करना चाहिये।

हाथों के तोते उड़ना = हक्का बक्का होना। परदेश में चोरी हो जाने से मेरे हाथों के तोते उड़ गये।

हाथ धो बैठना = खो देना, हानि होना। यदि तुम अपनी स्त्री से दुर्व्यवहार करते रहे तो उससे हाथ धो बैठोगे।

हाथ धोकर पीछे पड़ना = बुरी तरह तंग करना। जब सौतेली मां हाथ धोकर पीछे पड़ गई, तब शेरशाह को घर छोड़ना पड़ा।

कुछ मुहावरों के अर्थः—

अंधे के हाथ बटेर लगना–अयोग्य को अनायास अच्छी वस्तु हाथ लग जाना। **अच्छे घर बयना देना**–अधिक बलवान से वैर-भाव रखना। **अन्धे को चिराग दिखाना**–मूर्ख को उपदेश देना। **अपना सा मुँह लेकर रह जाना**–लज्जित होना। **अपना ही राग अलापना**–अपनी कहना, दूसरे की न सुनना। **अपने पाँव पर आप कुल्हाड़ी मारना**–स्वयं अपना अहित करना। **आकाश के तारे तोड़ना**–कठिन से कठिन कार्य करना। **आँखें तरसना**–देखने को इच्छुक होना। **आँखें चुराना**–छिप जाना। **आँखें फेर लेना**–प्रतिकूल होना। **आँखें बदल जाना**–प्रेम में अन्तर आजाना। **आँखों का काँटा होना**–बुरा लगना। **आँखों पर परदा पड़ना**–धोखा खाना। **आँखों पर बैठाना**–आदर करना। **आग में कूदना**–आपत्ति में पड़ना। **आग में घी डालना**–क्रोध को बढ़ाना। **आड़े हाथों लेना**–बुरा भला कहना। **आसमान सिर पर उठाना**–बहुत शोर करना। **आस्तीन में साँप**

पालना–गुप्त शत्रु को आश्रय देना। **ईंट से ईंट बजाना**–नष्ट करना। **उड़ती चिड़िया पहचानना**–हृदय की बात पहचानना। **उलटी माला फेरना**–अनिष्ट चिन्तन करना। **एक लकड़ी से सब को हाँकना**–भले बुरे का विचार न करके सब के साथ एक सा व्यवहार करना।

कटे पर नमक छिड़कना–दुखी को अधिक दुखी करना। **कलेजे पर साँप लोटना**–ईर्ष्या से दिल जलना। **कलेजा मुंह को आना**–जी घबराना। **कसौटी पर कसना**–परखना। **कागजी घोड़े दौड़ाना**–केवल पत्र व्यवहार करना; क्रियात्मक कार्य न करना। **कान कतरना**–बहुत चालाक होना। **कान पर जूँ तक न रेंगना**–बार बार कहने पर भी ध्यान न देना। **कानों में तेल डालना**–बे खबर होना। **कुल्हिया में गुड़ फोड़ना**–गुप्त रूप से काम करना। **कोख उजड़ना**–सन्तान की मृत्यु होना। **कोरी पटिया पर लिखना**–नवीन कार्य आरम्भ करना। **खिचड़ी पकाना**–गुप्त रूप से सलाह करना। **खून के घूंट पीना**–कठिन चोट सहना। **खून उबलना**–उत्तेजित होना। **खून सूख जाना**–भयभीत हो जाना। **खयाली पुलाव पकाना**–मनमानी कल्पनाएँ करना। **गड़े मुर्दे उखाड़ना**–पुरानी बात दुहराना। **गरदन पर छुरी फेरना**–अत्याचार करना। **गले मढ़ना**–इच्छा के विरुद्ध देना। **गाल बजाना**–बिना किसी योग्यता के अपनी प्रशंसा करना; व्यर्थ बकना। **घड़ों पानी पड़ना**–अत्यन्त लज्जित होना। **घर के घर रहना**–न लाभ होना, न हानि। **घर फूंक तमाशा देखना**–धन बरबाद करके आनन्द मनाना। **घात लगाना**–अवसर की तलाश में रहना। **घाव पर नमक छिड़कना**–दुखी को अधिक सताना। **घाव हरा करना**–दुख का स्मरण करना। **घोड़े के आगे गाड़ी रखना**–उलटी युक्ति देना; विरुद्ध कार्य करना। **घोड़े बेचकर सोना**–बेफिक्र होजाना।

चार चाँद लगाना–सम्मान बढ़ाना। **चिराग लेकर ढूँढ़ना**–बहुत खोजना। **चुटकी लेना**–चुभती बात कहना। **चहरे पर हवाइयाँ उड़ना**–भयभीत होना। **चैन की वंशी बजाना**–मौज करना। **चोटी से एड़ी तक पसीना बहना**–बहुत परिश्रम करना। **छक्के छुड़ाना**–परास्त करना। **छक्के छूटना**–निरुत्साह हो जाना। **छठी का दूध याद आना**–घोर आपत्ति में पड़ना। **छप्पर फाड़ कर देना**–बिना परिश्रमके देना। **छाती पर पत्थर रखना**–शान्ति पूर्वक दुःख सहना। **छिद्रान्वेषण करना**–दोष निकालना। **जहर के घूंट पीना**–क्रोध को प्रकट न होने देना। **जहर डालना**–ईर्ष्यापूर्ण बातें कहना। **जान के लाले पड़ना**–संकट में पड़ना। **जी खट्टा करना**–मन फेरना। **झक मारना**–विवश होना; समय नष्ट करना।

टका सा जवाब देना–साफ मना करना। **टस से मस न होना**–विचलित न होना। **टाँग अड़ाना**–हस्तक्षेप करना। **टीका टिप्पणी करना**–गुण दोष निकालना। **ठोकरें खाना**–कष्ट उठाना। **डूबते को तिनके का सहारा होना**–आपत्ति में पड़े हुए मनुष्य को थोड़ी सी भी सहायता अधिक होना। **ढाई दिन की बादशाहत पाना**–थोड़े समय के लिए अधिकार पाकर मनमानी करना।

तलवार की धार पर दौड़ना–अत्यन्त कठोर कार्य करना। **तिल का ताड़ बना देना**–किसी छोटी-सी बात को बढ़ा कर कहना। **तूती बोलना**–धाक जमाना। **थूक कर चाटना**–वचन देकर पलट जाना। **थैली का मुंह खोलना**–खूब खर्च करना। **दम पट्टी देना**–चाल चलना। **दम सूखना**–भयभीत होना। **दाँतों में तिनका दबाना**–रक्षा के लिए गिड़गिड़ाना। **दाल न गलना**–वश न चलना। **दाई से पेट छिपाना**–स्पष्ट बात न कहना। **दिमाग़ सातवें आसमान पर होना**–अधिक घमण्ड हो जाना। **दूध के दाँत न टूटना**–अनुभव न

होना। **दूध की नदियाँ बहना**–वैभवशाली होना। **धज्जियाँ उड़ाना**–दोष निकालना। **धुन सवार होना**–किसीं बात के पीछे पड़ना। **धूप में बाल सफेद करना**–अनुभव रहित होना। **नमक मिर्च मिलाना**–किसी बात को बढ़ा कर कहना, **नाक पर मक्खी न बैठने देना**–अपयश न होने देना; अपने पर आँच न आने देना। **नाक रगड़ना**–अधीन होना; खुशामद करना। **नाक रख लेना**–इज्ज़त रह जाना। **नाच नचाना**–परेशान करना; मनचाहा काम करना। **निन्यानवें के फेर में पड़ना**–कंजूसी से धन जोड़ना। **नीला-पीला होना**–रोष में आना। **नोंक झोंक करना**–छेड़ छाड़ करना।

पत्थर पर दूब जमाना–असम्भव कार्य करना। **पर्वत पर कुआँ खोदना**–व्यर्थ परिश्रम करना। **पगड़ी उछालना**–बेइज्ज़ती करना। **पानी फेर देना**–बिगाड़ देना। **पेट का पानी न पचना**–किसी बात को बिना कहे न रहना। **पापड़ बेलना**–कष्ट से जीवन व्यतीत करना। **पैर उखड़ जाना**–घबड़ा जाना। **प्राण हथेली पर लिये रहना**–जीवन को संकट में डालना। **फूंक फूंक कर क़दम रखना**–सोच विचार कर काम करना। **फूल सूँघ कर रहना**–कम खाना। **फूला न समाना**–अत्यन्त प्रसन्न होना। **बल्लियों उछलना**–खूब खुश होना। **बाँह पकड़ना**–सहायता देना। **बाछें खिल जाना**–हर्षित होना। **बीड़ा उठाना**–उत्तरदायित्व लेना; दृढ़ संकल्प करना। **बोलबाला होना**–प्रभावशाली या विजयी होना। **भीगी बिल्ली बन जाना**–भय से दब जाना। **मक्खियाँ मारना**–बेकार घूमना। **मन के लड्डू खाना**–मन ही मन में प्रसन्न होना। **माथा ठनकना**–किसी अनिष्ट की शंका होना। **मीन मेख करना**–बहाना करना। **मुँह तोड़ जवाब देना**–अकाट्य उत्तर देना। **मुँह की खाना**–बुरी तरह हारना। **मुँह में खून लगना**–नीयत बिगड़ना। **मुँह में पानी भर आना**–खाने को

जी ललचाना । **मुट्ठी गरम करना**–रिश्वत देना । **मुट्ठी में करना**–अपने वश में करना । **मंत्र मुग्ध होना**–प्रभावित होना; चकित होना । **रंग लाना**–प्रभाव या गुण दिखलाना । **रंग में रंग जाना**–प्रभावित होना । **रग-रग पहचानना**–अच्छी तरह परिचित होना । **रस्सी का साँप बनाना**–निराधार बात को बढ़ा चढ़ा कर कहना । **राई का पहाड़ बनाना**–छोटी बात को बढ़ा देना । **लकीर पीटना**–अवसर निकल जाने पर व्यर्थ प्रयत्न करना । **लहू के घूँट पीना**–क्रोध रोकना । **लेने के देने पड़ना**–आपत्ति में फंसना । **लोहा लेना**–सामना करना । **लोहा मानना**–अधीनता स्वीकार करना । **विष उगलना**–दुर्वचन कहना । **विष के घूँट पीना**–कड़ुवी बात सहना । **श्रद्धांजलि देना**–सम्मान प्रदर्शित करना । **सब्ज़ बाग़ दिखाना**–प्रलोभन देना । **समझ पर पत्थर पड़ना**–बुद्धि भ्रष्ट होना । **सिक्का जमाना**–प्रभुत्व स्थापित करना । **हवा से बातें करना**–बहुत तेज चलना । **हाथ पर हाथ रख कर बैठना**–बेकार हो जाना । **हाथ को हाथ न सूझना**–बहुत अँधेरा होना । **हाथ पाँव फूल जाना**–भयभीत हो जाना । **हाथ मलते रह जाना**–पश्चाताप करना । **हाथ साफ करना**–खूब खाना, बेईमानी से लेना ।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित मुहावरों के अर्थ बतलाओ और उन्हें वाक्यों में प्रयोग करो :—

आकाश से बातें करना, आँखों में सरसों फूलना (नशे में फूलना), आग में कूदना, आगा पीछा करना, आड़े हाथों लेना, एड़ियाँ रगड़ना, एक सूत्र में बाँधना, ओखली में सिर देना, कपाल क्रिया करना, कुत्ते की मौत मरना, कान कतरना, खेत रहना, गुड़-गोबर कर देना, गोली

मारना, घी के दीपक जलाना, चाँदी होना, चिउँटी के पर निकलना, चिराग बुझना, तिलांजलि देना, दम पट्टी देना, नाक भौं चढ़ाना, पत्थर पड़ना, पानी में आग लगाना, बाग छेड़ना, बाछें खिलजाना, रंग जमना, विष के घूँट पीना।

(२) पुष्टाक्षरों वाले मुहावरों के अर्थ लिखो :—

(अ) जो तोकूँ **काँटा बुवै** ताहि **बोइ** तू फूल। (आ) **हमहुं कहब अब ठकुर सोहाती**। (इ) सदा भवानी **दाहिनी, सम्मुख रहें** गणेश। (ई) कबहूं दीन दयाल के **भनक पड़ेगी कान**। (उ) **हाथ मलै अरु सिर धुनै**, लालच बड़ी बलाय। (ऊ) जो कुछ कहता हूँ उसे **गिरह बाँधिये**।

(३) निम्नलिखित क्रिया वाची शब्दों से बने मुहावरों के अर्थ और प्रयोग लिखो :—

(अ) **लगना**—हाथ लगना, थाह लगना, गले लगना, मुँह लगना, आँख लगना। (आ) **उड़ाना**—माल उड़ाना, मुँह पर हवाइयाँ उड़ाना, छक्के पंजे उड़ाना। (इ) **काटना**—नाक काटना, गला काटना, कान काटना, दिन काटना, (ई) **करना**—कूच करना, चूँ न करना, तीन, पाँच करना, घर करना, हाथा पाई करना, लीपा पोती करना। (उ) भरना-जाना, मिलना, चढ़ाना, डालना, उठाना, क्रियाओं से मुहावरे बना कर वाक्यों में प्रयोग करो।

(४) शारीरिक अंगों पर बने निम्न मुहावरों के अर्थ और प्रयोग लिखो :—

(१) **बाल**—बाल बाँका न होना, बाल पकाना, बाल बराबर न समझना, बाल बाल बचना।

(२) **सिर**—सिर आँखों पर, सिर उठाना, सिर खाना, सिर चढ़ाना, सिर धुनना, सिर पर उठा लेना, सिर पर खून सवार होना, सिर फेरना,

सिर मुँडाते ही ओले पड़ना, सिर मढ़ना, सिर होना ।

(३) **माथा**—माथा कूटना, माथा ठनकना, माथे चढ़ना, माथा पच्ची करना, ।

(४) **आँख**—आँख उठा कर न देखना, आँख खुलना, आँख दिखाना, आँखें नीली पीली करना, आँख फेरना, आँख मारना, आँख में खटकना, आँखों में चर्बी छाना, आँख में चुभना, आँखों में धूल झोंकना, आँख लगना (लड़ना), आँखों का पानी गिर जाना, आँखें चार होना ।

(५) **कान**—कान उठाना, कान करना, कान खा जाना, कान पकड़ना, कान भरना, कानों में तेल डाले बैठना, कान लगाना, कान हिलाना, कानों पर हाथ धरना ।

(६) **नाक**—नाक कटना, नाक का बाल होना, नाकों चने चबाना, नाक कटना, नाक सिकोड़ना, नाक रखना ।

(७) **मुँह**—मुँह भरना, मुँह में तिनका लेना, मुँह में पानी भर आना, अपना सा मुँह लेकर रह जाना, मुँह काला करना, मुँह की खाना, मुँह फाड़ना, मुँह ताकना, मुँह बनाना, मुँह तोड़ उत्तर देना, मुँह धोना, मुँह में कालिख पुतना ।

(८) **हाथ**—हाथ आना, हाथ उठाना, हाथ कट जाना, हाथ खाली होना, हाथ खींचना, हाथ धोना, हाथ धोकर पीछे पड़ना, हाथ मंजना, हाथ मलना, मन हाथ में करना, हाथ रंगना, हाथों हाथ लेना, हाथ डालना, हाथ पर हाथ रख कर बैठना, हाथ साफ़ करना, हाथ तंग होना ।

(९) **छाती**—छाती पर मूंग दलना, छाती पर पत्थर रखना, छाती पर बाल होना, छाती पर साँप होना, छाती ठण्डी करना ।

(१०) **मन**–मन बढ़ाना, मन के लड्डू खाना, मन चलना, मन में बसना, मन भरना, मन मारना, मन रखना, मन से उतरना, मन ही मन, मन माना।

(११) **पीठ**–पीठ तोड़ना, पीठ ठोकना, पीठ दिखाना, पीठ पर होना।

(१२) **पेट**—पेट काटना, पेट का हलका, पेट की आग, पेट में दाढ़ी होना, पेट में पाँव होना, पेट में बल पड़ना।

(१३) **गर्दन (गला)**—गर्दन उठाना, गर्दन झुकाना, गला काटना, गले का हार, गले मढ़ना, गले के नीचे उतरना।

(१४) **रंग**—रंग में भंग होना, रंग जमाना, रंग उड़ना, रंग में रंग जाना, रंग लाना, रंग पहचानना।

(इसी प्रकार दिल, टाँग, पैर, दाँत, बाँह आदि पर मुहावरे बनाओ)

अन्तर्कथाओं से सम्बन्धित मुहावरे

(जातीय कथाओं से सम्बन्ध रखने वाले कुछ शब्दों का भी मुहावरों के समान प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के शब्दों में विशेष बल होता है और वे हृदय पर स्थायी एवं सुखद प्रभाव डालते हैं; साथ ही इनसे जातीय भावना को भी प्रोत्साहन मिलता है; जैसे, प्रह्लाद–भक्ति। अनेक आपत्तियों का सामना करते हुए भी प्रह्लाद की भगवद्भक्ति निश्चल रही। इस प्रकार प्रहलाद्भक्ति से तात्पर्य 'निश्चल भक्ति' है। ऐसे कुछ मुहावरे यहाँ दिये जाते हैं।)

अङ्गद का पैर होना=अत्यन्त दृढ़ होना; हूणों की अपार शक्ति के सम्मुख भी मुट्ठी भर मागध उस दुर्गम उपत्यका में अङ्गद के पैर हो गये, तनिक भी विचलित न हुए।

कालिय-दमन—दुष्टों का संहार; क्या अहिंसा की नीति से कालिय-दमन संभव है ? इसके लिये तो बल प्रयोग ही वाँछनीय है।

गजेन्द्र-मोक्ष=भीषण विपत्ति से छुटकारा ; कण्ट्रोल टूट जाने से पीड़ित जनता को गजेन्द्र-मोक्ष मिल गई।

चन्द्रमा का कलङ्क=उत्तम वस्तु में कुछ दोष होना ; जहाँ भारतेन्दु गुणों की खान थे, वहाँ उनकी अपव्ययता चन्द्रमा के कलङ्क समान थी।

दुर्वासा बनना=अत्यन्त क्रुद्ध होना ; केवल प्रश्न पूछने से ही आप तो दुर्वासा बन गये।

द्रौपदी का चीर होना=अन्त न होना ; इस राजनीतिक वन्दी का जेल-जीवन अत्यन्त कठोर था। किसी प्रकार वह पहाड़-सा दिन काट लेता था ; किन्तु रात्रि तो द्रौपदी का चीर बन जाती थी।

ध्रुव प्रतिज्ञा या भीष्म प्रतिज्ञा=दृढ़ प्रतिज्ञा ; क्या देशोद्धार की ध्रुवप्रतिज्ञा करने वाले वीर सुभाष को पद-लोलुपता विचलित कर सकती थी ? अपमानित होकर चाणक्य ने नन्द-वंश के विनाश की भीष्म-प्रतिज्ञा की।

ध्रुव सत्य=अटल सत्य ; यह ध्रुव सत्य है कि न कोई छोटा है न कोई बड़ा।

भागीरथ परिश्रम=अथक प्रयत्न ; भागीरथ परिश्रम से ही कांग्रेस ने देश की स्वतंत्रता प्राप्त की है। एवरेस्ट शिखर पर चढ़ने के लिए अनेक यात्रियों ने भागीरथ प्रयत्न किया है।

राम-राज्य=सुख-सम्पन्न होना ; गांधीजी के आदर्शों पर चलकर ही भारत में राम-राज्य हो सकता है।

रुस्तम होना ; शक्तिशाली होना ; आप ऐसे रुस्तम नहीं हैं कि उसे अखाड़े में पछाड़ सकें।

बावन की डग = अत्यन्त लम्बी ;

"बींती औधि आवन की, लाल मन भावन की,
डग भई बावन की, सावन की रतियाँ ।"

समुद्र-मंथन = कठिन परिश्रम ; इतने वर्षों के समुद्र-मंथन के प्रश्चात् देश ने जो स्वतंत्रता प्राप्त की है, उसे संगठन द्वारा ही स्थिर रखा जा सकता है ।

सुदामा के तन्दुल = साधारण भेंट ; मुझ दीन-हीन के पास आप के उपहार के लिए क्या रखा है ? जो कुछ पात-फूल उपस्थित हैं, उस को सुदामा के तन्दुल समझ कर ग्रहण कीजिये ।

हरिश्चन्द्र होना = सत्य व्रती होना ; क्या आप हरिश्चन्द्र हैं जो आपका विश्वास किया जावे ?

त्रिशंकु होना = किसी ओर का न रहना ; कुछ भारतीय मुसलमान यहाँ से पाकिस्तान पहुँचे ; किन्तु पठानों ने उन्हें वहाँ लूट लिया। अब वे त्रिशंकु बने इधर-उधर मारे मारे फिरते हैं ।

अभ्यास

१—अन्तर्कथाओं से सम्बन्धित नीचे लिखे मुहावरों को अपने वाक्यों में प्रयोग करो:—

शबरी के बेर, हम्मीर हठ, बालि-बन्धन, प्रह्लाद-भक्ति, सूर्य भक्षण, गालव हठ, प्रताप प्रतिज्ञा, दशरथ-वचन, गीता का ज्ञान, हातिम होना, नारद का हरि-गुणगान, बराह का भूमि-उद्धार, स्वामि-कार्तिक का सेना पतित्व ।

२—पुष्टाक्षरों वाले मुहावरों के अर्थ स्पष्ट करो—

(अ) **विदुर की इस झोंपड़ी में** गांधी जी का पदार्पण बड़े गौरव की बात थी। (आ) **परीक्षा रूपी समुद्र संतरण** के लिए अथक परिश्रम की आवश्यकता है। (इ) जनता की कटु **आलोचनाओं** को

अगस्त्य के समुद्र पान की भांति पीकर भी देश भक्त नेता अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहे। (ई) भामाशाह के **कर्णदान** से मेवाड़ का उद्धार हुआ। (उ) उस अबला की रक्षार्थ उस वीर का **जटायु-मरण** सुफल होगया। (ऊ) इन दुर्गम उपत्यकाओं में शत्रु से लोहा लेना **गोवर्द्धन धारण** करना है। (ए) वे प्रायः तीर्थों में ही **नारद भ्रमण** करते रहते हैं। (ऐ) क्या वह इतना क्षुद्र है कि **विभीषण बनकर** विपक्षियों की सहायता करे? (ओ) आज इस कक्षा की कुशल नहीं; प्रधानाध्यापक महोदय **परशुराम का रूप** धारण किये हुए हैं।

क्रियाओं का मुहावरेदार प्रयोग

आँकना=मूल्य समझना; महात्मा गाँधी की सेवाओं का मूल्य कौन आँक सकता है?

उछलना=(१) प्रसन्न होना, (२) अभिमान करना। (१) उत्तीर्ण होने की खबर सुनते ही वह एक दम उछल पड़ा। (२) इतना क्यों उछलते हो? उसका सामना करोगे तो आटे-दाल का भाव मालूम पड़ जायगा।

उठना=(१) उन्नति करना, (२) खर्च हो जाना (३) संसार से जाना। (१) क्या भाग्य पर निर्भर रहने से ही मनुष्य उठ सकता है? (२) इस विवाह में कितने रुपये उठ गये? (३) मेरे देखते देखते अनेक महापुरुष संसार से उठ गये।

उठाना=(२) उद्धार करना, (२) सहन करना; (३) काम आना; (४) ख़र्च करना; (५) वसूल करना। गिरे हुओं को उठाने की शक्ति साहित्य में ही है। अनेक कष्ट उठाकर भी साहसी व्यक्ति अपने पुनीत उद्देश्य से विचलित नहीं होते। हमने उसके अनेक काम उठाये; किन्तु वह हमारे एक काम में भी न आया। क्या तुमने सब रुपया उठा लिया? इस रद्दी के तुमने कितने दाम उठाये हैं?

उड़ाना =(१) खाना; (२) चुराना; (३) अपव्यय करना। तर माल उड़ाने वाले मोटेराम जी कब तक भूखे रह सकते थे? मेरी पुस्तक किसने उड़ादी है? उसने अपनी पैतृक सम्पत्ति जुए में उड़ादी।

कटना =(१) लज्जित होना; (२) बीतना। अपनी ही बात पर वह ऐसा कटा कि फिर उसने मुख न खोला। ममता का जीवन शान्ति से कट रहा था कि यह वज्रपात हुआ।

काटना =(१) बुरा लगना, (२) व्यतीत करना। मेरी अच्छी बातें भी तुम्हें काटती हैं। अधिकांश जीवन उसने युद्ध में ही काट दिया

खटकना =(१) लड़ाई होना, (२) बुरा लगना, (३) सन्देह होना। तुम्हारी उस से किस बात पर खटक गई? दूसरों की उन्नति भी दुष्टों को खटकती है। उस की चाल-ढाल से मुझे तुरन्त खटका हुआ कि यह कोई धूर्त है।

खिलना = प्रसन्न होना; "अहो कुसुम कमनीय कहो क्यों फूले नहीं समाते हो? बात बात में खिल खिलकर तुम किस की हँसी उड़ाते हो?"

चलना =(१) बहाना करना, (२) मान्य होना, (३) अनबन होना, (४) ठहरना, (५) खपना। हमसे मत चलो, हम तुम्हारी नस-नस पहचानते हैं। जब सब लोग प्रस्ताव के पक्ष में थे तब मेरी क्या चलती? इस मकान के पीछे दोनों भाइयों में चल गई है। वर्षा में भीगने से यह जूता कुछ भी न चला। आजकल जापानी माल खूब चल रहा है।

छनना =(१) मेल जोल होना, (२) अनबन होना, (३) जीवन व्यतीत होना। दोनों ही उदार हृदय हैं, इससे उनमें अच्छी प्रकार छन रही है। गोपाल से किस बात पर छन रही है? कहो भाई, आजकल कैसी छन रही है?

जँचना = (१) अच्छा दिखाई देना, (२) पसन्द आना, (३) विश्वास होना, (४) अनुमान होना, । आज शेरवानी पहन कर आप जँच रहे हैं । हमको यह कपड़ा बिलकुल नहीं जँचा । यदि उसकी बात तुम्हें जँच जावे तो अवश्य सहायता करना । उसके रूखे व्यवहार से तुम्हें क्या जँचता है ?

दबना = (१) शान्त होना, (२) धमकी में आना, (३) लिहाज़ करना । सशस्त्र पुलिस के नियुक्त करते ही दंगा दब गया । उद्दण्ड बालक शिक्षकों से भी नहीं दबते । आप मेरे साथ कुछ उपकार करके नहीं भूल गये ; फिर मैं क्यों दबूँ ?

पटना = (१) निभना, (२) तय होना । आजकल भाइयों में कैसी पट रही है ? यह सौदा कितने में पटा ।

भरना = (१) देना, (२) बहकाना, (३) भुगतना । कुछ अपनी भी सोचो कि भाई का घर ही भरते रहोगे । कुछ लड़कों ने गुरु जी को ऐसा भरा कि वे मुझे देखते ही बिगड़ने लगे । जैसा करोगे वैसा भरोगे ।

लगना = (१) खर्च होना, (२) प्रभाव पड़ना । मकान की मरम्मत में तुम्हारे कितने रुपये लग गये ? गुरुजी का उपदेश उसे ऐसा लगा कि उसने चोरी करना छोड़ दिया ।

अभ्यास

(१) निम्नलिखित क्रियाओं का मुहावरेदार प्रयोग करो:—

फलना-फूलना, बनना, संभलना, डूबना, पसीजना ।

(२) रेखांकित वाक्यों के अर्थ बताओ:—

(१) वह तुमको बिगाड़ने पर तुला हुआ है । (२) बुढ़िया के प्राणपक्षी अनन्त में उड़ गये । (३) साहित्य पतितों को उठाने वाला

है। (४) विदेशियों ने भारत को खूब दुहा है। (५) नीति-विशारद अकबर मन बहलाने के लिये बीरबल की ओर देखता था। (६) मारे प्रसन्नता के मेरी छाती फूली जा रही थी। (७) जैसी उस पर पड़ रही है, किसी पर न पड़े। (८) तुच्छ से तुच्छ वस्तु को भी ठुकराना ठीक नहीं। (९) उसके कटु शब्दों को सुनकर पंच उखड़ गये।

मुहावरेदार वाक्यांशों का प्रयोग

✓ **अन्धे की लकड़ी** = एक मात्र सहारा। पुत्र-हीन महादेव के लिए यह तोता ही अन्धे की लकड़ी था, परन्तु वह भी उड़ गया।

अँधेरे घर का उजाला = एक मात्र पुत्र, कुलदीप। तीन भाइयों के बीच मोहन ही एक लड़का है; वही अँधेरे घर का उजाला है।

अगिया बैताल = कठिन और असंभव कार्य करने वाला। अर्द्ध रात्रि में यमुना पार करके वैद्य को लाने का साहस भीमदेव जैसे अगिया बैताल के अतिरिक्त किस को हो सकता था।

✓ **आँख का तारा** = अत्यन्त प्रिय। इकलौता पुत्र होने के कारण मोहन अपने माँ-बाप की आँख का तारा है।

✓ **आँधी के आम** = अस्थायी लाभ। मँहगाई के कारण व्यापारियों ने लाखों रुपये क्या कमाए; आँधी के आम बटोरे हैं।

आकाश का पुष्प = असम्भव वस्तु। अपार साधन-सम्पन्न रूस पर विजय प्राप्त करना हिटलर के लिए आकाश का पुष्प तोड़ना था।

✓ **आस्तीन का साँप** = विश्वासघाती। वह तुम्हारा मित्र नहीं, आस्तीन का साँप है! वह पीठ पीछे तुम्हारी बुराई करता है।

ईद का चाँद = बहुत दिन में मिलने या दिखाई देने वाला। आप साल भर पश्चात् आज मिले हैं। क्या ईद के चाँद हो गये हो?

कान के कच्चे = सुनी हुई बातों पर शीघ्र विश्वास करने वाले। प्रधानाध्यापक जी कान के इतने कच्चे हैं कि बिना सोचे समझे मोहन की बात पर विश्वास कर लेते हैं।

✓ **कूप-मण्डूक** = अल्प ज्ञानी। अशिक्षित होने से ग्रामीण जनता। कूप-मण्डूक है। उसे संसार की परिस्थिति का कुछ भी ज्ञान नहीं।

कोख की आँच = सन्तान का विछोह। गाँधारी से कोख की आँच सहन न हुई और वह विक्षिप्त सी हो गई।

गुदड़ी का लाल = सरल भेष में कोई गुणी या धनी जिसका गुण प्रकट न हो। प्रसिद्ध कवि और उपन्यासकार गोल्डस्मिथ गुदड़ी का लाल था। लोगों ने उसकी रचनाओं का महत्त्व उसके पी समझा।

✓ **गागर में सागर** = संक्षेप में किसी विशद भाव को प्रकट करना। बिहारी ने दोहा जैसे छोटे छन्द में भी अनेक भावों की ऐसी सुन्दर व्यंजना की है कि गागर में सागर भर दिया है।

गूँगे का गुड़ = ऐसा अनुभव या सुख जिसका वर्णन न किया जा सके। ब्रह्मानन्द ज्ञानियों के लिए गूँगे का गुड़ है।

✓ **गूलर का फूल** = अप्राप्य वस्तु। देश में अराजकता फैली हुई है। इस समय शान्ति या समृद्धि गूलर का फूल हो गई है।

चाँदी का जूता = धन का प्रलोभन, घूस।

चिकना घड़ा = ऐसा व्यक्ति जिसको कोई बात न लगे। ये बालक चिकने घड़े हैं, इन पर आपके उपदेश का क्या प्रभाव पड़ेगा?

चिराग़ तले अँधेरा = जहाँ किसी काम या वस्तु की आशा हो वहाँ कुछ न होना। इस विद्यालय में भी कुछ नौकर अशिक्षित हैं; यह तो चिराग़ तले अँधेरा है।

छिपा-रुस्तम = अप्रसिद्ध गुणवान् व्यक्ति। धूर्त मनुष्य (व्यंग्य में) तुम तो छिपे रुस्तम निकले। किसी को अनुमान भी न था कि तुम्हारा तर्क पूर्ण व्याख्यान सब को मुग्ध कर देगा।

टकसाली भाषा = शुद्ध भाषा। डा० श्यामसुन्दर दास जी ने अपनी रचनाओं में सर्वत्र टकसाली हिन्दी का प्रयोग किया है।

टेढ़ी खीर = कठिन कार्य। 'सिविल-सर्विस' की परीक्षा पास करना बड़ी टेढ़ी खीर है।

ढाक के तीन पात = सदा एक सी दशा में रहना। इस महायुद्ध में सभी पेशेवालों ने धन कमाया, किन्तु अध्यापक वही ढाक के तीन पात रहे।

ताड़ का वृक्ष = किसी को लाभ न पहुँचाने वाला बड़ा व्यक्ति।

तीतर की बोली = ऐसी बात जिस का कुछ निश्चित अर्थ न हो। जो कुछ कहना है स्पष्ट कहो, यह क्या तीतर की बोली बोल रहे हो?

तोता-चश्म = रूखा व्यवहार करने वाला, स्नेह रहित।

थाली का बैंगन = अस्थिर चित्त का व्यक्ति।

दन्त कथा = निराधार बात। कुतुब मीनार के निर्माण के सम्बन्ध में अनेक दन्त कथाएँ प्रसिद्ध हैं।

दाहिना हाथ = विश्वासपात्र सहायक। महादेव देसाई जैसे दाहिने हाथ के छिन जाने से महात्मा गाँधी को परमशोक हुआ।

दूध की मक्खी = बीच में रहने वाला हानि कारक व्यक्ति। विधवा विवाह करने के कारण समाज ने उसे दूध की मक्खी के समान जाति-च्युत कर दिया।

धोखे की टट्टी = धोखे में डालने वाली अथवा सारहीन वस्तु। पंजाब के नर संहार ने यह सिद्ध कर दिया है कि दो राष्ट्रों का सिद्धान्त धोखे की टट्टी था।

न तीन में न तेरह में=किसी गिनती में न होना। जब आप के साथी आप को न तीन में न तेरह में गिनते हैं, तब आप को उनके झगड़ों में पड़ने से क्या लाभ?

नदी-नाव संयोग=संयोग से मिलना। "तुलसी या संसार में भांति भांति के लोग। सब सों हिल मिल बोलिये नदी नाव संयोग।"

नाक का बाल=अत्यन्त प्रिय, मुँहचढ़ा। दारा शाहजहाँ की नाक का बाल था। अतएव राज काज में उसी की चलती थी।

पत्थर की लकीर=दृढ़, अमिट। भरत ने राम के आदेश को पत्थर की लकीर समझ कर पालन किया। सज्जनों की मित्रता पत्थर की लकीर है।

पानी का बुलबुला=क्षणभंगुर। "पानी केरा बुलबुला अस मानस की जाति।" (कबीर)

पानी का मोल=बहुत सस्ता। **पानी भरी खाल**=क्षणभंगुर जीवन।

पौ बारह=सब प्रकार लाभ। ऐसे उदार धनिक की नौकरी करने में पौ बारह हैं।

बाएँ हाथ का खेल=बहुत आसान काम। दो मील दौड़ना मेरे लिए बाँए हाथ का खेल है।

बालू की भीत=अत्यन्त अस्थिर वस्तु। मनुष्य के मनोरथ बालू की भीत के समान होते हैं।

बे पैंदी का लोटा=सिद्धान्तहीन व्यक्ति। ऐसे बे पैंदी के लोटे का कौन विश्वास करेगा जो आज मेरा पक्ष लेता है और कल उसका?

भेड़िया धसान=बिना विचारे दूसरों के पीछे चलना। हमारी वैवाहिक रीतियाँ भेड़िया धसान पर निर्भर हैं; उनमें से अनेक तो उद्देश्यहीन होती हैं।

✓**माई का लाल** = साहसी पुरुष। ऐसा कौन माई का लाल है जो नदी में बहते हुए इस बालक को बचाले ?

मीठा जहर = प्रत्यक्ष में भला किन्तु हानि पहुँचाने वाला कार्य। अकबर के मीठे जहर की अपेक्षा औरंगजेब की स्पष्टवादिता हिन्दुओं के लिए लाभदायक सिद्ध हुई।

युग-युग = बहुत समय तक। "युग-युग तक चलती रहे कठोर कहानी—'रघुकुल में भी थी एक अभागी रानी'।"

युग युगान्तर से = प्राचीन काल से। युग युगान्तर से रामायण की कथा प्रचलित है।

✓**रंगा सियार** = धोखा देने वाला या ढोंगी व्यक्ति।

✓**रामकहानी** = आत्म कहानी, आप बीती। मैं अपनी रामकहानी क्या सुनाऊँ; वह दुःख और पश्चाताप से भरी हुई है।

विष की गाँठ = उपद्रवी या दुष्ट मनुष्य। जिन्हें आप सरल और साधु समझते हैं, वे विष की गाँठ हैं।

वेद वाक्य = प्रमाणित बात। दूसरों के कथन को तर्क और बुद्धि की कसौटी पर कसो, वेद वाक्य न समझो।

✓**लोहे के चने** = कठिन कार्य। प्रथम श्रेणी में परीक्षा पास करना सरल कार्य नहीं, लोहे के चने चबाना है।

सफेद झूठ = पूर्ण रूप से निराधार बात।

सब धान बाईस पंसेरी = गुणवान और मूर्ख किसी में भेद न करना। इस स्कूल में सभी विद्यार्थियों को पास कर दिया जाता है; प्रधानाध्यापक के लिए सब धान बाईस पंसेरी हैं।

✓**साँप छछूंदर की गति** = द्विविधा में पड़ना। राजा दशरथ की साँप छछूंदर की सी गति थी; न राम को बनवास देना चाहते थे, न प्रतिज्ञा भंग करना ही। प्रवाद है कि साँप छछूंदर को पकड़ने पर खा जाय तो कोढ़ी और छोड़ने पर अन्धा हो जाता है।

सात पाँच = मेल-जोल, चालाकी। "सात पाँच की लाकड़ी एक जने का बोझ"। यह सरल बालक उन धूर्तों की सात पाँच क्या समझ सकता है?

सोने में सुगन्ध = गुण में अधिकता। उनकी विद्वत्ता में कोई सन्देह नहीं; किन्तु सरलता ने सोने में सुगन्ध करदी है।

हथेली का आँवला = निस्सन्देह बात। यह कथन कि सांसारिक वस्तुएँ नश्वर हैं, हथेली के आँवले की तरह सत्य है।

हाथ का मैल = तुच्छ वस्तु। धनियों के लिए दो चार रुपया हाथ का मैल है।

अभ्यास

१—निम्नलिखित वाक्यांशों का अपने बनाए हुए वाक्यों में प्रयोग करो:—

आकाश-पाताल का अन्तर, कोल्हू का बैल, उधेड़बुन, गले का हार, घोंघा बसन्त, टिड्डी दल, नादिर शाही, बात का धनी, बुडभस, लँगोटिया यार, मिट्टी का माधो, बछिया का ताऊ, भीगी बिल्ली, अरण्य-रोदन (निष्फल प्रयत्न), गोबर-गणेश (अत्यन्त मूर्ख), मीठी छुरी (कपटी मित्र)।

२—पुष्टाक्षर वाले वाक्यांशों के अर्थ स्पष्ट करिये:—

(क) भारत और चीन में सदैव **चोली दामन का साथ** रहा है।
(ख) प्रतिक्रिया वादी नरेश अँगरेजों की **छत्र छाया** के पक्षपाती थे।
(ग) सुख में अनेक साथी होते हैं, **गोठ का** साथ करने वाले **इनेगिने**।
(घ) अनेक हितैषियों की **टकसाली** बात में सन्देह करना व्यर्थ है।
(ङ) नेहरूजी ने **नपेतुले शब्दों में** ऐशिया का महत्त्व वर्णन किया।

(च) अब जापान के लिए अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व प्राप्त करना **दूर की बात** है। (छ) आप की **बन्दर-भभकी** से हम नहीं डर सकते। (ज) नादिरशाह के सिपाहियों ने **बात की बात में** सहस्रों मनुष्यों को **तलवार के घाट उतार दिया**। (झ) आपकी बातें **पौने सोलह आने** यथार्थ हैं। (ञ) मैं दुर्जनों से कोई **लाग लपेट** नहीं रखता। (ट) उसने **हँसते-हँसते** प्राण दे दिये।

लोकोक्तियां

अपनी बला और के सिर=अपना दोष दूसरों पर मढ़ना। जब तुम अच्छी तरह खेले ही नहीं तब मैच कैसे जीतते; खेल-निरीक्षक को बेईमान कह कर 'अपनी बला और के सिर' डालते हो। **अपनी नाक कटे तो कटे दूसरे का सगुन तो बिगड़े**=दूसरों की हानि के लिए अपनी हानि करना। **अपने मरे बिना स्वर्ग नहीं दीखता**=बिना अपने किये काम नहीं होता। **अब पछताये होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गई खेत**=कार्य बिगड़ जाने पर पश्चाताप करना व्यर्थ है। गर्मियों में तुम इधर उधर की सैर करते रहे और तुमने मकान की मरम्मत नहीं कराई। अब घर गिर गया तो हाय तोबा कर रहे हो। 'अब……।'

अरहर की टट्टी गुजराती ताला=तुच्छ वस्तु को अधिक यत्न से संभाल कर रखना। कहीं चार पैसे की पुस्तक पर चार आने की जिल्द बंधवाई जाती है? तुमने तो वही किया कि "अरहर………………।"

अशर्फ़ियों की लूट और कोयलों पर छाप=बड़े बड़े खर्चों पर ध्यान न देकर छोटे कामों में बचत करना। मित्र-मंडली को खिलाने-पिलाने में आपने दो रुपये बिगाड़ दिये और बच्चे के लिए दो आने का दूध मंगाने पर आप नाक भौं सिकोड़ते हैं। ठीक है, "अशर्फियों……।"

अवसर चूके डोमिनी गावे ताल बेताल=समय चूकने पर किसी बात

का प्रभाव नहीं पड़ता । **अस्सी की आमद चौरासी का खर्च**=आय से अधिक व्यय । आजकल बचत कहाँ से हो जब मंहगाई के कारण अस्सी की आमदनी चौरासी का खर्च है । **अन्दर छूत नहीं बाहर कहें दुर-दुर**=मन में कुछ, बाहर कुछ । **अन्धा क्या चाहे दो आँखें**=वाँछित वस्तु मिल जाना । भूख के मारे पेट में चूहे दौड़ रहे थे । जब मित्र ने भोजन के लिए पूछा तो मैंने कहा, "अन्धा क्या······।" **अन्धा बाँटे रेवड़ी फिर फिर अपने को ही दे**=अधिकार मिलने पर स्वार्थी व्यक्ति पक्षपात दिखलाता है । इस स्कूल में उन्हीं अध्यापकों को सदैव तरक्की मिलती है जो मैनेजर साहब की जाति के हैं । सच है, 'अन्धा············।' **अन्धी पीसे कुत्ता खाय**=किसी की कमाई का लाभ अयोग्य व्यक्ति द्वारा उठाना । **अन्धे के आगे रोवे अपने दीदा खोवे**=अयोग्य पुरुष से अपना दुख कहना व्यर्थ है । **अन्धे के हाथ बटेर लगी**=किसी अयोग्य व्यक्ति के द्वारा भाग्य वश असम्भव बात सम्भव होना या उत्तम वस्तु हाथ लग जाना । राम सरन एम० ए० तृतीय श्रेणी में पास हुआ था ; किन्तु न्यायाधीश का कृपापात्र होने के कारण उसे उच्च पद मिल गया है । वास्तव में अन्धे के हाथ बटे लगी है । **अन्धों में काना राजा**=मूर्खों में कुछ गुणवान् भी आदर पाता है । इस तहसील में कोई अच्छा वकील तो है नहीं ; इस लिए सूरजमल ही अन्धों में काना राजा है । **अन्धेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा**=जहाँ मूर्ख स्वामी हो, वहाँ गुणवानों का कुछ आदर नहीं होता । **अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता**=अकेला मनुष्य कुछ नहीं कर सकता । जब सभी धुरी शक्तियों ने हथियार डाल दिये तब जापान ने भी यह सोचकर मित्र राष्ट्रों से सन्धि कर ली कि 'अकेला चना क्या भाड़ फोड़ेगा' । **अन्त भला सो भला**=(All is well that ends well)=जिस का अन्त अच्छा हो वही उत्तम कार्य है । **अक्ल बड़ी या भैंस**=शारीरिक शक्ति से बुद्धिबल

प्रबल होता है। **अटका बनिया देय उधार**=दबाव पड़ने पर सब कुछ करना पड़ता है। **अधजल गगरी छलकत जाय**=तुच्छ मनुष्य इतराते हैं। शब्दों का शुद्ध उच्चारण भी तुम को आता नहीं और बात बात में अँगरेजी की टाँग तोड़ते हो। सच है, 'अधजल…………।' **अपना हाथ जगन्नाथ**=दूसरे की वस्तु का मनमाना उपयोग करना। **अपनी करनी पार उतरनी**=कर्म के अनुसार फल मिलता है। राजा नल ने आह भर कर कहा, "यदि मैं जुआ न खेलता तो बुरे दिन न देखने पड़ते। अपनी करनी पार उतरनी।" **अपनी अपनी ढफली अपना अपना राग**=सब का स्वतंत्र होना, मिलकर काम न करना। यदि भारतवर्ष के राजनीतिक दल 'अपनी अपनी ढफली अपना अपना राग, गाते रहे तो देश को स्वतंत्रता चिरस्थाई नहीं हो सकती। **अपनी पगड़ी अपने हाथ**=अपनी प्रतिष्ठा अपने हाथ होती है। न तुम एक कहते न दो सुनते; 'अपनी…………।' **आग लगने पर कुँआ खोदना**=आपत्ति पड़ने पर प्रयत्न करना। कल परीक्षा है और आज आप पुस्तक की तलाश में हैं। आप की तो वही दशा है कि आग लगने पर कुँआ खोदना। **आगे कुंआ पीछे खाई**=दोनों ओर विपत्ति। **आगे दौड़ पीछे चौड़**=जब तक कोई आगे कार्य किया जाय, पहले किया हुआ प्रयत्न व्यर्थ होना। **आठ कनौजिया नौ चूल्हे**=आपस में प्रबल विरोध होना। जब तक हिन्दू समाज में 'आठ कनौजिया नौ चूल्हे' की रीति प्रचलित है, तब तक उसकी उन्नति किस प्रकार हो सकती है? **आठों गाँठ कुम्मेत**=पूर्ण रूप से चालाक। अँगरेज भी आठों गाँठ कुम्मेत हैं। जब उन्हें भारत छोड़ना ही पड़ा तब पाकिस्तान का निर्माण करके अपने व्यापार का मार्ग निकाल लिया। **आदमी जाने बसे सोना जाने कसे**=साथ रहने से मनुष्य की और कसौटी पर कसने से सोने की परख होती है। **आधा तीतर आधा बटेर**-

अनमेल वस्तुओं का संयोग ; बेढङ्गापन । हिन्दी के छन्दों के बीच में उर्दू की बहरों का प्रयोग रचना में क्या सौन्दर्य बढ़ा सकता है? ऐसी रचना आधा तीतर आधा बटेर है। **आप काज महा काज**=अपना काम स्वयं करने से ही ठीक होता है। रजिस्टर भरने के लिए मानीटर को दे दिया। उसने उसमें अनेक अशुद्धियाँ कर दीं। सच है, "आप काज……।" **आप भला तो जग भला**=आप स्वयं नेक हैं त दूसरे भी आप के साथ नेकी करेंगे। **आप मरे जग परलै होय**= अपनी मृत्यु के पश्चात् किसकी चिन्ता की जावे? **आम के आम गुठली के दाम**=दूना लाभ। नीबू का रस तो लाभदायक है ही। छिलकों से बरतन साफ़ किये जा सकते हैं। सच है, "आम……।" **आम खाने हैं कि पेड़ गिनने**=अपने काम की बात न करके निरर्थक बातें करना। आपको इस पुस्तक की आवश्यकता थी सो मैंने देदी। यह कहाँ से आई, कैसे ली—यह जानने से क्या प्रयोजन? "आम खाने कि……………।" **आये थे हरि भजन को ओटन लगे कपास**=किसी महान् कार्य के लिए कहीं जाकर कोई छोटा काम करने लगना। **आस पास बरसे दिल्ली खड़ी तरसे**=जिसे चाहिये उसे न मिलकर दूसरों को मिलना। **आँख के अन्धे नाम नयनसुख**=गुणों के विरुद्ध नाम। आपका नाम है लक्ष्मीपति परन्तु पास में फूटी कौड़ी भी नहीं; "आंख के…………।" **आँख न दीदा काढ़े कसीदा** = योग्यता से बढ़कर काम करने की शेखी मारना। आप हकला कर बोलते हैं किन्तु वाक्विवाद प्रतियोगिता में भाग लेने का दम भरते हैं। "आँख न दीदा……।"

इक नागिन अरु पंख लगाई=बुरे स्वभाव का व्यक्ति कारणवश अधिक भयंकर हो जावे। **इन तिलों में तेल नहीं**=इससे काम न निकलेगा। सन्धि की उदार शर्तों का भी जब निजाम पर कुछ प्रभाव

न पड़ा तो भारत के प्रधान मंत्री समझ गये कि इन तिलों में तेल नहीं। **ईंट की देवी मांगे का प्रसाद**=पद के अनुसार किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा करना।

उखली में सिर दिया तो मूसलों से क्या डर=काम करने में कठिनाइयों से नहीं डरना चाहिए। जब हमने देश सेवा का व्रत कर लिया है तब जेल जाने से क्यों डरें? "जब उखली…………।" **उतर गई लोई तो क्या करेगा कोई**=जिस की प्रतिष्ठा या लज्जा चली जाती है उसका कोई क्या बिगाड़ सकता है। **उतावला सो बावला, धीरा सो गम्भीरा**=शीघ्रता से काम बिगड़ जाता है, धैर्य के साथ ठीक होता है। **उठी पैठ आंठवें दिन लगती है**=खोया हुआ अवसर कठिनता से मिलता है। **उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे**=अपराधी का अपना दोष स्वीकार न करके पूछने वाले को दोषी ठहराना। पंजाब के हत्याकाण्ड के लिए लीगी नेता दोषी हैं किन्तु वे भारत सरकार पर 'जातीय-संहार' का दोष लगाते हैं। सच है, "उल्टा चोर………।" **उल्टे बाँस बरेली को**=विपरीत कार्य करना। **ऊँची दूकान फीका पकवान**=केवल बाहरी दिखावट। आप शुद्ध घी का विज्ञापन करते हैं, किन्तु आप की दूकान पर बिकता है घासलेट का मिश्रण। ठीक है, "ऊँची…………।" **ऊँट किस करवट बैठता है**=न जाने क्या परिणाम हो। काश्मीर का प्रश्न सुरक्षा परिषद में भेजा गया है। "देखो ऊँट…………।" **ऊँट की चोरी निहुरे निहुरे** (या झुके झुके)=कोई बड़ा कार्य छिपकर करना। **ऊँट के मुँह में जीरा**=अधिक खाने वाले को थोड़ा सा देना। दो सेर मिठाई का कलेवा करने वाले मोटेराम शास्त्री के लिए पाव भर मिठाई ऊँट के मुँह में जीरा थी। **ऊँट के गले में बिल्ली**=अनमेल संयोग। साठ वर्ष के वृद्ध के साथ दस वर्ष की बालिका का विवाह करना ऐसा ही है जैसे

ऊँट के गले में बिल्ली बाँधना। **ऊधो का लेन न माधो का देन**=किसी झगड़े से सम्बन्ध न रखना; निश्चिन्त रहना।

एक अनार सौ बीमार=थोड़ी सी वस्तु के अनेक चाहने वाले। तार विभाग में एक स्थान के लिए पचास प्रार्थी थे। एक अनार और सौ बीमार वाली बात थी। अतएव परीक्षा में सर्व प्रथम आने वाले को ही उस स्थान पर नियुक्त किया गया। **एक और एक ग्यारह होते हैं**=एकता में बड़ा बल होता है। समस्त राजनीतिक दल मिलकर शत्रु का सामना करें तो सफलता अवश्य मिलेगी क्यों कि एक और एक ग्यारह होते हैं। **एक चुप सौ को हरावे** (Speech is silvery but silence is golden)=शान्त प्रकृति के मनुष्य से सबको हारना पड़ता है। **एक तो करेला कड़वा दूसरे नीम चढ़ा**=(एक तो गिलोय दूसरे नीम चढ़ी)—स्वाभाविक अवगुण में कारणवश, अन्य किसी बुराई का साधन मिलना। उसका स्वभाव तो उद्धत था ही, थानेदारी ने उस पर और भी रंग चढ़ा दिया है। एक तो करेला.........। **एक थैली के चट्टे बट्टे**=सब एक से हैं। अंगरेज हों या अमेरिका वाले; एक थैली के चट्टे बट्टे हैं। सब भारत को दुहने की चेष्टा करेंगे। **एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है**=एक बुरा मनुष्य समाज भर को कलंकित कर देता है। **एक पंथ दो काज**=एक उद्योग से दो उद्देश्यों की पूर्ति। आगरा जाने से 'एक पंथ दो काज' होंगे। परीक्षा भी देंगे और साथ ही वहाँ की ऐतिहासिक इमारतों को देखने का अवसर मिलेगा। **एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकतीं**=एक स्थान में दो शक्तिशाली मनुष्यों का अधिकार नहीं हो सकता। **एक हाथ से ताली नहीं बजती**=अकेले झगड़ा नहीं होता। तुम अपने को निर्दोष बतलाते हो, फिर दोनों के ही चोट कैसे आई? क्या एक हाथ से कभी ताली बजती है। **ओस (या ओठ) चाटे प्यास नहीं बुझती**=इतनी थोड़ी वस्तु का मिलना जिससे तृप्ति न हो सके।

कभी नाव गाड़ी पर, कभी गाड़ी नाव पर=समय परएक दूसरे की आवश्यकता पड़ती है। एक समय था जब जनता राजाओं की सेवक थी, आज राजा लोग जनता-जनार्दन के सेवक हैं। यह समय का फेर है, "कभी नाव.........।" **कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू तेली**=दो मनुष्यों की स्थिति में विशेष अन्तर होना। "वाह भाई! नाम-साम्य से ही आप मेरी तुलना सर सेठ हुकमचन्द जी से करने लगी। कहाँ राजा.........। **कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा भानुमती ने कुनबा जोड़ा**=अनमेल और अनावश्यक वस्तुओं का संग्रह करना। **कहने से कुम्हार गधे पर नहीं चढ़ता**=हठी मनुष्य स्वेच्छा से कुछ भी करे किन्तु कहने से काम नहीं करता। **काग़ज की नाव नहीं चलती**=बेईमानी से सदैव काम नहीं चलता। **कागा चले हंस की चाल**=बड़ों की नकल करना। **काज़ी दुबले क्यों शहर के अन्देशे**=अपनी चिन्ता न करके दूसरों की चिन्ता करना। आज भी कुछ स्वार्थी अंग्रेजों को डर है कि स्वतंत्र भारत में गृहयुद्ध न छिड़ जाय। उनकी ऐसी ही दशा है कि काज़ी... ...। **काजल की कोठरी में धब्बे का डर या कोयलों की दलाली में काले हाथ**=कुसंगति अथवा बुरा कार्य करने से अपयश ही मिलता है, ऐसे धूर्त का साथ देना ठीक नहीं। कहीं आप ही झंझट में न पड़ जायें, 'काजल की... ...।' **काठ की हांड़ी बार २ नहीं चढ़ती**=कपट और धूर्तता से एक ही बार काम निकल सकता है। **काबुल में क्या गधे नहीं होते**=बुरे और मूर्ख सब जगह होते हैं। **का वर्षा जब कृषी सुखाने**=अवसर निकल जाने पर सहायता देना व्यर्थ है। जब लुटेरे घर लूट कर भाग गये तब पुलिस दल आया। लोगों ने कहा "का वर्षा... ......।" **काला अक्षर भैंस बराबर**=अनपढ़ मनुष्य। भारतीय किसान न पुस्तकें पढ़ सकते हैं न समाचार पत्र। उनकी उन्नति न होने का कारण यही है कि वे 'काला अक्षर भैंस बराबर

हैं।' **कुत्तों के भोंकने से हाथी नहीं डरते**=महापुरुष नीच मनुष्यों की बातों से बुरा नहीं मानते। **कै हंसा मोती चुगे कै भूखों मर जाय**=प्रतिष्ठा के विपरीत कार्य न करना। **काले के आगे दिया नहीं जलता**=बलवान के आगे किसी का वश नहीं चलता। **किस वित्ते पर तत्ता पानी**=किस बल पर काम किया जाय। मुकद्दमा लड़ना बड़ी टेढ़ी खीर है। जब गाँव में सब तुम्हारे विरुद्ध हैं, तब किस बित्ते पर तत्ता पानी हो **कभी घी घना कभी मुट्ठी भर चना**=मनुष्य की दशा एक समान नहीं रहती। **खोदा पहाड़ निकली चुहिया**=भारी परिश्रम का तुच्छ परिणाम। **खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग** बदलता है=देखादेखी काम करना। अमेरिका को स्वातन्त्र्य संग्राम में सफलता मिलने से आयरलैंड के निवासियों का भी उत्साह बढ़ गया और उन्होंने इंगलैंड के विरुद्ध विद्रोह का झंडा गाड़ दिया। 'खरबूजे... ...।' **खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे**=लज्जित होकर क्रोध करना। जब भारत वर्ष के अन्य प्राँतों में मुस्लिम लीग से कुछ करते धरते न बन पड़ा तो पजाब में साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाकर अल्प संख्यकों की हत्या करना प्रारम्भ कर दिया। सच है, 'खिसियानी... ...।' **खग जाने खग ही की भाषा**=एक सी प्रकृति या संगति के मनुष्यों का एक दूसरे को ठीक समझना। क्षत्रियों की वैवाहिक रीतियों को वैश्य क्या समझ सकते हैं? अतएव आप अपने पिताजी से इस विषय में परामर्श लीजिए। कहा भी है, "खग... ...।" **खूंटे के बल बछड़ा कूदे**=किसी सहायक के बल पर इतराना। **खालाजी का घर नहीं**=सरल कार्य न होना। असीम शक्ति सम्पन्न रूस को युद्ध में पराजित करना खालाजी का घर नहीं। **गंगा गये गंगाराम, जमुना गये जमुनादास**=समय के अनुकूल रंग बदलने वाला मनुष्य; मुँह देखी कहने वाला। जब तक अँगरेजी शासन रहा, उनका साहबी रंग-ढङ्ग था, राष्ट्रीय सरकार के शासन-सूत्र हाथ में

लेते ही उन्होंने खद्दर के वस्त्र पहनना शुरू कर दिया है। उनका तो सिद्धान्त है, 'गंगा गये... ...।' **गुड़ खाय गुलगुलों से परहेज़**=दिखावटी परहेज करना। विदेशी वस्त्रों का त्याग करके आप अन्य विदेशी वस्तुओं को अभी तक काम में लाते हैं। यह तो 'गुड़ खाकर गुलगुलों से परहेज है।' **गेहूँ के साथ घुन भी पिस. जाता है**=बुरों का साथ करने से भले भी फँस जाते हैं। **गवाह चुस्त मुद्दई सुस्त**=जिसका काम हो, वह स्वयं तो उसके लिए प्रयत्न न करे, किन्तु दूसरों का उसके लिए व्याकुलता दिखाना। **घर का जोगी जोगना आन गाँव का सिद्ध** (A prophet is never honoured in his country)=अपनों में योग्य होने पर भी आदर नहीं मिलता। **घर आये नाग न पूजिये बांबी पूजन जायँ**=सरलता से कार्य सिद्ध होने वाले मार्ग को ग्रहण न करके टेढ़े रास्ते पर जाना। **घर का भेदी लंका ढावै**–आपस की फूट से हानि होती है। **घर की मुर्गी दाल बराबर**–घर की वस्तु को तुच्छ समझना। जब घर में अच्छे बरतन हैं, तब आशा के विवाह में देने के लिये नये बरतन मोल लेने की क्या आवश्यकता है? पर आपको क्या कहें? आपके लिए तो "घर... ... ...।" **घर खीर तो बाहर खीर**–घर में आदर होने से बाहर वाले भी आदर करते हैं। **घी कहाँ गया खिचड़ी में**–किसी वस्तु का उपयोग स्वयं अथवा कुटुम्बियों द्वारा होना। **घड़ी में तोला घड़ी में मासा**–अव्यवस्थित स्वभाव का मनुष्य। क्षण भर पहिले आपके मुख से फूल झड़ रहे थे और अब बातों ही बातों में ज्वालामुखी बन गये हो। आपकी प्रकृति क्या है–'घड़ी में तोला घड़ी में माशा।'

चलती का नाम गाड़ी है–सफलता की प्रशंसा होती है। सेठ जी न अधिक पढ़े लिखे हैं और न वे व्याख्यान ही दे सकते हैं; फिर भी हर कार्य में लोग उनको अगुआ बनाते हैं। इसी से कहते हैं कि 'चलती... ... ...।' **चार दिना की चांदनी फिर अँधियारा**

पाख=थोड़े दिन का आनन्द या वैभव। जो इंगलैंड संसार के छटवें भाग पर राज करता था, वही आज परमुखापेक्षी है। भाई, "चार दिन... ... ...।" **चिकने घड़े पर पानी नहीं ठहरता**=निर्लज्ज मनुष्य पर किसी बात का प्रभाव नहीं पड़ता। **चुपड़ी और दो दो**=सब प्रकार से लाभ। तुम लड़की वाले से दहेज़ ही नहीं माँगते वरन् लड़के की शिक्षा के लिये भी धन माँगते हो। यह कैसे हो सकता है कि चुपड़ी और दो दो? **चोर की दाढ़ी में तिनका**=दोषी स्वयं ही ऐसी बातें करता है जिससे उसका दोष प्रकट हो जाय। **चोर चोर मौसेरे भाई**=नीच प्रकृति के मनुष्यों अथवा बुरे काम करने वालों में शीघ्र मेल हो जाता है। **चौबे गए छबे होने दुबे ही रह गये**=लाभ के स्थान में हानि होना। मैंने दुकान इस आशा से खोली कि कुछ लाभ हो, किन्तु नौकरों की शरारत से पाँच सौ का घाटा रहा। मेरी तो वही दशा हुई कि "चौबे... ...।" **छछूंदर के सिर में चमेली का तेल**=किसी अयोग्य का आदर होना अथवा कुरूप मनुष्य की अत्यधिक सजावट। **छोटे मुँह बड़ी बात**=अपनी योग्यता से बढ़कर बातें करना। ऐसे विद्वान की रचना में मुझ जैसे अल्पज्ञ का दोष निकालनाछोटे मुँह बड़ी बात होगी। **जंगल में मोर नाचा किसने जाना**=अनुपयुक्त स्थान में गुण दिखाना। इस बाल पाठशाला में अध्यापकी करने से आपका साहित्यज्ञान किस काम आयेगा? भला, 'जँगल में............।' **जब तक स्वांस जब तक आस**=अन्तिम घड़ी तक आशा रखना। **जगन्नाथ का भात जगत पसारे हाथ**=मुफ्त की वस्तु सबको अच्छी लगती है। सरकारी अस्पताल से निर्धन ही नहीं धनिक भी दवा लेते हैं; क्योंकि "जगन्नाथ......।" **जल में रहे मगर से बैर**=जिसके आश्रय में रहे उसी वैर करना। राज्य में रहकर महाराज का विरोध करते हो, 'जल में रहकर मगर से वैर करना ठीक नहीं।' **जस दूलह तस बनी बराता**=एक सी प्रकृति के साथियों का मिलना।

जादू वह जो सिर पर चढ़ कर बोले = भली बात सभी को माननी पड़ती है। साम्प्रदायिक घृणा फैलाने वाले नेता भी अब गाँधीजी के आदर्शों को अपना रहे हैं। सच है, "जादू......।" **जितनी चादर हो उतने ही पैर पसारो,** (Cut your coat according to your cloth) = सामर्थ्य के अनुसार काम करना। **जिसका व्याह उसी के गीत** (He who pays the piper must command the tune) = प्रधान की आज्ञानुसार कार्य करना चाहिए। **जिसकी लाठी उसकी भैंस** (Might is right) = बलवान की ही विजय होती है। मध्य युग में कोई प्रबल शासक नहीं था। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की कहावत चरितार्थ हो रही थी। **जिसके पैर न फटे विवाई सो क्या जाने पीर पराई** = भुक्त भोगी ही दूसरों के कष्टों का अनुभव कर सकता है। **जिसके हाथ लोई उसका सब कोई** = अधिकारी के सब सहायक होते हैं। जमींदार के विरुद्ध मुकद्दमा लड़ने से क्या लाभ है? तुम्हारी कोई गवाही भी न देगा। जिसके...।' **जितने मुँह उतनी बातें** = भिन्न-भिन्न प्रकार के मत होना। हिटलर की रहस्य पूर्ण मृत्यु के सम्बन्ध में कोई निश्चित मत नहीं। 'जितने मुँह उतनी बातें' कही जाती हैं। **जैसा देश वैसा भेष** = जिस देश में रहे वहीं की रीति-रिवाज अपनाना अथवा जैसा अवसर हो वैसा करना। गाँव वालों से सरल हिन्दी में बातें करनी चाहिए; वहाँ अंगरेजी का प्रयोग करना ठीक नहीं। कहा भी है 'जैसा देश वैसा भेष'। **जैसे सांपनाथ वैसे नाग नाथ** = दोनों एक समान ही बुरे। नये महाराज से आशा थी कि वे प्रजा का कुछ हित करेंगे, किन्तु वे अपने पिता के समान ही प्रतिगामी सिद्ध हुए। प्रजा के लिये तो 'जैसे साँपनाथ वैसे नागनाथ'। **जो बोले सो घी को जाय** = उपाय बतलाने वाले मनुष्य पर ही कार्य भार सोंपना। **जैसी करनी वैसी भरनी** = कार्य के अनुसार

परिणाम । **जैसीं बहे बयार पीठ तब तैसी दीजे**=समय के अनुकूल कार्य करना चाहिए ।

तवेले की बला बंदर के सिर=किसी एक के अपराध में दूसरे को दंड मिलना । **ताँत बजी और राग बूझा**= बोलने से ही योग्यता प्रकट होती है । **तिनके की ओट पहाड़**=थोड़े से साधन से बड़ा काम हो जाना । भारतीयों ने अँगरेजी औषधियों के सामने त्रिफला को भुला दिया है, किन्तु तिनके की ओट पहाड़ है । त्रिफला अनेक रोगों की एक मात्र औषधि है । **तेल देखो तेल की धार देखो**=नया अनुभव करना । मुकद्दमे की पहली पेशी से ही घबड़ाने लगे ; अभी "तेल......।" **तेल तिलों से ही निकलता है**=उसका खर्च उसी में से निकलता है । आपको पच्चीस प्रतिशत कमीशन भी मिल जायगा, किन्तु ध्यान रखिये कि तेल...........।' **तीन लोक से मथुरा न्यारी**=सबसे भिन्न चाल-ढाल होना । सब कुटुम्बी विवाह में सम्मिलित हुए, किन्तु रामलाल ही नहीं । उसकी तीन लोक से मथुरा न्यारी है । **तीरथ गये मुँड़ाये सिद्ध**=जहाँ हो वहाँ की रीति-रिवाज का पालन करे । कांग्रेस के स्वयंसेवक होकर तुम विदेशी वस्त्र पहनते हो । स्वदेशी वस्तुओं को अपनाओ क्योंकि 'तीरथ......।'

थोथा चना बाजे घना = आडम्बर प्रिय या शेखी मारने वाला व्यक्ति सारहीन होता है । आपने अभी तक कुछ किया भी है अथवा केवल बढ़ चढ़ कर बातें बनाते हो ? 'थोथा चना......।'

दबी बिल्ली चूहों से कान कटावे=दोषी होने पर बलवान भी निर्बल से दबता है । कम तोलने पर दूकानदार को मजदूर की भी खरी खोटी सुननी पड़ी । सच है, 'दबी बिल्ली......।' **दान की बछिया के दाँत नहीं देखे जाते**=मुफ्त में मिली हुई वस्तु के अवगुण नहीं देखे जाते । **दाल में कुछ काला है**=कुछ सन्देह जनक बात है । वह आज यहाँ

आने के लिए कह गया था, किन्तु अभी तक नहीं आया। जान पड़ता है 'दाल में......।' **दीवार के भी कान होते हैं**=गुप्त सलाह सतर्कता से करनी चाहिए। भाई, धीरे-धीरे बोलो, कोई सुन न ले। 'दीवार...।' **दुविधा में दोनों गये माया मिली न राम**=एक समय दो कार्यों की चिन्ता करने से एक में भी सफलता नहीं मिलती। **दूध का जला छाछ भी फूँक फूँक कर पीता है**=किसी एक कार्य में हानि उठा कर अन्य निरापद कार्य करने में भी डरना। एक नौकर ५००) की चोरी कर लेगया, तब से कोई दूसरा नौकर नहीं रक्खा। क्या करूँ, 'दूध...।' **दूध का दूध, पानी का पानी**=सच्चा न्याय। **दूर के ढोल सुहावने**=बिना अनुभव किये दूर की वस्तुयें अच्छी लगती हैं। रात्रि को कहीं से संगीत की मधुर ध्वनि आरही थी, किन्तु पास जाकर देखा तो एक ग्वाला बेसुरे राग से गा रहा था। सच है, 'दूर के......।' **दोनों हाथ लड्डू हैं**=दोनों ओर लाभ ही लाभ है। **धोबी का कुत्ता घर का न घाट का**=जिसका कहीं आदर न हो। जिन नेताओं ने स्वातंत्र्य-संघर्ष में अँगरेज़ों का पक्ष लिया था, वे जनता की नजरों से गिर गये। अब अङ्गरेजों के भारत छोड़ने से उनकी दशा ऐसी ही हुई है कि 'धोबी...।' **धोबी बसि कै क्या करे दिगम्बरों के गाँव**=जहाँ प्रतिष्ठा और आदर न हो अथवा जहां अपना व्यवसाय न चल सके, वहाँ रहना व्यर्थ है। तुम जैसे कलाकार इस ग्रामीण-मंडली में रहकर क्या लाभ उठाओगे ? 'धोबी......।' **नकारखाने में तूती की आवाज कौन सुनता है ?**—बड़ों में छोटों की कौन सुनता है। कुछ राष्ट्रीय मुसलमानों ने भारत-विभाजन का विरोध भी किया, किन्तु नक्कारखाने......?' **न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी**=किसी काम के लिए ऐसी शर्त्त रखना जो पूरी न की जा सके। न कभी स्कूल के पास ५०००० रु० स्थायी-फंड में जमा होंगे, न वह प्रमाणित किया जावेगा। यह तो वही बात हुई कि "न नौ......।" **नया नौ दिन**

पुराना सौ दिन=नई वस्तु के स्थायी होने में शंका करना । इस नई कम्पनी के 'शेअर' कौन ले ? न जाने कब बैठ जाय । आप जानते ही हैं कि "नया......।" **न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी**=झगड़े की जड़ को नष्ट कर देना । ज़मींदारी प्रथा का उन्मूलन करने से किसानों और जमींदारों में झगड़े भी न होंगी; "न रहेगा बाँस......।" **नाक दबाने से मुँह खुलता है**=दबाव डालने से ही काम निकलता है । **नाच न जाने आँगन टेढ़ा**=अपनी अज्ञानता छिपाने के लिए दूसरों पर व्यर्थ दोष लगाना । तुमसे सुन्दर लिखना भी आता है कि स्याही कलम को दोष देते हो ? 'नाच न.........।' **नानी के आगे ननिहाल का बखान**=अपने से अधिक जानने वाले के सामने शेखी मारना । **नाम बड़े दर्शन थोड़े**=प्रसिद्धि तो अधिक वास्तविकता कम होना । सेठ जी की उदारता सुनकर मैंने उनके यहाँ नौकरी की, किन्तु मुझे ज्ञात हुआ कि वे एक एक पैसे को दाँतों से पकड़ते हैं । तब मैंने यही कहा कि इनके तो 'नाम.........हैं ।" **नौ नकद न तेरह उधार**=भविष्य में अधिक मिलने की आशा से वर्तमान में थोड़ा मिलना अच्छा है; उधार से नकद का थोड़ा मिलना भी अच्छा है । **नौ दिन चले अढ़ाई कोस**=अत्यन्त सुस्त मनुष्य के प्रति कहा जाता है । **नेकी और पूछ पूछ**=उपकार करने में पूछना क्या ? (अतिथि से) क्या आप जलपान करेंगे ? (अतिथि) अवश्य, नेकी और पूछ पूछ । **नंगा क्या नहाय और क्या निचोड़े ?**=निर्धन कुछ नहीं कर सकता । चार आने प्रतिदिन कमाने वाला श्रमिक चित्रपट कहाँ से देखे ? "नंगा क्या.........?"

पाँचो उँगलियाँ घी में होना=चारों ओर से लाभ होना । **पाचों उँगलियाँ एक बराबर नहीं होतीं**=सभी मनुष्य एक समान नहीं होते । यदि बड़ा भाई दुश्चरित्र है तो यह कैसे मान लिया जाय कि छोटा भाई भी वैसा ही है ? "पाँचों उँगलियाँ.........।"

पानी पी घर पूछना नाहीं भलो बिचार=काम करने के पश्चात् भलाई-बुराई सोचना या उसके सम्बन्ध में छानबीन करना ठीक नहीं। **पानी मथने से घी नहीं निकलता**=मूर्ख को उपदेश देने से कोई लाभ नहीं; कंजूस की सेवा से कुछ प्राप्ति नहीं होती। **प्यासा कुएँ के पास जाता है, कुआँ प्यासे के नहीं**=सहायता का इच्छुक ही सहायक की शरण लेता है। **फलेगा सो झड़ेगा**=उन्नति के पश्चात् अवनति भी होती है। **फुईं फुईं ताल भरता है**=थोड़ा थोड़ा जोड़ने से अधिक होता है। दूरदर्शी मनुष्य भविष्य के लिए कुछ न कुछ अवश्य बचाते हैं; क्यों कि 'फुईं.........।' **बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद**=किसी वस्तु विशेष या गुणी मनुष्य का आदर न करना। नगरों की तंग गलियों में रहने वालों को पवित्र ग्राम्य जीवन क्यों अच्छा लगने लगा; 'बन्दर क्या.........?'' **बन्दर के गले में मोतियों की माला**="किसी अयोग्य व्यक्ति का अधिक सम्मान होना। **बगल में छुरी मुँह में राम**=मित्रता का दिखावा करना। **बद अच्छा बदनाम बुरा**=व्यर्थ बदनाम होना बुरा है। **बकरे की माँ कब तक खैर मनायेगी**=किसी दिन आपत्ति अवश्य आयेगी। परीक्षा में प्रतिदिन नकल करते हो, कभी न कभी पकड़े जाओगे; 'बकरे की माँ.........।'' **बाप न मारी मेंढ़की, बेटा तीरंदाज**=व्यर्थ शेखी बघारने वाले पर व्यंग। **बारह वर्ष दहली में रहे पर भाड़ ही झोंका**=उत्तम स्थान या अन्य सुविधाएँ प्राप्त होने पर भी कुछ न सीखना। इतने दिन डाक्टर कपूर के यहाँ रहकर भी तुम्हें तापक्रम ज्ञात करना न आया। तुम तो "बारह वर्ष.........।" **बावन तोले पाव रत्ती**=बिल्कुल ठीक। **बड़े बोल का सिर नीचा** (Pride goeth before a fall)=घमण्डी नीचा देखता है। **बावले गाँव में ऊँट आया**=अज्ञानियों को साधारण वस्तु भी विचित्र प्रतीत होती है। **बहुते जोगिन मठ उजाड़**=

अनेक मनुष्यों के नेतृत्व में किया गया काम बिगड़ जाता है। **बाँबी में हाथ तू डाल, मन्त्र मैं पढ़ूँ**=खतरे का कार्य दूसरों को सोंपकर सरल कार्य स्वयं करना। **बिंध गया सो मोती रह गया सो सीप**=जो काम में लग गया वह उत्तम, शेष सब निकृष्ट। **भरी थाली में लात मारना**=अभिमान वश किसी प्राप्य वस्तु का तिरस्कार करना। ऐसा कुलीन घर और सुशील कन्या पा कर लड़के का सम्बन्ध क्यों नहीं करते? भरी थाली में लात क्यों मारते हो? **भागते भूत की लंगोटी सही**=जहाँ कुछ भी मिलने की आशा न हो वहाँ थोड़ा मिलना भी अच्छा है। **भैंस के आगे बीन बजाई, भैंस खड़ी पगुराय**=मूर्ख को उपदेश देना व्यर्थ है। **मन चंगा तो कठौती में गंगा**=शुद्ध हृदय वाले के लिए घर में ही तीर्थ है। जब मेरे मित्र ने भगवद्भजन के लिए हरिद्वार चलने का आग्रह किया, तब मैंने उनसे कहा, "मैं तो घर पर भी भजन पूजन कर लेता हूँ क्योंकि "मन चंगा.........।" **मरता क्या न करता**=विपत्ति-ग्रस्त मनुष्य उचित-अनुचित सभी कर्म करता है। पेट की ज्वाला से पीड़ित होकर बंगाल में लोगों ने अपने बच्चों को चार चार आने में बेच दिया। आखिर 'मरता.........।' **मान न मान मैं तेरा महमान**=ज़बरदस्ती गले पड़ना। **मानो तो देव नहीं तो पत्थर**=विश्वास ही मुख्य है। **मुल्ला की दौड़ मसजिद तक**=अधिक से अधिक पहुँच या उद्योग का सीमित होना। ऐसों की क्या परवाह? अधिक से अधिक सेठ जी से शिकायत करेगा; 'मुल्ला.........।" **मेंढ़की को भी जुकाम हुआ है**=छोटे से आदमी का अपनी शक्ति के बाहर शान दिखाना। **मुर्गी को तकुवे का ही घाव बहुत**=निर्बल को थोड़ी हानि भी बहुत होती है। **मीठा लपलप कड़वा थू थू**=सुख में आनन्द मनाना, दुख में घबड़ाना।

यथा राजा तथा प्रजा=स्वामी के समान सेवक। **रस्सी जलगई पर ऐंठ न**

गई=दुर्दशा होने पर भी अभिमान न छोड़ना। **रस से मरे तो विष क्यों दे**=अगर साधुता से काम निकले तो कठोरता क्यों की जाय। **रोज़ कुआँ खोदना, रोज़ पानी पीना**=नित्य कमाना और खाना। **रोजा गये छुड़ाने नमाज़ गले पड़ी**=एक आपत्ति से बचने का उपाय करने में दूसरी आपत्ति का सामना करना। **लातों के देव बातों से नहीं मानते**=दुर्गुनी बिना मार के सीधा नहीं होता। **लाल गुदड़ी में भी नहीं छिपते**=गुणी का गुण बुरी परिस्थिति में भी प्रकट हो जाता है। **साँच को आँच नहीं**=सच को डर नहीं। यदि तुमने पुस्तक चुराई ही नहीं तो क्यों डरते हो? साँच को कभी आँच नहीं। **साँप मरे और लाठी न टूटे**=काम भी सिद्ध हो जाय और हानि भी न हो। **साँप निकल गया, लाठी पीटने से क्या लाभ**=अवसर निकल जाने पर प्रयत्न करने से क्या लाभ। **सावन सूखे न भादों हरे**=सदा एक ही दशा में रहना। **सिर मुँडाते ही ओले पड़े**=कार्य के प्रारम्भ में ही विघ्न आना। 'प्रकाशन' का कार्य प्रारम्भ करते ही कागज पर 'कण्ट्रोल' लग गया; 'सिर.........।' **सावन के अन्धे को हरा ही हरा सूझता है**=सुखी को चारों ओर सुख दिखाई देता है। **सीधी उँगली घी नहीं निकलता**=सिधाई से काम नहीं चलता। **सूप तो सूप चलनी भी बोले**—दोषी का दूसरों का दोष निकालना। **सौ सौ चूहे खाय बिलाई चली हज्ज को**=जन्म भर पाप करने पर अन्त में पुण्य का ढोंग करना। **सौ सुनार की एक लुहार की**=बलवान की एक चोट निर्बल की सौ चोटों के बराबर होती है। **हर्रा लगे न फिटकरी रंग चोखा आवे**=बिना खर्च के उत्तम काम होना। आप पत्र के लिए उत्तम कविताएँ तो चाहते हैं। किन्तु पुरस्कार कुछ देते नहीं। आप का सिद्धान्त है कि 'हर्रा लगे न.........।' **हवन करते हाथ जलते हैं**=भलाई के बदले बुराई मिलती है। निष्काम भाव से समाज सुधार

करते हुए भी कुछ लोग मुझ पर कटाक्ष करते हैं। सच है, "होम करते.........।" **हथेली पर सरसों नहीं जमती**=बात निकलते ही काम नहीं हो सकता। **हाथकंगन को आरसी क्या**=प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता क्या? यह अँगूठी कसौटी पर कस लीजिये। पता चल जायगा कि शुद्ध सोने की है अथवा मुलम्मे की; हाथ कंगन को आरसी क्या। **हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और**=कहना कुछ और करना कुछ, करनी और कथनी में अन्तर होना। कल तक जो पंडित जी दहेज प्रथा का प्रबल विरोध करते थे वही अपने पुत्र की लग्न में पाँच सौ रुपये माँगते हैं। सच है, "हाथी.........।" **हाथी के पाँव में सब का पाँव**=बड़ों के साथ छोटों का निर्वाह हो जाता है। "एक भेस के आसरे जाति वरन छिप जात, ज्यों हाथी के पाँव में सबको पाँव समात"। **होनहार बिरवान के होत चीकने पात**=होनहार के लक्षण पहले ही से अच्छे होते हैं, जमशेद जी बचपन ही से कुशाग्र बुद्धि थे; भविष्य में क्यों न महान होते? सच है, "होनहार.........।"

हाथ सुमरनी बगल कतरनी=दुष्ट के मन में कुछ और प्रत्यक्ष में कुछ। जोगिया वस्त्र धारी इन महाशय को पूरे बगुला भक्त समझिये। ये दूसरों को ठगने की धुन में रहते हैं। इनके हाथ सुमरनी बगल कतरनी है। **हीरे की परख जौहरी जाने**—गुणी ही गुण को पहचान सकता है।

अभ्यास

(१) निम्न अर्थों को प्रकट करने वाली लोकोक्तियाँ बताओ:—

(क) अधिक परिश्रम का थोड़ा फल मिलना। (ख) अधिक साधुता से काम नहीं चलता है। (ग) दुष्ट पुरुष बातों से नहीं मानते हैं। (घ) गुणी ही गुण को पहचान सकता है। (ङ) होनहार के लक्षण पहले ही से दिखाई देते हैं (च) यदि आपस में मेल है तो बीचवाला कुछ

नहीं बिगाड़ सकता । (छ) स्वास्थ्य ठीक होने से सभी सुख भोग सकते हैं ।

(२) नीचे लिखी लोकोक्तियों को वाक्यों में प्रयुक्त करो :—

वृद्धा वेश्या तपस्विनी, नाम बढ़ावे दाम, कंगाली में आटा गीला, चन्दन की चुटकी भली, गाड़ी भरा न काठ, एक मछली सारे तालाब को गंदा कर देती है, काटो तो खून नहीं, तुम डाल डाल मैं पात पात, दिन ईद रात शबरात, हाथी के दाँत खाने के और, दिखाने के और; जिसके हाथ लोई, उसका सब कोई; हथेली पर सरसों नहीं जमती, घर का भेदी लंका ढावे ।

संस्कृत की कुछ कहावतें

(१) **जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी** = माता और जन्मभूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ होती हैं । (२) **अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवोपशाम्यति** = तिनकों रहित स्थान में पड़ी हुई अग्नि स्वयं ठंडी हो जाती है । (३) **आहारे व्यवहारे च त्यक्त लज्जः सुखी भवेत** = आहार व्यवहार में लज्जा छोड़ने से ही सुख मिलता है । (४) **आर्जवं हि कुटिलेषु न नीतिः** = कुटिल मनुष्यों के साथ सरलता का व्यवहार नीति युक्त नहीं है । (५) **उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये** = उपदेश मूर्खों में शान्ति नहीं पैदा कर सकता, उससे वे क्रोध ही करेंगे ! (६) **कृशे कस्याऽस्ति सौहृदम् ?** = ग़रीब का कौन मित्र ? (७) **क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति** = क्षीण मनुष्य निष्करुण हो जाते हैं । (८) **गुणोर्विहीना बहुजल्पयन्ति** = जिनमें कोई गुण नहीं होता, वे ही बहुत बकवास करते हैं । (९) **नहिं सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः** = सोये हुए सिंह के मुख में आप से आप हिरन नही चले जाते । (१०) **निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते** = जहां कोई पेड़ नहीं होता, वहां एरंड भी पेड़ कहलाने लगता है (अन्धों में काना सर्दार)

(११) **नैकत्र सर्वो गुणसन्निपातः**=एक स्थान पर सब गुण नहीं मिलते। (१२) **पयः पानं भुजङ्गानां केवलं विष वर्द्धनम्**=साँप को दूध पिलाना उसके विष को बढ़ाना है। (१३) **परोपदेश वेलायां शिष्टाः सर्वे भवन्ति वै ?**=परोपदेश करते समय सभी लोग शिष्ट और सज्जन बन जाते हैं। (१४) **प्रासाद शिखर स्थोऽपि काकः किं गरुडायते ?**=महल के शिखर पर यदि कौआ बैठ जाय तो इससे क्या वह गरुड़ ही बन जायगा ? (१५) **बुद्धेः फलमनाग्रहः**=हठ न करना ही बुद्धिमानी है। (१६) **मनस्वी कायार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्**=कर्म मार्ग पर डटा हुआ मनस्वी सुख दुःख की बिल्कुल परवाह नहीं करता। (१७) **मितं च सारं च वचो हि वाग्मिता**=संक्षिप्त तथा सार रूप कथन करना ही कला है। (१८) **शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्**=यदि शरीर स्वस्थ है तो समस्त कार्य सम्पन्न होते हैं। (१९) **विद्या ददाति विनयम्**=विद्या से विनय आती है। (२०) **अति सर्वत्र वर्जयेत्**=अति सर्वत्र बुरी है, शक्ति से अधिक काम करना हानिकारक है। (२१) **धनं दानाय भुक्तये**=धन का उपभोग दान देने में है। (२२) **अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्**=अच्छे या बुरे जैसे कर्म किए हैं उनका फल भोगना ही पड़ेगा। (२३) **किं जीवितेन पुरुषस्य निरक्षरेण**=मनुष्य के निरक्षर जीवन से क्या लाभ? (२४) **कण्टके नैवकण्टकम्**=काँटे से काँटा निकाला जाता है, शत्रु को शत्रु द्वारा ही नष्ट करना चाहिये। (२५) **कालस्य कुटिला गतिः**=काल की दशा जानी नहीं जाती। (२६) **दैवोपि दुर्बल घातकः**=दैव भी दुर्बल को दुख देता है। (२७) **परोपकाराय सतां विभूतयः**=सज्जनों का धन परोपकार के लिए होता है। (२८) **वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि**=(सज्जन पुरुष) वज्र से भी कठोर और फूलों से भी कोमल होते हैं। (२९) **मुण्डे मुण्डे रुचिर्हि भिन्ना**

अथवा भिन्न रुचिर्हि लोके=भिन्न भिन्न मनुष्यों की प्रवृत्ति भिन्न-भिन्न होती है (३०) **महाजनो येनगतः सपंथा**=महापुरुषों के चरित्र का अनुकरण करना चाहिये। (३१) **मौनं सम्मति लक्षणम्**=चुप रहना सम्मति का लक्षण है। **मौनं सर्वार्थं साधनं**=चुप रहने से सब कार्य हो जाते हैं। (३२) **यत्ने कृते न सिद्धयति कोऽत्रदोषः**=यत्न करने पर भी यदि सफलता न मिले तो किसका दोष है। (३१) **यादृशी शीतला देवी तादृशो वाहन खरः**=इक अंधा इक कोढ़ी, राम मिलाई जोड़ी। (३४) **वृद्धा वेश्या तपस्विनी**=वृद्ध वेश्या तपस्विनी होती है, सौ सौ चूहे खाय के बिलाई बैठीं तप को। (३५) **विनाश काले विपरीत बुद्धिः**=नाश के समय बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है। (३६) **शत्रोरपि गुणा वाच्याः दोषा वाच्या गुरोरपि**=गुण शत्रु के भी और दोष गुरु के भी कह देने चाहिये। (३७) **शठे शाठ्यं समाचरेत**=शठ के साथ शठता का ही व्यवहार करना चाहिये। (३८) **शुभस्य शीघ्रम्**=शुभ कार्य में शीघ्रता करनी चाहिये। (३९) **सन्तोषं परमं सुखं**=सन्तोष सबसे बड़ा सुख है। (४०) **सत्यमेव जयते नानृतम्**=सत्य की सदा जय होती है, झूंठ की नहीं। (४१) **सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति**=धन में सब गुण विद्यमान हैं। (४२) **हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः**=ऐसी बात जो हित की होने पर प्रिय भी हो दुर्लभ है। (४३) **उद्योगिनं पुरुष सिंहमुपैति लक्ष्मी**=पुरुष सिंह जो उद्यमी, लक्ष्मी ताकी चेरि (४४) **उदर निमित्तं बहु कृत वेषा**=पेट भरने के लिए अनेक प्रकार के रूप बनाने पड़ते हैं। (४५) **आत्मवत् सर्व भूतानि**=सर्व प्राणियों को अपने समान समझना चाहिये।

फ़ारसी की कुछ कहावतें

(१) **दुश्मने दाना बिह अज़ दोस्ते दानां**=मूर्ख मित्र से बुद्धिमान् शत्रु अच्छा है। (२) **अगर खार कारी समन न दर वद**=काँटा बोने पर चंमेली का फूल नहीं तोड़ सकता। (३) **नीम हकीम ख़तरये जान**=अल्प ज्ञान दुखदायी होता है। (४) **बुज़ुर्गी ब फेल अस्त न ब साल**=बड़प्पन कामों से है उम्र से नहीं। (५) **बुज़ुर्गी ब अक्लस्तन बसाल**=बड़प्पन बुद्धिमानी से प्रकट होता है अधिक अवस्था से नहीं। (६) **जुबाने शीरीं मुल्क गीरी**= मीठी बातों से सब खुश रहते हैं, (७) **चाह कन रा चाह दर पेश**=औरन को खोदे कुआँ, ताको कूप तैयार (८) **हिम्मते मर्दां मददे ख़ुदा**=परमात्मा उन की मद्दद करता है जो अपनी मद्दद आप करते हैं। (९) **दुनिया ब उम्मेद क़ायम**=आशा पर संसार क़ायम है। (१०) **गुजश्त आँचे गुजश्त**=बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि लेहु। (११) **हर जा कि गुल अस्त खार अस्त**=बिना काँटे के गुलाब का फूल नहीं मिलता। (१२) **ज़ुबाने ख़ल्क नक्क़ारये ख़ुदा**=प्रजा की आवाज़ परमात्मा की आवाज़ है। (१३) **जो यन्दह या बिन्दह**=जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ। (१४) **देर आयद दुरुस्त आयद**=सुबह का भूला शाम को घर आजाय तो भूला नहीं कहाता। (१५) **बदकारे रा बद अंजाम**=बुरे काम का बुरा फल मिलता है। (१६) **जमाअते करामात**=संगठन में अपूर्व बल है। (१७) **हम चु मन दीगरे नेस्त**=मुझ जैसा कोई नहीं। (१८) **तवंगरी ब दिलस्त न बमाल**=मालदारी दिल से होती है न कि माल से। (१९) **तुख्म तासीर सोहबत असर**=मनुष्य पर संगति का बड़ा प्रभाव पड़ता है। (२०) **अल खामोशी नीम रज़ा**=चुप रहना स्वीकृति का लक्षण है।

अनूठी उक्तियां

(१) अब पछताये होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत। (२) आधी छोड़ सारी को धावे, आधी रहे न सारी पावे (लालच का फल बुरा होता है)। (३) उत्तम विद्या लीजिये यद्पि नीच पै होय। (४) आप न जाये सासुरे औरन को सिखदेय (स्वयं सुमार्ग पर न चलकर दूसरों को शिक्षा देना)। (५) एक करेला आप ही तीता, दूजे चढ़ा नीम की भीता (बुरे को बुरा साधन मिलना)। (६) ऊधो मन नाहीं दस बीस, एक हुतो सो गयो श्याम संग को अवराधै ईस। (७) आया है सो जायगा राजा रंक फकीर। (८) आपन पेट हाहू मैं ना दैहों काहू। (९) उत्तम खेती मध्यम बान, निषध चाकरी भीख निदान। (१०) उपजहिं एक संग जल माहीं; जलज जोंक जिमि गुण बिलगाहीं (११) ऊँच निवास नीच करतूती, देख न सकहिं पराइ विभूती।

(१२) करम हीन खेती करे, बैल मरे या सूखा पड़े (भाग्यहीन का कोई कार्य सिद्ध नहीं होता)। (१३) करम प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस करहि सो तस फल चाखा (जैसी करनी वैसी भरनी) (१४) कै हंसा मोती चुगे कै लंघन मरि जाय (प्रतिष्ठा के साथ जीना)। (१५) कोउ नृप होइ हमैं का हानी, चेरि छोड़ि नहिं होइब रानी। (१६) काम जो आवे कामरी का लै करे कमांच। (१७) काँटो बुरो करील को अरु बदरी की घाम। सौत बुरी है चून की अरु साझे का काम। (१८) कहा धन धामैं धरि लेहुगे सरा में भये जीरन तऊ रामै न भजत हो। (१९) खर को गंग न्हवाइये तऊ न छोड़े छार (दुष्ट अपनी प्रकृति नहीं बदलते)। (२०) खाल ओढ़ाये सिंह की स्यार सिंह नहिं होइ (भेष बदलने से

दुर्गुण नहीं छिपते)। (२१) गाडर (भेड़) पाली ऊन को लागी चरन कपास (लाभ की आशा में हानि होना)। (२२) घर का जोगी जोगना आन गाँव का सिद्ध।”

(२३) चन्दन की चुटकी भली गाड़ी भरा न काठ (अच्छी वस्तु थोड़ी ही बहुत है)। (२४) चरै हरित तृन बलि पशु जैसे। (२५) चार दिना की चाँदनी फिरि अँधियारी रात (सुख क्षण भंगुर होता है)। जहाँ न पहुँचे रवि तहाँ पहुँचे कवि (कवि की कल्पना बड़ी तेज होती है)। (२६) जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना, जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना। (२७) जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरति देखी तिन तैसी। (२८) जाको राखे साइयाँ मार सकै नहिं कोय। (२९) जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ (उद्योग से अवश्य सफलता मिलती है)। (३०) जाके पैर न फटी विवाई सो क्या जाने पीर पराई। (३१) जो तोकों काँटा बुवै ताहि बोइ तू फूल। तोकों फूल के फूल हैं, वाको है तिरसूल। (३२) जग में देखत ही का नाता (३३) ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।

(३४) तेते पाँव पसारिये जेती लांबी सौर। (३५) तुलसी सन्त सुअम्ब तरु फूलि फलें पर हेत। (३६) तिरिया तेल हमीर हठ चढ़े न दूजी बार। (३७) दादा बड़ो न भैया सबसे बड़ो रुपैया। (३८) दिन देख नहीं सकते सविशेष, किसी जन का सुख भोग कभी। (३९) दुबिधा में दोऊ गये माया मिली न राम। (४०) धीरज, धर्म, मित्र अरु नारी, आपति काल परखिये चारी। (४१) धनवंती के कांटा लगा, दौड़े लोग हजार। निर्धन गिरा पहाड़ से कोई न आया कार।

(४२) पर उपदेश कुशल बहुतेरे। (४३) पिये रुधिर पय ना पिये, लगी पयोधर जोंक। (४४) पर स्वारथ के कारने सज्जन धरत शरीर। (४५) बाँझ कि जान प्रसूत की पीड़ा। (४६) बिन माँगे मोती मिले, माँगे मिले न भीख। (४७) बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधिलेय। (४८) मदिरा मानत है जगत दूध कलारी हाथ (मनुष्य संगति से जाना जाता है)। (४९) मन मोती अरु दूध, इन को यही सुभाव। फाटे से जुड़ते नहीं कोटिन करो उपाय। (५०) मेरे मन कछु और है विधिना के कछु और। (५१) भई गति साँप छुंछूदर केरी (द्विविधा में पड़ना)। (५२) भा विधिना प्रतिकूल जबै तब ऊँट चढ़े पर कूकर काटे। (५३) भौंर न छाँड़े केतकी तीखे कंटक जान (प्रेम बाधाएँ नहीं जानता)। (५४) मूरख हृदय न चेत जो गुरु मिले विरंचि सम। (५५) मन मोदकनि कि भूख बुझाई।

(५६ रघुकुल रीति सदा चलि आई प्राण जाँय पर वचन न जाई। (५७) रहिमन मोहि न सुहाय, अमिय पियावै मान बिन। (५८) लिखत सुधाकर गा लिखि राहू। विधिगत बाम सदा सब काहू। (५९) विधि कर लिखा को मेटन हारा (होनहार प्रबल है)।

(६०) साईं घोड़न के अछत गदहन पायो राज (योग्य व्यक्ति की अनुपस्थित में अयोग्य को अधिकार मिलना)। (६१) सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग। (६२) समय पाय तरुवर फले केतिक सींचो नीर। (६३) सत मत छोड़े सूरमा सत छोड़े पत जाय। (६४) सदा दिवाली सन्त घर जो गुड़ गेहूँ होय। (६५) स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती। (६६) समरथ को नहिं दोष गुसाईं, रवि पावक सुरसरि की नाईं। (६७) सीधी अंगुली घी जम्यो कैसेहु निकसत नाहिं।

(६८) हिय विचारि देखो मन माहीं, पराधीन सपनेहु सुख नाहीं। (६९) हुइ है वही जु राम रचि राखा, को करि तर्क बढ़ावहि साखा।

काव्य-कला

काव्य का स्वरूप

आचार्यों ने 'काव्य' की व्याख्या अनेक प्रकार की है। आचार्य विश्वनाथ के मतानुसार "रसात्मक अर्थात् हृदय में अद्भुत आनन्द उत्पन्न करने वाले वाक्य को काव्य कहते हैं"।[1]

आचार्य जगन्नाथ का कथन है कि 'रमणीय अर्थके प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य कहना चाहिए'।[2] आचार्य भामः ने शब्द और अर्थ के सम्मिश्रण को ही काव्य कहा है।[3] इन सब के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 'काव्य अलौकिक आनन्द देने वाली, रसात्मक, रमणीय और भावपूर्ण रचना है।' सांसारिक सुख से विभिन्न लोकोत्तर आनन्द देने के कारण काव्य को 'ब्रह्मानन्द सहोदर' भी कहा गया है।

काव्य के अंग

काव्य में तीन अंगों की प्रधानता रहती है—रस, भाव और भाषा। 'भाषा' के बिना काव्य का निर्माण ही नहीं हो सकता; इसलिए भाषा काव्य का शरीर है। 'रस' काव्य के प्राण हैं।

१—वाक्यं रसात्मक काव्यं। २—रमणीयार्थ प्रति पादकः शब्दः काव्यं। ३—शब्दार्थौ सहितौ काव्यं।

काव्य को सुसज्जित करने वाले विधान अलंकार हैं। काव्य में संगीत की योजना से पद्य-काव्य की उत्पत्ति होती है। पद्य में शब्दों के एक विशेष क्रम और लय का ध्यान रखना पड़ता है। इससे छन्दों का निर्माण होता है। छन्द-व्यवस्था से काव्य में मधुरता, सुन्दरता और सजीवता आती है। माधुर्य, ओज आदि काव्य के गुण हैं। उत्कृष्टता को नष्ट करने वाली वस्तुएँ काव्य के दोष हैं। आगे काव्य के विविध अंगों का विवेचन किया गया है।

काव्य के भेद

काव्य के मुख्य दो भेद किये जाते हैं— (१) **दृश्य काव्य** और (२) **श्रव्य काव्य**। जिस काव्य का वास्तविक चमत्कार अभिनय द्वारा लक्षित हो, उसे दृश्य काव्य कहते हैं। दृश्य काव्य को संस्कृत में 'रूपक' और हिन्दी में 'नाटक' कहते हैं। सत्य हरिश्चन्द्र, महाराणा प्रताप आदि नाट्य ग्रन्थ 'दृश्य काव्य' हैं। जिस काव्य का आनन्द केवल पढ़कर या सुनकर ही लिया जा सके, उसे 'श्रव्यकाव्य' कहते हैं; जैसे, रामायण, प्रेम-पच्चीसी आदि।

रचना की दृष्टि से काव्य के दो भेद होते हैं :—(१) **पद्य काव्य** और (२) **गद्य काव्य**। पद्य-काव्य में छन्द व्यवस्था रहती है, किन्तु गद्य-काव्य में नहीं। रस, अलंकार और भाव आदि गुणों का सन्निवेश गद्य और पद्य दोनों में होता है। जो रचना गद्य और पद्य दोनों के मेल से बनती है उसे **'मिश्र काव्य'** या 'चम्पू' कहते हैं। राम चरित मानस, साकेत, जयद्रथ-बध,

हल्दी घाटी आदि पद्य-काव्य हैं। उपन्यास, कहानी, कथा, निबन्ध आदि गद्य काव्य के अन्तर्गत आते हैं। रंगभूमि, प्रेम-पच्चीसी, त्रिवेणी आदि गद्य-काव्य हैं। हिन्दी में श्री मैथिली-शरण रचित 'यशोधरा' और 'प्रसाद' कृत 'उर्वशी' मिश्र काव्य हैं।

प्रबन्ध के आधार पर श्रव्यकाव्य के दो भेद होते हैं:— (१) प्रबन्ध-काव्य और (२) मुक्तक-काव्य। 'प्रबन्ध' में किसी कथा के आधार पर रचना की जाती है; अतः इसमें पूर्वापर क्रम और सम्बन्ध रहताहै। 'मुक्तक' में प्रत्येक पद्य या गद्य-खण्ड स्वतन्त्र होता है; वह एक ही भाव को प्रकट करता है; जैसे-रहीम के दोहे।

पद्य की दृष्टि से प्रबन्ध काव्य के दो भेद होते हैं:— (१) महाकाव्य और (२) खण्ड काव्य। खण्ड काव्य में जीवन की किसी एक घटना का वर्णन होता है; जैसे, बक-संहार, बन-वैभव, पंचवटी। महाकाव्य में जीवन के विस्तृत काल की घटनाओं का वर्णन रहता है। राम चरित मानस, जौहर, प्रिय प्रवास, साकेत आदि महाकाव्य हैं।

आचार्यों ने महाकाव्य के अनेक लक्षण बतलाये हैं। कुछ मुख्य लक्षण ये हैं—महाकाव्य की कथा इतिहास-प्रसिद्ध हो अथवा लोक-प्रसिद्ध। उसका नायक उदार गुणों से युक्त देवता अथवा कुलीन क्षत्रिय हो। उसमें शृंगार, वीर और शान्त में से कोई एक रस प्रधान और अन्य रस उसके सहायक हों। इसका उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से किसी एक फल की प्राप्ति हो। इसके प्रारम्भ में मंगलाचरण हो। इसमें आठ से अधिक सर्ग

हों और प्रत्येक सर्ग में एक ही छन्द प्रयुक्त किया गया हो; पर सर्गान्त में विभिन्न छन्द हों जिनमें आगे की कथा की सूचना देनी चाहिए।

(नीचे दिए हुये चक्र से उपर्युक्त विभाजन स्पष्ट हो जायगा)

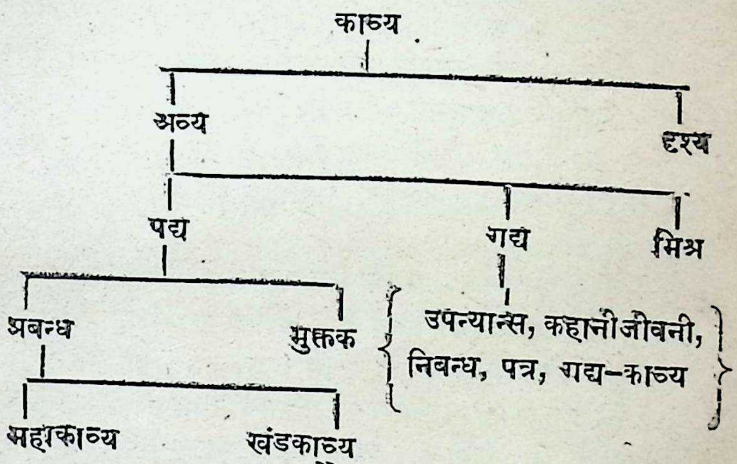
काव्य
श्रव्य
दृश्य
पद्य
गद्य
मिश्र
प्रबन्ध
मुक्तक
उपन्यास, कहानी जीवनी, निबन्ध, पत्र, गद्य-काव्य
महाकाव्य
खंडकाव्य

काव्य और साहित्य

प्राचीन साहित्यकार 'काव्य' के अन्तर्गत कविता, नाटक, आख्यायिका और 'साहित्य' में केवल लक्षण-ग्रन्थों (रस, भाव, अलंकार, गुण, दोष आदि का विवेचन करने वाले ग्रन्थों) की गणना करते थे। आजकल 'साहित्य' शब्द व्यापक अर्थों में लिया जाता है। वह अंगरेजी भाषा के 'लिटरेचर' (Literature) का समानार्थक समझा जाता है। काव्य के अतिरिक्त गणित, ज्योतिष, वैद्यक, इतिहास, दर्शन, विज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति आदि सभी विषयों के ग्रन्थों का इसमें समावेश हो जाता है। इस प्रकार 'काव्य' 'साहित्य' का एक अंग विशेष है

और कविता, गद्य, नाटक, निबन्ध, उपन्यास, कहानी आदि इस के अन्तर्भूत विषय हैं।

रस

"सुनि कवित्त को चित्त मधि, सुधि न रहे कछु और।
होय मगन वहि मोद में, सो 'रस' कहि सिर मौर ॥"

काव्य के पढ़ने, सुनने अथवा अभिनय देखने से जिस अलौकिक आनन्द का अनुभव होता है, उसे 'रस' कहते हैं। 'रस' ही काव्य के प्राण हैं। आचार्यों का मत है कि 'रस' ही काव्य की आत्मा है। अतएव रसहीन काव्य 'काव्य' नहीं कहा जा सकता।

'काव्य-रस' भोज्य अथवा पेय पदार्थों से मिलने वाले रस अथवा आनन्द से भिन्न होता है। काव्य रस वह अलौकिक आनन्द है जो हमारे हृदय के सुषुप्त भावों को जाग्रत करता है; जैसे, उत्तरा का विलाप पढ़ कर हम शोक-निमग्न हो जाते हैं; शिवाजी के वीर कार्यों का वर्णन पढ़ कर भुजाएँ फड़कने लगती हैं और नारद-मोह का वर्णन हृदय में गुदगुदी उत्पन्न करता है।

नव रस

साहित्य की दृष्टि से नौ रस माने गये हैं:—

श्रृङ्गार हास्य करुण वीर रौद्र भयानकाः
वीभत्सो ऽद्भुत शान्ताश्च काव्ये नव रसाः स्मृताः ॥

(१) **श्रृङ्गार रस**—इस रस का विषय (स्थायीभाव) रति है। पुरुष के प्रति स्त्री के हृदय में या स्त्री के प्रति पुरुष के हृदय में जो उचित प्रेम होता है; उसी का वर्णन श्रृङ्गार में होता है; जैसे, गोपियों और कृष्ण अथवा राम और सीता का प्रेम-वर्णन।

श्रृङ्गार रस दो प्रकार का होता है:—

(१) सम्भोग या संयोग शृङ्गार—जब नायक (पुरुष) और नायिका (स्त्री) के मिलन का का वर्णन हो; जैसे—

(अ) "देखन मिस मृग बिहंग तरु फिरति बहोरि बहोरि।
निरखि निरखि रघुबीर छवि बाढ़ी प्रीति न थोरि॥"

(आ) राघव बोले देख जानकी के आनन को—
'स्वर्गङ्गा का कमल मिला जैसे कानन को?'
'नील मधुप को देख वहीं उस कंज कली ने
स्वयं आगमन किया'– कहा यह जनक-लली ने।

(२) विप्रलम्भ या वियोग शृङ्गार—जब प्रेमी और प्रेमिका की वियोगावस्था के कारण दोनों की विरह-व्याकुलता का वर्णन हो; जैसे—

"बिन गोपाल बैरिन भईं कुंजैं।
तब ये लता लगति अति शीतल, अब भईं विषम ज्वाल की पुंजैं॥
वृथा बहति यमुना खग बोलत, वृथा कमल फूलैं, अलि गुंजैं।
पवन पानि घनसार संजीवनि दधिसुत किरन भानु भईं गुंजैं।
'सूरदास' प्रभु को मग जोवत, अखियाँ भईं बरन ज्यों गुंजैं॥

(२) हास्य रस—इसका विषय हास्य (हंसी) है। विकृत आकार, वाणी, वेश और चेष्टा देखकर हास्य की उत्पत्ति होती है। जैसे—

"टूट चाप नहिं जुरिहि रिसाने। बैठिय होइहि पाँय पिराने।
जो पै कृपा जरिहि मुनि गाता। क्रोध भए तनुराख विधाता॥"

(३) करुण रस—इसका विषय शोक होता है। किसी प्रिय व्यक्ति की मृत्यु से अथवा प्रिय वस्तु के नष्ट हो जाने पर या किसी अनिष्ट से उत्पन्न शोक का वर्णन होता है; जैसे—

"फिर पीटकर सिर और छाती अश्रु बरसाती हुई।
कुररी सदृश सकरुण गिरा से दैन्य दरसाती हुई।।
बहु विधि विलाप-प्रलाप तब करने लगी वह शोक में।
निज प्रिय-वियोग-समान दुख होता न कोई लोक में।।"

(४) **वीर रस**—इसका विषय उत्साह होता है। उत्साह युद्ध देखकर, चारणों के जोश भरे गीत या मारू बाजा सुनकर अथवा शत्रु को सामने देखकर उत्पन्न होता है। दीन-हीन प्राणी के कष्ट निवारण में, याचकों को दान देने में और प्राण देकर धर्मरक्षा करने में भी उत्साह होता है। कुछ आचार्यों ने वीर रस के चार भेद माने हैं :—

(१) युद्ध वीर (२) दान वीर (३) धर्म वीर और (४) दया वीर।

(१) युद्धवीर

जौ राउर अनुसासन पाऊँ। कंदुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ।
काँचे घट जिमि डारौं फोरी। सकौं मेरु मूलक इव तोरी।।

(२) दानवीर

जो सम्पति शिव रावनहिं, दीन्ह दिये दस माथ।
सो सम्पदा विभीषणहिं, सकुचि दीन्ह रघुनाथ।

(३) दयावीर

पापी अजामिल पार कियो जेहि नाम लियो सुत ही को नरायन।
त्यों पदमाकर लात लगे पर विप्रहु के पग चौगुने चायन।।
को अस दीनदयाल भयो दशरथ के लाल के सूधे सुभायन।
दौरे गयंद उबारिबे को प्रभु वाहन छोड़ि उपाहने पाँयन।।

(४) धर्मवीर

स्मृति पुराण वेद आगम कह्यो जो पन्थ,
आचरत सोई सुद्ध करम करैया है।
मोद मति मन्दिर पुरन्दर महीको धन्य,
धरम धुरन्धर हमारो रघु रैया है।

(५) रौद्र रस—इसका विषय क्रोध है। मान भंग, गुरुजनों की निन्दा अथवा शत्रु की चेष्टा आदि से रौद्र रस उत्पन्न होता है। 'रौद्र' और 'वीर' में यह अन्तर है कि प्रथम क्रोध से और द्वितीय उत्साह से उत्पन्न होता है।

(क) अति रिसि बोले वचन कठोरा।
कहु जड़ जनक धनुष केहि तोरा।
बेगि दिखाउ मूढ़ नतु आजू।
उलटौं महि जहँ लगि तव राजू॥

(ख) माखे लषन कुटिल भईं भौंहें।
रद-पट फरकत नयन रिसौहैं॥

(६) भयानक रस—इसका विषय भय है। भयंकर जीवों, प्राकृतिक दृश्यों अथवा शत्रुओं को देखकर भय उत्पन्न होता है।

चकित चकत्ता चौंकि-चौंकि उठै बार-बार,
दिल्ली दहसति चितै चाह करखति है।
बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर पति,
फिरति फिरंगिन की नारी फरकति है।
थर-थर काँपत कुतुब-साह गोल कुण्डा,
हहरि हबस-भूप भीर भरकति है।
राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि,
केते पादसाहन की छाती दरकति है।

(७) **वीभत्स रस**—इसका विषय घृणा या ग्लानि है। घृणित वस्तुओं; जैसे, रक्त, मांस, मज्जा अथवा श्मशान का दृश्य देख कर ग्लानि उत्पन्न होती है।

जहं तहं मज्जा मांस रुधिर लखि परत बगारे।
जित तित छिटके हाड़ स्वेत कहुँ कहुँ रतनारे॥

(८) **अद्भुत रस**—इसका विषय आश्चर्य या विस्मय होता है। आश्चर्य जनक वस्तुओं को देखकर विस्मय के भाव उत्पन्न होते हैं।

दिखरावा मातहि निज, अद्भुत रूप अखण्ड।
रोम रोम प्रति राजहिं, कोटि-कोटि ब्रह्मण्ड॥

(९) **शान्त रस**—इसका विषय निर्वेद या शम होता है। सांसारिक असारता और यन्त्रणा देखकर वैराग्य उत्पन्न होता है। भक्ति पूर्ण कविताएँ भी शान्त रस के अन्तर्गत आती हैं।

राजा राणा छत्रपति हाथिन के सरदार।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार॥

नव रसों के अतिरिक्त कुछ विद्वान् **'वात्सल्य'** को दसवाँ रस मानते हैं। इसका विषय बालकों की सरल क्रीड़ाएँ और चपल चेष्टाएँ हैं। इनसे माता पिता के मन में 'स्नेह' नामक स्थायी भाव जाग्रत होता है :—

मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी।
किती बार मोहिं दूध पियत भई यह अजहूँ है छोटी।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों ह्वै है लाँबी मोटी।
काचो दूध पियावत पचि पचि, देत न माखन रोटी॥

अनुकूल और प्रतिकूल रस

रसों की परस्पर अनुकूलता और प्रतिकूलता भी होती है। श्रृङ्गार और हास्य, वीर और रौद्र, श्रृंगार और अद्भुत की अनुकूलता होती है। विरोधी रसों का वर्णन साथ-साथ नहीं किया जा सकता। प्रतिकूल रसों के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं:—

१—श्रृङ्गार का करुण, वीभत्स, रौद्र, वीर और भयानक से विरोध है।

२—हास्य का भयानक और करुण से विरोध है।

३—करुण का हास्य और श्रृंगार से विरोध है।

४—वीर का भयानक और शान्त से विरोध है।

५—भयानक का श्रृंगार, वीर, रौद्र, हास्य और शान्त से विरोध है।

६—वीभत्स का शान्त और श्रृङ्गार से विरोध है।

७—शान्त का वीर, श्रृङ्गार, रौद्र, हास्य और भयानक से विरोध है।

८—रौद्र का हास्य, श्रृङ्गार और भयानक से विरोध है।

रस-उत्पत्ति के साधन

रस की उत्पत्ति 'अनुभव' से सम्बन्धित है। यह अनुभव दो प्रकार का होता है:—प्रत्यक्ष और काव्य द्वारा उत्पन्न। क्रोध, करुणा, घृणा आदि भावों का प्रत्यक्ष अनुभव हम व्यक्तिगत जीवन में करते हैं। वास्तव में मनुष्य के हृदय में अनेक भाव सुषुप्त से रहते हैं और समय समय पर उनकाउद्भव होता है; जैसे, बालकों की क्रीड़ा देखकर हम विभोर हो जाते हैं, प्राकृतिक दृश्यों से हमको शान्ति मिलती है; भयङ्कर वस्तुओं से हृदय में

भय का संचार होता है; किसी का उद्धत व्यवहार देखकर हम क्रुद्ध होते हैं। इस प्रकार कुछ भाव; जैसे, प्रेम, शम, स्नेह, क्रोध आदि स्थायी किन्तु सुषुप्त अवस्था में हमारे हृदय में वर्तमान रहते हैं। काव्य के आस्वादन से ये रस जाग्रत हो जाते हैं। काव्य में मनोविचारों या भावों का वर्णन होता है। इनका अनुभव पाठक, श्रोता या दर्शक अपने हृदय में करता है। अतएव रस के आधार भाव हैं। ये भाव दो प्रकार के होते हैं :—

(१) **स्थायी भाव**—वह भाव है जो मन में स्थिर रूप से रहता है और जिसे अन्य विरोधी या अविरोधी भाव न दबा सकें। प्रत्येक रस का एक स्थायी भाव माना गया है :—

रस	स्थायी भाव	रस	स्थायी भाव
शृङ्गार	रति (प्रेम)	भयानक	भय
हास्य	हास (हँसी)	वीर	उत्साह
करुण	शोक	शान्त	शम (निर्वेद)
वीभत्स	जुगुप्सा (घृणा)	अद्भुत	विस्मय
रौद्र	क्रोध	वात्सल्य	स्नेह।

(२) **संचारी भाव**—स्थायी भाव के साथ मन में अन्य मनोविकार उत्पन्न होते हैं। ये स्थायी भावों के सहायक होते हैं। और रस के अनुभव में सहायता देते हैं। स्थायी भावों की भाँति ये स्थिर नहीं होते। ये जलतरंगों की भाँति उठते और नष्ट हो जाते हैं। रस उत्पन्न होने पर हर्ष, मोह, मूर्छा, गर्व, चपलता आदि भाव स्वयं प्रकट होते हैं। इनकी संख्या ३३ मानी गई है। आचार्यों के मतानुसार दया, उदासीनता, छल आदि अन्य संचारी भाव भी हो सकते हैं। ३३ संचारी भाव इस प्रकार हैं:—

निर्वेद शंका मद मोह ग्लानि, उन्माद आवेग विषाद हर्ष।
व्रीड़ा असूया अवहित्थ धैर्य, चिन्ता अपस्मार वितर्क गर्व ॥
औत्सुक्य जाड्य स्मृति दैन्य त्रास, विबोध निन्द्रा मति व्याधि स्वप्न।
आलस्य मरण श्रम उग्रता ये, संचारि चापल्य अमर्ष जानो ॥

(१) **निर्वेद**—सोच, आँसू; गहरी साँस आदि चेष्टाएँ। (२) **शंका**—अनिष्ट की आशंका। (३) **मद**—धन, रूप, यौवन आदि का नशा। (४) **मोह**—भय वियोग आदि से चित्त की ऐसी दशा कि किसी बात का ज्ञान न रहे। (५) **ग्लानि**—चिन्ता और शारीरिक कष्ट द्वारा उत्पन्न शिथिलता। (६) **उन्माद**—चित्त का भ्रम, पागलपन। (७) **आवेग**—अनर्थ से चित्त की घबड़ाहट। (८) **विषाद**—हतोत्साह की दशा। (९) **हर्ष**—इष्ट प्राप्ति से उत्पन्न सुख। (१०) **व्रीड़ा**—लज्जा, संकोच। (११) **असूया**—निन्दा करना। (१२) **अवहित्थ**—लज्जा के कारण हर्षादि भावों को छिपाना। (१३) **धृति**—धैर्य। (१४) **चिन्ता**—व्याकुलता जन्य ध्यान। (१५) **अपस्मार**—मानसिक संताप के कारण मूर्छा, या मृगी रोग की सी दशा होना। (१६) **वितर्क**—संशय जनित विचार। (१७) **गर्व**—रूप, धन आदि का अभिमान। (१८) **औत्सुक्य**—इष्ट प्राप्ति या दर्शन की उत्कट इच्छा। (१९) **जाड्य** (जड़ता)—चेष्टा रहित होना, किंकर्तव्य-विमूढ़ता। (२०) **स्मृति**—पूर्व अनुभव का स्मरण। (२१) **दैन्य**—दुःख विरह आदि से दीनता। (२२) **त्रास**—भय। (२३) **विबोध**—मानसिक या शारीरिक चेतनता। (२४) **निद्रा**। (२५) **मति**—उत्तम विचार। (२६) **व्याधि**—रोग वियोगादि के कारण शारीरिक विकार। (२७) **स्वप्न**—अर्द्ध निद्रित अवस्था में किसी वस्तु का ज्ञान। (२८) **आलस्य**—श्रम, गर्भ, व्याधि के कारण अंगड़ाई लेना, जंभाई लेना, कार्य न करना। (२९) **मरण**—मृत्यु से पूर्व की अवस्था।

(३०) **श्रम**—कार्याधिक्य से उत्पन्न थकावट। (३१) **उग्रता**—शूरता या अपमान के कारण निर्दयता (३२) **चापल्य**—चित्त की चंचलता। (३३) **अमर्ष**—क्रोध, निन्दा, अपमान के कारण गर्जन-तर्जन।

इन दो प्रकार के भावों के अतिरिक्त रसोत्पत्ति के लिये **'विभाव'** और **'अनुभाव'** की आवश्यकता होती है;—

विभाव—स्थायी भाव की उत्पत्ति के कारण को कहते हैं। 'विभाव' दो प्रकार के होते हैं:—

(अ) **आलम्बन**—वह वस्तु या व्यक्ति जिसके निमित्त से (आश्रय में) स्थायी भाव उत्पन्न हो। प्रत्येक रसके आलम्बन भिन्न भिन्न होते हैं; जैसे, प्रेम भाव नायक और नायिकाओं पर, हास्य भाव विकृत वेश या चेष्टा वाले व्यक्ति अथवा एकत्र मित्र मण्डली पर, क्रोध शत्रु के क्रुद्ध वचन अथवा संताप देने वाले कार्यों पर, शम भाव सत्संग पर निर्भर है। अतएव नायक-नायिका, विकृत वेश धारी पात्र, शत्रु के क्रुद्ध वचन, सत्संग, शत्रु का वैभव आदि क्रमशः श्रृंगार, हास्य, रौद्र, शान्त और वीर रसों के आलम्बन हैं।

(आ) **उद्दीपन**—आलम्बन द्वारा उत्पन्न हुए स्थायी भाव को उत्तेजित करने वाले हेतुओं को 'उद्दीपन' कहते हैं। प्रत्येक रस के 'उद्दीपन भी अलग अलग होते हैं; जैसे, वीर रस में मारू बाजा और चारणों का प्रोत्साहन; श्रृङ्गार रस में सुन्दर प्राकृतिक दृश्य, वसन्त, संगीत आदि। इसी प्रकार महापुरुषों के दर्शनों से भक्ति-भाव और किसी तपोवन या मृतक पुरुष के शव को देखकर धार्मिक और दार्शनिक विचारों का उद्दीपन होता है। रुधिर, माँस, मज्जा

के देखने से मन में जुगुप्सा जाग्रत होती है। चमत्कार पूर्ण वस्तु या कार्य अद्भुत रस को उद्दीप्त करते हैं

अनुभाव—मनोविकारों को प्रकट करने वाली शारीरिक चेष्टाओं को अनुभाव कहते हैं; जैसे क्रोध में आँखें लाल होना, होठ चबाना, अंगों का फड़कना; भय में पसीना आना, मुख पीला पड़ना; विस्मय में एक टक देखना, रोमांच होना आदि। अट्टहास हास्य रस का प्रदर्शक चिह्न है। शोक सन्तप्त होने पर मनुष्य रोने लगता है या मूर्छित हो जाता है। अतएव रोना, चिल्लाना या मूर्छा करुण रस के अनुभाव हैं।

इस प्रकार विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से परिपुष्ट होकर स्थायी भाव पूर्ण अवस्था को प्राप्त होता है और 'रस' कहलाता है।

आगे दी हुईसारिणी में रस-निष्पत्ति का विवेचन किया गया है।

(३०) **श्रम**—कार्याधिक्य से उत्पन्न थकावट। (३१) **उग्रता**—शूरता या अपमान के कारण निर्दयता (३२) **चापल्य**—चित्त की चंचलता। (३३) **अमर्ष**—क्रोध, निन्दा, अपमान के कारण गर्जन-तर्जन।

इन दो प्रकार के भावों के अतिरिक्त रसोत्पत्ति के लिये 'विभाव' और 'अनुभाव' की आवश्यकता होती है;—

विभाव—स्थायी भाव की उत्पत्ति के कारण को कहते हैं। 'विभाव' दो प्रकार के होते हैं:—

(अ) **आलम्बन**—वह वस्तु या व्यक्ति जिसके निमित्त से (आश्रय में) स्थायी भाव उत्पन्न हो। प्रत्येक रसके आलम्बन भिन्न भिन्न होते हैं; जैसे,प्रेम भाव नायक और नायिकाओं पर, हास्य भाव विकृत वेश या चेष्टा वाले व्यक्ति अथवा एकत्र मित्र मण्डली पर,क्रोध शत्रुके क्रुद्ध वचन अथवा संताप देने वाले कार्यों पर, शम भाव सत्संग पर निर्भर है। अतएव नायक-नायिका, विकृत वेश धारी पात्र, शत्रु के क्रुद्ध वचन, सत्संग, शत्रु का वैभव आदि क्रमशः श्रृगार, हास्य, रौद्र, शान्त और वीर रसों के आलम्बन हैं।

(आ) **उद्दीपन**—आलम्बन द्वारा उत्पन्न हुए स्थायी भाव को उत्तेजित करने वाले हेतुओं को 'उद्दीपन' कहते हैं। प्रत्येक रस के 'उद्दीपन भी अलग अलग होते हैं;जैसे, वीर रस में मारू बाजा और चारणों का प्रोत्साहन; श्रृङ्गार रस में सुन्दर प्राकृतिक दृश्य, वसंत, संगीत आदि। इसी प्रकार महापुरुषों के दर्शनों से भक्ति-भाव और किसी तपोवन या मृतक पुरुष के शव को देखकर धार्मिक और दार्शनिक विचारों का उद्दीपन होता है। रुधिर, माँस, मज्जा

के देखने से मन में जुगुप्सा जाग्रत होती है। चमत्कार पूर्ण वस्तु या कार्य अद्‌भुत रस को उद्दीप्त करते हैं

अनुभाव—मनोविकारों को प्रकट करने वाली शारीरिक चेष्टाओं को अनुभाव कहते हैं; जैसे क्रोध में आँखें लाल होना, होठ चबाना, अंगों का फड़कना; भय में पसीना आना, मुख पीला पड़ना; विस्मय में एक टक देखना, रोमांच होना आदि। अट्टहास हास्य रस का प्रदर्शक चिह्न है। शोक सन्तप्त होने पर मनुष्य रोने लगता है या मूर्छित हो जाता है। अतएव रोना, चिल्लाना या मूर्छा करुण रस के अनुभाव हैं।

इस प्रकार विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से परिपुष्ट होकर स्थायी भाव पूर्ण अवस्था को प्राप्त होता है और 'रस' कहलाता है।

आगे दी हुईसारिणी में रस-निष्पत्ति का विवेचन किया गया है।

रस	स्थायी भाव	आलम्बन	उद्दीपन	अनुभाव	संचारी भाव
१—शृंगार	रति (प्रेम)	नायक-नायिका	सुन्दर प्राकृतिक दृश्य, ऋतु, उपवन, सखी, संगीत	प्रसन्नता, मधुर आलाप विनोद, हावभाव (संयोग) रुदन, विलाप, प्रलाप निश्वास (वियोग पक्ष)	उन्मादादि
२—हास्य	हास	विदूषक, मित्र-मण्डली	विचित्र रूप, चेष्टा, कथन	मुसकराना, हँसना, अट्टहास, आँसू आजाना	हर्ष, चपलता
३—करुण	शोक	हानि मरण, दीन दशा	दाह कर्म, मृत व्यक्ति के गुणों का स्मरण	रुदन, विलाप-प्रलाप, विश्वास करना	मोह, विषाद, ग्लानि उन्माद
४—रौद्र	क्रोध	शत्रु, अपमान करने वाला व्यक्ति	शत्रु अपकारक की चेष्टाएँ अनुचित कथन।	लाल नेत्र, होठ चबाना।	गर्व, उग्रता, अमर्ष
५—वीर (क) युद्धवीर	उत्साह	शत्रु वैभव	युद्ध के बाजे, चारणोंके गीत	भुजा फड़कना, आक्रमण, लाल नेत्र	गर्व, उग्रता

रस	स्थायी भाव	आलम्बन	उद्दीपन	अनुभाव	संचारी भाव
(ख) दानवीर	उत्साह	याचक, तीर्थागमन	ज्ञानोपदेश	उदारता	हर्ष
(ग) दयावीर	,,	दीन हीन व्यक्ति	दीन दुःख वर्णन	दुख दूर करने की चेष्टा	चपलता
(घ) धर्मवीर	,,	धार्मिक उपदेश	सदुपदेशों का श्रवण	पुण्य कार्य	धृति, दया।
६—भयानक	भय	भयंकर दृश्य	भयोत्पादक कथाएँ	कंप रोमांच, घिग्घी बँधना स्वर भंग होना	त्रास, दैन्य।
७—वीभत्स	ग्लानि, घृणा	श्मशान, माँस, रुधिर	दुर्गन्ध आदि	नाक भौं सिकोड़ना, रोमांच	मोह, मूर्छा, व्याधि
८—अद्भुत	विस्मय	आश्चर्य जनक वस्तुएँ	विचित्र गुण, कर्म	एक टक देखना स्तम्भित होना	वितर्क, मोह, जड़ता।
९—शान्त	शम, वैराग्य	वैराग्य जनक वस्तुएँ	सत्संग, तीर्थयात्रा तपोवन	रोमांच, प्रेमाश्रु	धृति, मति, हर्ष
१०—वात्सल्य	स्नेह	सन्तान	बाल क्रीड़ाएँ और चेष्टाएँ,	मुख चूमना, प्रसन्न होना,	हर्ष आदि।

अलंकार

—काव्य की शोभा करने वाले धर्मों को अलंकार कहते हैं (काव्य प्रकाश)

'अलंकार' शब्द का वाच्यार्थ 'आभूषण' है। काव्य में अलंकारों से तात्पर्य उन साधनों से है जिससे भाषा तथा अर्थों की शोभा बढ़ती है। वर्णन का चमत्कारपूर्ण ढंग ही अलंकार है। जिस प्रकार आभूषण शारीरिक शोभा की वृद्धि करते हैं, उसी प्रकार अलंकार भाषा-सुन्दरी के भाव-सौन्दर्य में चमत्कार और लालित्य उत्पन्न करते हैं। स्वाभाविक सौन्दर्य के लिए न अलंकारों की अपेक्षा होती है और न 'रसहीन काव्य' में केवल अलकारों से भावोत्कर्ष हो सकता है। चमत्कार पूर्ण ढंग से कही हुई बात तभी सरस और प्रभावोत्पादक होगी जब वह भाव और रस से विभूषित हो।

शब्द और अर्थ के विचार से अलंकारों के दो भेद हैं:—

(१) **शब्दालंकार**—जब काव्य में शब्दों के द्वारा विशेष चमत्कार हो। ऐसे शब्दों के स्थान में अन्य पर्याय वाची शब्द रखने से लालित्य नहीं रहता; जैसे, 'चारु चन्द्र की चंचल किरणों'-यह पद 'च' के प्रयोग से श्रुति श्रुत हैं। 'चारु' के स्थान में 'सुन्दर' रखने से शब्द लालित्य नष्ट हो जाता है।

(२) **अर्थालंकार**—जहाँ शब्दों के अर्थ द्वारा भाव में चमत्कार हो। जैसे—'हरि मुख कमल बिलोकिय सुन्दर'—'कमल' के स्थान में इसका पर्यायवाची शब्द 'पद्म' रखने से भी अर्थ-लालित्य ज्यों का त्यों रहता है।

मू० ७५।—

शब्दालंकार

(१) **अनुप्रास**—जहाँ स्वरों की विषमता होने पर भी वर्णों का साम्य हो; अथवा एक या कई व्यंजनों की आवृत्ति हो।

अनुप्रास के पाँच भेद हैं:—

(क) **छेकानुप्रास**—जहाँ एक या अनेक वर्ण केवल दो बार आवें; जैसे—'सेवा समय दैव बन दीन्हा' में 'स', और 'द' का दो बार प्रयोग है।

(ख) **वृत्त्यनुप्रास**—जब एक या कई वर्णों की कई बार आवृत्ति हो; जैसे, 'तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये' में 'त' का कई बार प्रयोग है।

(ग) **श्रुत्यनुप्रास**—एक स्थान से उच्चारण होने वाले अनेक वर्णों की आवृत्ति हो; जैसे, 'तेहि निशि में सीता पहँ जाई, त्रिजटा कहि सब कथा सुनाई।' यहाँ त, न, स, त्र दन्त्याक्षर हैं।

(घ) **लाटानुप्रास**—एक से पद, पद-समूह या वाक्य एक से अधिक बार आवें और प्रत्येक बार समान अर्थ हो पर अन्वय भिन्न हो; जैसे—

(१) पूत सपूत तो क्यों धन संचै। पूत सपूत तो क्यों धन संचै।
(२) मित्र निकट जिसके, नहीं धूप चाँदनी ताहि।
मित्र निकट जिसके नहीं, धूप चाँदनी ताहि॥

(ङ) **अन्त्यानुप्रास**—छन्द के पद या चरणान्त में समान अन्त्याक्षर हों। इस को तुकान्त भी कहते हैं; जैसे, (१) 'जिन्ह

बिनु देह, नदी बिनु बारी। तैसइ नाथ, पुरुख बिनु नारी। बारी और नारी में तुक है (२) हर्षित महतारी, मुनि मन हारी, अद्भुत रूप निहारी।

(२) **यमक**—जहाँ शब्दों की कई बार आवृत्ति होने पर भी अर्थ भिन्न हों; जैसे, (१) '**कनक कनक** ते सौगुनी, मादकता अधिकाय। यहाँ 'कनक' शब्द के दो अर्थ—सोना और धतूरा हैं। (२) 'मूरति मधुर मनोहर देखी। भयहु **विदेह विदेह** विसेखी'। यहाँ 'विदेह' शब्द के दो अर्थ हैं—राजा जनक और शरीर की सुधि भूले हुए।

(३) **श्लेष**—जब एक शब्द या शब्दांश का केवल एक बार प्रयोग हो, परन्तु उसके अनेक अर्थ ग्रहण किये जावें; जैसे—

(क) **पानी** बिना न ऊबरै, मोती, मानुष, चून। (ख) जहाँ **गांठ** तहाँ **रस** नहीं यह जानत सब कोइ। (क) में पानी के अर्थ, मोती के साथ कान्ति या आभा, मनुष्य के साथ प्रतिष्ठा और चून के साथ जल है। इसी प्रकार (ख) में गांठ और रस के अर्थ ईख के लिए पोर और मिष्ट जल तथा मनुष्य के लिए कपट और प्रेम हो जाते हैं।

यमक,लाटानुप्रास और श्लेषमें भेद—लाटानुप्रास में वर्णों या शब्दोंकी आवृत्ति मात्र होती है,अर्थमें अन्वय करनेपर विभिन्नता होती है। यमकमें शब्दकी पुनरावृत्ति होती है, किन्तु प्रत्येक बार शब्द का अर्थ अलग अलग होता है। श्लेष में शब्द का एक बार प्रयोग होने पर भी उस के एक से अधिक अर्थ होते हैं।

(४) **वक्रोक्ति**—जहाँ किसी एक अर्थ युक्त कथन का अन्य व्यक्ति दूसरा अर्थ लगावे, वहाँ वक्रोक्ति नामक अलंकार होता है। इसके दो भेद हैं--(१) श्लेष वक्रोक्ति--वह पद जिसके एक से अधिक अर्थ हों। (२) काकु वक्रोक्ति--जहाँ ध्वनि के कारण विभिन्न अर्थ ग्रहण किये जावें।

(क) "को तुमहो ? इत आये कहाँ ? "घनश्याम" हो तो कितहूँ बरसो। "चितचोर" कहावत हैं हम तो, तहाँ जाहु जहाँ धन है सरसो।"–राधा प्रश्न करती हैं—"द्वार पर कौन है ?" श्री कृष्ण जी ने कहा, "घनश्याम।" राधा घनश्याम का श्लेष अर्थ 'बादल' लगाती हैं और कहती हैं--"कहीं जाकर बरसो।" श्री कृष्ण जी ने फिर कहा--"हम चितचोर कहाते हैं।" राधा 'चोर' शब्द के आधार पर कहती हैं—"वहाँ जाओ जहाँ धन हो।" अतएव इस पद में 'श्लेष वक्रोक्ति' का प्रयोग है।

(ख) "मैं सुकुमारि ! नाथ बन जोगू !
तुम्हहिं उचित तप मोकहँ भोगू !"

यहाँ ध्वनि से सुकुमारि, बनजोगू, तप और भोगू के विपरीत अर्थ हो जाते हैं। इन पदों में 'काकु वक्रोक्ति' है।

अर्थालंकार

अर्थालङ्कार के अनेक भेद हैं, जिनमें से कुछ का यहाँ विवेचन किया गया है।

(१) **उपमा**—समान धर्म, स्वभाव, शोभा तथा दशा के कारण जहां एक वस्तु की तुलना दूसरी प्रसिद्ध वस्तु से

की जाती है, वहां उपमालंकार होता है, जैसे—(१) गांधी जी का लक्ष्य ध्रुव के समान अटल था। (२) सुनि सुरसरि सम पावन बानी, भईं सनेह विकल सब रानी।

उपमा के चार अंग होते हैं—(१) उपमेय—जिस वस्तु का वर्णन किया जा रहा है। (२) **उपमान**—वह प्रसिद्ध वस्तु जिससे उपमेय की तुलना की जाय (३) **साधारण धर्म**—वह समान गुण या विशेषता जो उपमेय और उपमान दोनों में हो।

(४) **वाचक शब्द**—जो शब्द समानता प्रकट करें। जैसे—सा, जैसा, ऐसा, समान, सम, सरीखा, सदृश, यथा, तुल्य, भाँति इन, ज्यों इत्यादि। ऊपर के उदाहरणों में उपमेय, उपमान, आदि इस प्रकार हैं—

उपमेय	उपमान	साधारण धर्म	वाचक
(क) गाँधी जी का लक्ष्य	ध्रुव	अटल	समान
(ख) बानी	सुरसरि	पावन	सम

(उपमेय को वर्ण्य, वर्णनीय, प्रस्तुत और प्रकृत तथा उपमान को अवर्ण्य अवर्णनीय, अप्रस्तुत और अप्रकृत भी कहते हैं।)

उपमा के दो भेद हैं—(क) **पूर्णोपमा**—जब उपमामें चारों अंगों का वर्णन हो, जैसे—मुख कमल के समान सुन्दर है।

(ख) लुप्तोपमा—जब 'उपमा' के चारों अंगों में से किसी एक या उससे अधिक का लोप हो।

उदाहरण—(१) वह नवनलिनी से नेत्र वाला कहाँ है? (२) कुलिस कठोर सुनत कटु बानी। (३) कलप बेलि जिमि बहु विधि लाली। (४) यश सी उत्तम कोई वस्तु नहीं।

उपमेय	उपमान	धर्म	वाचक	प्रकार
नेत्र	नव नलिनी	—	से	धर्म लुप्तोपमा।
कटुबानी	कुलिस	कठोर	—	वाचक ,,
—	कलप बेलि	लाली	जिमि	उपमेय ,,
यश	—	उत्तम	सी	उपमेय ,,

मालोपमा—जहाँ एक उपमेय के अनेक उपमान कथन किये जायें जैसे—'तेज तिमिरंश पर, कान्ह जिमि कंस पर, त्यों म्लेच्छ वंश पर शेर शिवराज हैं।' एक उपमेय 'शिवाजी' के तेज, कान्ह उपमान हैं।

(२) **रूपक**—जहाँ उपमेय और उपमान के एक रूप का इस प्रकार कथन किया जाय कि भिन्नता का कोई भाव न रहे। इसमें 'धर्म' और 'वाचक' का कथन नहीं होता। जैसे—(क) आशा मेरे हृदय-मरु की मञ्जु मन्दाकिनी है। (ख) 'सूर्य-चन्द्र युग मुकुट, मेखला रत्नाकर है।' (क) में आशा को मन्दाकिनी और हृदय को मरुभूमि और (ख) में सूर्य-चन्द्र को युग मुकुट, रत्नाकर को मेखला का रूप दिया गया है। रूपक अलंकार में कभी कभी अर्थ स्पष्ट करने के लिए 'रूपी' शब्द जोड़ा जाता है। जैसे—मुख—चन्द्र =मुख रूपी चन्द्र।

विशेष—यदि उपमान और उपमेय का एक रूप वर्णन करने के साथ साथ उनके अंगों का भी एक रूप वर्णन किया जाय तो **सांङ्ग** या **सावयव** रूपक होता है। जैसे—

असकहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी, मानहु रोष तरंगिनि बाढ़ी।
पाप पहार प्रकट भई सोई, भरी क्रोध जल जाइ न जोई।
ढाहति भूप रूप तरु मूला, चली विपति वारिधि अनुकूला।

यहाँ कैकेयी के क्रोध को नदी का रूप देकर उपमान के अन्य

अंगों पहाड़, जल, वृक्ष, समुद्र का आरोप उपमेय के अंगों पाप, क्रोध, भूप और विपत्ति में किया गया है।

(३) अनन्वय—जहाँ एक ही वस्तु में उपमेय और उपमान दोनों हों अर्थात उपमेय को ही उपमान बना दिया जाय। जैसे—(१) भारत के सम भारत हैं। (२) राम से राम सिया सी सिया सिरमौर बिरंचि विचारि सँवारे। यहाँ 'भारत', 'राम', और 'सिया' को ही उपमेय और उपमान दोनों कहा गया है।

उत्प्रेक्षा—जहाँ उपमेय की उपमान में सम्भावना की जावे अथवा कल्पना द्वारा दोनों की समता की जावे। जैसे—

(अ) लता भवन ते प्रगट भये, तेहि अवसर दोउ भाय।
निकसे जनु युग विमल विधु, जलद पटल बिलगाय॥
(आ) अति कटु बचन कहत कैकेई, मानहुँ लोन जरे पर देई।

(अ) राम लक्ष्मण के लता-भवन से निकलने की सम्भावना बादलों में से दो चन्द्रमाओं के निकलने से की गई है जो असम्भव होने पर भी सम्भव मानी गई है। (आ) कटु बचनों के नमक न होने पर भी इनको नमक मान लिया गया है। मानहु, मानों, मनो, जनु इत्यादि इस अलंकार के वाचक शब्द हैं। उत्प्रेक्षा का प्रयोग तीन प्रकार से होता है :—

(क) जब एक वस्तु में दूसरी वस्तु की संभावना की जावें अर्थात् एक वस्तु को दूसरी वस्तु मान लिया जावे। इसे वस्तूत्प्रेक्षा कहते हैं। इसके उदाहरण ऊपर दिये गये हैं। (ख) जब अहेतु में हेतु की संभावना की जावे अर्थात् किसी कार्य का कारण न होने पर भी किसी कारण की सम्भावना की जावे। इसे हेतूत्प्रेक्षा कहते हैं। जैसे—"अरुण भये कोमल चरण भुवि चलिवे ते मानु।" यहाँ (स्वाभाविक रूप से रक्त वर्ण) चरणों

के लाल होने का कारण पृथ्वी पर चलना माना गया है। (ग) जो फल (उद्देश्य) न हो उसे फल मान लिया जावे। इसे फलोत्प्रेक्षा कहते हैं; जैसे–"तुअ जल समता को कमल जल सेवत इक पाँय।" कमल के जल में एक पैर (कमल नाल) पर खड़े होने का उद्देश्य चरणों की समता प्राप्त करना कहा गया है।

विशेष—उपमेय और उपमान की समानता निश्चित होने पर उपमा अलंकार और समानता की कल्पना करने पर भी संशय हो तो उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

(५) **प्रतीप**—इसका वाच्यार्थ है उलटा या विपरीत अस्तु उपमा के विपरीत विधान वाले अलंकार को प्रतीप कहते हैं। इसके पाँच भेद हैं।

(अ) प्रसिद्ध उपमान को उपमेय मान कर वर्णन किया जाय; जैसे—सन्ध्या फूली परम-प्रिय की कान्ति सी है दिखाती। यहाँ सन्ध्या (उपमान) की समता शरीर की कान्ति (उपमेय) से की गई है।

(आ) उपमेय का उपमान से अपमान किया जाय; जैसे—"भीम तुम्हें बल का अभिमान, बली गज हैं तुम से कितने।" भीम (उपमेय) का गज (उपमान) द्वारा निरादर किया गया है।

(इ) उपमेय का उपमान से बढ़ाकर वर्णन किया जाय; जैसे, (१) दुर्जनों का हृदय वज्र से भी अधिक कठोर होता है। (२) 'सिय मुख समता पाव किमि, चन्द बापुरो रंक।'

(ई) गुणों की कमी के कारण उपमान को उपमेयके अयोग्य सिद्ध किया जाय—उपमेय से उपमान का निरादर हो ; जैसे—

“ नृप तेरे सम सूर्य नहीं है, सन्ध्या आते छिप जाता।” राजा के प्रताप के सामने सूर्य को हीन बतलाया है।

(उ) उपमेय के द्वारा उपमान के सभी कार्य पूर्ण करने के कारण उपमान का अस्तित्व ही व्यर्थ बतलाया जावे ; जैसे, “सुरतरु लै करिये कहा, जब हैं नृप सिवराज।” राजा शिवराज के सामने कल्पवृक्ष की अनावश्यकता दिखलाई है।

(६) **व्यतिरेक**—जब उपमान की अपेक्षा उपमेय में गुणाधिक्य के कारण कुछ विशेषता दिखलाई जावे या उपमान को उपमेय की अपेक्षा हीन कहा जाय ; जैसे—“ साधु उच्च हैं शैल सम किन्तु प्रकृति सुकुमार।” यहाँ साधु (उपमेय) की शैल (उपमान) से उत्कृष्टता वर्णन की गई है।

(७) **उल्लेख**—जब एक ही वस्तु का विभिन्न व्यक्ति या एक व्यक्ति अनेक रूप से वर्णन करें ; जैसे—

(क) जिनकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरति देखी तिन तैसी॥
बिदुषन प्रभु विराट-मय दीसा। बहु मुख कर पग-लोचन-सीसा॥
देखहिं भूप महारन धीरा। मनहुँ वीर रस धरे सरीरा॥
पुर वासिन देखेउ दोउ भाई। नर-भूखन-लोचन सुखदाई॥

यहाँ एक ही राम को विद्वानों, राजाओं और पुर वासियों ने अनेक प्रकार से देखा।

(ख) यह मेरी गोदी की शोभा, सुख सुहाग की है लाली।
शाही शान भिखारिन की है, मनोकामना मतवाली॥

यहाँ माता द्वारा बालिका का अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है।

(८) **अपह्नुति**—इसका अर्थ छिपाना है। जहाँ सत्य बात को छिपाकर असत्य का वर्णन किया जाय, वहाँ अपह्नुति अलंकार होता है। जैसे—(क) 'पहिरे श्याम न पीतपट घन में विज्जु विलास' श्याम को घन तथा पीताम्बर को विज्जु-छटा कहकर सत्य बात को छिपाया गया है। (ख) 'दामिनी दमंक नाहिं खुले खग्गा बीरनके, इन्द्र धनु नाहिं ये निसान हैं सवारीके'

(९) **भ्रान्तिमान**—कुछ सादृश्य के कारण जब एक वस्तु में दूसरी का भ्रम हो जाय ; जैसे—(क) 'समुझि तुमहिं घनश्याम हरि, नाचि उठे वन मोर।' (ख) हरि मुख पंकज समुझि चित, घिरत भ्रमर चहुँ ओर। यहाँ 'घनश्याम' के काले रंग में बादलों का और 'मुख' में पंकज का भ्रम हो गया है।

(१०) **सन्देह**—जहाँ किसी वस्तु को देखकर उसका यथार्थ ज्ञान न हो, और उसके विषय में संशय बना रहे, साथ ही उसमें उसके सदृश अन्य वस्तुओं की प्रतीति सी होने लगे। इसके वाचक पद हैं—धौं, कि धौं, की, कै, अथवा आदि। भ्रान्तिमान् में एक वस्तु में दूसरी वस्तु का भ्रम से निश्चय हो जाता है। किन्तु 'सन्देह' में वास्तविक वस्तु का निश्चय नहीं होता; जैसे—

(क) सारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है।
सारी ही की नारी है कि नारी ही की सारी है॥

(ख) हौं ही बौरी विरह वस, कै बौरो सब गाम।
कहा जान ये कहत हैं, ससिहि सीत कर नाम॥

(११) **विरोधाभास**—जहाँ विरोध का आभास मात्र हो, किन्तु वास्तव में विरोध न हो; जैसे—

"या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहिं कोय।
ज्यों ज्यों बूड़ै स्याम रंग, त्यों त्यों उज्ज्वल होय॥"

यहाँ श्याम-रंग द्वारा उज्ज्वल रंग के उत्पन्न होने का विरोध है; परन्तु श्लेष द्वारा श्याम का अर्थ श्याम रंग के श्री कृष्ण लेने से विरोध हट जाता है।

(१२) **असंगति**—जहाँ कार्य और कारण परस्पर प्रतिकूल से जान पड़ें, तथा कारण कहीं हो और कार्य कहीं हो। जैसे, 'राम चले इत अवध ते, असगुन लंका होंहिं।' यहाँ राम का चलना एक स्थान में और असगुनों का होना दूसरे स्थान में दिखलाया गया है।

(१३) **अन्योक्ति**—जब किसी वस्तु का सीधा वर्णन न किया जाय किन्तु उसके समान किसी दूसरी वस्तु का वर्णन करके उस से उस वस्तु का बोध कराया जाय; जैसे—

माली आवत देखि कर कलियन करी पुकार।
फूले फूले बिन लिये, काल्हि हमारी बार॥

यहाँ वास्तव में कवि काल और जीवात्माओं का वर्णन करना चाहता है, पर सीधे उनका वर्णन न करके माली और कलियों के वर्णन द्वारा उनका बोध कराया गया है।

(१४) **दृष्टान्त**—जहाँ एक वस्तु का वर्णन करके उससे मिलती-जुलती दूसरी बात उदाहरण के रूप में कही जाय; जैसे—

"रहिमन अति सुख होत है, बढ़त देखि निज गोत।
ज्यों बड़री अखियाँ निरखि, आँखिन को सुख होत॥"

(१५) **अर्थान्तरन्यास**—जब एक सामान्य बात का विशेष बात से अथवा विशेष बात का सामान्य से समर्थन किया जाय; जैसे—

(क) टेढ़ जानि शंका सब काहू, वक्र चन्द्रमहि ग्रसै न राहू।
(सामान्य कथन का विशेष बात द्वारा समर्थन)

(ख) दान दीन को दीजिये, हरै दरिद्र की पीर।
औषधि ताको दीजिये, जाके रोग शरीर॥
(विशेष बात का सामान्य कथन द्वारा समर्थन)

(१६) **अत्युक्ति**--प्रभावोत्कर्ष या रोचकता लाने के लिए वीरता, उदारता, सौन्दर्य, प्रेम विरह आदि का बहुत बड़ा चढ़ा कर वर्णन किया जाय; जैसे, (क) 'याचक तेरे दान से भये कल्पतरु भूप'। (ख) 'लखन सकोप वचन जब बोले, डगमगानि महि दिग्गज डोले। (राजा के दान और लक्ष्मण जी के क्रोध का बढ़ा चढ़ा कर वर्णन किया गया है)

पिंगल-प्रकाश

'पिंगल' शास्त्र पद्य रचना के नियमों का विवेचन करता है। इन नियमों के बन्धन को, जिसके अनुसार पद्य-रचना की जाती है, 'छन्द' कहते हैं। 'छन्द' से पद्य मधुर आकर्षक और प्रभावशाली बन जाता है। छन्द-निर्माण में मात्रा, गण, गति (लय), चरण, तुक और भाषा पर विशेष ध्यान रक्खा जाता है।

छन्द दो प्रकार के होते हैं :—

(१) **मात्रिक छन्द**--वह छन्द रचना जिसमें मात्राओं की संख्या समान रहती है; जैसे, चौपाई, दोहा आदि।

(२) **वर्णिक या वर्ण वृत्त**--वह छन्द रचना जिसमें वर्णों की संख्या नियत रहती है; जैसे,मनहरण।

मात्राओं की गणना--मात्राओं की गणना वर्णों से की जाती है। वर्ण दो प्रकार के होते हैं--

(१) ह्रस्व, और (२) दीर्घ। पिंगल में इनको **'लघु'** और **'गुरु'** कहते हैं। इनके चिह्न क्रमशः (।) और (ऽ) हैं। लघु की एक मात्रा और दीर्घ की दो मात्राएँ मानी जाती हैं। दो से

अधिक मात्राएँ किसी भी वर्ण की नहीं होतीं। मात्राएँ गिनने में व्यंजनों की गिनती नहीं की जाती, केवल स्वर गिने जाते हैं। मात्राओं की गणना के निम्न नियम हैं :--

(१) अ, इ, उ, ऋ ये चार स्वर और इनसे युक्त व्यंजन लघु माने जाते हैं; जैसे, प, सि, कु, नृ की एक एक मात्रा मानी जायगी।

(२) आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः और इनसे युक्त व्यंजन गुरु माने जाते हैं। जैसे, ला, पी, के, सै, को, कौ, कं, कः में से प्रत्येक की दो मात्राएँ मानी जायेंगी।

(३) चन्द्र बिन्दु लगने से किसी वर्ण की मात्रा में अन्तर नहीं पड़ता; जैसे, हँसना में 'हँ' की एक मात्रा और साँच में 'साँ' की दो मात्राएँ गिनी जायेंगी।

(४) संयुक्त वर्ण के पूर्व का लघु वर्ण भी गुरु होता है; जैसे, असत्य में 'स' की दो मात्राएँ गिनी जाती हैं और 'त्' की कोई मात्रा नहीं गिनी जायगी। जहाँ संयुक्त वर्णों के पूर्व के वर्णों पर बल नहीं पड़ता, वहाँ वे गुरु नहीं होते; जैसे, कुम्हार, कुल्हाड़ी, इन्हें, तुम्हारा आदि। इनमें 'कु', 'इ', 'तु' लघु हैं।

(५) हलन्त (्) से पहले का वर्ण भी गुरु होता है और हलन्त की कोई मात्रा नहीं मानी जाती; जैसे, 'श्रीमान्' में 'म' गुरु है और 'न्' मात्रा रहित।

(६) कवित्त, सवैया आदि छन्दों में कभी कभी गुरु वर्णों को भी लघु पढ़ा जाता है और उनकी एक 'एक मात्रा गिनी जाती है; जैसे, 'कुन्दन को रँग फीको लगै, झलकै अति अंगनि चारु गोराई।' इस पंक्ति में 'को' और 'गो' को 'लघु' पढ़ेंगे।

अतएव छन्द में किसी वर्ण को बल देकर पढ़ा जावे तो लघु को गुरु और यदि गुरु पर भी बल न पड़े तो वह लघु माना जाता है।

गण—वर्णिक छन्दों में गणों का प्रयोग होता है। प्रत्येक गण तीन वर्णों से मिलकर बनता है। गुरु (ऽ) और लघु (ऽ) के क्रम से आठ गण माने गये हैं

संख्या	गण	संकेत नाम	रूप	उदाहरण
१	मगण	म	ऽऽऽ	गांधी जी, कौशल्या
२	नगण	न	।।।	भरत, भुवन
३	भगण	भ	ऽ।।	भारत, गोकुल
४	जगण	ज	।ऽ।	कुवेर, सुजान
५	सगण	स	।।ऽ	सरयू, धरिणी
६	यगण	य	।ऽऽ	यशोदा, सुमित्रा
७	रगण	र	ऽ।ऽ	राघव, सागर
८	तगण	त	ऽऽ।	साकेत, कैलास

पिंगल में लघु का संकेत 'ल' और गुरु का 'ग' है

गणों के नाम और उनके स्वरूप याद रखने के लिए यह सूत्र सरल और उपयोगी है—'**य माता राज भान सलगा**' इस सूत्र के प्रथम आठ अक्षर गणों के संकेताक्षर हैं। किसी गण का स्वरूप जानने के लिए उस गण के संकेताक्षर के साथ दो अक्षर और जोड़ने चाहिए; जैसे, 'रगण' का स्वरूप जानना है तो 'राजभा'—ये तीन वर्ण लिये, जिसका रूप ऽ।ऽ हुआ।

यति—छन्द पढ़ते समय बीच बीच में रुकना पड़ता है। इस रुकने या विश्राम लेने को 'यति' और ऐसे ठहरने के स्थान

को यतिस्थान कहते हैं। जैसे—'राघव बोले देख, जानकी के आनन को।' इस पंक्ति में देख के पश्चात् 'यति' है जिसे इस चिह्न (') से प्रकट करते हैं।

गति—छन्द के पढ़ने की 'लय' और 'प्रवाह' को गति कहते हैं। 'गति' दोष पूर्ण होने से छन्द में न प्रवाह होगा और न मधुरता। मात्राएँ ठीक होनेपर भी बिना गति के छन्द नहीं बन सकता। प्रत्येक छन्दकी गति भिन्न होती है और मात्राओं के एक निश्चित क्रम पर निर्भर रहती है। उदाहरण के लिए दोहा, सोरठा और रोला छन्दों के प्रत्येक चरण में २४ मात्राएँ होती हैं, किन्तु मात्राओं के क्रम की विभिन्नता से इनकी गतियाँ भी विभिन्न होती हैं। इनको एक ही ढंग या लय से नहीं पढ़ा जा सकता। जैसे—

दोहा—धीरे-धीरे उठ चले, नव आशा मन धारि।
सोरठा—नव आशा मन धारि, धीरे-धीरे उठ चले।
रोला—धीरे-धीरे उठे, नई आशा से मन में।

यदि इसी चरण को ' धीरे-धीरे नई आशा से मन में उठे ' कर दिया जाय, तो 'गति' दोष पूर्ण हो जायगी। ' रसखान ' और ' पद्माकर ' की कविताएँ सुन्दर गति के लिए प्रसिद्ध हैं।

चरण--प्रत्येक छन्द में चार 'चरण' या 'पद' होते हैं। कुछ छन्दों के चरण तो चार ही होते हैं, किन्तु वे दो पंक्तियों में लिखे जाते हैं, जैसे--दोहा, सोरठा। ऐसे छन्द की प्रत्येक पंक्ति 'दल' कहलाती है। कुछ छन्द दो छन्दों के योग से बनते हैं। और छः पंक्तियों में लिखे जाते हैं, जैसे, कुण्डलिया, छप्पय।

तुक—छन्द के चरणान्त में समान स्वर रखने को 'तुक' कहते हैं। जिस छन्द के चरणों के तुक भिन्न होते हैं, उसे अतुकान्त कहते हैं; जैसे—

तुकान्त—दीन, मलिन, विष भैया अवगुन **तीन**।
मोहि कहत विधुवदनी, पिय मति **हीन** ॥

अतुकान्त–प्रिय बिन अति सूना ग्राम सारा **लगेगा**।
निश-दिवस बड़ी ही खिन्नता से **कटेंगे**।

तुकान्त कविता मधुर और कर्ण प्रिय होती है। संस्कृत की अधिकांश कविता अतुकान्त है। आजकल हिन्दी में भी अतुकान्त कविताएँ रची जाने लगी हैं, जैसे, प्रिय प्रवास, महाराणा का महत्त्व। कुछ छन्दों के चारों चरण तुकान्त होते हैं, जैसे सवैया; कुछ में प्रथम और द्वितीय में तुक मिलते हैं; जैसे, चौपाई, और कुछ में पहले और तीसरे चरणों में, जैसे—सोरठा में।

चरणों के विचार से छन्दों के तीन भेद होते हैं :—

(१) **सम**—वे छन्द हैं जिनके चारों चरणों की मात्राएँ या वर्ण समान हों। (२) **अर्द्धसम**—वे छन्द हैं जिनके विषम चरण-पहले और तीसरे तथा दूसरे और चौथे चरणों की मात्राएँ या वर्ण समान हों। (३) **विषम छन्द**—वे हैं जिनमें प्रत्येक चरण की मात्राएँ या वर्ण भिन्न-भिन्न होते हैं। आगे दी हुई तालिका में छन्दों के भेद दिये गये हैं।

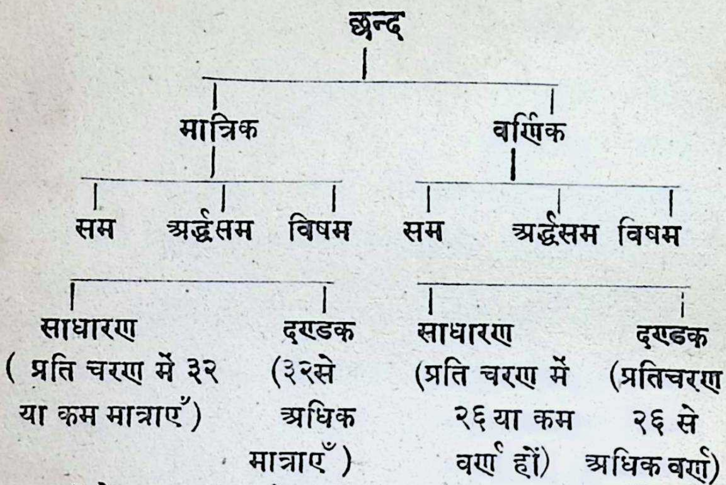
छन्द
मात्रिक
वर्णिक
सम
अर्द्धसम
विषम
सम
अर्द्धसम
विषम
साधारण
(प्रति चरण में ३२ या कम मात्राएँ)
दण्डक
(३२से अधिक मात्राएँ)
साधारण
(प्रति चरण में २६ या कम वर्ण हों)
दण्डक
(प्रतिचरण २६ से अधिक वर्ण)

विशेष—'मात्रिक और वर्णिक छन्दों की पहचान करने के लिए छन्द के प्रत्येक चरण की मात्राएँ और गणों की गणना करना चाहिए। यदि चारों गणों में केवल मात्राओं का क्रम समान हो तो मात्रिक छन्द और मात्राओं तथा वर्णों दोनों के क्रम समान हों तो वर्णवृत्त है ❀ । जैसे—

(१) वर्णिक छन्द—

I I I S I I S I I S I S
दिवस का अवसान समीप था ।
I I I S I I S I I S I S
गगन था कुछ लोहित हो चला ।
I I I S I I S I I S I S
तरु शिखा पर थी अब राजती ।
I I I S I I S I I S I S
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा ।

❀ गुरु लघु चारों चरण में, क्रम से मिलें समान ।
वर्णवृत्त हैं, अन्यथा, मात्रिक छन्द प्रमान ॥

(२) मात्रिक छन्द (१६ मात्राएँ)—

।। ।।ऽ ।। ऽ।।ऽऽ
पिय-हिय की सिय जानन-हारी ।
।। ।।ऽ ।। ।।। ।ऽऽ
मनि मुदरी मन मुदित उतारी ।

विशेष—मात्रिक छन्दों के प्रारम्भ में जगण, तगण, रगण और सगण रखने का निषेध है। ये गण अशुभ फल के देने वाले कहे जाते हैं। किन्तु मगण, नगण, भगण और यगण शुभ फल के सूचक हैं। इसी प्रकार छन्द के आदि में संयुक्ताक्षर रखना अशुभ माना जाता है। सभी स्वर शुभ माने जाते हैं। ङ, झ, य, ट, ठ, ढ, ण, प, फ, ब, भ, म, र, ल, व, स और ह के अतिरिक्त शेष सब व्यंजन शुभ हैं। इन व्यंजनों में भी झ, भ, र, ष और ह दग्धाक्षर अर्थात अत्यन्त अशुभ माने जाते हैं। किन्तु मंगल सूचक या देव वाची शब्दों के प्रारम्भ में आने पर अथवा इनका अर्ध रूप कर देने से ये वर्ण अशुभ नहीं समझे जाते हैं।

कुछ छंदों के लक्षण और उदाहरण

मात्रिक छन्द—

(१) **चौपाई**—प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ हों पर अन्त में जगण (।ऽ।) या तगण (ऽऽ।) नहीं होना चाहिए।

लिखति सुधाकर गा लिखि राहू।
विधि गत बाम सदा सब काहू॥

(२) **दोहा**—पहले और तीसरे चरण में १३–१३ और दूसरे—चौथे चरण में ११–११ मात्राएँ होती हैं। अन्त में गुरु लघु (ऽ।) होता है।

मातु-पिता गुरु स्वामि सिख, सिरधरि करहिं सुभाय ।
लहेउ लाभ तिन्ह जनम कर, नतरु जनम जग जाय ।।

(३) **सोरठा**—दोहे का उलटा—

मूक होइ वाचालु, पंगु चढ़ै गिरिवर गहन ।
जासु कृपासु दयालु; द्रवौ सकल कलिमल दहन ।।

(४) **रोला**—प्रत्येक चरण में २४ मात्राएँ होती हैं । ११-१३ पर ' यति ' होती है ।

देव ! तुम्हारे सिवा, आज हम किसे पुकारें ?
तुम्हीं बतादो हमें, कि कैसे धीरज धारें ।
किस प्रकार अब और, मरे मन को हम मारें ?
अब तो रुकती नहीं, आँसुओं की ये धारें ।।

(५) **उल्लाला**—पहले और तीसरे चरण में ११-११ और दूसरे-चौथे में १३-१३ मात्राएँ होती हैं ।

“ है शक्ति पाण्डवों की किसे, ज्ञात नहीं संसार में ।
चलता परन्तु किसका कहीं; वश विधि के व्यापार में ।”

(६) **कुण्डलिया**—एक दोहा और फिर एक रोला रखने से बनता है । दोहे के अन्तिम चरण की आवृत्ति रोला के आदि में की जाती है ।

रम्भा झूमत हो कहा, थोड़े ही दिन हेत ।
तुम से केते ह्वै गये, अरु ह्वै हैं यहि खेत ।
अरु ह्वै हैं यहि खेत मूल लघु शाखा हीने ।
ताहू पर गज रहे दीठि तुम पै नित दीने ।
बरनें दीन दयाल हमें, लखि होत अचम्भा ।
थोड़े ही दिन हेत कहा झुकि झूमत रम्भा ।

(७) छप्पय—रोला और उल्लाला मिलकर बनता है।

'जग में अब भी गूँज रहे हैं गीत हमारे।
शौर्य-वीर्य गुण हुए न अब भी हम से न्यारे।
रोम, मिश्र, चीनादि काँपते रहते सारे।
यूनानी तो अभी-अभी हम से हैं हारे।
सब हमें जानते हैं सदा, भारतीय हम हैं अभय।
फिर एक बार हे विश्व ! तुम, गाओ भारत की विजय।'

(८) रूपमाला—प्रत्येक चरण में २४ मात्राएँ। १४, १० पर यति। अन्त में ऽ। होता है।

"करत श्री भगवान गुरुजन को सदा सम्मान।
वचन कहत विनीत यद्यपि, परम ज्ञान-निधान॥
राज तेज लखात मुख पै, तदपि मृदु-व्यवहार।
हृदय परम सुशील कोमल, यदपि शूर अपार॥"

(९) गीतिका—प्रत्येक चरण में २६ मात्राएँ। १४-१२ पर यति। अन्त में।ऽ आता है।

"हे प्रभो आनन्द दाता, ज्ञान हमको दीजिये।
शीघ्र सारे अवगुणों को; दूर हम से कीजिये॥
लीजिये हमको शरण में, हम सदाचारी बनें।
ब्रह्मचारी धर्म रक्षक, वीर व्रत धारी बनें॥"

(१०) हरिगीतिका—प्रत्येक चरणमें २८ मात्राएँ। १६-१२ पर यति। अन्त में।ऽ आता है।

संसार की समरस्थली में, धीरता धारण करो।
चलते हुए निज इष्ट पथ पै, संकटों से मत डरो॥

जीते हुए भी मृतक सम, रहकर न केवल दिन भरो।
वर वीर बन कर आप अपनी, विघ्न बाधाएँ हरो॥

(११) **वीर (आल्हा)**—प्रत्येक चरण में ३१ मात्राएँ। १६–१५ पर यति।

'नहीं जानतीं हाय हमारी माताएँ आमोद-प्रमोद।
मिली हमें है कितनी कोमल, कितनी बड़ी प्रकृति की गोद॥
इसी खेल को कहते हैं क्या विद्वज्जन जीवन-संग्राम।
तो इसमें सुनाम कर लेना है कितना साधारण काम॥'

(१२) **बरवै**—पहले और तीसरे चरणों में १२–१२ मात्राएँ और दूसरे चौथे में ७–७ मात्राएँ। अन्त में ऽ। होता है।

भज मन राम सियापति रघुकुल ईश।
दीनबन्धु दुख टारन कौशलधीश॥

वर्णिक छन्द

(१) **इन्द्रवज्रा**—गण–त, त, ज और ऽऽ (ऽऽ।, ऽऽ।, ।ऽ।, ऽऽ)

हे ईश मेरी सुधि आप लीजै।
ऐसी कृपा आप अवश्य कीजै॥
होवें सदा ही ध्रुव धर्म धारी।
त्यागी सदा सत्य मतानुरागी॥

(२) **उपेन्द्रवज्रा**—ज, त, ज और ऽऽ (।ऽ।, ऽऽ।, ।ऽ।, ऽऽ)

"जिती हमारी सुख सम्पदायें।
सभी कहाती निज कर्म से हैं॥
रखो सदा ही निज चित्त में ये।
त्यागी विरागी शुभ कर्म से हैं॥"

(३) **वंशस्थ**—ज, त, ज, र

विचित्र है शक्ति मुकुन्द-देव में ।
प्रभाव ऐसा उनका अपूर्व है ।
स-जीव होता जिससे सदैव है ।
नितान्त-निर्जीव बना मनुष्य भी ।।

(४) **वसन्त तिलका**—त, भ, ज, ज और ऽऽ

नाना सरोवर खिले नव पंकजों को ।
ले अंक में बिलसते मन मोहते थे ।।
मानो पसार अपने शतशः करों को ।
वे माँगते शरद से सु–विभूतियाँ थे ।।

(५) **द्रुतविलम्बित**—न, भ, भ, र

न जिसमें कुछ पौरुष हो यहाँ ।
सफलता वह पा सकता कहाँ ।।
अपुरुषार्थ भयङ्कर पाप है ।
न उस में यश है न प्रताप है ।।

(६) **मालिनी**—वर्ण १५ । यति–८–७ । गण–न, न, म, य, य ।
रूप–।।।, ।।।, ऽऽऽ, ।।ऽ, ।।ऽ ।

प्रिय पति वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है ?
दुख जलनिधि डूबी का सहारा कहाँ है ?
लख मुख जिसका मैं, आज लों जी सकी हूँ ।
वह हृदय हमारा, नैन तारा कहाँ है ?

(७) **मन्दाक्रान्ता**—म, भ, न, त, त और अन्त में ऽऽ

सच्चे-स्नेही अवनि जन के देश के श्याम जैसे ।
राधा जैसी सदय-हृदया विश्व के प्रेम डूबी ।।

हे विश्वात्मा भरत—भुवि के अंक में और आनों
ऐसी व्यापी विरह-घटना किन्तु कोई न होवे ॥

(८) **सवैया**—२२ से लेकर २६ वर्णों तक के वृत्त सवैया कहलाते हैं। इनके कई भेद हैं कुछ मुख्य भेद यहाँ दिये जाते हैं।

(क) **मत्तगयंद या मालती सवैया**—इसमें २३ वर्ण, सात भगण और अन्त में दो SS होते हैं।

"सीस पगा न झगा तन में प्रभु जानै को आहि बसै केहि ग्रामा।
धोती फटी-सी लटी दुपटी अरुपाँय उपानहु की नहिं सामा॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल देखि रह्यो चकि सो वसुधा अभिरामा।
पूछत दीन दयाल को धाम बतावत आपनो नाम सुदामा॥"

(ख) **दुर्मिल**—आठ सगण।

प्रभु का जप ले मन नाम सदा कर ले कुछ तू अब काम अरे।
इस जीवन का मोल अरे खल जान नहीं यह चाम अरे॥
करनी लख के कुछ शोक करे खल सोच भला परिणाम अरे।
न कभी मिलता यह जीवन है फिर से सुन दे कर दाम अरे॥

(९) **मुक्तक छन्द**—इन छन्दों में मात्राएं या गण निश्चित नहीं होते, केवल अक्षरों की संख्या और यति का ही नियम रहता है। इनके नौ भेद हैं। ये ३१, ३२, ३३ वर्णों के होते हैं। इनमें मनहरण और घनाक्षरी अधिक प्रचलित हैं।

(क) **मनहरण**—प्रत्येक चरण में ३१ वर्ण, १६–१५ पर विराम और अन्तिम वर्ण गुरु होता है।

वन-उपवन में, सरोज में, सरोवर में;
सुमन-सुमन में उसी की सुघराई है।

चंपक चमेलियों में नवल नवेलियों में,
ललित लताओं में भी उसकी लुनाई है ॥
देख पड़ती है रंग-रंग के विहंगों में,
सुषमा उसी की कुंज कुंज में समाई है।
सब ठौर देखो, वह छवि दिखलाई देती,
उर में समाई तथा लोचनों में छाई है ॥

(ख) **घनाक्षरी**—३२ वर्ण, प्रत्येक ८ वें वर्ण या १६-१६ पर यति होती है।

"बेर बेर बेर लै सराहै बेर बेर बहु,
रसिक बिहारी देत बन्धु कँह फेर फेर।
चाखि चाखि भाखैं यह वाहू ते महान मीठो,
लेहु तो लखन यों बखानत हैं हेर हेर ॥
बेर बेर देवैं बेर सबरी सु बेर बेर,
तऊ रघुवीर बेर बेर तेहि टेर टेर।
बेर बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो,
बेर जनि लावो बेर लावो कहैं बेर बेर ॥

काव्य के गुण

जिस प्रकार सरलता, मधुरता शौर्य आदि आत्मा के गुण होते हैं; उसी प्रकार काव्य की अन्तरात्मा के भी तीन गुण माधुर्य, ओज और प्रसाद माने गये हैं। 'रस' को काव्य की आत्मा कहा जाता है; अस्तु 'गुण' रसों के धर्म कहे जा सकते हैं। हम प्रेम-पूर्ण-वार्तालाप में मधुर, क्रोध में कठोर और साधारण बातचीत में 'सीधे-सादे' शब्दों का व्यवहार करते

हैं। इसी प्रकार रसों की समुचित अभिव्यंजना के लिए 'गुणों' की अपेक्षा होती है।

(१) **माधुर्य**—जिस गुण के कारण अन्तःकरण आनन्द से मग्न हो जाता है, उसे माधुर्य गुण कहते हैं। यह शृंगार, करुण और शान्त रसों में रहता है। कवर्ग, चवर्ग, तवर्ग पवर्ग और ण—ये २१ वर्ण, ङ, ञ, ण, न, म और अनुस्वार से युक्त वर्णों, ह्रस्व 'र' और छोटे-छोटे समासों के प्रयोग से रचना में मधुरता आती है; जैसे—

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि।
कहत लखन सन राम हृदय गुनि॥
मानुहुँ मदन दुन्दुभी दीन्हीं।
मनसा विश्व विजय कहँ कीन्ही॥

(२) **ओज गुण**—जिस गुण के कारण श्रोता के चित्त में तेज या जोश उत्पन्न होता है, उसे 'ओज' कहते हैं। यह वीर, वीभत्स और रौद्र रसों में अच्छा होता है। संयुक्ताक्षर, दित्व, रेफ, ट, ठ, ड, ढ, श, ष आदि कठोर वर्णों से युक्त शब्दों और लम्बे-लम्बे समास पदों के प्रयोग से रचना में 'ओज' गुण आता है; जैसे—

कतहुँ विटप भूधर उपारि पर सेन बरक्खत।
कतहुँ बाजि सों बाजि मर्दि गजराज करक्खत॥
चरन चोट, चटकन चकोट अरि उर सिर बज्जत।
विकट कटक बिद्दरत वीर बारिद जिमि गज्जत॥

(३) **प्रसाद गुण**—जिस गुण के कारण केवल सुनने से ही काव्य का अर्थ भली भाँति स्पष्ट हो जाय, उसे 'प्रसाद' कहते हैं। सरल और सुबोध शब्दों के प्रयोग से रचना में 'प्रसाद गुण' आता है। इस गुण का प्रयोग सब रसों और सब प्रकार की रचनाओं में आवश्यक है। इससे अर्थ समझने में सरलता होती है। जैसे—

अवध पुरी अति रुचिर बनाई।
देवन सुमन वृष्टि झर लाई।
राम कहा सेवकन्ह बुलाई।
प्रथम सखन अन्हवावहु जाई॥

काव्य के दोष

आचार्यों ने काव्य सम्बन्धी अनेक दोषों का उल्लेख किया है। यहाँ कुछ दोषों का विवेचन किया जाता है।

(१) **श्रुतिकटु**—'पर क्या न **विषयोत्कृष्टता** करती **विचारोत्कृष्टता**। यहाँ पर 'विषयोत्कृष्टता' (विषय की उत्तमता) और विचारोत्कृष्टता' (विचारों की उत्तमता)—ऐसे शब्द हैं जो कानों को कठोर लगते हैं।

(२) **च्युत संस्कृति**—'दसन देखि कै बिज्जु **लजाना**'। यहाँ पुल्लिग सूचक 'लजाना' क्रिया का प्रयोग कर्त्ता 'बिज्जु' (स्त्री लिङ्ग) के लिए किया गया है। अतः 'लजाना' का प्रयोग व्याकरण से नियम-विरुद्ध है।

(३) **अनौचित्य दोष**—"बासर की सम्पति उलूक ज्यों न चितवत, चकवा ज्यों चांद चितै चौगुनौ चपत हैं।" यहाँ श्रीराम की समानता 'उल्लू' से की गई है। महान् व्यक्ति के लिए अनुचित उपमा देना ठीक नहीं।

(४) **अश्लीलत्व दोष**—'बहु न्हाइ न्हाइ जेहि जल सनेह, सब जात स्वर्ग सूकर सुदेह।" यहाँ 'सूकर' (शूकर) शब्द घृणा उत्पन्न करता है। ऐसे अमगंल या घृणा की व्यंजना करने वाले शब्दों के प्रयोग से रचना में यह दोष आता है।

(५) **अप्रीतत्व दोष**—"आशय भंग ज्ञान सो करई"—आशय यहाँ पारिभाषिक अर्थ रखता है। यह योग का शब्द है। लोक-व्यवहार में न आने वाले किसी शास्त्र विशेष के पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग से रचना में यह दोष आजाता है।

(६) **पुनरुक्ति दोष**—"जो नर मेरा मित्र था, है वह कहाँ मनुष्य।' यहाँ 'नर' और 'मनुष्य' दो एकार्थवाची शब्दों का बार-बार प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार 'सब कोऊ जानत तुम्हें सारे जगत जहान' में 'जगत' और 'जहान' के प्रयोग से पुनरुक्ति दोष आगया है।

(७) **क्लिष्टत्व दोष**—'वेद नखत ग्रह जोरि अरधकरि सोई बनत अब खात।'—वेद=४; नखत=२७; ग्रह=६=४० का आधा बीस अर्थात 'विष'। यहाँ ऐसी भाषा का प्रयोग है जिसका अर्थ कठिनाई से स्पष्ट होता है।

(८) **ग्राम्यत्व दोष** जैसे 'स्त्री' के लिए 'लुगाई' और 'पिण्डली' के लिए 'गोड़' शब्द का प्रयोग। गँवारी और असंस्कृत भाषा के प्रयोग से रचना में यह दोष आजाता है।

(९) **न्यून पदत्व दोष**—जहाँ किसी पद की कमी से अर्थ स्पष्ट न हो; जैसे—

> उत्तम मध्यम नीच गति, पाहन सिकता पानि।
> प्रीति-परिच्छा तिहुँन की, बैर बितिक्रम जानि॥

यहाँ दोहे के दूसरे चरण में 'रेखा' शब्द के अभाव के कारण अर्थ स्पष्ट नहीं होता।

(१०) **अधिक पदत्व दोष**—"लपटी पुहुप पराग पट, सनी सेद मकरंद-यहाँ पुहुप शब्द अनावश्यक है क्योंकि 'पराग' 'फूल की रज' का बोधक है। आवश्यकता से अधिक पदों के प्रयोग से रचना में यह दोष आजाता है।

(११) **अक्रमत्व दोष**—शब्दों के क्रम भंग से यह दोष होता है; जैसे—' विश्व में कोई नहीं है वस्तु मातु समान के' यहाँ ' के ' विभक्ति का प्रयोग ' मातु ' के साथ होना चाहिए।

(१२) दुष्क्रमत्व दोष—जहाँ पर प्रसिद्ध और स्वाभाविक क्रम के विरुद्ध कोई बात कही जाय; जैसे (१) 'अश्वदान दीजै मुझे या दीजै गज-दान।' पहले 'हाथी' कहना चाहिए था, पीछे 'घोड़ा'। (२) "मारुत नन्दन मारुत को, मन को, खगराज को वेग लजायो। मन का वेग सब से अधिक होता है; अत एव मन को सब के पीछे रखना चाहिए।

इसी प्रकार अन्य अनेक दोष हैं; जैसे, विरोधी रसों का प्रयोग, छन्दो भंग करना; देश-काल और शास्त्र के विरुद्ध बात कहना; किसी प्रसंग का अन्त तक निर्वाह न करना आदि।

अभ्यास

(१) मात्रिक और वर्णिक छन्दों में क्या अन्तर है?

(२) दोहा, रोला, चौपाई और सवैया के लक्षण और उदाहरण बतलाओ ।

(३) छप्पय और कुण्डलिया किन छन्दों के योग से बनते हैं ?

(४) छन्द रचना के लिए किन बातों का ध्यान रखना पड़ता है ? क्या लय और गति छन्द के आवश्यक अंग हैं ?

(५) निम्नलिखित छन्दों के भेद और लक्षण लिखोः—

(अ) बन्दौं गुरु पद पद्म परागा । सुरुचि सुवास सरस अनुरागा ॥

(आ) मूक होय वाचाल, पंगु चढ़ै गिरिवर गहन ।
जासु कृपा सु दयाल, द्रवौ सकल कलिमल दहन ॥

(इ) अवधि-शिला का उर पर था गुरु भार ।
तिल-तिल काट रही थी दृग-जल धार ॥

(ई) वह जाति ध्वंस हो जायगी,जो दिन-दिन है छीजती ।
होगा न जाति का हित बिना,बने जाति-हित व्रत-व्रती ॥

(उ) राम-नाम मणि दीप धरु जीह देहरी द्वार ।
'तुलसी' भीतर बाहिरहु, जो चाहत उजियार ॥

(६) रस से क्या समझते हो ? क्या रस हीन वाक्य को काव्य कहा जा सकता है ?

(७) स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से क्या समझते हो ?

(८) शृङ्गार, वीर और वीभत्स के उद्दीपक क्या हो सकते हैं ?

(९) निम्न लिखित पद्य-खंडों में किन रसों का परिपाक हुआ है ?

(अ) जो राउर अनुसासन पाऊँ । कंदुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ ।
काँचे घट जिमि डारौं फ़ोरी । सकौं मेरु मूलक इव तोरी ॥

(आ) या लकुटी अरु कामरिया पर, राज तिहूँ पुर को तजि डारौं ।
आठहु सिद्ध नवौं निधि को सुख, नन्द की धेनु चराय बिसारौं ॥
'रसखान' कबौं इन आँखिन तैं, ब्रज के बन बाग, तड़ाग निहारौं ।
कोटिक हूँ कलधौत के धाम, करील की कुंजन ऊपर वारौं ॥

(इ) पुनि पुनि मोहि दिखाव कुठारू । चहत उड़ावन फूँकि पहारू ॥
इहाँ कुम्हड़ बतिया कोउ नाहीं । जे तरजनी देखि मरि जाहीं ॥

(ई) जहं तहं मज्जा माँस रुधिर लखि परत बगारे ।
जित तित छिटके हाड़ स्वेत कहुँ कहुँ रतनारे ॥

(उ) देख रूप लोचन ललचाने । हरखे जनु निज निधि पहचाने ॥
थके नयन रघुपति छबि देखी, पलकन हू परहरी निमेखी ॥

(१०) अलंकार से क्या समझते हो ? काव्य में अलंकारों का क्या प्रयोजन है ?

(११) उपमा-उत्प्रेक्षा, यमक-श्लेष, रूपक-उपमा—इन अलंकारों में क्या अन्तर है ? उदाहरण द्वारा स्पष्ट करो ।

(१२) निम्न लिखित पद्य खंडों में अलंकार छांटो:—

(१) तीन बेर खातीं सो तो तीन बेर खाती हैं । (१) राजा शिवराज के नगारन की धाक सुन,केते पादशाहन की छाती दरकति है । (२) यह शशि है अथवा कमल, अथवा है मुख मंजु । (४) सीय-बदन सम हिमकर नाहीं ।

(५) भरतहिं होय न राजमद, विधि, हरि, हर पद पाय ।
कब हुँ कि काँजी सीकरनि, छीर-सिन्धु बिनसाय ॥

(६) सोहत ओढ़े पीत पट, स्याम सलौने गात।
मनो नील मणि सैल पर, आतप परयो प्रभात॥
(७) दुसह दुराज प्रजान के, क्यों न बढ़ै दुख द्वन्द।
अधिक अन्धेरों जग करत, मिलि मावस रवि चन्द॥
(८) दृग उरझत टूटत कुटुम, जुरत चतुर चित प्रीति।
परति गांठ दुरजान हिए, दई नई यह रीति॥

(९) कज्जल के कूट पै दीप शिखा सोती है कि श्याम घन मण्डल में दामिनी की धारा है। (१०) हरिनी के नैना न तें, हरि! नीके ये नैन। (११) बन्दौं कोमल कमल से जगजननी के पाँय। (१२) सुवरन कौ ढूँढ़त फिरैं, कवि, कामी अरु चोर। (१३) यमुना, है यमुना सरिस, पातक नासन माँहि। (१४) मूरति मधुर मनोहर देखी।

अपठित गद्य

अपठित अवतरण के प्रश्नों का उत्तर देने में प्रायः विद्यार्थी कठिनाई अनुभव करते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि वे पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों के स्वाध्याय से जी चुराते हैं। इस कारण उनकी ग्राह्य शक्ति का पूर्ण विकास नहीं होता। अतएव विद्यार्थियों को अपठित साहित्य के अध्ययन और मनन में भी यथोचित समय देना चाहिए।

अपठित अवतरण पर प्रायः निम्न प्रकार के प्रश्न पूछे जाते हैं:—

(१) अवतरण सम्बन्धी प्रश्न; (२) व्याकरण सम्बन्धी प्रश्न; (३) रेखांकित अंशों के अर्थ और (४) अवतरण का शीर्षक, सारांश, व्याख्या, अर्थ, भावार्थ, संक्षिप्तार्थ और तात्पर्य आदि।

(१) अवतरण सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर देने से पूर्व सम्पूर्ण अवतरण को मनोयोग से कई बार पढ़ना चाहिए जिससे रेखांकित अंशों का ही नहीं वरन् पूर्ण अवतरण का आशय और प्रत्येक शब्द का भाव भली भाँति स्पष्ट हो जावे। तत्पश्चात् दिये हुए प्रश्नों को समझने का प्रयत्न किया जावे। प्रायः विद्यार्थी प्रश्नों के उत्तर देने में अवतरण की ही भाषा को ज्यों का त्यों उद्धृत कर देते हैं; किन्तु यह ठीक नहीं। प्रश्न के उत्तर का भाव अवश्य अवतरण से ही लिया जावे परन्तु उसको अपनी सरल भाषा में स्वतन्त्र रूप से व्यक्त करना चाहिए। प्रश्नों का उत्तर, जहाँ तक सम्भव हो, संक्षिप्त और सरल होना चाहिए।

(२) व्याकरण सम्बन्धी प्रश्न—जैसे, पद परिचय, समास आदि के उत्तर प्रसंगानुकूल अर्थ की दृष्टि से देने चाहिए।

(३) रेखांकित अंशों के अर्थ लिखने में कठिन शब्दों के सरलार्थ अथवा पर्याय मात्र देना ही यथोचित नहीं, वरन् उनके पूर्ण आशय अपनी सरल भाषा में इस प्रकार प्रकट किये जावें जिससे वे मौलिक कथन से प्रतीत हों; साथ ही अर्थ भी नपे-तुले शब्दों में हों, अनावश्यक लम्बे न हों। ये अर्थ अभीष्ट अंशों के ही दिये जावें, न कि अन्य शब्दों को जोड़ कर तात्पर्य दिया जावे। रेखांकित पद का यह अर्थ इतना संक्षिप्त, सार्थक और सुसंगठित हो कि मूल अंश के स्थान पर भी रखा जा सके। साथ ही, रेखांकित अंश की गूढ़ विचार धारा, अलंकार अथवा अन्तर्कथा पर भी प्रकाश डालना चाहिए।

(४) व्याख्या, सारांश, संक्षिप्तार्थ आदि का विभेद आगे दिया जाता है:—

(अ) व्याख्या या टीका (Explanation)—किसी अवतरण की प्रत्येक विशेषता का विशद विवेचन करते हुए उसके गूढ़ भावों और विचारों को भली भाँति स्पष्ट करना ही व्याख्या है। किसी गद्य अथवा पद्य-खंड की व्याख्या करते समय उसका अर्थ ही नहीं वरन् उसमें दी हुई अन्तर्कथाओं और प्रसंगों का भी विवेचन किया जाता है; उदाहरण देकर विषय को सरल और बोधगम्य बनाया जाता है; भाषा और भाव की समीक्षा करते हुए रस, छन्द और अलंकारों का निर्देश किया जाता है और अन्त में समालोचनात्मक दृष्टि से मत प्रकाशित किया जाता है। व्याख्या के प्रायः तीन भाग होते हैं:—(१) प्रसंग, (२) अर्थ, (३) विशेष।

(१) प्रसंग (प्रकरण)—इसमे लेखक के सम्बन्ध में कथन किया जाता है अथवा उन परिस्थितियों का निर्देश किया जाता है जिनसे उद्धृत अवतरण का सम्बन्ध होता है। (२) **अर्थ** द्वारा भावों का विशद विवेचन सरल और सुबोध भाषा में स्पष्ट किया जाता है। (३) **विशेष** में उन सब बातों पर प्रकाश डालना चाहिए जो प्रसंग और अर्थ में स्पष्ट न हो सकें। अलंकृत भाषा की विवेचना और 'अन्तर्कथा' आदि का निर्देश भी 'विशेष' में किया जाता है।

इस प्रकार व्याख्या द्वारा विषय को इतना बोधगम्य कर दिया जाता है कि पाठक सभी बातों को स्पष्ट रूप से समझलें।

(आ) अर्थ या सरलार्थ (Meaning)—किसी अवतरण के भावों को सरल शब्दों में प्रकट करना ही सरलार्थ है। व्याख्या के समान सरलार्थ में न तो अपना मत ही प्रकट किया जाता है और न लेखक के भावों की अलंकार, छन्द, रस आदि बतलाकर, समालोचना ही की जाती है; किन्तु छोटे छोटे वाक्यों द्वारा जटिल भावों को सरल शब्दों में स्पष्ट किया जाता है।

(इ) **संक्षिप्तार्थ** (Summary)—किसी अवतरण के मूल अर्थ को भली भाँति समझकर उसे थोड़े से थोड़े वाक्यों में प्रकट करना संक्षिप्तार्थ है।

(ई) **सारांश** (Substance)—अवतरण के मुख्य भाव को थोड़े से वाक्यों में प्रकट करना सारांश है। सारांश छोटा होने पर भी नपे तुले, सुगठित, प्रभावपूर्ण सरल वाक्यों में अवतरण के पूर्ण भाव को प्रकट करता है। सारांश में केवल मुख्य विचार को ही अपनी स्वतंत्र शैली और भाषा में प्रकट किया जावे, अन्तर्कथा और आलंकारिक प्रयोग आदि को स्थान न दिया जावे।

(उ) **आशय या तात्पर्य** (Purport)—लेखक किसी मुख्य भाव को उदाहरणों अथवा अलंकृत भाषा द्वारा प्रकट करता है। इसी मूल भाव को एक दो वाक्यों में प्रकट करना तात्पर्य है।

(ऊ) **भाव** (Sense)—तात्पर्य का भी सार 'भाव' होता है।

(ए) **शीर्षक** (Heading)—सारपूर्ण वाक्यांश अथवा शब्दों द्वारा पाठक को यह बोध कराता है कि अवतरण में किस विषय की विवेचना की गई है। शीर्षक एक या दो चुभते हुए आकर्षक शब्दों में प्रकट किया जाता है। यह प्रायः अवतरण के प्रारम्भ या अन्त में छिपा रहता है।

निम्न उदाहरण द्वारा इन सब का भेद स्पष्ट किया गया है:—

अपठित अवतरण

आजकल सब योग्यताओं का मानदण्ड रुपया है। किसी धनिक का अल्पज्ञ कृपापात्र ऊँचे पद पर विभूषित हो सकता है और बड़े से बड़ा विद्वान् धनिकाश्रय के अभाव में दर की धूल फाँकता फिरता है। धनिक का मूर्ख लड़का कालिज

में पढ़ता है और निर्धन का प्रतिभाशील लड़का प्रारम्भिक कक्षाओं के ऊपर नहीं चढ़ पाता। बड़े बड़े जगद्धितकारी काम इसलिए रुके पड़े हैं कि किसी धनिक की उधर दृष्टि नहीं पड़ती। बड़े बड़े योग्य व्यक्ति जो न केवल आन्दोलनों के परिचालक वरन् पटु राजपुरुष हो सकते हैं, केवल धनाभाव से पीछे पड़े रहते हैं। यह अभाव इसलिए अधिक खलता है कि वह शारीरिक शक्ति या प्रतिभा के अभाव की भांति नैसर्गिक नहीं है।

—श्री सम्पूर्णानन्द।

व्याख्या—वर्तमान समय में धन का महत्त्व अधिक बढ़ गया है। धनवान सर्वगुण सम्पन्न समझा जाता है। इसके विपरीत चाहे कितना ही योग्य और गुणवान व्यक्ति हो; किन्तु यदि वह निर्धन है तो समाज में उसका यथोचित आदर नहीं किया जाता। यही दशा धनिकों के कृपा पात्रों की है। यदि कोई मनुष्य अधिक विद्वान् नहीं है, किन्तु किसी धनी के आश्रय में है तो उसे राज्य में उच्च पद मिल जाता है। अँग्रेजी शासनकाल में अनेक व्यक्ति आनरेरी मजिस्ट्रेट के पदों को सुशोभित करते थे; किन्तु शिक्षा के नाम पर वे काला अक्षर भैंस बराबर थे। धन लुटाकर अनेक धनिक, जो अपने हस्ताक्षर तक करना नहीं जानते, नगर की सार्वजनिक सभा के अध्यक्ष निर्वाचित हो जाते हैं। इसके विपरीत धन के अभाव में अथवा धनिकों के कृपा पात्र न होने के कारण अनेक विद्वानों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द, अँगरेजी के प्रसिद्ध कवि और उपन्यासकार गोल्डस्मिथ और कविरत्न सत्यनारायण आदि को धनाभाव के कारण अपने जीवन में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा था।

धन की शक्ति का कहाँ तक वर्णन किया जावे। धनी का पुत्र योग्य न होने पर भी उच्च शिक्षा प्राप्त करता है और निर्धन मनुष्य का होनहार पुत्र धन की कमी से शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार अनेक लाभदायक कार्य धन के कारण रुक जाते हैं। गाँवो में अस्पतालों की महान आवश्यकता है; सड़कों के बिना ग्रामीणों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, किन्तु धन की कमी से ये परमावश्यक कार्य भी पूरे नहीं हो पाते। इसी कारण अनेक प्रतिभा सम्पन्न योग्य व्यक्ति उच्च राजपदों के अधिकारी नहीं हो पाते। किसी धनिक का आश्रय न मिलने से वे मारे मारे फिरते हैं। जिस प्रकार मनुष्यों में प्राकृतिक कारणों से शारीरिक शक्ति और प्रतिभा कम अधिक पाई जाती हैं, उसी प्रकार धन का अभाव ईश्वरीय कारणों से नहीं वरन् मनुष्य कृत है। इस कारण यह कमी मनुष्य को अधिक दुःख दायी है।

विशेष—इस गद्यांश में 'सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति' (धन में सर्व गुण विद्यमान हैं) इसी भाव का विवेचन किया गया है।

सरलार्थ—आजकल धन का महत्त्व इतना अधिक बढ़ गया है कि विद्वत्ता या योग्यता भी इसी से नापी जाती है। धनवानों के आश्रय में रहने वाला अल्पज्ञानी भी उच्च पद प्राप्त कर लेता है; किन्तु धनिक की कृपा से रहित परम विद्वान् को भी ठोकरें खानी पड़ती हैं। धनिकों के लड़के योग्य न होने पर भी उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं और निर्धनों के होनहार लड़कों को प्रारम्भिक शिक्षा भी कठिनता से मिलती है। संसार के लाभदायक कार्य धन की कमी से रुक जाते हैं। इसी प्रकार धनहीन होने के कारण योग्य मनुष्य उच्च पद प्राप्त नहीं कर सकते, यह बात इसलिए अधिक दुःखदायी है कि इस निर्धनता का कारण शारीरिक बल और प्रतिभा की तरह स्वाभाविक नहीं होता।

भावार्थ—आजकल धन का महत्त्व अधिक बढ़ गया है। योग्य और गुणी वही व्यक्ति समझा जाता है जो धनवान हो। धनवान व्यक्ति का ही समाज और राज दोनों में सम्मान होता है। किसी धनी का कृपापात्र, विद्वान् न होने पर भी, उच्च पद प्राप्त कर लेता है और निर्धन विद्वान् की कोई बात तक नहीं पूछता। धन की कमी से ही निर्धन मनुष्यों के होनहार बालक शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं। उपयोगी कार्य भी धन की कमी से पूरे नहीं होते। निर्धन होने के कारण ही प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति योग्य पदों तक नहीं पहुँच पाते। इस निर्धनता का कारण ईश्वरीय नहीं वरन् मनुष्य कृत है। अतएव यह कमी अत्यन्त दुखदायी है।

संक्षिप्तार्थ:—आजकल धन का विशेष महत्त्व है। योग्यता अथवा विद्वत्ता भी धन से नापी जाती है। धनवान ही गुणी और योग्य समझा जाता है। धन के बल से उच्च पद और उच्च शिक्षा दोनों सुलभ हो जाते हैं। निर्धनों की, विद्वान् और योग्य होने पर भी, कोई बात तक नहीं पूछता; प्रतिभा सम्पन्न होने पर भी ठोकरें खानी पड़ती हैं। इस निर्धनता का कारण ईश्वरीय नहीं वरन् मनुष्य-कृत है।

सारांश—आजकल धन का महत्त्व इतना अधिक है कि विद्वत्ता या योग्यता भी इसी से नापी जाती है। धनिकों के अयोग्य बालक उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं और निर्धनों के होनहार बालक अधिक नहीं पढ़ पाते। योग्य और गुणी व्यक्ति धनाभाव से अनेक कष्ट उठाते हैं। यह निर्धनता इसलिए अधिक दुःखदायी है कि इसका कारण ईश्वरीय नहीं वरन् मनुष्य कृत है।

तात्पर्य—आजकल धन का विशेष महत्त्व है। धनवान ही योग्य और गुणी समझा जाता है। धन के बल से उच्च शिक्षा प्राप्त की जा सकती है, योग्य न होने पर भी उच्च राज पद प्राप्त हो जाते हैं और बड़े बड़े कार्य किये जा सकते हैं। धन की कमी से यह सब सम्भव नहीं।

भाव—आजकल धन का बड़ा महत्त्व है । धन ही से सब कार्य सुलभ होते हैं और समाज में सम्मान प्राप्त होता है ।

शीर्षक—धन का महत्त्व ।

दीर्घाकार पदों का अर्थ–

(अ) आजकल धनवान ही योग्य और गुणी समझे जाते हैं ।

(आ) थोड़े ज्ञानवाला किन्तु धनवान का कृपालु व्यक्ति

(इ) किसी धनी की कृपा न होने से अनेक आपत्तियों का सामना करना पड़ता है ।

(ई) धन की कमी इसलिए अधिक दुःखदायी है कि यह मनुष्य कृत है, शरीरिक और मानसिक शक्ति के समान ईश्वरीय नहीं है ।

पद्य खण्ड का भावार्थ

अब हौं नाच्यो बहुत गोपाल ।
कामक्रोध को पहिरि चोलना, कंठ विषय की माल ।।
महामोह के नूपुर बाजत, निन्दा शब्द रसाल ।
भरम भरो मन भयो पखावज, चलत कुसंगति चाल ।।
तृसना नाद करति घट भीतर, नाना विधि दै ताल ।
माया को कटि फैंटा बाँध्यो, लोभ तिलक दियो भाल ।।
कोटिक कला काछि दिखराई; जल थल सुधि नहिं काल ।
सूरदास की सबै अविद्या, दूर करहु नँद लाल ।।

भावार्थ—हे गोपाल, मैं अज्ञान वश इस संसार में बहुत नाच चुका । काम-क्रोध रूपी पोशाक धारण करके गले में विषय की माला पहन ली है; पैरों में मोह के घुँघरू बजते हैं; दूसरों की निन्दा के रसीले गान गाता हूँ; संशय से भरा मन मृदंग का काम देता है और कुसंगति की चाल चलता हूँ । तृष्णा की भावना अनेक प्रकार की तालें देकर

भीतर से स्वर भरती हैं (हृदय में निरन्तर इच्छाएँ उत्पन्न होती रहती हैं) कमर में माया का कमरबंद बंधा है और लोभ का तिलक मस्तक पर लगा है। हे भगवान, ऐसा रूप बनाकर, न जाने किस समय से, मैंने जल और पृथ्वी दोनों पर अनेक प्रकार की अनौखी कलाएँ दिखलाईं (इस संसार में चौरासी लाख योनियों में अनेक शरीर धारण किये) परन्तु आपको न रिझा सका। हे नन्दलाल, सूरदास के अज्ञान को अब तो दूर कर दो जिससे इस संसार में अधिक न नाचना पड़े (प्रवृत्ति मार्ग की इच्छाओं का शमन करदो जिससे आवागमन की बाधा दूर हो जावे)।

विशेष—इस पद में सांग रूपक है। नट का रूपक लेकर चोलना, माला, नूपुर, चाल, नाद, फेंटा आदि को काम-क्रोध, विषय, मोह, कुसंगति, तृष्णा, माया से समानता दी है।

'गोपाल' और 'नन्दलाल' में परिकरांकुर अलंकार है। ये दोनों शब्द विशेष अर्थ के लिए प्रयुक्त किये गये हैं। 'गोपाल' का अर्थ है—'इन्द्रियों का स्वामी'—जो इन्द्रिय से उत्पन्न बिकारों को रोक सकता है। 'नन्दलाल' से यह प्रकट किया गया है कि गोपियों के साथ नाचने से आप नाचने में प्रवीण हैं, अतएव मेरे परिश्रम और कलाओं को समझकर रीझो और मेरे जन्म-मरण के नाच को बन्द करदो—अधिक नाच न नचाओ।

अपठित गद्य सम्बन्धी अभ्यास

(१)

मनुष्य प्रगति शील है। स्वस्थ मनुष्य और स्वतंत्र जातियाँ उन्नति और विकास की पराकाष्ठा तक पहुँचने की कोशिश करती हैं। मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होती हैं। हर एक धर्म का मानने वाला अपने धर्म को सार्वभौम-धर्म कहता है। इसका कारण यह है कि सब धर्म वाले परमात्मा की सर्व

व्यापक, अप्रतिहत शक्ति में विश्वास रखते हैं। इस विश्वास के कारण वे समझते हैं कि एक शासन, एक नियन्ता के राष्ट्र में एक ही तरह का कानून चलना चाहिए। राष्ट्र में रहने वाले व्यक्ति एक ही धर्म के मानने वाले होने चाहिए।

(क) दीर्घाकार शब्दों और वाक्यों का अर्थ समझाइए।

(ख) ऊपर दिए हुए अवतरण का आशय लिखिए।

(ग) "मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ भिन्न भिन्न रूपों में प्रकट होती हैं"—यह बात दृष्टान्त देकर समझाइए।

(२)

संसार में भिन्न-भिन्न जातियों का सदैव उत्थान-पतन होता रहता है परन्तु कुछ समय के बाद एक दूसरी ही जाति पहिली का स्थान ले लेती है। प्राचीन काल में जो जातियाँ उन्नति की चरम सीमा तक पहुंच गईं थी, **उनका गौरव अब अतीत काल की कथा मात्र है। काल के अनन्त स्रोत में उनकी जीवन-धारा लुप्त हो गई है,** परन्तु काल के वक्षःस्थल पर वे अपना अक्षय चिह्न छोड़ गई हैं। संसार से उनका अस्तित्व उठ गया। परन्तु संसार की गति को उन्होंने जिस ओर परिवर्तित कर दिया उसी ओर उसको अग्रसर होना पड़ा। जिन मार्गों पर चलकर मानव-जाति वर्तमान अवस्था को प्राप्त हुई। वे मार्ग उन्हीं के द्वारा निर्दिष्ट किए गए थे। संसार के **ज्ञानागार** में उनकी भी सम्पत्ति रक्खी हुई है। **आधुनिक सभ्यता का भवन उन्हीं की निर्मित भित्ति पर स्थापित है।**

(अ) दीर्घाकार अंशों का अर्थ सरल भाषा में लिखिए।

(इ) आधुनिक सभ्यता के निर्माण में प्राचीन विनष्ट जातियों का क्या हाथ है? कुछ ऐसी जातियों के नाम बताइए।

(उ) ऊपर लिखित वाक्य समूह का भाव अपने शब्दों में सक्षेप में प्रकट कीजिए।

(सं० प्रा० १९३६ ई०

(३)

रामचरितमानस में रावण का जितना चरित्र हमारी दृष्टि में पड़ता है उसमें आदि से अन्त तक उसकी एक विशेषता हमें दृष्टिगत होती है—वह है घोर भौतिकता। कदाचित् आत्मा की उपेक्षा करते हुए भौतिक शक्ति का अर्जन ही गोसाईं जी राक्षसत्व का अभिप्राय समझते थे। उसका अपार बल, विश्व-विश्रुत वैभव, उसकी धर्म हीन शासन प्रणाली जिसमें ऋषि मुनियों से कर वसूल किया जाता था, उसके राज्य भर में धार्मिक अभिरुचि का अभाव था, ये सब उसके भौतिकवाद के द्योतक हैं। प्रश्न उठ सकता है कि वह बड़ा तपस्वी भी तो था? किन्तु उसके तप से उसकी भौतिकता का ही परिचय मिलता है। वह तप आध्यात्मिक उन्नति या मुक्ति के उद्देश्य से नहीं किया था वरन् इस कामना से कि भौतिक सुख को भोगने के लिए वह इस शरीर से अमर हो जाय।

(क) गोस्वामी तुलसीदास का अभिप्राय राक्षसत्व से क्या था?

(ख) तपस्वी होते हुए भी रावण क्यों राक्षस कहा गया है?

(ग) दीर्घाकार अंशों का अर्थ सरल भाष में लिखिए!

(घ) अन्तिम वाक्य (वह तप· · ·ऊपर हो जाय) का वाक्य-विश्लेषण कीजिए।

(सं० प्रा० १९३७ ई०)

(४)

प्रेमचन्द का यथा समय भारतीय साहित्य में वही सम्मान होगा जो डिकेंस और टाल्सटाय को योरोपीय साहित्य में प्राप्त है। भारत का हृदय कलकत्ते की गलियों में नहीं है, न वह शिक्षित बंगालियों

की अट्टालिकाओं में हैं। उसका हृदय देहात में है, किसानों के टूटे फूटे झोंपड़े में है। हरे भरे खेतों को देखकर उसे शान्ति मिलती है, अनावृष्टि से वह सूख जाता है। उस हृदय का मार्मिक चित्र जिसने खींचा है वह देशभर का धन्यवाद पात्र है। अभी भारतीय किसानों में शिक्षा का अभाव है अब तक उन्हें मालूम नहीं है कि उन्हीं के समान किस सरल-प्रकृति तथा अस्वस्थ व्यक्ति ने शारीरिक और मानसिक वेदनाएँ झेलते हुए उनके दुखों और आशाओं की कथा कही है। जब वे शिक्षित हो जावेंगे, जब उनकी आँखें खुलेंगी, और अपने पूर्वजों का जीता जागता चित्र जब वे प्रेमचन्द के उपन्यासों में देखेंगे, तब इनके विधाता की पूजा होगी। हाँ अभी कुछ समय तक नहीं।

(क) दीर्घाकार अंशों का अर्थ सरल भाषा में लिखिए।

(ख) इस गद्य-खण्ड में प्रेमचन्द का क्या महत्त्व दिखलाया गया है।

(ग) प्रेमचन्द का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

(५)

यह प्रायः देखा जाता है कि बहुत से युवक जो जीवन संग्राम में पुस्तकों का बोझ लादे बिना प्रवेश करते हैं, अपनी व्यावहारिक कार्यशीलता के कारण अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त करते चले आते हैं। उन्हें कोई शिक्षित मनुष्य अपनी भाषा में अपढ़ भले ही कहले परन्तु ऐसे ही मनुष्य अपने साहस और अपनी स्वाभाविक समझ तथा कार्य संलग्नता के कारण डिग्री-प्राप्त किन्तु अकर्मण्य युवकों में बाजी मार ले जाते हैं। ऐसे मनुष्य फूंक फूंक कर पैर रखते हैं, परन्तु उनमें आत्म विश्वास रहता है, अपने उद्देश्यों में वे विचलित नहीं होते और सफलता उन्हें मदांध नहीं करती। इनके विपरीत ऐसे मनुष्य, चाहे वह बहुत कुछ पढ़े-लिखे और कुशाग्र बुद्धि ही क्यों न हों, जो अपनी अक्ल के नशे ही में चूर रहते हैं, जो अपना उद्देश्य

स्थिर नहीं कर सकते और जो धैर्यपूर्वक उसमें तत्पर नहीं रह सकते, प्रायः जीवन संग्राम में विफल रहते हैं और **इस विफलता का दोष** वे ईश्वर या समाज के माथे मढ़ते हैं।

(क) दीर्घाकार अंशों का अर्थ सरल हिन्दी-भाषा में लिखिए।

(ख) किन दो प्रकार के मनुष्यों की तुलना इस गद्य-खंड में की गई है? एक की सफलता और दूसरे की विफलता के कारण बताइए।

(ग) दृष्टान्त देकर गद्य-खंड में प्रकट किए गए मत की पुष्टि कीजिए।

(सं० प्रा० १९३८ ई०)

(६)

अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान बहुधा हमारे संकुचित व्यवहारों का सुधारक होता है। जब हम राह भूलकर भटकने लगते हैं, तब वही ज्ञान हमारा **विश्वसनीय पथ प्रदर्शक** बन जाता है। पत्र-सम्पादक अपनी शान्ति-कुटी में बैठा हुआ **धृष्टता और स्वतन्त्रता के साथ** अपनी प्रबल लेखनी से मंत्रि-मंडल पर आक्रमण करता है। परन्तु ऐसे अवसर भी आते हैं। जब वह स्वयं मंत्रि-मंडल में सम्मिलित होता है। मंडल के भवन में पग धरते ही उसकी **लेखनी कितनी मर्मज्ञ, कितनी विचार-शील, कितनी न्याय-परायण** हो जाती है। इसका कारण उत्तरदायित्व का ज्ञान है। नवयुवक युवावस्था में कितना उद्दंड रहता है। माता-पिता उसकी ओर से कितने चिन्तित रहते हैं। वे उसे कुल-कलंक समझते हैं। परन्तु थोड़े ही समय में परिवार का बोझ सिर पर पड़ते ही वही अव्यवस्थित चित्त उन्मत्त युवक कितना धैर्यशील, कैसा शाँत चित्त हो जाता है। यह भी उत्तर-दायित्व के ज्ञान का फल हैं।

(क) दीर्घाकार अंशों का अर्थ सरल हिन्दी में लिखिए।

(ख) ऊपर दिए हुए अवतरण में किस बात पर विशेष बल

दिया गया है, और वह हमारे दैनिक जीवन में कितनी उपयोगी है ?

(ग) उत्तरदायित्व का सरलार्थ क्या है ? उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न हो जाने पर मनुष्य के स्वभाव में अन्तर क्यों हो जाता है ?

(सं० ग० १९३९ ई०)

(७)

नवाभ्यासी कवियों को सद्य कविता के **चक्कर में पड़कर पथभ्रष्ट न होजाना चाहिए**। पहले कविता सम्बन्धी ग्रन्थों का अभ्यास करें, प्राचीन उत्तम काव्यों का निरन्तर अनुशीलन करें, किसी सत्कवि से परामर्श लेते रहें, अपनी रचना को बार-बार समालोचक की दृष्टि से देखते रहें, इस प्रकार के सतत अभ्यास से जब कविता में **चमत्कार-चारुता और बन्ध सौष्ठव** आजाए तब अखाड़े में उतरें। **कवि सम्मेलन कविता की एक प्रदर्शिनी है**। प्रदर्शिनी में शिल्प-कला के सर्वोत्कृष्ट नमूने ही रक्खे जाते हैं। निष्कृष्ट और भद्दे माल को कोई आँख उठाकर देखता भी नहीं।

(क) उपर्युक्त वाक्य समूह का सार अपनी भाषा में लिखो।

(ख) समालोचक दृष्टि किसे कहते हैं ? हिन्दी साहित्य के किसी अच्छे समालोचक का नाम लिखिए।

(ग) दीर्घाकार वाक्यांशों का अर्थ सरल हिन्दी में लिखिए।

(घ) कवि सम्मेलन किसे कहते हैं ? आजकल होने वाले कवि सम्मेलनों के विषय में आपकी क्या धारणा है ?

(सं० प्रा० १९४० ई०)

(८)

१—प्रायः लोगों का विचार है कि कल्पना केवल कवि की ही संपत्ति है ; चित्रकार का उससे विशेष प्रयोजन नहीं है। पर **यह बात सत्य की सीमा से परे है**। कवि और चित्रकार दोनों ही स्वर्गीय पक्षी की भान्ति कल्पना के रंग-बिरंगे पंखों पर उड़कर **अमर्त्य**

एवं अपार्थिव सौन्दर्य को खोज में उन्मत्त हो जाते हैं। **चित्रकार को कला की पराकाष्ठा अनुकरण करने में नहीं है।** यह तो वर्णनात्मक कविता की भाँति निकृष्ट कोटि की कला है। **शिल्पकार का चातुर्य इसमें नहीं है कि वह किसी वस्तु का प्रतिरूप बना दे।** उसकी कला आदर्श रूप बनाने में है। चित्रकार और कवि के लिए भी यह बात है।

(क) उपर्युक्त अवतरण में कवि और चित्रकार की किस विषय में तुलना की गई है ? लेखक के अनुसार कवि और चित्रकार की सर्वोत्तम रचना में क्या विशेषता होनी चाहिए !

(ख) वर्णनात्मक कविता किसको कहते हैं ! किसी वर्णनात्मक कविता की चार पँक्तियाँ उद्धृत कीजिए।

(ड) दीर्घाकार वाक्यांशों का अर्थ सरल हिन्दी में लिखिए।

(सं० प्रा०१९४१ ई०)

(६)

यह बात स्पष्ट है कि **मानव समाज की उन्नति उस समाज के अन्तर्भूत व्यक्तियों के सहयोग और साहचर्य से होती है,** पर इस सहयोग और साहचर्य का साफल्य तभी सम्भव है जब **परस्पर भावों या विचारों के विनियम का साधन उपस्थित हो।** भाषा ही इसके लिए मूल साधन है और इसी की सहायता से मानव समाज की उन्नति हो सकती है। अतएव भाषा का समाज की उन्नति के पास बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। यहाँ तक कि एक के बिना दूसरे का अस्तित्व ही सम्भव नही। पर यहीं **उनके सम्बन्ध के साफल्य की इति श्री भी नहीं होती।** दोनों साथ ही साथ चलते हैं। समाज की उन्नति के साथ भाषा की उन्नति और भाषा की उन्नति के

साथ समाज की उन्नति होती रहती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि उनका अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

(क) उपर्युक्त अवतरण का साराँश अपनी भाषा में लिखो।

(ख) भाषा के अतिरिक्त विचार विनियम के क्या साधन हो सकते हैं?

(ग) दीर्घाकार वाक्याँशों का अर्थ सरल हिन्दी में लिखो।

(सं० प्रा० १९४२ ई०)

(१०)

देश में अँगरेजी राज्य फैला। हम ने एक विदेशी साहित्य से परिचय प्राप्त किया। उसके नवीन सौन्दर्य ने हमें चकित कर दिया। **साये के सामने हम साड़ी के सौन्दर्य को तुच्छ समझने लगे।** शेक्सपियर, वर्डसवर्थ और टेनिसन के सामने **कालिदास और तुलसीदास की आभा हमें फीकी मालूम पड़ने लगी।** उधर हमारे संसर्ग से विदेशियों ने भी हमारे साहित्य के दर्शन किए। हम तो उनके साहित्य की सच्ची परख न कर सके, और करते भी तो हमारी कौन सुनता परन्तु उन्होंने हमारी आँखें अवश्य खोलदीं। उन्होंने कहा कि तुम **हमारे साहित्य पर लट्टू होरहे हो।** अपने साहित्य को तो देखो। कालिदास, सूरदास, और तुलसीदास तुम्हारे देश के ही नहीं, संसार के साहित्य-रत्न हैं।

(क) उपर्युक्त अवतरण के दीर्घाकार वाक्यांशों का अर्थ सरल हिन्द में लिखो।

(ख) जिन साहित्यिकों का उल्लेख यहाँ हुआ है, उनमें से एक भारतीय और एक अँगरेज का सँक्षिप्त परिचय दीजिए।

(ग) अन्तिम वाक्य के भावार्थ को स्पष्ट कीजिए।

(सं० प्रा० १९४३ ई०)

(११)

संतोष की बात है कि हिन्दी भारत के मद्रास और आसाम जैसे सुदूर प्रान्तों में भी **अपना घर करती जा रही है**। अब भारत का कोई ऐसा नगर नहीं रह गया है जहाँ हिन्दी का बोल-चाला करने वाले नागरिक न मिल सकें। यों हिन्दी का राष्ट्रीय अधिकार बढ़ रहा है। परन्तु खेद है कि हिन्दी भाषा का जिस प्रकार उत्तरोत्तर प्रचार हो रहा है, उसी प्रकार हिन्दी साहित्य की निधि नहीं बढ़ रही है। निकट भविष्य में हमारा काम पूँजी से ही न चल सकेगा जो सूरदास और तुलसीदास हमारे लिए छोड़ गए हैं। हिन्दी साहित्य का काव्यांग ही यथेष्ट पुष्ट है, परन्तु **अन्य अंग राष्ट्रीय सेवा का गुरुतर भार सम्हालने योग्य नहीं हैं**। भावी युग में अंगरेजी का प्रचार कम होने पर अहिन्दी भाषी भारतीय हिन्दी इसलिए ही न सीखेंगे कि **काशी और दिल्ली के सामाजिक मनोविनोद में सम्मिलित हो सकें**, वे हिन्दी माध्यम से अपने ज्ञान-भाण्डार की वृद्धि करना भी चाहेंगे। हिन्दी साहित्यिकों के सामने इस समय सब से महत्त्वपूर्ण प्रश्न यही है कि किस प्रकार शीघ्रातिशीघ्र वे अपने साहित्य के निर्बल अंगों की पुष्टि करें, **एकांगी को सर्वांग पूर्ण कर सकें**।

(क) उपर्युक्त अवतरण के दीर्घाकार वाक्यांशों का अर्थ सरल हिन्दी में लिखिए।

(ख) सूरदास और तुलसीदास जो साहित्यिक पूँजी हमारे लिए छोड़ गए हैं उसका संक्षिप्त विवरण दीजिए।

(ग) किस प्रकार हिन्दी राष्ट्रीय पद पाने योग्य हो सकती है?

(सं० प्रा० १९४४ ई०)

(१२)

तुलसीदासजी के रामचरित मानस में काव्य और संगीत का अपूर्व संयोग है। संगीत केवल राग-रागनी के भीतर ही आबद्ध नहीं है।

उसकी व्याकुलता किसी भी ढाँचे में नहीं डाली जा सकती है। उनके इस काव्य में मानस-चरित्र के व्यक्तिगत विकास के साथ ही साथ, पानी के ऊपर तेल की तरह, भक्ति रस का स्रोत अलग से बहता जाता है। तुलसीदास की यह अभिनव रचना उनके हृदय स्थित आनन्द का ही उद्गार है। उन्होंने यह ग्रन्थ "स्वान्तः सुखाय" ही लिखा है। यही कारण है कि हम आज विज्ञ और अनभिज्ञ सभी व्यक्तियों पर समभाव से उसका प्रभाव देख पाते हैं। यदि यह रचना आनन्द स्थित न होकर लोगों में भक्ति के प्रचार के भाव से लिखी गई होती, तो हम इसका यह आनन्द कदापि न देख पाते।

(राज० १९३१)

(क) रामचरित-मानस की लोक प्रियता का लेखक ने क्या मुख्य कारण बतलाया है। स्पष्ट रीति से समझाइए।

(ख) ऊपर के अवतरण में दीर्घाकार पद का भाव लिखिए।

(१३)

पुस्तकों के हम सब ऋणी हैं। ये अध्यापक हम को बिना दण्डलकुट प्रहारके बिना कुटिल शब्द कहे वा क्रोध किये और बिना द्रव्य लिए हुए ही शिक्षा दे सकते हैं। यदि आप इनके सन्निकट जाइए तो ये सोते न मिलेंगे। यदि आप जिज्ञासु हैं और इनसे प्रश्न करते हैं तो ये आप से परोक्ष न रखेंगे। यदि आप अज्ञानी हैं तो वे आपकी मूर्खता पर हँसेंगे नहीं। इससे बुद्धि तथा ज्ञान से पूर्ण पुस्तकालय इस लोक की समस्त सम्पत्ति से बहुमूल्य है और किसी स्पृहणीय वस्तु की तुलना उससे नहीं की जासकती। सच तो यह [illegible], धर्म व विज्ञान को जानना चाहता है तो उसे निश्चय पुस्तकों से प्रेम करना चाहिए।

(राज० १९३२)

(क) ऊपर के अवतरण में दीर्घाकार पदों का भाव स्पष्ट लिखिए।

(ख) ऊपर के अवतरण में पुस्तकों की तुलना किससे की गई है और किसे श्रेष्ठ बतलाया है।

(१४)

अब तो विद्वानोंका भी ध्यान मातृ-भाषा की ओर और भी अधिकता से आकर्षित होने लगा। उन लोगों का **जिन्होंने अन्य साहित्यों में अगणित रत्न के ढेर देख डाले थे,** उस समय के मातृ-भाषा के साहित्य से सन्तोष न हो सका। अतः अब दिनों दिन हिन्दी के **विविध अंगों की पूर्ति की जाने लगी।** क्योंकि इस संसार में **मनुष्य को उसका सात्विक असंतोष ही उसे कार्य में नियुक्त करता है और इसी प्रकार गुह्य ज्ञान का अन्वेषण होता है।**

ऊपर के अवतरण में दीर्घाकार पदों का भाव स्पष्ट कीजिए।

(राज० १९३३)

(१५)

सामायिक परिस्थिति और देश की दशा का प्रभाव कविता पर भी अनिवार्य रूपसे पड़ता है। **नायिका-भेद में लीन, विरह-वेदना से मूर्छित शृंगारी कवि** भी परिस्थिति से विवश होकर वीणा की मधुर झनकार में ऐसा **मारू राग अलापने लगते हैं,** जो क्रान्ति का कारण बन जाता हैं। इतिहास उसका साक्षी है। समय पड़ने पर **कुसुम-सुकुमारी कोकिल-कंठी कुलललनाओं ने** अपनी मधुर और **ओज पूर्ण भर्त्सना से** कायर पुरुषों को पुरुष सिंह बना दिया है, **रणभीरुओं को समराँगण में हँसते-हँसते प्राणाहुति देने पर उद्यत कर दिया है,** जो काम प्रचंड रणवाद्य नहीं करा सका **वह एक हृदयवेधी मधुरोपालंभ और मीठी चुटकी ने करा दिया है।** मानव हृदय के इसी रहस्य को लक्ष्य में रख कर प्राचीन आचार्यों ने काव्य प्रयोजनों में

'कान्ता सम्मिततयोपदेशयुजे' को स्थान दिया है। जिन मत्त हृदयों पर राजाज्ञा और गुरूपदेश का कठोर अंकुश असर नहीं करता वे भी कान्ता के कोमलकान्त परामर्श की अवहेलना नहीं कर सकते। जो कविता या संगीत श्रोता की हृत्तन्त्री के तार को नहीं छू सकता-जिसमें हृदयंगमता नहीं है—वह चाहे जिस भाषा में हो, कवि की भावना कितनी ही उदात्त क्यों न हो उसका कुछ भी प्रभाव न पड़ेगा। अरण्यरोदन होकर रह जायगा।

—पद्मसिंह शर्मा

प्रश्न

१—उपर्युक्त गद्य-खंड का उपयुक्त शीर्षक लिखो।

२—दीर्घाकार पदों की व्याख्या करो।

३—'सामयिक परिस्थितियों का प्रभाव कविता पर पड़ता है।' इस कथन की पुष्टि उदाहरण द्वारा करो।

४—'कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे' से क्या समझते हो?

(१६)

और आज फिर एक उद्बुद्ध बुद्ध—जिसे हम मोहनदास कर्मचन्द गांधी कहते हैं— मानव-समूह को भव-भय से मुक्त करने के लिए, मानव-हृदय की भ्रान्ति और उसके त्रास को मिटाने के लिये, नर को नारायणत्व का सन्देश देने के लिए, ७८ वर्ष की अवस्था में महाभिनिष्क्रमण कर रहा है। "हाथ लकुटि, कामरि का खोई, गूँधत कीच सनेहा"—इस बीसवीं सदी में गांधी महाराज आज फिर से भगवान बुद्ध देव के महाभिनिष्क्रमण की महा मानवी वेदना को व्यक्त कर रहे हैं। पूर्वी बंगाल की शस्य-श्यामला, पंकिल किन्तु रक्त रंजिता भूमि आज इस युग-पुरुष के चरण-चिन्हों से अंकित होकर हुलस उठी है।

प्रश्न

१—उपर्युक्त गद्य-खंड का शीर्षक लिखिए।

२—गांधीजी के जीवन का उद्देश्य क्या था ?

३—गाधीजी की समता बुद्ध जी से किस प्रकार कर सकते हो ? दोनों के समय की मानव दशा कैसी थी ?

४—दीर्घाकार पदों का भावार्थ लिखो।

(१७)

गुण ग्राहकता भी समालोचक के लिए एक आवश्यक गुण है। अपनी आलोच्य वस्तु में उसे प्रथम गुणों की ही ओर दृष्टि डालनी चाहिए और उन्हीं को ढूँढ़ कर **चारु चटकीले रंगों से सुसज्जित कर प्रकाशित करना चाहिए**। "सर्वज्ञ और निर्दोष कोइ भी नहीं" इस पर ध्यान रख उसे दोषों की ओर एक प्रकार से **उपेक्षा की ही दृष्टि रखनी चाहिए**, इसी आधार महात्मा तुलसी दास ने कहा है :—

"संत-हंस गुन-पय गहहिं, परिहरि वारि-विकार।"

किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि दोष की **नितान्त ही उपेक्षा करनी चाहिए**। दोष प्रायः दो प्रकार के होते हैं। कुछ तो ऐसे होते हैं जो क्षम्य होते हैं और कुछ इतने हानिकारक होते हैं कि वे अक्षम्य ही माने जाते हैं। अस्तु आलोच्य वस्तु के ऐसे दोषों को दिखला देना अनुचित नहीं जो **अधिक खटकने वाले और अनर्थ कारक हैं**।

—रामशंकर 'रसाल'।

(१) गुण ग्राहकता से क्या तात्पर्य है ?

(२) समालोचना का क्या उद्देश्य है ? दोषों की उपेक्षा करने से साहित्य को क्या हानि हो सकती है ?

(३) 'संत-हंस गुन-पय गहहिं, परिहरि वारि विकार' के भाव को भली भांति स्पष्ट करिये

(४) दीर्घाकार अंशों के अर्थ लिखिये।

(५) "सर्वज्ञ और निर्दोष कोई भी नहीं"—इस कथन का भाव स्पष्ट करिए।

(१८)

वर्तमान युग में भारतीय विद्वानों का ध्यान राष्ट्र-लिपि की आवश्यकता की ओर आकृष्ट हो चुका है। बहुमत देवनागरी लिपि के पक्ष में ही मालूम होता है, तथापि कभी कभी एकाध ऐसे बुद्धिमान देखने में आते हैं **जो सरासर उलटी गंगा बहाने का प्रयत्न करते हैं।** तुर्की भाषा का उदाहरण और अंतर्राष्ट्रीयता की दोहाई देकर वे रोमन लिपि को भारत की राष्ट्र लिपि प्रमाणित करने का प्रयत्न करते हैं। यदि तुर्की ने रोमन लिपि को अपनाया, तो **उसके पास चारा ही क्या था ?** वहाँ तुर्कों की कोई अपनी लिपि तो थी ही नहीं। यदि प्रचलित अरबी लिपि के विरुद्ध उन्होंने रोमन लिपि को अपनाया, तो उसका कारण था अरबी लिपि की अवैज्ञानिकता और रोमन लिपि **के अखंड योरपीय साम्राज्य से उनके देश की सम्राट था।** योरप से हजारों मील दूर भारतवर्ष को क्या आवश्यकता है कि वह [illegible], अपूर्ण और क्लिष्ट रोमन लिपि को राष्ट्रीय पद दे जब अपनी देवनागरी लिपि स्वयं स्वरों की बहुलता तथा स्वाभाविक वैज्ञानिकता में **आज भी अपना सानी नहीं रखती ?**

(क) उपर्युक्त अवतरण के दीर्घाकार वाक्यांशों का अर्थ सरल हिंदी में लिखिए।

(ख) आधुनिक तुर्की ने रोमन लिपि कों क्यों अपनाया है ?

(ग) देवनागरी और रोमन लिपियों के पक्ष [illegible] में आपके क्या विचार हैं ?

(सं० प्रा० १९५४ ई०)

(१६)

१। **भारत के सौभाग्य-सूर्य की प्रथम रश्मियाँ हमें अब दिखाई देने लगी हैं।** बहुमत से हिंदी भारत की राष्ट्र-भाषा मानी जा चुकी है और यह निश्चित है कि भावी भारत में शिक्षा और संस्कृति का अधिकांश प्रसार हिंदी द्वारा ही होगा। **परिवर्तित परिस्थिति में भारतवासियों का अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण पुष्ट करने के लिए** एवं विदेशों में भारतीय संस्कृति का प्रचार करने के लिए यह आवश्यक होगा कि हिंदी के विद्वान् विभिन्न देशों की संस्कृति और विचार धारा पर हिंदी में मौलिक ग्रन्थ लिखें और विदेशियों के सामने उन्हीं की भाषा में भारतीय संस्कृति का सच्चा चित्र रक्खें। यह **अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक विनिमय** तभी होसकता है जब हिंदी के विद्वान् उपर्युक्त सेवा के लिए निर्दिष्ट विदेशी भाषाओं और उनके साहित्य का अध्ययन करें। इस महत्त्वपूर्ण सेवाकार्य की तैयारी अभी से आवश्यक है। संयुक्त प्रांत प्राचीन काल से भारतीय संस्कृति का केन्द्र रहा है। इस प्रांत की पावन भूमि में ही राम, कृष्ण, बुद्ध और तुलसीदास ने जन्म लिया है। यहाँ की मातृ-भाषा को ही राष्ट्र-भाषा का पद प्राप्त है। अतएव संयुक्त प्राँत के हिंदी प्रेमी युवक-युवतियों पर **इस भावी सेवा कार्य का गुरुतर भार विशेष मात्रा में है।**

(क) उपर्युक्त अवतरण के दीर्घाकार वाक्यांशों का अर्थ सरल हिंदी में लिखिए।

(ख) विदेशी भाषाओं का अध्ययन हमारे लिए क्यों आवश्यक है?

(ग) संयुक्त प्रांत की जिन विभूतियों के नाम उपर्युक्त अवतरणों में आये हैं उनमें से किन्हीं दो का भारतीय संस्कृति में स्थान निश्चित कीजिए।

२। नीचे लिखे मुहावरों में से किन्हीं चार का प्रयोग वाक्यों मे कीजिए:—

आँखों में धूल झोंकना; कोयलों पर मोहर-छाप; बंदर के गले मे मोतियों की माला; भरे समुंदर घोंघा हाथ; दिन ईद रात शब्बरात; नाच न जाने आँगन टेढ़ा।

३। नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर लिखिए:—

(क) सु, अनु और दुः उपसर्ग लगाकर प्रत्येक प्रकार के तीन तीन शब्द बनाइये।

(ख) नीचे लिखे शब्दों में से किन्हीं तीन का संधि-विग्रह कीजिए और समास-भेद लिखिए:—

रामोपासक, यावज्जीवन, धर्माधर्म, नराधम।

(सं० प्रा० १६४६)

(२०)

अमेरिका के निवासी अपनी मौलिकता और नूतन आविष्कार प्रियता के लिए समस्त संसार में प्रसिद्ध हैं. परन्तु अनुकरण करने मे भी उनसे बढ़कर कोई न मिल सकेगा। फल यह होता है कि नए व्यवसाय या आविष्कार की छीछालेदर, उसका दुरुपयोग और पतन जितना अधिक वहाँ होता है। उतना अन्यत्र नहीं होता। वहाँ संसार का छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा व्यापार नवीनता और मौलिकता के आकर्षक वस्त्रों में ढक दिया जाता है। ज्योंही दूसरे लोग उसकी सफलता और लाभ को देखते हैं; त्योंही उस व्यापार मे एक दो नहीं, सहस्रों मनुष्य कूद पड़ते हैं। वहाँ का व्यापारी जन-समुदाय समुद्र के ज्वार भाटे की भाँति बड़े वेग से एक ही ओर दौड़ पड़ता है और अन्त में सब के सब किसी चट्टान से टकराकर

दिवालिए बन जाते हैं। आज भारतवर्ष के कई नगरों में वकीलों के व्यवसाय और नौकरी की भी प्रायः यही दशा है। किसी मनुष्य की बुद्धि के द्वारा ढूँढ़े गए किसी लाभकारी उद्योग में इस प्रकार की भीड़ करने से उसमें होने वाली आय बहुत अधिक घट जाती है। यह आवश्यक नहीं कि **विश्व विजयी होने के लिए कोई नैपोलियन किसी सिकन्दर की पुरानी तलवार को ढूँढ़ता फिरे।**

(क) उपर्युक्त अवतरण का सारांश लिखिए।

(ख) दीर्घाकार अंशों का आशय स्पष्ट कीजिए।

(ग) अमेरिका के लोगों को अनुकरण करने से क्या हानि होती है?

(सं० प्रा० १९४७ ई०)

(२१)

प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है। जो जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिप्लुत रहती है वे सब उसके भाव उस समय के साहित्य की समालोचना से भली भाँति विदित हो सकते हैं। मनुष्य का मन जब शोक संकुल. क्रोध से उद्दीप्त अथवा अन्य किसी प्रकार की चिन्ता से चिंचित रहता है तब उसकी मुखच्छवि तमसाच्छन्न, उदासीन और मलीन रहती है। उस समय उसके कण्ठ से जो ध्वनि निकलती है वह भी या तो फुटही ढोल के समान सुर, ताल और लय से रहित, या करुणापूर्ण गदगद् तथा विकृत स्वर-संयुक्त होती हैं। वही चित्त जब आनन्द-लहरी से उद्वेलित हो नाच उठता है, और बाँसों उछलने लगता है, तब मुख विकसित कमल-सा प्रफुल्लित नेत्र मानो हँसता-सा, अङ्ग भङ्ग स्फूर्ति से फिरहरी की नाईं फरका करते हैं। कंठ-ध्वनि भी नव-वसन्त-मद-मत्त कोकिला के कण्ठरव से भी अधिक मधुर और सुहावनी मन को भाती

है। मनुष्य के सम्बन्ध में इस अनुल्लंघनीय नैसर्गिक नियम का अनुसरण प्रत्येक देश का साहित्य भी करता है।

(क) उक्त अवतरण में "साहित्य समाज का आदर्श" (दर्पण) है—इसको सिद्ध करने के लिए किन-किन युक्तियों का प्रयोग किया गया है ? विस्तार पूर्वक स्पष्ट कीजिए।

(ख) इस अवतरण का सारांश लिखिए।

(ग) करुणा-पूर्ण, आनन्द-लहरी, कण्ठ-रव; नैसर्गिक-नियम—इनके समास बतलाइए।

(घ) तमसाच्छन्न, उद्वेलित, प्रत्येक, अनुल्लंघनीय—इनका सन्धि-विच्छेद कीजिए।

(सं० प्रा० १९४८ ई

(२२)

१—आर्य सभ्यता के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य है—उसके द्वारा इहलोक में **सर्वाङ्गीण** (शारीरिक, मानसिक, साम्पत्तिक और नैतिक) अभ्युदय और परलोक में **परम निःश्रेयस मोक्ष की** प्राप्ति ऋषियों की दृष्टि में विद्या वही है जो हमें अज्ञान के बन्धन से मुक्त करदे —सा विद्या या विमुक्तये। इसी उद्देश्य से आर्य जाति के पवित्र हृदय और **समदर्शी** त्रिकालज्ञ ऋषियों ने चार आश्रमों ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास—की सुन्दर व्यवस्था की थी! ब्रह्मचर्य के कठोर नियमों को पालता हुआ ब्रह्मचारी विद्यार्थी **संयम की व्यावहारिक शिक्षा** के साथ ही साथ लौकिक और पारलौकिक कल्याणकारी विद्याओं को पढ़कर सब प्रकार शरीर, मन और वाणी से स्वस्थ एवं संयमी होकर गुरुकुलाश्रम से निकलता था, और तब वह गृहस्थ में प्रवेश कर **धर्ममय अर्थार्जनद्वारा जीवन-यापन करता था।**

(अ) उपर्युक्त अवतरण का शीर्षक लिखो

(आ) आर्य सभ्यता के अनुसार शिक्षा का क्या उद्देश्य है ?

(इ) ब्रह्मचर्य और गृहस्थाश्रम में लोग क्या-क्या करते थे ?

(ई) रेखांकित अंशों के अर्थ लिखो।

२—नाच न जाने आँगन टेढ़ा, पौ बारह, जिसकी लाठी उसकी भैंस, ऊंची दूकान फीका पकवान, जले पर नमक छिड़कना, इन मुहाविरों के अर्थ लिखकर वाक्यों में प्रयोग करो।

(२३)

भारतेन्दु जी के जीवन का उद्देश्य अपने देश की उन्नति के **मार्ग** को साफ-सुथरा और लम्बा-चौड़ा बनाना था। उन्होंने इसके **काँटों और कंकड़ों को दूर किया, उसके दोनों ओर सुन्दर-सुन्दर क्यारियाँ बनाकर उन में मनोरम फल-फूलों के वृक्ष लगाए।** इस प्रकार उसे ऐसा सुरम्य बना दिया कि भारतवासी उस पर आनन्द पूर्वक चलकर अपनी उन्नति के इष्ट स्थान पर पहुंच सके। यद्यपि भारतेन्दु जी **अपने लगाए हुए वृक्षों को फल फूलों से लदा न देख सके,** फिर भी हमको यह कहने में किसी प्रकार का संकोच नहीं होता कि वे अपने जीवन के उद्देश्य में पूर्णतया सफल हुए। हिन्द 'भाषा' और साहित्य की जो उन्नति आज देख पड़ रही है उसके मूल कारण भारतेन्दु जी हैं और उन्हें ही इस **उन्नति** के बीज को **आरोपित करने का श्रेय प्राप्त है।**

—रामचन्द्र शुक्ल

प्रश्न

१—मोटे टाइप के पदों की व्याख्या करो।

२—"अन्तिम दो वाक्यों" का वाक्य विशेषण करो।

निबन्ध-कला

"Reading maketh a man perfect; writing exact".

—Bacon

निबन्ध क्या है ?

निबन्ध वह गद्य रचना है जिसमें लेखक किसी विषय पर सरस शैली में अपने क्रमबद्ध विचार प्रकट करता है। इस प्रकार निबन्ध के दो मुख्य अंग होते हैं—क्रमबद्ध विचारमाला और शैली। यदि विचार-समूह निबन्ध के प्राण हैं तो शैली उसका शरीर। शैली लेखक का व्यक्तित्व है अथवा विषय प्रतिपादन का ढंग है। अच्छे निबन्ध में जहाँ प्रौढ़ विचार और सजीव भाव रहते हैं, वहाँ उनको प्रस्तुत करने का कौशल भी होता है।

(अ) विचार-सामग्री

किसी विषय पर निबन्ध लिखने के लिए स्वाध्याय, निरीक्षण चिन्तन और अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है। महान लेखकों की रचनाओं का अध्ययन करने और उनके गूढ़ विचारों को हृदयंगम करने से हमारे ज्ञान की अभिवृद्धि होती है। केवल पाठ्य पुस्तकों पर अवलम्बित रहने से ज्ञान कोष की वृद्धि नहीं होती, इसके लिए अन्य प्रौढ़ रचनाओं और मासिक पत्र पत्रिकाओं का अध्ययन करना भी आवश्यक है। अध्ययन द्वारा संचित ज्ञान की यथार्थता और पूर्णता के लिए निरीक्षण आवश्यक है। संसार की अनेक समस्याएँ हमारा ध्यान आकर्षित करती हैं। इन सब का आँख खोलकर सूक्ष्म निरीक्षण करने से ही प्रत्यक्ष और व्यावहारिक ज्ञान उपलब्ध होता है।

सूक्ष्म निरीक्षण के साथ चिन्तन हमारी विचारधारा को पुष्ट करता है। किसी बात के पक्ष-विपक्ष पर बिना चिन्तन किए हुए हम सत्य की तह तक नहीं पहुँच सकते। अतएव 'पठन' के बाद 'मनन' भी अत्यन्त आवश्यक है।

कहावत है कि "करत करत अभ्यास के जड़ मति होत सुजान" (Practice makes a man perfect)। उच्च कोटि का लेखक बनने के लिए, अभ्यास की परम आवश्यकता है। अभ्यास करने से ही शैली में प्रौढ़ता आती है। प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री प्रेमचन्द और राष्ट्र कवि श्री मैथिलीशरण की सफलता का रहस्य यही है कि उन्होंने अभ्यास द्वारा रचना चातुर्य प्राप्त किया। अतएव विद्यार्थियों को निबन्ध लिखने से पूर्व, अध्ययन और निरीक्षण द्वारा ज्ञानार्जन, मनन द्वारा विवेचन शक्ति का परिमार्जन और निरन्तर अभ्यास से लेखन-पटुता प्राप्त करनी चाहिए। आरम्भ में वे सरल और छोटे विषयों पर लिखें। अपने लिखे हुए को अध्यापक द्वारा संशोधन करालें और उनकी उचित सम्मति पर चलें।

(ब) शैली—

उत्तम विषय प्रतिपादन से ही निबन्ध प्रभावोत्पादक बनता है। अतएव शैली को उत्तम बनाने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए।

(१) **भाषा**—शैली का महत्त्वपूर्ण अंग भाषा है। भाषा सरल, सुबोध और प्रवाहपूर्ण होनी चाहिए। वह न संस्कृत गर्भित क्लिष्ट शब्दों से परिपूर्ण हो और न विदेशी-शब्द-बहुला। उपयुक्त, प्रचलित और प्रभावपूर्ण शब्दों का प्रयोग ही सर्वत्र

वाँछनीय हैं। हिन्दी व्याकरण से अनुशासित करके ही विदेशी शब्दों का प्रयोग किया जावे।

(२) **वाक्य-रचना**--दुरूह और जटिल न हो, सरल सुसम्बन्धित और प्रवाह युक्त हो।

(३) वाक्य के जिस अंश पर जोर देना हो, उसे वाक्य के आदि या अन्त में रखा जाय। कभी-कभी किसी वाक्य को जोरदार बनाने के लिए प्रश्नवाचक या विस्मयादि सूचक वाक्यों में लिखते हैं; जैसे, ताजमहल की भव्यता, रमणीयता और उत्कृष्टता का कौन वर्णन कर सकता है ? कैसा भव्य और कैसा सुखद् दृश्य था वह !

(४) **कहावतों और मुहावरों** के प्रयोग से शैली में रोचकता और सजीवता आती है। इनका समुचित प्रयोग अति वाँछनीय है। इसी प्रकार वाक्य, सूक्तियाँ और महा पुरुषों के प्रवचन भी उचित स्थान पर निबन्ध के सौंदर्य और सौष्ठव की बृद्धि करते हैं।

(५) **अलंकार**—उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि सादृश्य मूलक अलंकारों का समुचित प्रयोग करने से रचना में सौन्दर्य आजाता है; फिर भी उनका प्रयोग अत्यन्त सतर्कता से करना चाहिए।

(६) कभी-कभी लाक्षणिक और व्यंजक शब्दों का युक्ति युक्त प्रयोग करना वाँछनीय है, जैसे, 'आशा नष्ट हो जाना' के लिए "आशा पर तुषार पात होना"; " जल्दी करना " के लिए " हवा के घोड़े पर सवार होना " आदि। ऐसे प्रयोग गद्य में काव्य का सा माधुर्य उत्पन्न कर देते हैं।

(७) आत्म कहानी जैसे निबन्धों में व्यंग्य अथवा हास्य का पुट देने से रचना में सरसता आजाती है। व्यंग्य अथवा हास्य संयत और सुरुचिपूर्ण होना चाहिए।

(८) **अनुच्छेद**—सम्पूर्ण निबन्ध को छोटे-छोटे क्रमबद्ध अनुच्छेदों में विभाजित करना चाहिए। यदि एक अनुच्छेद में एक ही विचार को विकसित किया जाय तो उत्तम है।

(९) **विराम चिह्नों** का यथास्थान सम्यक् प्रयोग करना चाहिए।

(१०) रचना सम्बन्धी दोषों, जैसे, पुनरुक्ति दोष, व्याकरण दोष, ग्राम्यत्व दोष, आदि से बचना चाहिए।

वास्तव में "शैली कोई हो, वाक्य रचना की व्यवस्था, भाषा की शुद्धता और प्रयोगों की समीचीनता सर्वत्र आवश्यक है।"

सूचना—वाक्य-रचना, शब्द प्रयोग, अलंकार, मुहावरे, रचना दोष,, आदि का विस्तृत विवेचन पहले किया जा चुका है।

निबन्ध के भेद

विषय भेद से निबन्ध अनेक प्रकार के होसकते हैं; जैसे, साहित्यिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक, भोगौलिक, दार्शनिक, आलोचनात्मक, जीवन-चरित्र, यात्रा सम्बन्धी आदि। वर्णन-प्रणाली के अनुसार निबन्ध के मुख्यतः निम्न भेद हैं :—

(अ) **वर्णनात्मक**—इस प्रकार के निबन्धों में किसी नगर, ग्राम, प्राकृतिक दृश्य, पशु-पक्षी, घटना आदि का स्पष्ट एवं विस्तृत वर्णन किया जाता है। इन निबन्धों की वर्णन-शैली

इतनी सजीव और प्रभावोत्पादक होनी चाहिए कि प्रस्तुत वस्तु या घटना का चित्र-सा खिंच जावे।

(आ) **विवरणात्मक (या कथात्मक)**—इस प्रकार के निबन्धों के अन्तर्गत जीवन-चरित्र, ऐतिहासिक घटना, आत्म कहानी आदि आते हैं। इन घटनाओं के वर्णन में काल-क्रम का ध्यान रखा जाता है।

(इ) **व्याख्यात्मक**—इस प्रकार के निबन्धों में किसी अमूर्त विषय, जैसे, शान्ति, क्रोध, अहिंसा, क्षमा, ब्रह्मचर्य, स्वावलम्बन आदि की व्याख्या की जाती है। ऐसे विषयों को व्यावहारिक जीवन से दृष्टान्त देकर बोधगम्य बनाया जाता है।

(ई) **तर्कात्मक**—इस प्रकार के निबन्धों में किसी वस्तु के गुण दोषों का विवेचन, किसी पुस्तक की समालोचना अथवा किसी विवादास्पद विषय पर विभिन्न मतों की समीक्षा करते हुए युक्ति-विधान द्वारा अपने युक्ति-संगत मत का प्रतिपादन किया जाता है; जैसे, बेकारी की समस्या, राष्ट्र-भाषा हिन्दी, सहशिक्षा आदि। इस प्रकार के निबन्ध लिखने से पूर्व गम्भीर अध्ययन और मनन की आवश्यकता पड़ती है।

निबन्ध के अंग

निबन्ध के प्राय: तीन भाग होते हैं:—प्रस्तावना (आरम्भ), विवेचन और उपसंहार (परिणाम)।

प्रस्तावना–निबन्ध के आरम्भ में पाठक का ध्यान आकर्षित करने के लिये कुछ युक्ति-संगत वाक्यों द्वारा विषय प्रवेश करना ही प्रस्तावना है। निबन्ध का यह प्रारम्भिक अंश अत्यन्त महत्त्व पूर्ण और आकर्षक होता है। इस भाग से लेखक की योग्यता

का परिचय मिलता है। इसका आकार छोटा, भाषा सरल और विषयानुकूल होनी चाहिए। शब्द अर्थ पूर्ण, नपे तुले और प्रसाद गुण-युक्त तथा वाक्य छोटे, सरल और आकर्षक होते हैं। निबन्ध का प्रारम्भ प्रायः किसी प्राकृतिक दृश्य के वर्णन, किसी कहावत, नीतिवाक्य अथवा पद्यांश को उद्धृत करके अथवा ऐतिहासिक या अन्य किसी घटना का उल्लेख करके किया जाता है।

विवेचन—यह निबन्ध का महत्त्वपूर्ण अंग है। अतएव लेखनी उठाने से पूर्व लेखक को इस अंग पर भली भाँति मनन करना चाहिए। निबन्ध सम्बन्धी समस्त बातों को संकेत रूप में लिखकर उनका विवेचन इस प्रकार करना चाहिए कि विचारों की क्रम बद्धता हो और उनकी पुनरुक्ति न होने पावे। संदिग्ध या भ्रमात्मक बातों को इसमें कदापि स्थान न देना चाहिए।

उपसंहार—निबन्ध का अन्त एक या दो अनुच्छेदों में करना चाहिए। अन्त एकाएक न हो, वरन् इस प्रकार हो कि पाठक की जिज्ञासा शान्त हो जावे और वह लेखक का अभीष्ट भली भाँति समझ जावे। उपसंहार भी प्रारम्भ की भाँति स्वाभाविक, रोचक और प्रभाव पूर्ण होना चाहिए।

रूपरेखाएँ (Out lines)

निबन्ध के प्रारम्भ करने से पहले लेखक को अपनी विचार सामग्री का का संग्रह करना चाहिए और फिर उसे एक क्रम में रखकर उचित शीर्षकों में विभाजित कर लेना चाहिए। ऐसा करने से निबन्ध में क्रम बद्धता आजाती है और विचारों की एक रूपता रहती है।

आगे कुछ निबन्ध रूप रेखाओं के साथ दिये जाते हैं।

जीवनी विषयक लेख

प्रस्तावना—परिचय, आविर्भावकाल ।

विवरण—(क) बाल्यकाल, माता-पिता का प्रभाव,शिक्षा, विवाह आदि ।

(ख) जीवन में प्रवेश ; महत्त्व पूर्ण कार्य ; अन्य घटनाएँ , प्रसिद्धि का कारण, चरित्र ।

उपसंहार—महत्ता और आदर्श-जीवन चरित्र से क्या शिक्षा मिलती है ?

सरदार बल्लभभाई पटेल

राष्ट्र-नायक महात्मा गाँधी के नेतृत्व में ब्रिटेन के साम्राज्यवादी दुर्ग को ध्वंस करके बन्धन में पड़ी हुई त्रस्त मातृभूमि का उद्धार करने वाले शूरवीरों में सरदार पटेल सदैव अग्रगण्य रहे हैं । वे सदैव गाँधी जी के दाहिने हाथ रहे,उनके साथ स्वातन्त्र्य संघर्ष में लोहा लिया और शान्ति के समय रचनात्मक कार्यक्रम में योग दिया । इस समय वे देश की नाव को बड़ी बुद्धिमानी और चतुराई से आगे बढ़ा रहे हैं ।

सरदार पटेल का जन्म महाराष्ट्र में हुआ था । प्रकृति के प्राङ्गण में उनका लालन-पालन हुआ । वे वीर पिता की वीर सन्तान हैं । उनके पिता, श्री .जवेर भाई, बड़े देश भक्त और शूरवीर थे । सन् १८५७ के स्वातन्त्र्य संग्राम में आपने भी भाग लिया था ।

बाल्यावस्था में सरदार पटेल अत्यन्त साहसी, निर्भीक और चपल थे । अपने सहपाठियों के आप 'सरदार' थे । वे अध्यापकों के अन्याय को भी सहन नहीं कर सकते थे । उस समय भी अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करना उनका मूलमंत्र था ।

मैट्रिक के पश्चात् उन्होंने मुख्त्यारी की परीक्षा पास की। अपनी कार्य क्षमता, भाषण-पटुता और अकाट्य तर्क-शक्ति के कारण उनको वकालत में पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। दुर्भाग्य वश उनकी पत्नी महामारी के प्रकोप से चल बसीं; किन्तु उन्होंने धैर्य न छोड़ा।

कुछ समय पश्चात् कानून के उच्च कोटि के अध्ययन के लिए उन्होंने इङ्गलैण्ड को प्रस्थान किया। उन्होंने निरन्तर परिश्रम और लगन से अध्ययन किया और बैरिस्टरी की परीक्षा पास करके भारत लौट आए। अहमदाबाद में उन्होंने वकालत आरम्भ की और उसमें पूर्ण सफलता प्राप्त की।

पूज्य बापू के आह्वान पर उन्होंने कई सहस्र रुपये मासिक की बैरिस्टरी पर लात मारदी और काँटों के ताज को प्रसन्नता के साथ मस्तक पर रक्खा। तब से उन्होंने देश के लिए अनेक आपत्तियाँ उठाई हैं, जेल के सींकचों के भीतर बन्द रहे हैं और अपने शरीर को कष्टों में ही जलाया है। गाँव-गाँव में पैदल घूमे हैं, घर घर में जाकर किसानों को जागरण सुनाया है। सन् १९१८ में खेड़ा जिले के अकाल त्रस्त किसानों के सत्याग्रह का संचालन करके, बोरसद में पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध और नागपुर में राष्ट्रीय झंडे के आन्दोलन में उन्होंने सफलता प्राप्त की। सन् १९२७ ई० में बारडोली के किसानों ने लगान-वृद्धि के विरुद्ध आन्दोलन किया। इसके सफल संचालन का श्रेय सरदार पटेल को ही है। सरकार के दमनचक्र का उन्होंने वीर की भाँति विरोध किया। सन् १९३० के सत्याग्रह आन्दोलन में उन्होंने एक नवीन जीवन और स्फूर्ति का संचार किया। गुजरात में कर-बन्दी का आन्दोलन करके आपने नौकरशाही

के छक्के छुड़ा दिये। कांग्रेस के अनियमित घोषित किये जाने पर इस पुरुष-सिंह ने गरज कर कहा कि प्रत्येक घर कांग्रेस का दफ्तर होना चाहिए और प्रत्येक आत्मा कांग्रेस की संस्था। सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में भी आप तीन वर्ष तक जेल में रहे। "इन आन्दोलनों की कहानियाँ सुवर्ण अक्षरों में लिखी जायगीं। सरदार जी इन कहानियों के प्रमुख पात्र हैं। उनमें उनका पौरुष है, देश प्रेम है, गरीबों की सेवा है, सच्ची लगन है, आत्म त्याग है, दृढ़ता है; और कर्मवीरता है! बापू ने अनेक बार अपने इस महासेनानी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है।"

सरदार पटेल आज स्वतंत्र भारत के उप-प्रधान मंत्री हैं। उन्होंने इस पद पर पूर्ण योग्यता, तत्परता और नीति कुशलता से कार्य करके नव भारत का निर्माण किया है। स्वतंत्रता के साथ देश में अनैक्य की भयंकर आँधी आई, बिजलियाँ चमकीं और भूचाल आए। रियासतों की जटिल समस्या उसे और भी भयानक बनाने के लिए आग में घी के समान थी। नृशंस रजाकारों के लोमहर्षण अत्याचारों ने भारतीय जनता को आतकंग्रस्त कर दिया था; किन्तु यह "लौह पुरुष" बाधाओं से तनिक भी विचलित न हुआ। सरदार पटेल ने राजाओं की सद्भावना और जनता की शक्ति को साथ लेकर शान्ति; संगठन और निर्माण कार्य को निष्कंटक बनाया है; जूनागढ़ और हैदराबाद की शल्य-चिकित्सा करके देश को सुरक्षित किया है; भय त्रस्त जनता को अभयदान दिया है और भारत की बिखरी हुई शक्ति का पुनर्निर्माण किया है।

"वे रक्तहीन क्रान्ति के नेता हैं जो शिव की तरह विष

(लोक निन्दा) का पान करते हुए अहर्निश लोक-कल्याण (संगठन) में व्यस्त हैं।"

उनका व्यक्तित्व उच्च, जीवन सरल और देश प्रेम अद्वितीय है वे मित्रों के लिये ढाल और विरोधियों के लिए सुदर्शन चक्र हैं। वे विरोधियों को अचूक व्यंग्य वाण-वर्षा से निरुत्तर कर देते हैं। उनमें संगठन की अद्भुत क्षमता है। अनुशासन उनका मुख्य सूत्र है; इसके विरुद्ध वह कुछ सुनना नहीं चाहते। "समस्त विरोधी शक्तियों को नष्ट भ्रष्ट करने के लिए तूफानकी गति रखने वाला, राजनीति के प्राङ्गण में चाणक्य जैसा अद्भुत क्षमाशील, अपने कठोर व्यक्तित्व में एक आकर्षण; मृदुल हृदय रखने वाला; काँग्रेस की शक्ति का सजीव रूप, प्रत्यक्ष में बर्फ से ढका हुआ ज्वालामुखी सरदार पटेल जब उबल कर फट पड़ता है। उस समय भारत के बाहरी और भीतरी शत्रुओं को मृत्यु की भीषण विभीषका नाचती दिखाई पड़ती है।"

"आपत्तियों से संग्राम कर उन पर विजय प्राप्त करने की प्रवृत्ति तो उनमें बाल्यकाल ही से थी। वे आग पर चलना चाहते हैं; तूफान की गति से देशोद्धार के मार्ग में बढ़ना जानते हैं। उनमें सूर्य जैसा प्रकाश, सरिता जैसा वेग और सागर जैसा गांभीर्य है। जब देश पर संकट के बादल घिरे हों तब वे अपने कर्तव्य-तेज से मेंह बरसा कर विपदा के बादल छिन्न-भिन्न कर देते हैं।"

ईश्वर उन्हें दीर्घायु करे और नव भारत के निर्माण के लिए सदैव स्वस्थ और कार्यक्षम बनाये रक्खे।

विज्ञान के चमत्कार

१—प्रस्तावना—विज्ञान का विकास।
२—स्थान सम्बन्धी चमत्कार—रेल, मोटर, जलयान, वायुयान, बुलैट, दूर-दर्शक-यंत्र, टैलीविजन, आदि।
३—समाचार और ज्ञान सम्बन्धी चमत्कार—तार, टेलीफोन, बिना तार का तार, मुद्रणायंत्र, माइक्रोफोन, लाउडस्पीकर आदि।
४—बिजली-प्रकाश, पंखे, अन्य कार्य।
५—मनोरंजन सम्बन्धी चमत्कार—सिनेमा, ग्रामोफ़ोन, रेडियो, कैमरा आदि
६—चिकित्सा सम्बन्धी चमत्कार—एक्सरे।
७—विध्वंसकारी चमत्कार—गैस, टैंक, मशीनगन, परमाणु बम्ब, डाइनामाइट आदि।
८—उपसंहार—विज्ञान का भविष्य।

आज से एक शताब्दी पूर्व कौन अनुमान कर सकता था कि मनुष्य वायुयान में बैठकर आकाश की सैर करेगा, विद्युत्शक्ति को आज्ञानुवर्तीचर की भाँति प्रयुक्त करके अनेक कार्य सम्पन्न करेगा और परमाणु बम्ब से पल भर में नगरों का विध्वंस कर सकेगा? पुष्पक विमान और परमाणु बम्ब के वर्णनों को मनुष्य कवि-कल्पनामात्र समझते थे, किन्तु ये वस्तुएँ आज हमारे लिए आश्चर्य का कारण नहीं। यह विज्ञान का युग है। आज सर्वत्र वैज्ञानिक आविष्कारों और अनुसन्धानों की धूम मची हुई है। विज्ञान ने युद्ध प्रणाली को पूर्ण रूप से परिवर्तित कर दिया है, चिकित्सा के क्षेत्र में अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया है और सागरों की उत्ताल तरंगों पर उसने पूर्ण विजय प्राप्त की है। समस्त भूमण्डल पर आज विज्ञान का एकाधिपत्य है। जीवन का कौनसा ऐसा क्षेत्र है, जहाँ विज्ञान

ने अपना चमत्कार न दिखलाया हो ? ऐसा कौनसा कार्य है जिसे विज्ञान ने सुलभ न बनाया हो ?

विज्ञान के स्थान सम्बन्धी चमत्कारों ने विस्तृत संसार क घर-आँगन-सा बना दिया है। दूरस्थ प्रदेशों की यात्रा अब अत्यन्त सुगम होगई है। रेल और मोटरों का तो कहना ही क्या, असंख्य वायुयान, द्रुत-गति से उड़ते हुए भारी-भारी मशीनों तक को एक स्थान से दूसरे स्थान में पहुँचा देते हैं, तीव्रगामी बुलैट में बैठकर चन्द्रलोक की यात्रा करने के निरन्तर प्रयत्न हो रहे हैं; विशाल वारिधि के वक्षस्थल को विदीर्ण करते हुए जलयान समस्त भूमण्डल का चक्कर लगाते हैं। विज्ञान से दूर देशों की यात्रा करना ही सुगम नहीं हुआ, वरन् सहस्रों मील की दूरी के दृश्य देखना भी सरल हो गया है। जहाँ मनुष्य अपने चर्म चक्षुओं से एक मील की दूरी की वस्तु को भी नहीं देख सकता था, वहाँ अब वह दूर दर्शक यन्त्र से करोड़ों मील दूरस्थ ग्रह-नक्षत्रों की गति-विधि का भली भाँति निरीक्षण कर सकता है और टेली विजन द्वारा किसी दूरस्थ दृश्य के चित्र को भी देख सकता है।

विज्ञान ने समाचार भेजने के अद्भुत साधन भी प्रस्तुत किये हैं। प्राचीनकाल में दूर देशों के समाचार प्राप्त करने में वर्षों लग जाते थे, किन्तु अब तार द्वारा बात की बात में एक स्थान से दूसरे स्थान को समाचार भेज दिये जाते हैं। टेलीफोन से हम भारतवर्ष में बैठे हुए अमेरिका में अपने परिचित व्यक्ति से बातचीत कर सकते हैं। बिना तार के तार द्वारा क्षणभर में विदेशों के समाचार उपलब्ध किये जासकते हैं। विज्ञान ने असम्भव को सम्भव और कठिन को सरल कर दिया है।

विज्ञान के चमत्कारों ने ज्ञान विकास और शिक्षा प्रचार की उन्नति में भी चार चाँद लगा दिये हैं। पहले किसी पुस्तक की प्रतिलिपि करने में कई मास लगते थे। किन्तु अब मुद्रणःयंत्र की सहायता से थोड़े समय में सहस्रों प्रतियाँ तैयार की जा सकती हैं। अब साधारण व्यक्ति भी वाल्मीकि. कालिदास. तुलसी और शेक्सपियर के विचारों से लाभ उठा सकता है। माइक्रोफोन और ध्वनि विस्तारक यंत्र द्वारा एक स्थान पर बैठे हुए करोड़ों मनुष्यों को भाषण, सन्देश या धार्मिक उपदेश कर्ण-गोचर कराये जा सकते हैं।

विज्ञान का महत्तम चमत्कार बिजली है। इसने 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की अभिलाषा को पूर्ण कर दिया है। अब तेल या वर्त्तिका की आवश्यकता नहीं, बटन दबाते ही रात्रि में चारों ओर सूर्य का सा प्रकाश फैल जाता है। जहाँ सूर्य की किरणों का प्रवेश भी नहीं हो सकता, उस तिमिर–तिरोहित स्थान को बिजली अपने आलोक से जगमगा देती है। बिजली का पंखा आपसे आप चल कर हमारे श्रम और ताप को हर लेता है। बिजली की शक्ति से संचालित भीमकाय मशीनें अपना कार्य करती हैं। बिजली द्वारा जल गर्म कर लीजिए, भोजन बना लीजिए और वस्त्रों पर स्त्री कर लीजिए। बिजली के अद्भुत कार्य-कलापों कोकहाँ तक गिनाया जाय ?

विज्ञान ने आमोद-प्रमोद देने वाले अनेक चमत्कारों की भी सृष्टि की है। चाहे उड़ता हुआ पक्षी अथवा बन्दूक़ से निकलती हुई गोली ही क्यों न हो, केमरा क्षण भर में इनका चित्र खींच लेता है। इन चित्रों को बिविधि रंगों से रमणीक भी बनाया जा सकता

है। सिनेमा में पर्दे पर नाचते-गाते, हंसते-खेलते और उछलते कूदते हुए नर-नारियों के सजीव चित्रों को देख कर दर्शक आश्चर्य से चकित हो जाता है। इसमें पक्षियों का कलरव, भागते हुए घोड़ों की टाप, उड़ते हुए वायुयानों की गूंज, ऐंजिनों का तुमुल नाद और मेघों का गर्जन भी भली भाँति सुना जा सकता है। ऊषा की लालिमा, वर्षा की बहार, बिजली की चमक-दमक और बन-उपवन के मनोहर दृश्य चित्रपट पर देख कर मन-मयूर मुग्ध हो जाता है। यदि आप संगीत-सागर में निमग्न होना चाहें तो तनिक ग्रामोफोन पर रिकार्ड चढ़ा दीजिए, अनेक गायकों के उत्तमोत्तम गायन सुन लीजिए। रेडियो के आविष्कार ने ग्रामोफोन को भी मात कर दिया है। मनोविनोद के इस अक्षय कोष को खोलते ही देश-विदेश के समाचार और महापुरुषों के भाषणों से ज्ञानार्जन करिए और संगीत की अनूठी स्वर-लहरी से अपनी हृत्-तंत्री झंकृत कर लीजिए।

यद्यपि चिकित्सा-क्षेत्र में अनेक यन्त्रों का आविष्कार हुआ है, रोगों की शीघ्र चिकित्सा की प्रणाली में उन्नति हुई है, तथापि सबसे अधिक आश्चर्यजनक आविष्कार 'ऐक्सरे' है। किसी वस्तु के बाह्य भाग का निरीक्षण करना तो सहज था, किन्तु भीतरी भाग की बात जानना असंभव था। एक्सरे द्वारा लकड़ी, चमड़ा, लोहा, हड्डी आदि के भीतरी भाग का चित्र लेकर निरीक्षण करना सुगम हो गया है। इस यंत्र की सहायता से अदृष्ट और भयंकर रोगों की चिकित्सा करने में डाक्टरों को बड़ी सहायता मिलती है। बच्चों और पशुओं के छोटी-मोटी चीजें निगल जाने पर एक्सरे द्वारा उनकी खोज करके निदान किया

जाता है। इस यंत्र ने जड़ पदार्थों की आन्तरिक दशा का अनुसन्धान करने में भी वैज्ञानिकों की सहायता की है।

जहाँ विज्ञान ने उपयुक्त चमत्कारों द्वारा लोक-कल्याण किया है, वहाँ कुछ आश्चर्यजनक विध्वंसकारी यंत्रों का भी निर्माण किया है। अनेक संहारकारी गैसों, मशीनगनों और टैंकों से पलक मारते-मारते असंख्य मानवों का संहार किया जा सकता है। जहाँ डाइनामाइट ने विशाल पर्वतों को खण्ड-खण्ड करके रेल मार्ग बनाने में सहायता की है, डाइविंगबैल से अगाध समुद्रों में डुबकी लगाकर अदृष्ट पदार्थों की खोज की गई है, वहाँ पनडुब्बियों ने अनेक जलयानों को गहरे गर्त्त में डुबो दिया है।

विज्ञान के चमत्कारों की कहाँ तक गणना की जाय? इन चमत्कारों ने ससार में उथल-पुथल करदी है। वाष्प, विद्युत गैस और ईथर की प्रचण्ड भौतिक शक्तियों को नियंत्रित करके विज्ञान ने प्रकृति को अनुशासित कर दिया है। आजकल विज्ञान असंभव बातों को भी संभव करने में संलग्न है। उसके द्वारा कृत्रिम मेघों द्वारा अभिलषित स्थान पर वर्षा करने, पुरुष को स्त्री और स्त्री को पुरुषरूप में परिणत करने और भूतकालीन घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप से देखने के प्रबल प्रयत्न किये जा रहे हैं। वह दिन दूर नहीं है जब मनुष्य सृष्टि उत्पादन की शक्ति सम्पन्न करके स्वयं विधाता का स्थान ग्रहण करलेगा। यह तभी संभव है जब विज्ञान-वेत्ताओं में सद्बुद्धि उत्पन्न हो और वे मानव-संहारकारी आविष्कारों की ओर से मुख मोड़ लें।

वीर-पूजा

(१) प्रस्तावना—वीरत्व के विभिन्न आदर्श। आदर्श वीरों के उदाहरण।

(२)—वीरों के प्रति सम्मान-प्रदर्शन के ढंग—वीरों के नाम पर संस्थाओं का निर्माण, जातीय स्थानों के नाम करण, पदवियाँ, मेले और उत्सव, जैसे; रामलीला, दशहरा, जन्माष्टमी।

(३) वीर-पूजा का महत्त्व—(क) चरित्र-निर्माण, (ख) समाज-संगठन, (ग) देशोत्थान, और (घ) राष्ट्रीय गौरव।

४—उपसंहार—भारतवर्ष और वीर-पूजा।

आदर्श वीर कौन है? क्या युद्ध क्षेत्र में शत्रुओं को पराजित करके विजय-वैजयन्ती फहराने वाला योद्धा वीर है? क्या दुर्द्धर्ष दस्युओं का दमन करके निरीह और अनाथ प्राणियों की रक्षा करने वाला साहसी वीर है? क्या लोकोपकार के लिए सर्वस्व बलिदान करनेवाला आत्मत्यागी वीर है? क्या घोर तपस्या करके मुक्ति प्राप्त करने वाला महापुरुष वीर है? यद्यपि युद्ध में पराक्रम दिखाना, प्राणियों की रक्षा करना और धर्म के लिए आत्मोत्सर्ग करना वीरत्व के विभिन्न आदर्श हैं, तथापि सच्चे वीर की कसौटी क्या है? सच्चा वीर कभी आपत्तियों से नहीं घबड़ाता; प्रलोभन उसे कर्तव्य-पालन से विमुख नहीं कर सकते, उसका लक्ष्य उदार और उच्च होता है; उसका चरित्र अनुकरणीय होता है; अपने पवित्र उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह सदैव आत्मोत्सर्ग के लिए प्रस्तुत रहता है, वह लोकोपकार के सम्मुख अपने स्वार्थ की चिन्ता नहीं करता। वह आत्म-विश्वासी, कर्तव्य-परायण, स्वाभिमानी औ धर्म-निष्ठ होता है।

संसार के प्रत्येक देश में आदर्श वीर अवतीर्ण हुए हैं। वीर-प्रसविनी भारत-वसुन्धरा का तो कहना ही क्या? पुराणों में सहस्रों वीरों की पुण्य गाथाओं का गान किया गया है। सत्यवादी हरिश्चन्द्र, आत्मत्यागी दधीचि. मर्यादा पुरुषोत्तम राम, कर्तव्य-परायण महावीर हनुमान, 'अहिंसा परमोधर्मः' का पावन उपदेश देने वाले तीर्थङ्कर महावीर, प्राणियों को अभयदान देने वाले तथागत बुद्ध, धम-संस्थापक योगिराज कृष्ण, देश-रक्षार्थ असह्य आपत्तियों का सामना करने वाले प्रताप, अत्याचारियों का दमन करगे वाले छत्रपति शिवाजी, आतताइयों से लोहा लेने वाले गुरु गोविन्दसिंह, मातृ भूमि के लिए आत्मोत्सर्ग करने वाले नेताजी सुभाष और प्रेम और शान्ति के पुजारी महात्मा गाँधी इसी पवित्र भारत भूमि की देन हैं। आज भी इनके अदर्शों की गाथा घर-घर में गाई जाती है। उनका पावन-चरित्र, उच्च लक्ष्य, निर्मल स्वार्थ-त्याग और लोकोपकार की भावना हमारे लिए अनुकरणीय है।

अन्य देशों में भी अनेक आदर्श-वीरों की कीर्ति-कौमुदी छिटक रही है। महर्षि सुकरात ने आनन्द से विष-पान कर लिया, पर अपने सदाचरण को न छोड़ा; ईसा मसीह फांसीपर झूल गए, पर सत्पथ से न डिगे, अनेक आपत्तियाँ सहकर भी ल्यूथर ने कदाचार का दृढ़ता से विरोध किया, शूरवीर नेल्सन ने देश की रक्षा के लिए प्राणों का बलिदान कर दिया और अनेक बार पराजित होने पर भी वाशिंगटन ने स्वातंत्र्य-संग्राम से मुख न मोड़ा। वास्तव में इतिहास ऐसे नर-रत्नों से भरा पड़ा है।

वीरों का सम्मान कहाँ नहीं होता ? उनके जीवन में न सही, उनकी मृत्यु के पश्चात् जनता उनकी सेवाओं का मूल्य आँकती है, उनको श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है और उनके पावन आदर्शों का अनुकरण करती है। अनेक नगरों, संस्थाओं और महत्त्वपूर्ण स्थानों का नामकरण वीरों की स्मृति को सुरक्षित रखने के लिए किया जाता है। राम-नौमी, दशहरा, जन्माष्टमी, मौहर्रम आदि पर वीरों को श्रद्धाञ्जलि अर्पित की जाती है। यदि कहीं उनकी स्मृति को सजीव रखने के लिए स्मारक निर्मित किये गये हैं तो कहीं उनकी कीर्ति को चिरस्थायी बनाने के लिए उत्सवों की आयोजना की गई है। रामलीला और कृष्ण लीला के रूप में हम वीरों का यशोगान करते हैं। आजकल उपाधियों और पदवियों द्वारा वीरों के प्रति सम्मान प्रकट किया जाता है।

वीर-पूजा का महत्त्व अत्यन्त अधिक है। इससे अनेक लाभ हैं। चरित्र-निर्माण में तो यह परम सहायक है। वीर के प्रति आस्था होने से साधक उसके पावन चरित्र से शिक्षा ग्रहण करता है, उसके आदर्शोंको अपनाता है और कुवासनाओं को दूर करता है। हृदय में भव्य भावों का संचार होने से वह निरन्तर सत्पथ की अग्रसर होता है।

समाज संगठन और देशोत्थान के लिए वीर-पूजा नितान्त आवश्यक है। वीर-पूजा से जातीय एकता, प्रेम और सौहार्द भाव जागृत होते हैं, राष्ट्रीय चेतना को बल मिलता है, प्राचीन गौरव और संस्कृति के भाव जागृत होते हैं। वीर-पूजा जीवन प्रदायिनी संजीवनी औषधि है; पतितों को उठाने वाली और

उत्थितों को अधिक उन्नत करने वाली शक्ति है। वह नवीन बल, नवीन आशा और नवीन स्फूर्ति का संचार करती है। रामलीला हमारी भक्ति-भावना और धार्मिक वृत्ति को पुष्ट करती है, दशहरा हमारे जातीय-जीवन में नवोत्साह का संचार करता है, शिवाजी जयन्ती हमको अत्याचारों से निरन्तर संघर्ष का बल और साहस प्रदान करती है और गाँधी जयन्ती प्रेम, शान्ति और भ्रातृ-भाव को प्रोत्साहित करती है।

वीर-पूजा राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक है। अपने वीरों का समुचित आदर करके ही राष्ट्र गौरवान्वित होते हैं। जिस राष्ट्र में वीरों का अभाव हो, वह उन्नत राष्ट्रों में क्या आदर पा सकता है? जहाँ वीर-पूजा ही नहीं, वहाँ भव्य-आदर्श भी क्या हो सकते हैं? अतएव राष्ट्र की सांस्कृतिक, राजनैतिक और नैतिक उन्नति के लिए वीर-पूजा नितान्त आवश्यक है।

आज स्वतन्त्र भारतीयों के लिए वीर-पूजा की अत्यन्त आवश्यकता है। सहस्रों वर्ष की पराधीनता ने हमारे सामाजिक वातावरण को दूषित कर दिया है, हम में संकुचित मनोवृत्तियों का बीजारोपण कर दिया है और कायरता ने हमारे हृदयों को जकड़ दिया है। हम ने प्राचीन भव्यादर्शों को भुला दिया है। इन बुराइयों का समूल उन्मूलन और देश का कल्याण तभी हो सकता है जब हम वीर-पूजा करें, वीरों के श्रेष्ठ आदर्शों को अपनाएँ और उनके दिखलाए हुए सत्पथ की ओर अग्रसर हों।

१५ अगस्त का महत्त्व और स्वातंत्र्य समारोह

१५ अगस्त १६४७ ई० का पुण्य दिवस भारतीय इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा। विदेशी शासन के विरुद्ध ६० वर्ष के अविश्रान्त संघर्ष के पश्चात्, अगणित वीरों के दिव्य आत्मोत्सर्ग के फल-स्वरूप, अवर्णनीय यातनाओं को सहन करने के प्रसाद-रूप आज के ही दिन हमने स्वतंत्र वातावरण में निश्वास लिया और साम्राज्य वादी दुर्ग को विनष्ट किया। हमने अनेक आशा-निराशाओं का सामना किया, उत्थान-पतन देखे और अन्त में आज के दिन हम मंगल शंख-ध्वनि के साथ स्वातन्त्र्य-देवी के मंदिर में प्रविष्ट हुए। आज स्वतंत्र राष्ट्रों में हम गौरवान्वित हुए; हमने अपना अधिकार पूर्ण स्थान पाया; हमने पीड़ित मानव और एशिया को आशा और उत्साह का नव सन्देश दिया; समस्त विश्व को सख्य, साम्य और स्वतंत्रता का पवित्र मंत्र सुनाया और मस्तक ऊँचा करके प्रेम, शान्ति और स्वाधीनता का प्रतीक अपना तिरंगा झंडा फहराया। आज शताब्दियों की राजनीतिक दासता के बन्धनों से मुक्त स्वतंत्र भारत का पुनर्जन्म हुआ; निरंकुश शासन के स्थान पर प्रजातंत्र राज्य स्थापित हुआ।

यह पुण्य पर्व अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। जिस स्वातन्त्र्य-संघर्ष के बीज को लोकमान्य तिलक ने 'स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है' का पावन सन्देश सुनाते हुए बोया था; उसके पौधे को विश्ववंद्य पूज्य महात्मा गाँधी ने सींचा और बढ़ाया, अनेक वीरों ने अपनी प्राणाहुति देकर रक्षा की, वह आज के दिन फल-प्रद हुआ। किन्तु, हमारा संघर्ष सदैव अहिंसात्मक रहा, हमने अपना रक्त-दान देकर भी विरोधियों का बाल-बांका न होने दिया। शस्त्रहीन निहत्थी भारतीय जनता ने संसार

की महत्तम सशस्त्र सत्ता से लोहा लिया और अहिंसात्मक साधनों के द्वारा विजय प्राप्त की। यह अहिंसा की हिंसा पर, न्याय की अन्याय पर और सत्याग्रह की निरंकुशता पर विजय थी। यह विश्व-इतिहास में युगान्तर कारी क्रान्ति थी जिसका उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् भी अंग्रेजों से हमारे सम्बन्ध कटु नहीं बने, वरन् अधिक घनिष्ठ होगये। जैसे विपत्ति में हमने धैर्य कभी नहीं छोड़ा, वैसे ही अभ्युदय में हमने क्षमाशीलता भी नहीं त्यागी।

इस पावन पर्व पर किस भारतीय को प्रसन्नता न होती; शताब्दियों की साधना सम्पन्न होने और तपस्या के पूर्ण होने पर किसकी हृदय--कलिका विकसित न होती? सब उल्लास, उमंग और उत्साह से ओत-प्रोत थे, राजा-रंक, बालक-बालिका, नर-नारी, युवक-वृद्ध आनन्द सागर में हिलारें ले रहे थे; कण-कण में नवीन स्फूर्ति, नवीन आभा और नवीन जीवन का संचार था। सब के हृदय हर्षोन्मत्त थे, मुख पर निराली छटा थी और नेत्रों में दिव्य ज्योति थी।

जैसा अभूतपूर्व महोत्सव इस १५ अगस्त के पुण्य पर्व पर हुआ, जिस उल्लास, उत्साह, धूम धाम और सज धज से उसे मनाया; वैसा आज तक कोई उत्सव या त्यौहार नहीं मनाया गया। विदेशी भी इसे देखकर दंग रह गये। १४ अगस्त से ही इस राष्ट्रीय पर्व को मनाने और स्वातन्त्र्य-देवी के आह्वान की तैयारियाँ आरम्भ हो गईं। स्थान-स्थान पर अशोक-धर्म चक्राङ्कित तिरंगे झंडे लहराये गये; गृह, आवास, दुकान, द्वार और जन पथ सब तिरंगे झंडे रूपी त्रिवेणी से प्रवाहित होगये। प्रत्येक

चौराहे पर ऊँचे-ऊँचे द्वार बनाये गये और वे झण्डे,पताकाओं, बन्दनवारों एवं तोरणों से विभूषित किये गये, तिरंगे वस्त्रों से सजाये गये और राष्ट्रीय वीरों के चित्रों से सुशोभित किये गये। इन सुसज्जित द्वारों का नाम करण लोकप्रिय नेताओं के नाम पर किया गया ।

रात्रि के ठीक १२ बजे देहली में भारतीय विधान परिषद की बैठक हुई। भारत के अन्तिम अँग्रेज गवर्नर जनरल लार्ड माउण्टवेटन ने भारतोयों के हाथ में सत्ता सौंपने की घोषणा की। डा० राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में, पवित्र मंत्रों की ध्वनि के बीच, सत्ता हस्तान्तरित हुई। इस अवसर पर स्वतन्त्रता-देवी का आह्वान नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में शंखनाद करके, घण्टे बजाकर और मिल के भोंपुओं ने तुमुल नाद करके किया। उस समय कहीं राम धुन, तो कहीं कीर्तन, कहीं रामायण का मधुर पाठ, तो कहीं राष्ट्रीय गायनों की धूम होने लगी।

१५ अगस्त की प्रभात-बेला में अपने प्रिय नेताओं और मातृ-भूमि के जयनाद से दसों दिशाओं को गुँजाता हुआ, “ विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा ” के सुमधुर गान से कर्णेन्द्रियों में अमृत कण उँड़ेलता हुआ और राष्ट्रीय पताकाओं को फहराता हुआ जन-समूह प्रभात-फेरी के लिए निकल पड़ा। समस्त सरकारी इमारतों पर नेताओं एवं अधिकारियों द्वारा राष्ट्रीय झण्डे फहराए गये। इस समय नौबतें बजने लगीं। तोपों और गोलों की तुमुल ध्वनि हुई और जनता ने जय जयकार किया। पुलिस और सैनिक केन्द्रों पर परेड हुई और नेताओं ने सलामी ली। भारत की राजधानी दिल्ली में प्रातःकाल लाल किले पर युवकों के हृदय-सम्राट पं० जवाहर

लाल नेहरू ने बड़े समारोह के साथ राष्ट्रीय ध्वजा को फहराया। अपार जनता "जय हिन्द" का नारा लगाते हुए हर्षातिरेक से उन्मत्त होकर नाचने लगी। कैसा अपूर्व उल्लास था उस समय !

दस बजे के लगभग समस्त विद्यालयों और अन्य संस्थाओं में भारत-वन्दना के साथ ध्वजारोहण किया गया। विनोदपूर्ण क्रीड़ाओं और मनोरंजक खेलों के पश्चात विद्यार्थियों को पुरस्कार दिए गए और मिठाई बाँटी गई। कहीं याचकों को अन्न वस्त्र दान दिया गया। दूध और शर्बत की प्याऊएँ लगाई गईं और नागरिकों की ओर से प्रीति भोज दिए गए। कहीं-कहीं स्वतन्त्रता दिवस की स्मृति में वृक्षारोपण किये गये।

अपराह्न में जलूस निकाले गये। सभी प्रमुख संस्थाओं ने इनमें भाग लिया। बन्दनवारों और तोरणों से सुसज्जित बाजार तिरंगी पताकाओं के विशाल सागर में निमग्न थे। बाजारों और बीथिकाओं में तिल धरने के लिए स्थान न था। हर्षध्वनि से आकाश-मंडल गूँज रहा था। छज्जों पर बैठी हुई नारियाँ मंगल गान गा रही थीं। अनेक महिलाएँ तिरंगी साड़ियों में एक अभिनय छटा प्रदर्शित कर रही थीं। इसके पश्चात् सार्वजनिक सभाओं में स्थानीय नेताओं ने स्वाधीनता की वेदी पर बलिदान होने वाले कोटि-कोटि शहीदों को श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित कीं और राष्ट्र-पिता पूज्य बापू का अभिनन्दन किया।

रात्रि को दीपावली मनाई गई। स्वातन्त्र्य-दिवस का यह सब से अधिक आकर्षक, मनोरम और रमणीय दृश्य था। सभी भवन, छतें और छज्जे दीप-मालिका से जगजगा उठे। पीले,

हरे, और श्वेत बल्बों में विद्युत् का प्रकाश अत्यन्त नयनाभिराम था। कहीं भारतमाता का मन्दिर विद्युच्छटा से जगमगा रहा था ; कहीं नेताजी सुभाष के स्वातन्त्र्य-संग्राम का दृश्य दर्शकों में नवीन स्फूर्ति और स्वाभिमान का संचार कर रहा था ; कहीं लोकमान्य तिलक, महामना मालवीय, पंजाब-केशरी लाला लाजपतरायजी की स्वर्गीय आत्माएँ स्वर्ग से पुष्प वर्षा करके प्रफुल्लता प्रकट कर रही थीं। सर्वत्र आलोक का साम्राज्य था, "असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय" की साधना सम्पन्न हो रही थी। रेडियो कर्ण-कुहरों को सुखद-मधुर राष्ट्रीय गायन, अलाप रहे थे ; मानों वे राष्ट्रीय विजय का घोष कर रहे हों। इस मनोरम दृश्य को देखकर मन-मयूर नाच उठता था।

वास्तव में राष्ट्र का यह गौरवशाली दिवस था ; हर्ष, उत्साह और देश-भक्ति की त्रिवेणी में हम ने वर्षों की दासता रूपी मलीनता को धोकर बहा दिया था। यद्यपि भारत विभाजन के कारण जनता के चित्त में उदासीनता थी ; तथापि सभी प्रमुख राजनीतिक दलों ने इस पुनीत अवसर पर एकता प्रदर्शित की। सभी कटु स्मृतियों को भुलाकर हिन्दू-मुसलमान भाई-भाई की तरह गले मिले। ईश्वर करे यह आशाप्रद और उत्साह प्रेरक दिवस अनादि काल तक भारत में बार-बार आवे और भारत को सुख समृद्धि और शान्ति का रामराज्य प्रदान करे।

तेल की आत्म कहानी

आप मेरी दुर्गन्ध से कोसों दूर भागते हैं, नाक-भौं सिकोड़ते हैं, मेरा अनादर और तिरस्कार करते हैं; तनिक भी छू जाने पर साबुन से मल-मल कर हाथ धोते हैं; परन्तु क्या आप मुझसे कभी बच सकते हैं? मैं वर्तमान जगत का विधाता हूँ। सारा संसार मुझे प्राप्त करने के लिए जी तोड़ कर कोशिश कर रहा है। यदि मैं अन्तर्धान हो जाऊँ तो आप अन्धकार में बैठे रहेंगे। रेल तो रेल, हवाई जहाज, मोटर, साइकिल, ऐंजिन, मशीन सब रुक जायेंगे। कारखानों की तो बधिया ही बैठ जावेगी। महीन और बारीक आटा कहाँ पिसेगा? अब घर घर में हाथ की चक्की भी नहीं—मेरे बिना घर में चूहे दंडवत करेंगे।

मेरे जन्म की कहानी बड़ी लम्बी है। अब तो मैंने पुनर्जन्म लिया है, पर 'आदि सृष्टि उपजी जबै, तब उत्पति भई मोरि' वाला कथन मेरे लिए अक्षरशः सत्य है। अनेक युगों का इतिहास मुझ में छिपा पड़ा है। सच पूछिये तो मेरा रूप काल-चक्र की एक सजीव कहानी है। प्राचीन समय में संसार जंगलों से आच्छादित था। उनमें अद्‌भुत प्रकार के वृक्ष, बनस्पतियाँ और जीव-जन्तु थे जो अब नहीं दिखाई पड़ते। मेरे यही पूर्वज और जनक थे। एक बार भयंकर भूकम्प आया और स्थान-स्थान पर जमीन फट गई। कहीं जल की प्रबल धाराएँ निकल आईं, तो कहीं दलदल बन गये। मेरे पूर्वज वृक्षों, बनस्पतियों और जीव जन्तुओं का भी पतन हुआ। उनके अस्थिचर्म झीलों और नदियों के कीचड़ में मिल गये। "आत्मा वै जायते पुत्रः" के कथनानुसार उनकी आत्मा से मैं उत्पन्न हुआ।

सहस्रों वर्ष तक मैं भूगर्भ में लुप्त रहा। जब विश्वभ्रमण के लिए मेरा जी ललचाया, तब मैं सोतों के रूप में उबल भी पड़ता। कभी कभी वायु के प्रकोप और मेरे ज्वलनशील गुण के कारण इन सोतों में आग लग जाती और तब मैं भस्मासुर की भाँति भस्मसात् होकर ही शान्त होता था। प्रायः लोग मेरी दुर्गन्ध से दूर भागते; तब उनके अपमान, अनादर और उपेक्षा से मेरा दम घुटने लगता और मैं अपने निष्फल जीवन पर आठ-आठ आँसू बहाता। चीनी, ब्रह्मी और यूनानी मुझसे सहस्रों वर्ष पूर्व परिचित थे, वे मुझे 'चट्टान के तेल' या 'खनिज तेल' के नाम से पुकारते थे; परन्तु मेरी महाशक्ति, महिमा और महत्त्व को किसी ने नहीं पहचाना। मेरे गुणों के पारखी थे ही कहाँ? मैं उन वैज्ञानिकों का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मेरी सुधि ली, मेरी शक्ति को पहचाना। सन् १८५९ ई० में उत्तरी अमेरिका के पेनसलवेनिया-निवासी कर्नल ड्रेक ने ईस्पात के नल को गलाकर संसार का प्रथम आधुनिक कुँआ खोदकर मुझे बाहर निकाला और मेरे मलिन रूप को शुद्ध करके मेरा उपयोग किया। अब क्या था! विश्व में हलचल मच गई, व्यवसाय में क्रान्ति आ गई। मेरे उद्यमशील प्रेमियों की संख्या बढ़ने लगी। मेरे भक्त और पुजारी 'मीरा' की तरह विह्वल हो कर मुझे खोजने लगे। ब्रह्मा, स्याम, फारिस, वाकू, रूमानिया, वेनजुएला, मेक्सिको, संयुक्तराज्य अमेरिका आदि स्थानों में मेरी प्राप्ति के लिए प्रयत्न होने लगे। अब भूमंडल के अनेक स्थानों में मुझे प्राप्त करने के लिए बने हुए "डेरिक *" दिखाई

---

*डेरिक-तेल के कुँओं के ऊपर बने हुए यंत्रालय जिनसे लटकाकर कुँओं के अन्दर भारी औजार डाले जाते हैं।

देते हैं। आपके देश में मैं डिग्बोई (आसाम) और अटक (पंजाब) में मिलता हूँ; परन्तु यहाँ मेरी उत्पत्ति अधिक नहीं। अतएव अन्य देशों से मेरा आयात होता है।

अन्य पंच तत्वों की भाँति मेरी कंचन-काया पंकिल मिट्टी में समाई रहती है। उस समय मेरा रंग मट मैला, हरा या पीला होता है। मुझ में से तीव्र दुर्गन्ध निकलती रहती है। यदि कभी पृथ्वी के दबाब के कारण मैं स्रोत (गशर) के रूप में निकलता हूँ तो मेरा नियंत्रण करना अत्यन्त कठिन होता है। अपनी जननी की क्रीड़ामयी गोद से विलग होकर मुझे अनेक आपत्तियों और यातनाओं का सामना करना पड़ता है। मेरी महिमामयी माता मिट्टी को वृहदाकार देगचों में रखकर उबाला जाता है। गर्मी की भीषणता से मेरा दम घुटने लगता है, मेरे प्राण छटपटाने लगते हैं, तब अनिच्छा से मैं जननी के क्रोड़ से विलग होकर गैस के रूप में उड़कर भागना चाहता हूँ, परन्तु ठंढा करके फिर उबाला जाता हूँ। अनेक बार शोधन-भवन (रिफाइनरी) में परिस्रावित किये जाने पर मेरा स्वेत वर्ण होजाता है। कलेवर बदलने पर भी मेरी दुर्गन्ध नहीं जाती। चन्द्रमा के कलंक समान यह दोष मुझसे दूर नहीं होता। संसार में परमेश के सिवाय सर्वगुण-सम्पन्न कौन है?

मनुष्य के घोर अत्याचार करने पर भी मैं उनका उपकार ही करता हूँ। मैं अपनी सज्जनता का परित्याग क्यों करूँ? "काटे परसु, मलय सम भाई। निज गुन देइ सुगन्ध बसाई।"

मेरी शक्ति अनन्त और अपार है। मेरी शक्ति का उपयोग करके मनुष्य द्रुत वेग से हवा में उड़ता है; मोटरकारों पर

दौड़ता है; समुद्र के वक्ष स्थल पर सैर करता है; ऊबड़-खाबड़ दुर्गम क्षेत्रों में टैंकों पर चढ़कर लड़ता है और विशालकाय मशीनों को चलाता है।

पेट्रोल, मोम, केरोसिन, लूब्रिकेटिंग आइल, अलकतरा, वैसलीन, बेनज़ीन, नेफ्थीन, रिगोलीन, गैसोलीन आदि अनेक रासायनिक द्रव्य मेरे ही अंशज और वंशज हैं। पेट्रोल के बिना मोटर टायर और रबर की अन्य वस्तुएं तैयार नहीं की जा सकतीं। कोई भी मशीन हो, उसके प्रत्येक पुरजे में, यह कहिए कि कण-कण में मेरे अंशज, लूब्रिकेटिंग आइल का प्रयोग किया जाता है। प्रकाश के लिए जिस बिजली या गैस का प्रयोग किया जाता है, उसमें भी मैं वर्तमान हूँ। दियासलाई के मोम में भी मेरी ही माया है। मेरे वंशज मोम से ही मोमबत्ती, मोमिया कागज, बरसाती कपड़े बनाये जाते हैं और चमड़े को चिकनाया जाता है। दो सौ से भी अधिक पदार्थ मुझसे बनाये जाते हैं। वेसलिन लगाकर आप शारीरिक अंगों और चर्म को सुकोमल बनाते हैं, इसी से अनेक प्रकार के मलहम और शृङ्गारिक उबटन बनाये जाते हैं। अनेक प्रकार की रोशनाइयों का जन्मदाता मैं ही हूँ। अनेक प्रकार के चटकीले रंग, वार्निश और कोलतार, जिन्हें आप काठ की चीजों को दीमक से और लोहे की चीज़ों को मोरचे से बचाने के काम में लाते हैं, मेरी ही देन हैं। सुगन्धित तेल, जिन्हें मल कर आप कितने प्रफुल्लित होते हैं; रासायनिक प्रयोग द्वारा मेरी दुर्गन्ध को हरकर मुझसे ही बनाये जाते हैं। कीड़ों और मच्छरों को मारकर मैं मलेरिया जैसी भयानक

बीमारियों से मनुष्य की रक्षा करता हूँ। मैले और चिकने ऊनी और रेशमी वस्त्रों की जलरहित सूखी धुलाई करके स्वच्छता प्रदान करने वाला भी मैं ही हूं। परिस्रवित किये जाने पर जो अवशिष्ट द्रव्य मुझसे मिलते हैं उन्हें कृषक लोग खाद के विभिन्न कार्यों में प्रयुक्त करते हैं। इस प्रकार अनाज, फल-फूल आदिका जीवन-दाता मैं ही हूं। वास्तव में "परोपकाराय सतां विभूतयः" मेरा पवित्र मंत्र है।

यही मेरी कहानी है। महर्षि दधीचि की भाँति अपना शरीर होमकर मनुष्य-मात्र का कल्याण करना ही मेरा पावन ध्येय है। अपने जीवन-निर्वाह, सुख-सभ्यता और उन्नति-विकास के लिए मनुष्य मुझ पर ही निर्भर है। मुझे उनकी सेवा और सहयोग में अत्यन्त प्रसन्नता, शान्ति और सन्तोष प्राप्त होता है मुझे केवल एक ही दुख है। जब मनुष्य अज्ञान-वश मुझे अपने ही भाइयों के मारने में, युद्ध लड़ने में अथवा दूसरों का अपकार करने के लिए दुरुपयोग करता है, तब शोक और सन्ताप से मेरी आत्मा चीत्कार कर उठती है।

आपका अनन्य दास,

तेल।

ब्रह्मचर्य

"न तपस्तप इत्याहुर्ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम् ।"

भगवान् त्रिलोचन के उपर्युक्त कथन का तात्पर्य यह है कि ब्रह्मचर्य अर्थात् वीर्य धारण ही उत्कृष्ट तप है। इससे बढ़कर तपश्चर्या त्रिलोक में अन्य नहीं। ऊर्ध्वरेता पुरुष अर्थात् अखंड वीर्य धारण करने वाला पुरुष इस लोक में मनुष्य रूप में प्रत्यक्ष देवता ही है।

ब्रह्मचर्य क्या है ?— मनुष्य जो कुछ भोजन करता है उसके पचने के पश्चात् रस बनता है। रस के पाचन से माँस, माँस से मेदा, मेदा से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से वीर्य बनता है। शरीर का यही 'सार' पदार्थ है। यही वीर्य 'ओजस' रूप में सम्पूर्ण शरीर में चमकता रहता है। जिस प्रकार फूलों के एक विशाल ढेर से थोड़ा सा इत्र उपलब्ध होता है, उसी प्रकार ४० सेर खुराक से ४० दिन में दो तोला वीर्य बनता है। जिस प्रकार तिल में तेल, दूध में मक्खन, ईख में मिठास, पुष्प या चन्दन में सुगन्ध परिपूर्ण है, वैसे ही वीर्य शरीर के अणु-अणु में विद्यमान है। यह वीर्य ही जीवन का आधार है। इस वीर्य-रक्षा का नाम ही 'ब्रह्मचर्य' है। 'ब्रह्मचर्य' को धारण करने वाला 'ब्रह्मचारी' अथवा 'ऊर्ध्वरेता' कहलाता है।

ब्रह्मचर्यसाधन के उपाय—ब्रह्मचर्य पालने के लिए सदाचारी बनना आवश्यक है। 'आचारः प्रथमो धर्मः':—सदाचार ही मनुष्य का प्रथम कर्तव्य है। अतएव ब्रह्मचारी को मन, वाणी और कर्म से पवित्र होना चाहिए। वह बुरी बातें न सोचे, अश्लील और निस्सार बातें न कहे और न सुने और सभी स्त्रियों में मातृभाव ('मातृवत् परदारेषु') रक्खें; कामेच्छा जागृत करने वाले उप-

न्यास, कथा, कहानी न पढ़कर सद्ग्रन्थों का अवलोकन करे; शृंगार पूर्ण विषयी जीवन से अरुचि करके सरल जीवन और उच्च विचार (plain living and high thinking) धारण करे। कायिक, वाचिक और मानसिक स्वच्छता ही ब्रह्मचर्य और दीर्घायु का रहस्य है।

भक्त-प्रवर गोस्वामी तुलसीदास जी का कथन है—'को न कुसंगति पाइ नसाई।' कुसंग से शील, आचार, धर्म और शुभ संकल्प सभी नष्ट होजाते हैं। अतएव ब्रह्मचारी को सदैव बुरी संगति से बचकर सत्संग करना चाहिए! सत्संग आत्मोन्नति का साधन और मोक्ष का मार्ग है ("सत्संगः परम तीर्थं सत्संग परम पदः")।

स्वस्थ शरीर ही सर्व धर्मों का साधक है। कहा भी है—'शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम्' स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मस्तिष्क (A sound body in a sound mind) के लिए व्यायाम करना नितान्त आवश्यक है। सात्विक भोजन से ही सात्विक विचारों की उत्पत्ति होती है (जैसा खाय अन्न वैसा होवे मन)। अतएव ब्रह्मचारी नियमित रूप से व्यायाम करे; सरल, शुद्ध, पाचक और सात्विक भोजन करे; गरिष्ठ, चरपरे, तामसी भोजन जैसे माँस-मदिरादि तथा नशीली वस्तुओं का सर्वथा त्याग करे और आलस्य त्याग कर दैनिक काय करे।

ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने के लिए उपर्युक्त नियमों के अतिरिक्त आत्म विश्वास और दृढ़ संकल्प भी आवश्यक है। दृढ़ संकल्प ही प्रलोभनों और वासनाओं की रोक थाम करता है; इन्द्रिय-संयम की प्रेरणा करता है; आलस्य और प्रमाद-जनित निष्क्रियता को दूर करके चित्त को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करता है।

ब्रह्मचर्य का महत्त्व—महर्षियों का कथन है कि 'ब्रह्मचर्य ही जीवन है और वीर्यनाश ही मृत्यु है' (मरणं विन्दुपातेन जीवनं विन्दु धारणात्)। वीर्य रक्षा करने से ही शरीर हृष्ट-पुष्ट और नीरोग होता है। अमोघ वीर्यधारी ओज सम्पन्न, धीर-वीर एवं गम्भीर होता है। उसका हृदय बलवान, मस्तिष्क बुद्धि-सम्पन्न और चित्त सर्वदा प्रफुल्ल रहता है। वह जरा-व्याधियों का कभी आखेट नहीं बनता। उसका प्रशान्त ललाट वीर्य के तेज से दमकने लगता है; उसके रोम-रोम से अपार दिव्यता छिटकने लगती है; वह कामदेव के समान सुन्दर और इन्द्र से भी अधिक बलवान हो जाता है। मुख-मार्तण्ड का प्रचण्ड तेज, कमनीय कपोलों की गुलाबी छटा, बैलों के से स्थूल स्कन्ध, विशाल वक्षस्थल, ईस्पात के समान भुज दण्ड, सिंह-गर्जन के समान ओजस्वी वाणी किसकी देन हैं? अपार बाहुबल, अद्भुत कान्ति, प्रखर बुद्धि और तीव्र स्मरण शक्ति किसके प्रसाद और प्रताप से उपलब्ध होती है? यदि आप दीर्घायु होना चाहते हैं, यदि आप साहसी, शक्तिवान् और तेजस्वी बनना चाहते हैं, यदि आप पुरुषार्थ द्वारा सुख और समृद्धि चाहते हैं; यदि आप धीर-वीर-गम्भीर और बुद्धिमान होना चाहते हैं तो ब्रह्मचर्य व्रत धारण करें।

सांसारिक और पारमार्थिक उन्नति की जड़ ब्रह्मचर्य है। 'ब्रह्मचर्य' व्रत कुप्रवृत्तियों से हटाता है; हृदय की भय भीरुता को दूर करता है; अपकर्मों से घृणा उत्पन्न करता है; अनर्थों से हटाता और धर्म मार्ग में लगाता है।' अतएव ब्रह्मचर्य आत्म-परिष्कार का साधन, सत्संग का प्रेरक, उच्च और उदार विचारों का जनक और मानसिक शान्ति का प्रदाता है। शरीर

रूपी मन्दिर का पवित्र स्तम्भ ब्रह्मचर्य व्रत है। संसार का सुख, आरोग्यता, बल, तेज, सामर्थ्य, विद्या, बुद्धि, ज्ञान, ध्यान, पुरुषार्थ और सद्भाव ब्रह्मचर्य पर निर्भर हैं। इसी कारण कहा गया है—'ब्रह्मचर्य परंतपः'।

ब्रह्मचर्य की महिमा का कहाँ तक वर्णन किया जाय? भीष्म पितामह ने इसी संजीवनी शक्ति के प्रसाद से मृत्यु को भी वश में कर लिया था। इसी के परम प्रताप से लक्ष्मण जी ने काल से भी कराल मेघनाद पर विजय प्राप्त की थी। अमोघ वीर्यधारी होने के कारण हनुमानजी असंख्य राक्षसों के विमर्दित करने और द्रोणाचल लाकर रामानुज की प्राण रक्षा में समर्थ हुए। हमारे पूर्वजों की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति का प्रदाता ब्रह्मचर्य व्रत ही था। इसी व्रत के पालने से इस लोक में यश और परलोक में मुक्ति प्राप्त होती है।

विद्यार्थी जीवन और ब्रह्मचर्य—प्राचीन महर्षियों ने सम्पूर्ण जीवन को चार आश्रमों में विभाजित करके ब्रह्मचर्य आश्रम में ही विद्या पढ़ने का विधान किया है। खेद है कि आजकल पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से और सामाजिक कुरीतियों के कारण अनेक विद्यार्थी ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं करते। इसका फल यह होता है कि उनकी स्मरण-शक्ति मन्द होती है। वे परीक्षा में कई बार अनुत्तीर्ण होते हैं और उनमें सद्विवेक, साहस और सदाचार का अभाव होता है। महान् ब्रह्मचर्य व्रत का पतन करने से ही हमारा भयंकर पतन हुआ है। कहाँ हमारे वीर्यवान्, पराक्रमी, शक्ति-सम्पन्न, दीर्घजीवी, विद्यानिधान और बुद्धिमान पूर्वज और कहाँ हम उनकी निस्तेज, निर्बल,

रुग्ण, अल्पायु, अशिक्षित और दुर्बुद्धि सन्तान ! इस दुर्दशा से मुक्ति पाने का एक मात्र दिव्य साधन ब्रह्मचर्य व्रत का धारण करना है। विद्यार्थियों में शक्ति-संचार करने के लिए ब्रह्मचर्य ही रसायन है। यदि हम स्वतंत्र भारत के प्राचीन गौरव, समृद्धि और वैभव को प्राप्त करना चाहते हैं; यदि हम सम्पूर्ण सिद्धियों को हस्तगत करना चाहते हैं; लोक और परलोक को सुधारना चाहते हैं तो वेद के इस पावन मंत्र "ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत" को सदैव स्मरण करके ब्रह्मचर्य रूपी प्रसाद का यथेष्ट सेवन करें।

राष्ट्र भाषा—हिंदी

स्वतन्त्र भारत-संघ की राष्ट्र-भाषा क्या हो ? यह प्रश्न हमारे सामने बड़ी तीव्रता से उपस्थित है। राष्ट्रीय एकता, जातीय उन्नति और पारस्परिक संगठन के लिए यह आवश्यक है कि समस्त देश में एक ही भाषा का प्रचार हो। अतएव यह जानने की आवश्यकता है कि राष्ट्रभाषा से क्या तात्पर्य है और उसकी क्या कसौटी है। राष्ट्रभाषा से तात्पर्य उस भाषा से है जो केन्द्रीय राजकार्य, अन्तर्प्रान्तीय व्यापार और सार्वजनिक व्यवहार में सभी प्रान्तों के रहने वालों द्वारा बरती जावे और जो विचार-विनिमय के काम में लाई जावे। राष्ट्रभाषा से तात्पर्य यह नहीं कि देश का प्रान्तीय भाषाओं का बहिष्कार करके उनके स्थान में किसी एक भाषा की स्थापना की जाय।

राष्ट्रभाषा का उच्चासन वही भाषा प्राप्त कर सकती है—(१) जो सरल, सहज और सुबोध हो; (२) जिसकी लिपि सरल और वैज्ञानिक हो; (३) जिसके बोलने और समझने वालों

की संख्या अधिक हो ; (४) जो प्राचीन भाषा हो ; (५) जो देश की सभ्यता, धर्म और संस्कृति से सम्बन्धित हो और (६) जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं साहित्यिक आदि कार्यों को पूर्ण करने की क्षमता हो।

'मुँडे मुँडे रुचिर्भिन्ना' के अनुसार इस समय हिन्दी के अतिरिक्त राष्ट्रभाषा पद के लिए अँगरेजी और हिन्दुस्तानी का समर्थन भी किया जा रहा है। अँगरेजी के समर्थक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा, महान शब्द-भंडार, प्रगतिशील साहित्य, वैज्ञानिक शब्द-प्राचुर्य आदि दृष्टि-कोणों से अँगरेजी का समर्थन करते हैं; किन्तु स्वतन्त्र भारत एक विदेशी भाषा को उसी प्रकार नहीं अपना सकता, जिस प्रकार इँगलैंड हिन्दी को नहीं अपना सकता। अपनी माता की सेवा न करके विदेशी रमणियों की चरण-वन्दना कौन करे? जब अँगरेजों के ५० वर्ष के शासन-काल में ·००५ प्रतिशत व्यक्ति अँगरेजी में केवल समझने की शक्ति प्राप्त कर सके हैं, तब महान भारतवर्ष की ३० करोड़ जन-संख्या को इस भाषा में सुशिक्षित करने के लिए कम से कम एक लाख वर्ष की आवश्यकता होगी। फिर, जो भाषा न लिपि और न उच्चारण की दृष्टि से वैज्ञानिक है, उसे राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन करके भारत क्या हित सम्पादन कर सकता है?

दूसरा पक्ष हिन्दुस्तानी का है जो इस बात पर बल देता है कि भारत-राष्ट्र किसी विशेष धर्म से सम्बन्ध नहीं रखता, अतएव इसकी राष्ट्रभाषा भी वही होनी चाहिए जो सब धर्मों एवं संस्कृतियों में उत्पन्न हुई हो; ऐसी भाषा 'हिन्दुस्तानी' है जो संस्कृत, फारसी, हिन्दी, उर्दू का सम्मिश्रण होने से सब प्रान्तों के लिए ग्राह्य हो सकती है।

इस प्रकार का तर्क उन व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत किया गया है जो " हिन्दुस्तानी " के छद्म-वेष में उर्दू भाषा और उसकी अप्राकृतिक और अवैज्ञानिक लिपि को स्वतन्त्र भारत के गले मढ़ना चाहते हैं, अन्यथा हिन्दुस्तानी का न कोई साहित्य है, न सांस्कृतिक परम्परा। क्या "बादशाह राम" और " बेगम सीता " जैसे प्रयोग हमारी संस्कृति के द्योतक हो सकते हैं ? जब तक हिन्दुस्तानी उर्दू लिपि में फारसी और अरबी के शब्दों से बोझिल हैं, वह भारतीय जनता के लिए विनाशकारी है। ऐसी भाषा अँगरेजी की भाँति ही विदेशी मनोवृत्ति की सूचक होने के कारण त्याज्य और अग्राह्य है। क्या 'अहसास', 'मरकजी हैसीयत', 'ख़ातून' आदि शब्द कोई साधारण पढ़ा लिखा मुसलमान समझ सकता है ? वास्तव में हिन्दुस्तानी का शरीर शंकर और मन विदेशी है, इस कारण वह हमारी राष्ट्र भाषा नहीं बन सकती।

हिन्दी में राष्ट्रभाषा के उपयुक्त सभी गुण वर्तमान हैं। यह कन्या कुमारी से बदरिकाश्रम तक और अटक से कटक तक सर्वत्र भली भाँति बोली और समझी जाती है। भारत की प्राचीन भाषा संस्कृत से उत्पत्ति होने के कारण अन्य आर्य भाषाओं पंजाबी, सिन्धी, गुजराती, मराठी, बंगाली और उड़िया से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि उर्दू पर से फारसी और अरबी का चोला उतार दिया जाय तो यह हिंदी के अधिक सन्निकट होगी। अतः यह भावों और विचारों के प्रकट करने में अन्तर्प्रान्तीय भाषा का काम कर सकती है।

हिंदी सरल, सहज और सुबोध है। कोई भी व्यक्ति थोड़े से प्रयास से कुछ समय में हिंदी बोलने, लिखने और पढ़ने में

समर्थ हो जाता है। शिक्षा-प्रसार-विभाग की सूचनाओं से यह स्पष्ट है कि १५ दिन के अल्प समय में अन्य भाषा-भाषी भी हिंदी सीख गए।

इस देश की प्राचीन भाषाओं में हिन्दी का गौरव पूर्ण स्थान है। इसका जन्म विक्रम की ११वीं शताब्दी से भी पूर्व हुआ है। ६०० वर्ष के दीर्घकाल में साहित्य-रचना द्वारा यह परिष्कृत हो गई है, जन-साधारण ने इसे भली भाँति अपना लिया है। यह युग-युग की भावनाओं की प्रतीक है; भारतीय आदर्शों की जननी है और देश की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति से पूर्णतः सम्बन्धित है। यद्यपि सिंहासनों ने इसे कभी सहारा नहीं दिया तथापि सन्तों ने उसे वहन किया है और जनता ने ग्रहण किया है। वेद, महाभारत, भागवत, रामायण, पुराण आदि ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद हो चुका है। वास्तव में यह हमारे प्राचीन समाज, गौरव, धर्म और राजनीति का सजीव चित्र उपस्थित करती है। सूरसागर और रामचरित मानस आदि महाकाव्य जिस भाषा में लिखे गए हैं, उसकी समता कौनसी भाषा कर सकती है? इसके साहित्य-पारिजात को क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या ईसाई सभी ने प्रेम से सींच-सींच कर पल्लवित किया है। हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों का संगम हिंदी द्वारा ही हुआ है। जायसी, रहीम और रसखान की यह भाषा-भारती भारतीय भावनाओं की प्रतीक है, और लोक-हृदय का प्रतिबिम्ब है। यह जनता की भाषा है; उसी ने परिपोषित किया है और अब उससे अलग नहीं की जा सकती।

हिन्दी की उपादेयता किस क्षेत्र में सिद्ध नहीं हुई? वह देश के साँस्कृतिक एक्य की द्योतक रही है। राजनैतिक उन्नति और

राष्ट्रीय जागृति हिंदी द्वारा ही सम्पन्न हुई है; धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों को सफल बनाने का श्रेय हिंदी को ही है। भारतीय आदर्श और राष्ट्रीयता की भैरवी सुनाकर सुषुप्त राष्ट्र में चेतना और उत्साह लाने वाली हिंदी ही है।

हिंदी की देव नागरी लिपि परम वैज्ञानिक, शुद्ध सरल, सुबोध, नियमानुकूल और निर्दोष है। इसमें जो कुछ लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है। इसमें अनावश्यक वर्णों का पूर्ण अभाव है; प्रत्येक ध्वनि के लिए सदैव एक ही वर्ण का प्रयोग होता है। क्या दोष पूर्ण रोमन और उर्दू लिपियाँ किसी प्रकार देव नागरी लिपि की समानता कर सकती हैं ?

हिंदी पर अनेक आक्षेप किए गए हैं। कहा जाता है कि इसका पारिभाषिक शब्द-भंडार कम है, किंतु हिंदी अपनी मातामही संस्कृत के अक्षय और अनन्त शब्द-भंडार से अपनी साहित्यिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है। दूसरा आक्षेप यह है कि हिंदी 'टाइप' के लिए अनुपयुक्त है। इस दिशा में अवश्य हिंदी में कुछ कमी है। यद्यपि 'लीनो टाइप' से कुछ सुगमता हुई है, तथापि लिपि-संशोधन की ओर भाषा विशारदों को प्रयत्नशील होना चाहिए।

निष्कर्ष यह है कि यदि हम अपने राष्ट्र का सांस्कृतिक, जातीय एवं साहित्यिक विकास करना चाहते हैं, समस्त देश को एकता के सूत्र में गूँथना चाहते हैं तो अपनी एकमात्र लोकप्रिय भाषा हिंदी को ही निःसंकोच राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन करें। हम सब का पावन कर्तव्य है कि हिंदी को ग्रहण करें, और इसके प्रचार, प्रसार और सम्बर्द्धन का निरन्तर उद्योग करें।

'जहां सुमति तहां संपति नाना'

किसी राष्ट्र अथवा जाति की समृद्धि का क्या कारण है? पारिवारिक उन्नति का मूल मंत्र क्या है? भारतवर्ष जैसा विशाल देश पराधीनता की बेड़ियों में किस प्रकार जकड़ गया? आज चीन जैसे शक्तिशाली राष्ट्र के पतन का क्या कारण है? इन सबका एक ही उत्तर है—'जहाँ सुमति तहाँ सम्पति नाना, जहाँ कुमति तहाँ विपति निदाना।'

'सुमति' का क्या तात्पर्य है? 'सुमति' का अर्थ सुबुद्धि तो है ही, ऐक्य भी है। प्रेम और ऐक्य सुबुद्धि के बिना नहीं रह सकते। सुबुद्धि सुमार्ग की प्रेरक है; दुर्मति नाश का कारण। इसी प्रकार 'सम्पत्ति' का अर्थ केवल धन-दौलत ही नहीं, वरन् वैभव, गौरव, यश, सुख, शक्ति और समृद्धि सभी इसमें अभिप्रेत हैं।

कहावत है कि एकता ही बल है (Unity is strength)। एकता शक्ति की जननी है। जहाँ एकता और सद्भावना है वहाँ उन्नति का मार्ग खुला हुआ है। सूत के कच्चे धागों को बालक भी सरलता से तोड़ सकता है; वही जब बटकर एक रस्से के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं तो बलशाली हाथियों को भी बाँध सकते हैं। इसी प्रकार ऐक्य-सूत्र में गुँथा हुआ समाज दुर्लभ को भी सुलभ और दुर्गम को सुगम कर लेता है। 'सुमति' के शस्त्र से सुसज्जित समाज का कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता।

किसी परिवार को ही ले लीजिए। जिस गृह में मेल-जोल है, वहाँ सुख और शान्ति का राज्य है; जिस परिवार में फूट और कलह विराजती है, वह एक दिन अवश्य नष्ट हो जाता है। जो दशा परिवार की है वही दशा किसी समाज अथवा राष्ट्र की

है । जिस राष्ट्र में पारस्पारिक प्रेम और सद्भावनाएँ हैं; जहाँ विचार-वैषम्य होते हुए भी कंधे से कंधा मिड़ोकर मनुष्य निर्माण कार्य में संलग्न रहते हैं, वहाँ विजय-वैजयन्ती फहराती है। बड़े-बड़े राष्ट्र एकता के बिना शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। आज चीन साम्राज्य के अधःपतन का कारण राष्ट्रवादी और समाजवादी दोनों दलों का पारस्परिक संघर्ष है। जयचन्द और पृथ्वीराज का पारस्परिक मनोमालिन्य ही भारतवर्ष की पराधीनता का कारण था ! आपसी कलह ने सुदृढ़ मुगल और मराठा साम्राज्यों को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। हिन्दू-मुसलमानों के धार्मिक मतभेदों ने भारतवर्ष को दो भागों में विभाजित कर दिया। इसके विपरीत इंगलैंड, अमेरिका और रूस की समृद्धि का कारण सुमति ही है।

एक और एक ग्यारह होते हैं। मिलकर काम करने का बड़ा महत्त्व है। 'पाँच पंच मिल कीजे काजा'—जहाँ पाँच व्यक्ति मिलकर काम करते हैं, विजय-श्री उनके चरण चूमती है। सुमति-सम्पन्न समाज की ओर कोई आँख भी उठाकर नहीं देख सकता। 'एकता' दृढ़ चट्टान है जिसे प्रबल शत्रु भी डिगा नहीं सकता। अनैक्य पतन का निश्चित मार्ग है। (United we stand; divided we fall.)।

सुमति की देन है समृद्धि। जब किसी परिवार के सदस्य मिलकर काम करेंगे तो लक्ष्मीजी उन पर क्यों न कृपा करेंगी ? जहाँ धनधान्य का प्राचुर्य है, वहाँ दरिद्रता-दानवी का सिक्का नहीं जम सकता। भगवती सुमति के प्रसाद से गौरव, ऐश्वर्य, शक्ति यश सभी सुलभ हो जाते हैं। इसके विपरीत कुमति कलह, अशान्ति और विपत्ति की जननी है। तुलसीदासजी ने कहा है—

“जाको प्रभु दारुण दुख देंही। ताकी मति पहिले हर लेंई।”

वास्तव में 'सुमति' प्रेम और ऐक्य का संचार करती है; शक्ति का सोपान है; शान्ति, सुख और ऐश्वर्य की अभिवृद्धि करती है। अतएव यह कथन यथार्थ है—

"जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना।
जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना ॥"

अहिंसा से ही विश्व शांति हो सकती है।

आज समस्त संसार में अशांति का साम्राज्य है। युद्ध समाप्त हो जाने पर भी हिंसा-दानवी का ताण्डव नृत्य हो रहा है। प्रत्येक राष्ट्र अधिकाधिक युद्ध सामग्री के निर्माण में, अणु-बम्ब से भी प्रलयंकर किसी अन्य वैज्ञानिक आविष्कार में और भौतिक-बल के संग्रह में दत्तचित्त है। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व पाश्चात्य राजनीतिज्ञों का दावा था कि युद्ध युद्ध बन्द करने के लिए लड़ा जा रहा है; किंतु महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात् भी अशांति और संघर्ष का साम्राज्य है; हृदयों में भय और आतंक छाया हुआ है और तृतीय महायुद्ध के साधन जुटाए जा रहे हैं। इससे सिद्ध होता है कि शांति युद्ध से नहीं वरन् "अहिंसा परमोधर्मः" को अपनाने से ही प्राप्त हो सकती है।

यहाँ 'हिंसा' और 'अहिंसा' का भेद जानना आवश्यक है। हिंसा क्या है ? जिन भावों, इरादों और कार्यों से आत्मा की शांति भंग होकर अपना पतन होता है, ऐसे राग, द्वेष, मोह, क्रोध, मान, माया, लोभ, विषय वासना आदि दुर्भावों और प्रमादपूर्वक अपने या दूसरों के प्राणों का घात करने या दिल दुखाने को हिंसा कहते हैं। अहिंसा क्या है ? दुष्ट कार्यों को छोड़कर मन-वचन और कर्म से दूसरों की रक्षा ही अहिंसा है।

अतएव अहिंसा आत्मोन्नति की जननी है, सदाचार का सोपान है और ईश्वर-प्राप्ति का सच्चा मार्ग है। अहिंसा हमको सिखलाती है कि निरीह और निर्दोष प्राणियों की रक्षा करें, मन से भी किसी प्राणी के अहित की भावना न करें और वाणी से कटु वचन न कहें। अहिंसा का यह उच्च मार्ग मन-वचन-कर्म से हमको पवित्र बनाता है, प्राणी-मात्र पर दया सिखलाता है, मनुष्य में मानवता का संचार करता है और शान्ति के पवित्र मन्दिर तक ले जाता है। क्या यह पवित्र धर्म-धारा व्यक्तिगत, जातिगत और साम्राजगत भीषण युद्ध की धधकती ज्वालाओं को शान्त नहीं कर सकती ?

कुछ व्यक्ति इस पवित्र धर्म पर कायरता और निष्क्रियता का आक्षेप लगाते हैं। अहिंसा वीरों का भूषण है। पूज्य बापू के शब्दों में 'अहिंसा कायरों के लिए नहीं वारों के लिए है। यह अपने अन्दर ईश्वर की शक्ति है। अपूर्ण मनुष्य उस तत्व को हृदयंगम नहीं कर सकता।'' सभी धर्मों ने अहिंसा का उपदेश दिया है। ईसा और मुहम्मद का उपदेश है—'मत मारो' (Do not kill)। भारतीय धर्मों ने 'अहिंसा परमोधर्मः यतो धर्मः ततो जयः' कहकर 'अहिंसा' को महान गौरव प्रदान किया है। वास्तव में ''जिन ऋषियों ने हिंसा के मध्य से अहिंसा के नियम का अन्वेषण किया था, वे वैज्ञानिक परमाणु बम्ब के निर्माण कर्त्ता से भी बढ़कर प्रतिभाशाली थे; नेपोलियन और हिटलर से भी बढ़कर वीर थे। शस्त्रास्त्रों के प्रयोग भली भाँति जानते हुए भी उन्होंने उनकी निस्सारता समझी और एक श्रान्त-क्लान्त संसार को शिक्षा दी कि उसकी मुक्ति का मार्ग हिंसा नहीं अहिंसा है।'' अहिंसा के पुजारी का मूल मंत्र है:—

"न जुल्म करेंगे न जालिम बनेंगे,
न कायर बनेंगे न मग़लूब होंगे ।"

अतएव अहिंसा वीरता का शिखर है। अहिंसा का पुजारी अत्याचार को नहीं सह सकता; वह धर्म और धर्मायतनों की रक्षा के लिए आत्म-बलिदान करना जानता है और अत्याचारी के दमन और देश-रक्षा के लिए सीना तानकर खड़ा होना जानता है। उसकी स्वतंत्रता को कोई भी भौतिक शक्ति नहीं दबा सकती।

क्या 'अहिंसा' द्वारा किसी देश की आन्तरिक झगड़ों और बाह्य आक्रमणों से भी रक्षा हो सकती है? वास्तव में अहिंसा में अमोघ शक्ति है। अहिंसक राष्ट्र में इतनी सामर्थ्य, इतना अनुशासन और बलिदान की अपार दिव्य शक्ति होती है कि उसकी आत्मा को बन्दूकें और तलवारें नष्ट नहीं कर सकतीं। अहिंसा की विजय स्थायी और तलवार की क्षणिक होती है। शान्ति की विजय युद्ध की विजय से अधिक उत्तम है। (Peace hath her glories more glorious than war)। सम्राट अशोक का शासन इसका सजीव उदाहरण है।

रूस के महान ऋषि टालस्टाय ने कहा है, "जिस प्रकार अग्नि अग्नि का शमन नहीं कर सकती, उसी प्रकार पाप पाप का शमन नहीं कर सकता।" इसी प्रकार हिंसा से हिंसा बढ़ सकती है, शान्ति नहीं हो सकती। हिंसा और कल्याण विरोधी शब्द हैं। किसी को पीड़ा देने से क्रोधाग्नि प्रकट होती है और क्रोध से प्रतिशोध की भावना जाग्रत होती है। अहिंसा से उदात्त भाव जाग्रत होते हैं, पर कल्याण-कामना का विकास होता है और हृदय को शान्ति मिलती है। अहिंसा में वह रेडियम शक्ति है कि बर्बर और हिंसक को भी नम्र बना देती है।

संक्षेप में, 'अहिंसा मानव जाति का नियम है, हिंसा पशु जगत का'। यदि आजके पीड़ित ससार को कुछ राहत देनी है, दानवता का दमन करके मानवता का उन्मेष करना है; कलह और ईर्षा के स्थान में शान्ति स्थापित करनी है तो अहिंसा के मार्ग को अपनाइए। अहिंसा में वह अमोघ शक्ति है कि उसके सामने प्रबलतम विनाशकारी शस्त्र फीका है। पीड़ित मानव तब तक शान्ति लाभ नहीं कर सकता जब तक वह निम्न मंत्र को नहीं अपनाता।

"सत्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं,
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा परत्वं।
माध्यस्थ भावं विपरीत वृत्तौ,
सदा ममात्मा विद्धातु देवः॥"

निबन्धों की विस्तृत रूप रेखाएँ

यात्रा-सम्बन्धी-लेख

१—भूमिका—यात्रा का उद्देश्य, प्रबन्ध और तैयारी। २—सवारी, स्टेशन, कुली आदिक का वर्णन। ३—यात्रा का वर्णन—रेलगाड़ी का आगमन; बैठने में असुविधा, मार्ग के विविध दृश्य, प्रभात या सायं-काल के प्राकृतिक दृश्य, अन्य स्मरणीय घटनाएँ, विभिन्न प्रकृति के व्यक्ति।

४—उपसंहार—यात्रा से लाभ।

विश्व-वंद्य महात्मा गांधी

(१) प्रस्तावना—युग-निर्माता, भारतीय-स्वतन्त्रता का जनक, त्रस्त, पददलित और शोषितों का उद्धारक।

(२) **बाल्यकाल**—जन्म पोरबन्दर (काठियाबाढ़) में २ अक्टूबर सन् १८६९ । पिता—श्री कर्मचन्द या काबा गाँधी, माता—परम साध्वी और धर्मनिष्ठ, गाँधी पर माता के उपवास और व्रत का प्रभाव ।

(३) **शिक्षा**—राजकोट एवं भाव नगर में, मन्दबुद्धि और संकोचशील , श्रवण कुमार और हरिश्चन्द्र के नाटकों से प्रभावित । १३ वर्ष की अवस्था में विवाह, कुसंग में दुर्व्यसनी, अपनी निर्बलता का ज्ञान, आत्म-संयम की प्रतिज्ञा, बैरिस्टरी की शिक्षा के लिए विदेश-गमन । जाने से पूर्व मांसाहार- मदिरा सेवन और पर-स्त्री गमन न करने की भीष्म प्रतिज्ञा, अन्त तक इसका निर्वाह ।

(४) **उनके काय** – क) राज कोट में वकालत । सन् १८९१ में दक्षिणी अफ्रीका गमन, दादा अब्दुल्ला का केस, मार्ग में गोरों द्वारा दुर्गति, वर्ण-भेद का कटु अनुभव, भारतीय प्रवासियों के साथ होने वाले दुर्व्यवहारों को रोकने और उनके स्वत्वों की रक्षा के लिए नेटाल इण्डियन काँग्रेस का जन्म; उनकी शिक्षा और स्वच्छता की योजनाएँ; सन् १८९६ ई० में भारत लौटना ।

(ख) भारत-भ्रमण —प्रवासियों के लिए प्रबल आन्दोलन । अफ्रीका लौटने पर दुगति । बोअर युद्ध में सेवा वृत्ति । ‘ काले कानून ’ के विरुद्ध सत्याग्रह आन्दोलन । (ग) भारत लौटने पर चम्पारन और खेड़ा में सत्याग्रह । (घ) रौलट एक्ट और जलियाँवाला बाग का काण्ड, राजनीतिक विप्लव, असहयोग आन्दोलन । (ङ) १९३० का आन्दोलन, नमक कानून-तोड़ना, दंडी यात्रा, दमन-चक्र । (च) १९३१ में गोलमेज परिषद्, विलायत जाना, लौटने पर हरिजन-उद्धार के लिए कार्य । (छ) १९३५ में भारत का नया शासन-विधान, कांग्रेस-राज्य, गांधी जी का पथप्रदर्शन । (ज) द्वितीय महायुद्ध, गाँधी जी का ‘भारत छोड़ो आन्दोलन’ (झ) १५ अगस्त १९४८ को भार-

तीय स्वतन्त्रता प्राप्ति, देश विभाजन, भीषण नर संहार, हिन्दू मुस्लिम एक्य के लिए नोत्राखाली की यात्रा, साम्प्रदायिक कटुता दूर करने के लिए उपवास, ३० जनवरी को आततायी की गोलियों से बलिदान, समस्त राष्ट्र शोक मग्न।

(४) **गाँधी जी का आदर्श**—आत्मोत्सर्ग, सत्य और अहिंसा का सर्वत्र पालन; मन, कर्म और वचन से गीता की शिक्षाओं का पालन, गोरक्षा, ग्राम सुधार, हरिजन उद्धार। हिन्दू मुस्लिम एक्य और रचनात्मक कार्यक्रम के प्रबल समर्थक।

५—उपसंहार—महान् संत, भारत की भव्यविभूति, सत्य को साकारता दी है और त्रिताप संतप्त मानव समाज को सुख शांति का साधन दिया है। वे केवल राजनीतिज्ञ ही नहीं, वरन् सुधारक, पद-दलितों के उद्धारक, कुरीति-निवारक, धर्म-प्रचारक और शान्ति के दूत थे। "उनकी आत्मा में राम की मर्यादा, कृष्ण की कर्मण्यता, बुद्ध की अहिंसा, शंकर की भीमता, चैतन्य की भावना, ईसा की दीन-बन्धुता और मुहम्मद की कट्टरता थी।"

यंत्र सम्बन्धी लेख

प्रस्तावना—'आवश्यकता आविष्कार की जननी हैं'। विज्ञान के चमत्कार।

विवरण—(क) यंत्र का आविष्कार और विकास। (ख) यंत्र का विवरण—बनावट आदि। (ग) यंत्र से लाभ और हानि।

उपसंहार—निजी विचार—सुधार या सदुपयोग की आवश्यकता।

मैच

प्रस्तावना—खेल-प्रतियोगिताओं की आवश्यकता।

विवरण—(क) किसी चुनौती की स्वीकारता; तैयारी के लिए दौड़ धूप। (ख) क्रीड़ा-स्थल (मैदान); पक्ष-विपक्ष के दलों का वर्णन। (ग) मैच देखने का प्रबन्ध। (घ) मैच का वर्णन और हार-जीत। दर्शकों पर प्रभाव। (ङ) पुरस्कार वितरण और हर्ष ध्वनि; दर्शकों की सराहना।

उपसंहार—खेल से संगठन, सहयोग, उत्साह की वृद्धि होती है। खेल में ईमानदारी और अनुशासन की आवश्यकता; जनता पर प्रभाव।

विद्यालय का वार्षिकोत्सव

प्रस्तावना—शिक्षा के साथ उत्सवों का महत्त्व।

विवरण—(क) उत्सव की तैयारियाँ और सजावट। (ख) खेल-कूद, वाद विवाद, निबन्ध, कविता, अन्त्याक्षरी, संगीत आदि की प्रतियोगिता; अभिभावक दिवस आदि। (ग) अन्तिम दिवस-आमंत्रित व्यक्तियों का स्वागत-सत्कार; सभापति का निर्वाचन। (घ) प्रार्थना, स्वागत-गान, वार्षिक विवरण की रिपोर्ट; संगीत, कविता, व्याख्यान का आयोजन, विद्यार्थियों द्वारा सुन्दर और शिक्षाप्रद अभिनय। (ङ) पुरस्कार वितरण, सभापति का भाषण, मंत्री का धन्यवाद देना; जलपान आदि!

उपसंहार—उत्सव का प्रभाव; पुरस्कृत विद्यार्थियों में प्रसन्नता, उत्साह और भविष्य में उन्नति करने का निश्चय; अन्य विद्यार्थियों को प्रोत्साहन मिलना।

पैसे की आत्मकहानी

प्रस्तावना—पैसे का महत्त्व-"जिसके पास नहीं है पैसा, उसका जग में जीवन कैसा।"

विवरण—(क) ब्रह्म देश की एक खान में जन्म, भट्टी में तपकर उज्ज्वल रूप; टकसाल में निर्माण; बाह्य सौन्दर्य और चमक-दमक। (ख) भ्रमण-समस्त भारत की सैर-वन, पर्वत, उद्यान, रेगिस्तान, सिनेमा,

आदि की हवा खाना । राजा-रंक, धनी-निर्धन, चोर-शाह के हाथ पर्यटन । (ग) तिजोरी में बन्द; भाई-बंदों के साथ हेल-मेल । अप व्ययी वैश्य-पुत्र द्वारा उद्धार । किसान के हाथ पड़ना-पृथ्वी में गाड़ा जाना-श्याम वर्ण मटमैला रंग; किसी प्रकार उद्धार । घिसते-घिसते जरा जीर्ण होना, टकसाल जाना और पुनर्जन्म । युद्धकाल का छेददार पैसा ।

उपसंहार—"पैसे" का बल; कुकर्म और सुकर्म सभी का कारण, समस्त संसार में सम्मान होना ।

दीर्घ-जीवी बनने के साधन

१. **प्रस्तावना**—आर्यों का सिद्धांत-"जीवेम शरदः शतम् और धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूल साधनम्" । हमारे पूर्वज शक्तिवान, तेजस्वी और दीर्घजीवी थे, सौ वर्ष जीने पर भी उनकी शक्ति शिथिल नहीं होती थी, आज हम 'सींकिया जवान' निस्तेज, अल्पायु और दुर्बल हैं; पचास वर्ष से पूर्व ही काल के ग्रास बन जाते हैं ।

२. **दीर्घ जीवन का रहस्य**—(क) ब्रह्मचर्य-आत्मिक, शारीरिक और मानसिक उन्नति के लिए परम आवश्यक । (ख) स्वच्छता-मनसा-वाचा-कर्मणा स्वच्छ होना चाहिए (Cleanliness is next to godliness-स्वच्छता का पद देवत्व से कुछ ही कम हैं) । (ग) स्वच्छ और शुद्ध वायु, स्वच्छ जल, सादा और पुष्टिकारक भोजन के लाभ; गरिष्ठ और चटपटे भोजन, मद्य, तम्बाकू आदि मादक वस्तुएँ आयु का नाश करने वाली होती हैं । (घ) नियम और संयम-जीवन की सुव्यवस्था के लिए आवश्यक । (ङ) व्यायाम-शरीर नीरोग और पुष्ट, मन चंगा और हृदय स्फूर्ति से पूर्ण रहता है । कहा भी है—"व्यायाम पुष्ट गात्रस्य बुद्धिस्तेजो यशो बलम्" । (च) ब्राह्ममुहुर्त में जागने और शीघ्र सोने से मनुष्य स्वस्थ, समृद्ध, स्फूर्तिवान् और बुद्धिमान बनता है ।

(Early to bed and early to rise, makes a man healthy, wealthy and wise (छ) सत्संग--उत्तम पुस्तकें पढ़ना; अश्लील नाटक, उपन्यास, कथा-कहानी और चित्रपट से अरुचि रखना और बुरे मनुष्यों का साथ न करना (काजर की कोठरी में कैसो हू सयानो जाइ, एक लीक काजर की लागि है पै लागि है।) (ज) प्रकृति के अनुकूल चलना; जैसे, रात्रि में विश्राम और दिन में कार्य; इसके विपरीत कार्य करने से शरीर आलसी और रोगी हो जाता है। प्रसन्न मन, स्फूर्ति, आशा और उत्साह के लिए प्रकृति के नियमों का पालन करना चाहिए।

३. उपसंहार—आध्यात्मिक और पारलौकिक उन्नति के लिए; परोपकारी जीवन यापन करने के लिए और मानव-समाज के कल्याण हेतु शतायु जीवन की कामना करना चाहिए।

गुरु भक्ति

१—ज्ञान प्राप्ति के दो साधन—अनुभव और गुरु। उत्तम शिक्षा गुरु द्वारा ही सुलभ हो सकती है—'गुरु बिन होय न ज्ञान'। स्वाध्याय से भी ज्ञान उपलब्ध किया जाता है, पर ठोस ज्ञान गुरु से ही मिलता है।

२—गुरु का महत्त्व—बड़े बड़े विद्वानों का निर्माण गुरुओं ने ही किया है। महर्षि दयानन्द, विश्वकवि रवीन्द्र नाथ टैगोर, ईश्वरचन्द्र विद्या सागर आदि ने गुरु से ही ज्ञान-गौरव प्राप्त किया था। मैथिलीशरण जी की काव्य-प्रतिभा द्विवेदी जी द्वारा चमकी थी। पूज्य गांधी जी के राजनीति-गुरु प्रातः स्मरणीय गोपालकृष्ण गोखले थे।

३—गुरु सेवा—वर्तमान शिक्षा का साधन धन है, किन्तु प्राचीन काल में सेवा-भक्ति का अधिक महत्त्व था। गंभीर ज्ञान, सदाचरण की

शिक्षा और चरित्र निर्माण के लिए गुरु की सेवा-भक्ति, गुरु के प्रति श्रद्धा और सम्मान आवश्यक है। आजकल गुरु भक्ति का पूर्ण अभाव है। 'सेवा' से अधिक 'धन' को समझा जाता है।

४—प्राचीन गुरुकुलों का आदर्श—धनी-निर्धन, उच्च-नीच का विचार किये बिना समान भाव से सबको शिक्षा दी जाती थी। महाराज और निर्धन एक साथ पढ़ते थे; कृष्ण-सुदामा दोनों गुरु सांदीपनि से पढ़ते थे।

५—गुरु सेवा के कुछ आदर्श—पुराण गुरु भक्ति के दृष्टान्तों से भरे पड़े हैं। एकलव्य और द्रोणाचार्य, वीर शिवाजी ने समर्थ गुरु रामदास के आदेश से सिंहनी का दूध दुहा था। कबीर ने 'गुरु' का महत्त्व निम्न पंक्तियों में प्रकट किया है :—

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े का के लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरु आपकी, गोविंद दियो बताय॥

रेडियो

१—प्रस्तावना—विज्ञान के चमत्कार और रेडियो।

२—रेडियो का आविष्कार और उन्नति :—

भारतीय विज्ञानाचार्य सर जगदीशचन्द्र बसु ने सर्व प्रथम रेडियो का आविष्कार किया था; किन्तु सन् १९२१ ई० में मारकोनी नामक इटली के विज्ञान-वेत्ता ने सरकार से नियमित कराया। उसने इँगलैंड से अमेरिका को विद्युत् तरंगों से बेतार के तार द्वारा संदेश भेजने में सफलता प्राप्त की। सबसे पहले इँगलैंड में ब्राड कास्टिंग (इधर-उधर संदेश आदि भेजने का) स्टेशन स्थापित किया गया। ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कम्पनी (बी० बी० सी०) ने इस क्षेत्र में अधिक सफलता प्राप्त की है। अब प्रत्येक देश में इस के स्टेशन स्थापित हो गये हैं। रेडियो व्यवसाय और कला की निरन्तर उन्नति हो रही है।

३—रेडियो यंत्र क्या है ?

रेडियो एक छोटे बक्स के आकार का यंत्र होता है; जो बिजली के तारों से सम्बन्धित कर दिया जाता है। इसमें बेतार के तार द्वारा दूर दूर की ध्वनि सुनी जा सकती है। विश्व के विभिन्न ब्राडकास्टिंग स्टेशनों से भेजे जाने वाले समाचार, व्याख्यान और संगीत आदि सुनने के काम में लाया जाता है।

४—रेडियो से लाभ—

(क) इसके द्वारा विश्व भर के समाचार और संगीतादि क्षण भर में घर बैठे सुने जा सकते हैं। (ख) यह मनोविनोद का अत्युत्तम साधन है। संगीत, नाटक, प्रहसन, कवि सम्मेलन आदि के कार्य-क्रम मनोरंजन करते हैं। (ग) यह शिक्षा-प्रसार और ज्ञान-प्रचार का भी श्रेष्ठ साधन है। कृषि, व्यापार, स्वास्थ्य और कला-कौशल सम्बन्धी ज्ञातव्य बातें बतलाई जाती हैं। (घ) व्यापारिक उन्नति—वस्तुओं के भाव; औद्योगिक चर्चा; अनेक वस्तुओं के बनाने के उपाय जनता को बताये जाते हैं। (ङ) सामाजिक उन्नति—अनेक कुप्रथाओं और उनसे होने वाली हानियों पर प्रकाश डालकर अशिक्षित और अन्ध-श्रद्धालु जनता को समझाया जा सकता है। (च) राजनीतिक—सरकारी कानूनों की उपयोगिता समझाई जा सकती है; जनता में फैली हुई भ्रम पूर्ण धारणाओं का निराकरण किया जा सकता है और सत्यता पर प्रकाश डाला जा सकता है। प्रचार (Propaganda) का भी सुगम साधन। (छ) इससे समुद्र-यात्रा निर्भय और निष्कण्टक हो गई है। डूबते हुए जहाज अथवा किसी आक्रमण की सूचना तुरन्त भेज देने से शीघ्र रक्षा का प्रबन्ध किया जा सकता है। (ज) वास्तव में रेडियो ही राष्ट्रीय, शैक्षणिक, सामाजिक और राजनीतिक उन्नति, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करने और विश्व मैत्री के विकास का सर्वोपरि साधन है।

५—उपसंहार—रेडियो का भविष्य—अभी धनिक वर्ग को लाभ पहुँचाता है; ग्रामीण और निर्धन जनता इससे लाभ नहीं उठा पाती है। ग्राम सुधार और औद्योगिक उन्नति के लिए इसकी नितान्त आवश्यकता है। जब संदेशों के साथ चित्र भी आने लगेंगे तब इसकी उपयोगिता बढ़ जायगी।

व्यायाम

१—प्रस्तावना—स्वास्थ्य का महत्त्व—'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्'; स्वस्थ मनुष्य हीं सांसारिक, आत्मिक और आध्यात्मिक उन्नति कर सकता है; स्वस्थ मनुष्य का चित्त प्रसन्न, मस्तिक स्वच्छ और हृदय साहसी होता है (A sound body in a sound mind)। अस्वस्थ व्यक्ति को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है; धन होने पर भी सुख भोग नहीं सकता। व्यायाम और उत्तम स्वास्थ्य का घनिष्ठ सम्बन्ध। 'जी सुख तो जहान सुख।'

२—व्यायाम के ढंग—अवस्था और शक्ति के अनुसार बालकों और वृद्धों के लिए प्रातः-पर्यटन (टहलना); युवाओं के लिए दंड, बैठक, कुश्ती, मुग्दर, दौड़, तैरना और आसन। अँग्रेजी व्यायाम—क्रिकेट, हाकी, फुटबाल, वाली बाल, जिमनास्टिक आदि। देशी व्यायाम सरल, सहज और 'कम खर्च वाला नशीं' हैं।

३—व्यायाम के नियम—(अ) व्यायाम शक्ति अनुसार की जाय, अधिक व्यायाम से हानि। (आ) व्यायाम नियमित हो; अनियमित होने से स्वास्थ्य को हानि। (इ) भोजन के पश्चात् तुरन्त न की जावे।

४—लाभ—शारीरिक शक्ति और स्फूर्ति की वृद्धि, शरीर की सुडौलता, चित्त की प्रसन्नता, चारित्रिक दृढ़ता, आत्मा की निर्मलता और संयम के लिए व्यायाम परमावश्यक है। शारीरिक, मानसिक और

आत्मिक उन्नति होती है। साहस, बल और शौर्य की साधक है। "व्यायाम पुष्ट गात्रस्य बुद्धिस्तेजो यशोबलम्।"

५—उपसंहार—दुर्बलता अभिशाप है, "दैवो दुर्बल घातकः"; "सबै सहायक सबल के कोऊ न निबल सहाय"

विज्ञान की उन्नति से हानि-लाभ

१—प्रस्तावना–विज्ञान का प्रसार–यह विज्ञान का युग है, सभी क्षेत्रों में विज्ञान ने चमत्कार दिखलाया है, प्रकृति को नियंत्रित कर दिया है, मनुष्य जीवन के सर्व कार्य विज्ञान के आधीन हैं।

२—विज्ञान का तात्पर्य–विशेष ज्ञान, इस ज्ञान के भौतिक विज्ञान, रसायन-विज्ञान, जीवजन्तु-विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, खगोल विज्ञान, ज्योतिष आदि अनेक भेद हैं।

३—विज्ञान से लाभ–(क) स्थान की दूरी कम करदी है–रेल, मोटर, जलयान, वायुयान, बुलैट की कृपा से संसार घर-आँगन हो गया है। (ख) समय की बचत होना—ऐसी कलों का निर्माण हुआ है जो क्षणभर में सहस्रों मनुष्यों का कार्य करती हैं, समाचार भेजने की उत्तम व्यवस्था–टेलीफोन, बेतार का तार, रेडियो आदि। (ग) रोगों की चिकित्सा में सहायता–इंजेक्शन, औषधियाँ, चीर-फाड़ के यंत्र। एक्सरे द्वारा शरीर के भीतरी भागों का चित्र लिया जा सकता है, उससे कैंसर, कोढ़, किसी छोटी वस्तु के निगलने का इलाज हो सकता है। (घ) शिक्षा, धर्म और ज्ञान प्रचार में सरलता–सिनेमा द्वारा धार्मिक कथाओं को दिखाया जा सकता है, रेडियो द्वारा महापुरुषों के भाषणों और उपदेशों की व्यवस्था, मैजिक लैंटर्न से विद्या-प्रचार की सुगमता, वैज्ञानिक यंत्रों की सहायता से गूँगे और अन्धे भी पढ़ाये लिखाये जा सकते हैं, सामाजिक कुरीतियों की हानियाँ

चित्रों द्वारा दिखाकर जनता का अन्ध-विश्वास दूर किया जा सकता है। रेडियो प्रचार का भी अमोघ साधन है। (ङ) व्यापारिक उन्नति—माल भेजने के उत्तम साधन ; भावों के समाचार मिलने में सरलता। (च) दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति—कपड़ा, कागज, पेंसिल, साबुन, घड़ी, सुई, कैंची, बटन, लकड़ी, धातु और रबर की वस्तुओं का प्रचुर मात्रा में सस्ता उत्पादन। बिजली का प्रकाश और पंखा। (छ) मनोरंजन के साधनों में वृद्धि—ग्रामोफोन, रेडियो, सिनेमा, केमरा आदि।

४—विज्ञान से हानियाँ—(क) विध्वंस कारीशस्त्रास्त्रों का निर्माण—टैंक, टारपीडो, पनडुब्बी, मशीन गन, विषैली गैस, परमाणु बम्ब आदि। (ख) मशीनों के आविष्कार से बेकारी में वृद्धि, (ग) मनुष्य की आवश्यकताओं में उत्तरोत्तर वृद्धि। क्रीम, पाउडर, ऐनक, सिगरेट आदि की माँग बढ़ रही है; मनुष्य फैशन का गुलाम हो गया है। (घ) शारीरिक शक्ति का ह्रास—आलस्य और अकर्मण्यता की मनुष्य में वृद्धि; मनुष्य स्वार्थी विलास-प्रिय और इन्द्रिय परायण हो गया है। (ङ) अध्यात्मवाद की अवनति-आत्मिक उत्थान के स्थान पर 'खाओ, पीओ और मौज उड़ाओ। (Eat, drink & be merry) ही जीवन का ध्येय हो गया है।

उपसंहार—विज्ञान के दुरुपयोग से मानव-कल्याण नहीं हो सकता।

छात्रावास का जीवन

प्रस्तावना—प्राचीन गुरुकुलों का महत्त्व—गुरुओं का सम्पर्क रहता था, आदर्श और नियमित जीवन और ब्रह्मचर्य व्रत की शिक्षा मिलती थी, चरित्र निर्माण और ज्ञान पुष्ट होता था; शिष्टता, सरलता और मिलनसारिता के गुणों की वृद्धि होती थी। आधुनिक छात्रावास पाश्चात्य शिक्षा के अनुकरण मात्र हैं।

२. छात्रावास के लाभ—(क) घरेलू झगड़ों और कार्यों की चिन्ता से मुक्ति, अध्ययन के लिए विशेष अवकाश। (ख) नियमित जीवन—समस्त कार्य समय पर करने पड़ते हैं। (ग) अध्ययन के लिए अनुकूल वातावरण—अच्छे विद्यार्थियों से अध्ययन की प्रेरणा; कठिनाइयों का निराकरण; वादविवाद, व्याख्यान, समाचार पत्र, पुस्तकालय और गोष्ठियों की सुविधा मिलने से बौद्धिक और मानसिक विकास में सहायता। (घ) शारीरिक विकास—छात्रावास का पवित्र वातावरण—स्वच्छ और शुद्ध जलवायु, अनिवार्य खेल-कूद, ड्रिल, नियमित भोजन; संयम-नियम का जीवन। (ङ) चरित्र-निर्माण में सहायता—अनुशासन, आज्ञापालन, स्वावलम्बन और आत्म-विश्वास की शिक्षा, विचार-विनिमय का स्वर्णिम अवसर प्राप्त होता है। समवयस्क विद्यार्थियों से पारस्परिक मेलजोल बढ़ता है, एक दूसरे के प्रति स्नेह, सहानुभूति और समवेदना के भाव उदित होते हैं। छात्रालय एक बृहत् परिवार है जिसमें विभिन्न प्रकृति और रुचि के विद्यार्थी एक दूसरे के साथ रहते हैं, संयुक्त पारिवारिक जीवन का आनन्द, स्पर्द्धा के कारण विद्यार्थी की उन्नति, समवयस्कों की टीका टिप्पणी से दुर्गुण दूर हो जाते हैं। सामूहिक जीवन के कारण राष्ट्र-निर्माण का अवसर। विद्यार्थी मनुष्य जीवन की क्षमता छात्रालय में ही प्राप्त करता है।

३. हानियाँ—(क) चरित्रहीन विद्यार्थियों के अनुकरण से चरित्र का पतन। (ख) पारस्परिक द्वेष, पार्टीबन्दी, फैशन और दुराचार की वृद्धि। (ग) अपव्यय की दूषित प्रवृत्ति। (घ) भोजन की अव्यवस्था। (ङ) परिवार के व्यक्तियों से अधिक अनुराग और मेलजोल का अभाव हो जाता है। (च) स्वतंत्र वातावरण में रहने से कभी कभी उच्छृंखलता और उद्दंडता के दोष आजाते हैं।

४. उपसंहार—वर्तमान छात्रालयों में सुधार की आवश्यकता—

नियंत्रक की नियुक्ति सावधानी के साथ की जावे; देख-रेख की आवश्यकता।

पुस्तकालय

प्रस्तावना—ज्ञान प्राप्ति के चार प्रमुख साधन—विद्यालय, भ्रमण, समाचार पत्र और पुस्तकालय। विद्यालयों में केवल पाठ्य पुस्तकों का ही अध्ययन होता है; भ्रमण व्ययसाध्य है, प्रत्येक के लिए सुलभ नहीं। अध्ययन का समुचित स्थान पुस्तकालय ही है जहाँ पुस्तकों का ही वृहत् संग्रह उपलब्ध नहीं होता, वरन् समाचार पत्र भी पढ़ने को मिलते हैं।

२. पुस्तकालय के भेद—(क) निजी पुस्तकालय-व्यक्ति-विशेष को ही लाभ पहुँचाता है। (ख) सार्वजनिक पुस्तकालय—सर्वसाधारण के लाभार्थ होते हैं। निश्चित शुल्क देकर अथवा अन्य नियमों का पालन करके प्रत्येक व्यक्ति सदस्य बन सकता है। (ग) शिक्षा-संस्थाओं से सम्बन्धित पुस्तकालय—छात्र एवं अध्यापक ही लाभ उठा सकते हैं।

३. लाभ—(क) ज्ञान-वृद्धि में सहायक, विविध विषयों और किसी विशेष विषय का चूड़ान्त ज्ञान प्राप्त करने का सुगम साधन, चलते फिरते पुस्तकालयों से जन साधारण और ग्रामीण जनता को लाभ। (ख) मानसिक उन्नति। (ग) सत्साहित्य के सेवन से आत्मसंस्कार होता है; जैसे, 'रामायण' से आज्ञापालन, भ्रातृ प्रेम, कर्तव्य-पालन और सदाचार की शिक्षा मिलती है। (घ) अवकाश का सदुपयोग—खाली मन शैतान का घर होता है (An empty mind is a devil's workshop); अवकाश के क्षणों को सिनेमा, शतरंज, ताश आदि में न लगाकर बाल्मीकि, तुलसी, सूर, शेक्सपियर आदि के काव्य ग्रन्थों का रसास्वादन करने से ज्ञान तो मिलता ही है; मनोरंजन भी होता है। (ङ) सत्संग का सुलभ साधन—जिन महापुरुषों के

दर्शन सुलभ नहीं, उनके उपदेशामृत का पान उनकी रची हुई पुस्तकों के अध्ययन से कर सकते हैं। इस प्रकार महापुरुषों का सत्संग प्राप्त होता है। (च) सुधार में सहायक—चलते-फिरते पुस्तकालयग्राम-सुधार के साधन हैं; सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों और अत्याचारों के निराकरण में पुस्तकालयों का योग दान।

४. अन्त—भारतवर्ष के ग्रामों और कस्बों में पुस्तकालयों की आवश्यकता; स्वतंत्र भारत का उत्थान इन्हीं के द्वारा संभव।

देशाटन

१—प्रस्तावना—देशाटन की आवश्यकता—मनुष्य जिज्ञासा-प्रिय है। प्रत्येक वस्तु के जानने की उत्कंठा उसमें स्वभाव से ही होती है। देश-विदेश का हाल जानने के लिए मनुष्यात्मा में एक विशेष आकुलता और लगन होती है; देशाटन अथवा देश-देशान्तरों का भ्रमण, मनुष्य की जिज्ञासा-प्रवृत्ति को शान्त करता है। कोलम्बस, वास्कोडिगामा और कप्तान कुक ने भी इसी प्रेरणा से 'नवीन संसार' की खोज की।

२—देशाटन के साधन—प्राचीन काल में ऊँट, घोड़े, बैलगाड़ियाँ, खच्चर आदि थे। आजकल वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण सुविधा होगई है। साइकिल, मोटर, रेल, जलयान, वायुयान आदि सुगम साधन और विशाल नदियों पर पुल।

३—लाभः—(क) ज्ञान वृद्धि—देशाटन से व्यावहारिक और वास्तविक ज्ञान प्राप्त होता है। किसी देश की भौगोलिक, ऐतिहासिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति का प्रत्यक्ष ज्ञान भ्रमण द्वारा ही होता है। वहाँ के निवासियों की रहन-सहन, स्वभाव, रीति-रिवाज का यथार्थ परिचय भ्रमण से ही मिलता है। भ्रमण शील व्यक्ति का अनुभव बढ़ जाता है, सांसारिक दाँव-पेचों से परिचित हो जाता है, स्वावलम्बन की भावना विकसित होती है। (ख) मनोरंजन—प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान,

अजायबघर, सुरम्य नगर, प्राकृतिक मनोहर स्थान देखने से मनोविनोद होता है। (ग) स्वास्थ्य—सुधार—स्वास्थ्य-वर्द्धक स्थानों के निवास और जलवायु-परिवर्तन से चित्त प्रफुल्लित होता है, मनोरंजन होता है जिससे स्वास्थ्य सुधरता है और गृहस्थी की झंझटों से मुक्ति मिलती हैं। (घ) उन्नति और सुधार की प्रेरणा—अन्य देशों के कला-कौशल, व्यापार, शिक्षा पद्धति और राजनीति का अध्ययन करने से इन क्षेत्रों में उन्नति की जा सकती है, हृदय विशाल होजाता है। सामाजिक सुधार की प्रेरणा मिलती है। अँगरेजों ने देशाटन द्वारा ही व्यापार और उपनिवेश स्थापित करने में उन्नति की थी।

४—उपसंहार भारतवासियों की देशाटन के प्रति उदासीनता :

भ्रान्ति मूलक विचारों के कारण भारतवासी समुद्र यात्रा को निषिद्ध मानते हैं; छूआ छूत, खान पान और आचार—विचारों के कारण उन्होंने देशाटन का बहिष्कार कर दिया है। यदि वे उन्नति के क्षेत्र में आगे बढ़ना चाहते हैं तो इन संकीर्ण विचारों को दूर करना पड़ेगा। देश को एक्य-सूत्र में बाँधने के लिए देशाटन परम आवश्यक है।

देश-भक्ति

(१) देश का महत्त्व—'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'।

(२) स्वदेश-प्रेम की स्वाभाविकता—पशु-पक्षी, फल-फूल भी स्थान विशेष में पनपते हैं।

(३) नदी-पर्वत नगर ही स्वदेश नहीं—देशवासियों के दुख-सुख में साथ देना ही देश प्रेम है; अतएव देश-प्रेम ही देश की उन्नति का साधन है। ब्रिटेन, रूस और जापान के निवासियों का देशानुराग।

(४) देश के प्रति हमारा कर्तव्य—तन, मन, धन से देश हितकारी कार्यों में योग दें; पीड़ितों की सेवा, निर्बलों की रक्षा, दीनों की

आर्थिक सहायता, अशिक्षितों और पथभ्रष्टों को शिक्षा देकर उन्नति-पथ पर अग्रसर करें।

(५) आदर्श स्वदेश-भक्तों के उदाहरण—प्रताप, शिवाजी, दुर्गादास, गाँधी, नेहरू, सरदार पटेल, सुभाषचन्द्र आदि।

(६) भारतवर्ष में राष्ट्रीयता के विकास की आवश्यकता।

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं है, पशु निरा है और मृतक समान है॥"

ग्राम-सुधार

(१) प्रस्तावना—ग्राम-सुधार की आवश्यकता, 'भारतवर्ष ग्रामों का बना हुआ है।' ९० प्रतिशत जनता ग्रामों में रहती है। ग्रामीण जनता की दशा अत्यन्त शोचनीय है, अशिक्षा, दरिद्रता, और अन्ध-विश्वास से ग्रसित ये ग्राम गन्दगी और बीमारियों के घर हैं। ग्राम-सुधार पर ही भारतवर्ष की उन्नति निर्भर है।

(२) शिक्षा का सुप्रबन्ध—निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा, रात्रि पाठशालाओं की आवश्यकता, कला-कौशल की शिक्षा।

(३) कृषि की उन्नति (अ) सिंचाई, हल, खाद, बीज की सुव्यवस्था। (आ) पशुओं के लिए चारा, चरागाह और चिकित्सा का समुचित प्रबन्ध। (इ) सरकारी बैंकों द्वारा किसानों को महाजनों के चंगुल से बचाना।

(४) स्वास्थ्य और स्वच्छता का प्रबन्ध, औषधालयों की सुव्यवस्था स्वच्छ और स्वास्थ्यपूर्ण गृहों का निर्माण।

(५) घरेलू उद्योग—धन्धों का पुनरुत्थान—चरखा कातना, कपड़े, दरी बुनना, मधु-मक्खी पालना, साबुन बनाना, रस्सियाँ और चटाइयाँ बनाना आदि।

(६) ग्राम-पंचायतों की स्थापना द्वारा आपसी लड़ाई-झगड़ों का निपटारा ।

(७) सड़कों की व्यवस्था, चलते फिरते पुस्तकालयों और सुरुचिपूर्ण मनोरंजनों की आयोजना ।

(८) आदर्श ग्रामों के निर्माण की महती आवश्यकता ।

पत्र-लेखन-कला

दैनिक जीवन में प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति को पत्र लिखने की आवश्यकता पड़ती है। ये पत्र तीन प्रकार के होते हैं:-

(१) निजी या घरेलू पत्र—जो पिता, पुत्र, मित्र आदि को लिखे जाते हैं। (२) व्यावसायिक पत्र-जो व्यापारिक लेन देन से सम्बन्धित होते हैं। (३) अधिकारियों को पत्र- जिनमें कुछ निवेदन किया जाता है। प्रत्येक पत्र के निम्न लिखित अंग होते हैं।-

(१,पत्र भेजने वाले का पता और पत्र लिखने की तिथि, (२) प्रशस्ति या पत्र-सम्बन्धी शिष्टाचार, (३) पत्र का मुख्य विषय, (४) समाप्ति और (५) पाने वाले का पता।

हिन्दी में पत्र-लेखन का दो प्रथाएं प्रचलित हैं:—(१) प्राचीन प्रथा और (२) नवीन प्रथा। पहले प्राचीन प्रथा के अनुसार ही पत्र लिखे जाते थे, किन्तु अब अँगरेजो ढंग पर नवीन प्रथा के अनुसार पत्र लिखे जाते हैं।

प्राचीन प्रथा के अनुसार पत्र-रचना

इस प्रथानुसार पत्र के आरम्भ में किसी देवी-देवता को नमस्कार लिखते हैं; जैसे, श्री गणेशायनमः, श्री शारदायनमः, श्री महावीरायनमः आदि। इसके पश्चात् प्रशस्ति लिखी जाती है।

इसमें बड़ों के लिए 'सिद्धि' और छोटों या बराबर वालों को 'स्वस्ति' लिखते हैं। फिर 'श्री' लिखते हैं। पुराने पत्रों में निम्न दोहे के अनुसार 'श्री' के आगे कोई अङ्क लिखा जाता था।

श्री लिखिये षट गुरुन को, पाँच स्वामि रिपु चारि।
तीन मित्र द्वै भृत्य को, एक पुत्र अरु नारि॥

अर्थात् गुरु को ६, स्वामी (या बड़े) को ५, शत्रु को ४, मित्र (या बराबर वाले) को ३, नौकर को २, पुत्र, स्त्री या छोटों के लिए १ श्री लिखनी चाहिए। राजा, सन्यासी और परमेश्वर के लिए १०८ श्री लिखने की प्रथा थी।

पत्र में बड़ों को आदर-सूचक शब्दों से संबोधित करते हैं। उनका नाम पते के अतिरिक्त कहीं नहीं लिखा जाता; जैसे 'सकल गुण निधान पिताजी' 'सर्वगुण सम्पन्न या पूज्य पाद चाचा जी' आदि। बराबर वालों के लिए 'प्रियवर' 'कृपालु' 'हितैषी; छोटों को 'प्रेम पात्र;' 'चिरंजीवी';'स्नेह-भाजन' और अपरिचित व्यक्तियों को 'महाशय' 'भाई' आदि विशेषण लिखे जाते हैं।

इस के बाद लेखक अपना नाम और पत्र भेजने का स्थान लिखता है। बड़ों को 'प्रणाम' या 'दण्डवत'; बराबर वालों को 'नमस्ते' 'बन्दे' अथवा 'जयरामजी की' छोटों को 'आशीर्वाद' अपरिचित व्यक्ति को 'राम,राम' लिखा जाता है। कुशल क्षेम के पश्चात् मुख्य विषय लिखकर पत्र समाप्त कर दिया जाता है। अन्त में 'इति शुभम्' और मिती लिखदी जाती है।

पिता को पत्र (प्राचीन प्रथा से)

सिद्धि श्री शुभस्थान प्रयाग सकल गुण-सम्पन्न पूज्य पाद पिताजी को योग्य लिखी आगरे से आज्ञाकारी रामनाथ का

सादर प्रणाम पहुँचे। मैं आपके आशीर्वाद से सकुशल हूँ। आपका कुशल-क्षेम श्री राम से नेक चाहता हूँ। आगे समाचार यह है कि मैं कुशल पूर्वक यहाँ आगया हूँ। मार्ग में किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ। आज चि० श्यामनाथ के विवाह की लग्न पत्रिका आई है; उसके साथ सामान और २०१) आए हैं। आपको छुट्टी मिली या नहीं ? पूज्य माताजी, चाचाजी और अन्य सब प्रसन्न हैं। सब आपके शुभ दर्शनों की प्रतीक्षा कर रहे हैं। इति शुभम्। मिती फाल्गुनशुक्ल एकादशी सं० २००५ विक्रमी।

नवीन प्रथा के अनुसार पत्र-रचना

नवीन प्रथा के अनुसार पत्र लिखने का ढग आगे दिये गये पत्रों से जाना जा सकता है।

कुछ पत्रों की प्रशस्ति और समाप्ति नीचे दी जाती है:-

पत्र	प्रशस्ति	समाप्ति
पिता के लिए	पूज्य पिताजी	चरण सेवक, आपका दास
माता ,,	पूजनीय (महामान्या) माताजी	,, ,,
बड़े भाई ,,	मान्यवर भ्राताजी	आपका लघु भ्राता (स्नेह भाजन)
छोटे भाई ,,	प्रिय (नाम)	तुम्हारा शुभ चिंतक
पति ,,	प्राणनाथ	आप की दासी
मित्र ,,	सुहृदवर, प्रिय मित्र	आपका स्नेही (हितैषी)
पुत्र ,,	प्रिय वत्स, चिरंजीव (नाम)	तुम्हारा शुभ चिंतक
स्त्री ,,	प्राण प्रिये, हृदयेश्वरी	तुम्हारा प्रियतम, भवदीय
अपने से बड़ों	मान्यवर महाशय	आपका कृपाकांक्षी
अपने से छोटे	मान्यवर महाशय	शुभ चिंतक
स्वामी (अधिकारी)	महानुभाव, मान्यवर	प्रार्थी, सेवक

दुकानदार	श्रीमान्, महाशय	भवदीय
नौकर	प्रिय (नाम)	तुम्हारा
गुरुजी ,,	परम श्रद्धास्पद	आपका चरण-सेवक
निमन्त्रण-पत्र में	श्री युत मान्यवर	दर्शनाभिलाषी

नवीन प्रथानुसार लिखे हुए कुछ पत्रों के नमूने दिये जाते हैं—

मित्र को पत्र

(अनुज के नटखटपन का वर्णन)

सरस्वती-सदन,
बेलनगंज, आगरा।
१५–७–४८

सुहृद्वर,

सस्नेह नमस्कार। आपका कृपा-पत्र मिला। अग्रवाल विद्यालय में आपकी नियुक्ति के लिए बधाई। परमात्मा करे, आपको भविष्य में अत्यधिक सफलता प्राप्त हो।

आपने मेरे अनुज, चि० रमाशंकर की शिक्षा के विषय में जानने की इच्छा प्रकट की है। उसके विषय में जितना लिखूँ उतना ही कम है। आजकल उसके रंग-ढंग बड़े विचित्र हैं। पढ़ने लिखने में उसका मन नहीं लगता। इसका कारण यह नहीं कि वह मन्द-बुद्धि है, वरन् उस पर कुछ उद्दंड विद्यार्थियों की संगति का प्रभाव है। वह बचपन से ही चपल और विनोद-प्रिय रहा है, परन्तु वह अपने इन गुणों का दुरुपयोग करता है। वह सदा दूसरों को परेशान करके अपने मनोरंजन के साधन ढूँढ़ने की

उधेड़-बुन में रहता है। एक दिन उस ने कुछ इष्ट-मित्रों को अपने जन्म-दिवस के उपलक्ष्य में दावत के लिए निमंत्रित किया। उसी दिन वह जयपुर सटक गया। नियत समय से पूर्व उसके मित्रगण प्रफुल्ल-वदन तर माल खाने की आशा में आने लगे। परन्तु जब उन्हें यह विदित हुआ कि वह घर पर भी उपस्थित नहीं हैं तो मुँह लटकाये चले गये।

उसकी शरारतों से स्कूल के अध्यापक भी परेशान हैं। उस की सूझ बड़ी विचित्र है। किसी न किसी उपाय से उसे अट्टहास का अवसर सुलभ हो जाता है। अध्यापकों के विलक्षण नाम गढ़ने में वह परम पारंगत है। कुछ आविष्कृत नाम हैं—टेसू, चोंच, तितली, भौंपू आदि। व्यंग्य-चित्र बनाना, दो व्यक्तियों को लड़ाना और भेष बदलना तो उसके बाँयें हाथ का खेल है। एक दिन वह प्रातःकाल अन्य विद्यार्थियों से पूर्व स्कूल जा पहुँचा। स्कूल के मुख्य-द्वार पर एक सूचना टाँग दी कि आज स्कूल बन्द रहेगा। उस सूचना के नीचे प्रधानाध्यापक महोदय के हस्ताक्षर इतने वास्तविक से थे कि कोई उन्हें ग़लत न भाँप सका। सब विद्यार्थी आए और सूचना पढ़कर घर चले गये। इसी दिन किसी फौजी अफसर का व्याख्यान होने वाला था। प्रधानाध्यापक क्या करते, अपना सा मुँह लेकर रह गये। एक दिन कार्यवश उसको घर शीघ्र आना था। प्रार्थनापत्र देकर दिखाने को तो वह वहाँ से चला आया, किन्तु वेशभूषा बदल कर उसने छुट्टी का घंटा बजवा दिया। सब विद्यार्थी कमरों से निकल कर भाग गये।

उसकी सूझ-बूझ की कहाँ तक प्रशंसा की जाय? एक दिन मैं कार्यवश दुकान पर उपस्थित नहीं था। उसने टेलीफोन

मिलाकर दो तीन दुकानदारों से बनावटी नाम धाम बताकर शीघ्र माल भेजने का आदेश दे दिया। फिर आप चम्पत हो गये। एक व्यापारी ने दो बोरी शक्कर ठेल पर लदवा कर भेज भी दी। मैं चकित हुआ कि मामला क्या है। अन्त में नौकर द्वारा रहस्य प्रकट हुआ। इस प्रकार उसने सब का नाक में दम कर दिया है। मैंने कितनी ही बार समझाया है; डाँट दी है, किन्तु वह अपनी हरकतों को नहीं छोड़ता।

मित्रवर, मैं चाहता हूँ कि वह पढ़ लिख जाय और उसका भविष्य उज्ज्वल बने। आप कुछ ऐसा उपाय बतलाइये कि वह सुमार्ग पर आजाय। अपने पूज्य पिता जी को मेरा प्रणाम कहना। योग्य सेवा लिखना।

आपका सुहृद्,
दयाशकर।

पिता को पत्र— रेल-दुर्घटना का वर्णन

किंग जार्ज अस्पताल,
हैरिस वार्ड,
लखनऊ।
३१ दिसम्बर, १९४७।

पूज्य पिताजी,

सादर प्रणाम। मेरा उपर्युक्त पता देखकर कदाचित् आप चकित हुए हों; परन्तु विधि की विडम्बना, मुझे भी अस्पताल की हवा खानी पड़ी। कलकत्ते से लौटते समय मैंने श्री सम्मेद शिखर की पुण्यभूमि के दर्शन किये। फिर काशी में आया। वहाँ पुण्यतोया भागीरथी में स्नान करके, घाटों के अभिराम

सौन्दर्य को देखकर और विश्वनाथ जी के दर्शन करके हृदय में अपूर्व भक्ति-भावना का स्रोत उमड़ पड़ा।

इस प्राचीन धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्र को देखने के पश्चात् मैं प्रयाग होकर घर आने के लिए सोच रहा था, किन्तु काल-चक्र की विचित्र गति को कौन जान सकता है ? "जैसी जस भवितव्यता तैसी मिले सहाय" के अनुसार लखनऊ की रमणीक इमारतें देखने की लालसा हृदय में ऐसी बलवती हुई कि मैं काशी से रात की गाड़ी द्वारा वहाँ के लिए रवाना हो गया।

कई दिन की यात्रा से शरीर शिथिल-साथा। निद्रा देवी बार बार प्रकोप कर रही थी। उस काल-रात्रि के गहन अन्धकार में चीत्कार-सा करती गाड़ी तीव्र-गति से आगे बढ़ रही थी। शीत पवन की सरसराहट और क्लान्त तारिकाओं की झिलमिलाहट किसी अप्रत्याशित घटना की सूचना दे रही थी। लगभग चार घंटे के पश्चात् गाड़ी सहसा रुक गई। ड्राइवर ने "उतरो ! उतरो !" की घोषणा की। सुषुप्त यात्रियों में हलचल-सी मच गई; शान्त-सागर में एक तूफान-सा आगया। 'क्या' और 'क्यों' की उत्कंठा होते हुए भी यात्री हड़बड़ाकर कूदने लगे। मुख्य द्वार पर भीड़ थी। विलम्ब का अवसर न था। मैं भी झटपट खिड़की से कूद पड़ा। परन्तु अपरिचित स्थान और घोर अन्धकार के कारण कूदने से दोनों घुटनों में चोट आगई और झाड़-झखाड़ों मे शरीर क्षत-विक्षत होगया। कुछ समय के लिए शरीर की उपचेतना जाती रही।

दो मिनट भी नहीं बीते थे कि सामने से प्रलयकारी एक्प्रेस आगई। दोनों भीमकाय ऐंजिनों में एक प्रबल टक्कर हो गई। तुमुलनाद से दसों दिशायें गूँज गई, मानों दो दानवों को देख-

कर प्रकृति ने चीत्कार किया हो अथवा भयंकर भूचाल आगया हो। डिब्बों से डिब्बे भिड़ गये, एक बोगी दूसरी बोगी से टकराकर चकनाचूर हो गई।

यात्रियों की करुण दशा का वर्णन नहीं किया जा सकता। सोते हुए यात्री डिब्बों के लड़ने से पिस गये; अनेक आहत होगये; अनेक ऐंजिनों के विकराल मुख के ग्रास बन गये। आहत व्यक्ति भूमि पर पड़े बिलख रहे थे; कुछ सिसक रहे थे, कुछ रक्त से सने हुए तड़फड़ा रहे थे; कुछ छटपटाते हुए अपना दम तोड़ रहे थे। अनेक 'बचाओ !' 'बचाओ !' का तीव्र नाद कर रहे थे; कुछ पानी-पानी की रट लगा रहे थे; कुछ अपने सुहृदों को पुकार रहे थे; अनेक व्यक्ति धक्के के जोर से चेतना शून्य हो गये थे। नारियों की चीत्कार, माताओं के विलाप, बालकों के करुण क्रन्दन, और मानवों की हाय-हाय से सारा वायुमण्डल व्याप्त था सर्वत्र हाहाकार हो रहा था। पति पत्नी से, पुत्र पिता से, माता बालक से, साथी साथी से बिछुड़ गये थे। सबको अपनी अपनी पड़ी थी; फिर कौन किसको धीरज देता ? अनेक काल के गाल में समा गये थे। किसी का ट्रंक, किसी का विस्तर तो किसी का अन्य सामान स्वामी के बिना इधर उधर बिखरा हुआ अपनी दुर्दशा पर आँसू बहा रहा था। कहीं रक्त-रंजित मानवों की लोथें पड़ी हुई थीं; कहीं अंग-भंग प्राणी छटपटा रहे थे; कहीं सिर-कटे धड़ पड़े थे। अनेक माताओं की गोद सूनी होगई थी, अनेक तरुणियों के भाल का सिन्दूर धुल गया था; और अनेक घरों के दीपक सदैव को बुझ गये थे।

इस हृदय-विदारक घटना के एक घंटे पश्चात् निकट के ग्रामीण मशालें लेकर सहायता के लिए दौड़े आये। उन्होंने

घायलों की सेवा-शुश्रूषा की, प्यासों को पानी पिलाया, चकनाचूर डिब्बों में फँसे हुए आहतों को मृत्यु-मुख से निकाला, लोथों को एक किनारे रक्खा और अस्त व्यस्त सामान को संभालकर एक ओर रख दिया। उनकी निस्वार्थ सेवा, कर्तव्य- परायणता और सहानुभूति पूर्ण शब्दों ने पीड़ितों में नवीन जीवन का संचार किया। उनमें भी जहाँ सरल, सज्जन और कर्मनिष्ठ थे, कुछ धूर्त और दुष्ट भी थे जिन्हें धन-बटोरने की पड़ी थे। वे मृत और घायल नारियों के आभूषणों पर छापा मारने लगे। उनमें से एक-दो पकड़े गए और अन्य ग्रामीणों ने उनकी अच्छी मरम्मत करदी।

इस दयनीय स्थिति के चार घंटे पश्चात् दूसरी ट्रेन आई जो घायलों को लादकर ले गई। उनको वहाँ इलाज के लिए अस्पताल भेज दिया गया। मैं भी यहीं पर हूँ। मेरे अधिक चोट नहीं आई। आठ दिन में पूर्ण स्वस्थ हो जाऊँगा, यहाँ से बन्धन मुक्त होते ही आपके चरणों के दर्शन करूँगा। मेरे सामान का अभी पता नहीं। रेल-अधिकारियों को इस सम्बन्ध में सूचित कर दिया है। आप किसी प्रकार की चिन्ता न करें; न इस शीत काल में यहाँ आने का कष्ट ही करें। आप मार्ग व्यय के लिए ३०) भेजने की कृपा करें।

पूजनीय माताजी को सादर प्रणाम कहना। मैं अब स्वस्थ हूँ—वे घबड़ावें नहीं। सुशीला और रवेन्द्र को आशीर्वाद।

आपका चरण-सेवक,
धर्मवीर।

विवाह का निमन्त्रण-पत्र

श्रीमान्—

सेवा में सविनय निवेदन है कि परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से मेरे सुपुत्र चिरंजीव मदनमोहन, बी०ए० का शुभ विवाह श्री० डा० कैलाशचन्द्र जैन मथुरा निवासी की सुपुत्री आयुष्मती प्रेमलता के साथ शुभ मिती अगहन शुक्ला एकादशी शुक्रवार सम्वत् २००५ वि० तदनुसार ता० १८ नवम्बर सन् १९४८ ई० को होना निश्चित हुआ है। अतः विनम्र प्रार्थना है कि आप इस शुभ अवसर पर अपने इष्टजनों के साथ पधार कर विवाह की शोभा बढ़ाएँ और मुझ अकिंचन को अनुग्रहीत करें।

है प्रतीक्षा आपकी उत्सव अलंकृत कीजिये।
गौरव मेरा हो मान्यवर तो कष्ट भी सह लीजिये॥

गोपालपुरा,
अलीगढ़।

आपका दर्शनाभिलाषी,
देवकी नदन जैन।

वैवाहिक कार्यक्रम

प्रीतिभोज—	अगहन शुक्ला ९	बुद्धवार, १० नवम्बर, १९४८	
पाणि ग्रहण—	" शुक्ला ११	शुक्रवार, १२ नवम्बर	"
बराहार—	" शुक्ला १२	शनिवार, १३ नवम्बर	"
विदा—	" शुक्ला १३	रविवार, १४ नवम्बर	"

छुट्टी के लिए प्रार्थना पत्र

श्री प्रधानाध्यापक महोदय,
सनातन धर्म विद्यालय,
जयपुर।

श्रीमान्,

सेवा में सादर निवेदन है कि मेरी बहन का विवाह संस्कार ता० १२ नवम्बर सन् १९४८ को है। अतः प्रार्थना है कि आप मुझे ता० ११ से १५ नवम्बर तक की छुट्टी देने की अवश्य कृपा करें।

आपका आज्ञाकारी शिष्य,
देवेन्द्र कुमार,
कक्षा ८।

ता०१०-११-४८।

आवेदन-पत्र

(अध्यापक के पद के लिए)

श्रीमान् प्रधानाध्यापक,
राष्ट्रीय विद्यालय,
आगरा।

श्रीमान्,

सेवामें निवेदन है कि गत २८ मई के 'लीडर' के विज्ञापन से मुझे विदित हुआ है कि आपको एक हिंदी अध्यापक की आवश्यकता है। अतएव मैं आपकी सेवा में सविनय अपना आवेदन-पत्र प्रस्तुत करता हूँ।

मैंने सन् १९४४ में आगरा विश्वविद्यालय की एम० ए० परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की है। इसके अतिरिक्त मध्यमा

में सफलता प्राप्त करके मैंने 'साहित्यरत्न' की उपाधि भी प्राप्त करली है। मैं संस्कृत में 'मध्यमा' तक की भी योग्यता रखता हूँ।

मैंने दो वर्ष तक अग्रवाल विद्यालय प्रयाग में हिंदी अध्यापक का कार्य भी किया है। साथ में, वहाँ के प्रधानाध्यापक महोदय का प्रशंसापत्र भी भेज रहा हूँ। मैं कवि सम्मेलनों और वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में सदैव भाग लेता रहा हूँ और कई बार मैंने पुरस्कार प्राप्त किए हैं। खेल-कूद में मेरी सदैव रुचि रही है। मेरा स्वास्थ्य और शारीरिक गठन उत्तम है।

आशा है, आप मेरे आवेदन पत्र पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करके अपने विद्यालय में सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे। इस कृपा के लिए मैं सदैव आपका आभारी रहूँगा।

आपका आज्ञाकारी,

रमाशंकर शुक्ल।

अभिनन्दन-पत्र

काव्य-कलाधर, जनगायक, राष्ट्रकवि

डा० श्री मैथलीशरण गुप्त, डी०लिट के कर-कमलों में

सविनय एवं श्रद्धासहित अभिनन्दन-पत्र

राष्ट्रकवि !

आज हम अत्यन्त हर्ष के साथ आपका इस विद्यालय में हृदय से स्वागत एवं अभिनन्दन करते हैं। आपने अपनी कल्याणी वाणी द्वारा जन-जागरण की ज्योति जगाई है, निराशापूर्ण हृदयों में नवजीवन का संचार किया है और

परतन्त्र मानव-हृदयों में शान्तिमयी-क्रान्ति की ज्वाला जागृत की है। आपने स्वातन्त्र्य महायज्ञ में अपनी वीणा और वाणी, विचार और कार्य द्वारा सदैव सक्रिय सहयोग प्रदान किया है। आप राष्ट्रीय-चेतना के अग्रदूत हैं और इसके उपलक्ष्य में आप को 'कृष्ण-मन्दिर' भी जाना पड़ा।

महाकवि !

वर्त्तमान हिन्दी-काव्य-क्षेत्र में आपकी सेवाएँ अद्वितीय हैं। "भारत-भारती' द्वारा भव्य-भारतवर्ष को नवीन चेतना मिली; "यशोधरा" भारतीय नारी-गौरव और आदर्शों की प्रति मूर्ति है; "अभिमन्यु" बालजीवन का स्वर्णिम पृष्ठ है; "साकेत" राम-भक्ति सोपान है। आपने अपनी अमर-कृतियों से काव्य के सभी क्षेत्रों को जगमगा दिया है।

महामना !

आप हिन्दी-भाषा, हिन्दू-धर्म और हिन्दुस्तान के अनन्य प्रेमी; प्राचीन संस्कृति के पुजारी और महान भावनाओं के उन्नायक हैं। परम प्रभु से हमारी प्रार्थना है कि आप अपनी प्रतिभा के पुण्य प्रकाश से पवित्र भारती के दिव्य मन्दिर को चिरकाल तक जगमगाते रहें। आपकी पीयूष वर्षिणी वाणी अमर हो।

हम हैं,
आपके विनयावनत शिशु;
हिन्दी-साहित्य विद्यालय के विद्यार्थी गण।

चरित्र-चित्रण

प्रायः विद्यार्थी किसी पात्र के चरित्र पूछे जाने पर सम्पूर्ण कहानी का सार लिख देते हैं अथवा जीवन-चरित्र का वर्णन करते हैं। चरित्र से तात्पर्य किसी पात्र की आकृति-प्रकृति और स्वभाव से है। किसी व्यक्ति के गुण, दोष, स्वभाव, व्यक्तित्व और कार्यों की समीक्षा करना ही चरित्र-चित्रण है। जीवन-चरित्र में जीवन-सम्बन्धी घटनाओं का वर्णन किया जाता है।

चरित्र-चित्रण के चार साधन होते हैं :—

१—स्वयं लेखक ने पात्र के सम्बन्ध में क्या मत प्रगट किया है ?

२—अन्य पात्र इसके विषय में क्या विचार प्रकट करते हैं ?

३—वह व्यक्ति या पात्र अपने भावों और विचारों को किस प्रकार प्रकट करता है ?

४—पात्र के कार्य किन गुण-दोषों को प्रकट करते हैं ?

यहाँ 'प्रसाद' कृत 'ममता' नामक कहानी की मुख्य पात्री ममता का चरित्र चित्रण किया गया है।

ममता का चरित्र

श्री जयशंकर 'प्रसाद' लिखित ममता नामक कहानी की मुख्य पात्री "ममता" रोहितास दुर्ग के मन्त्री चूड़ामणि की एकमात्र पुत्री है। वह भारतीय हिन्दू समाज की आदर्श विधवा है। युवती ममता यौवन सागर में गहरी डुबकियाँ लगाते हुए अत्यन्त गम्भीर, विचारशील और धार्मिक है। उसके मन में वेदना, निराशा और चिन्ताएँ भरी हुई हैं। हिन्दू विधवाओं की तरह वह त्याग, सद्भाव और स्वावलम्ब की मूर्ति है।

ममता लोभ से सदैव दूर है। उसको भविष्य की चिन्ता नहीं, जोड़ने की लालसा नहीं। आई हुई लक्ष्मी को वह लात मार देती हैं। स्वर्ण की जगमगाहट उसे लोभ में नहीं फंसा सकती। तुच्छ धन के लिए वह राजा और देश के प्रति विद्रोह नहीं करतो। वह घोर विपत्ति में भी ईश्वर पर विश्वास रखती है। उसे दृढ़ विश्वास है कि जिसने जन्म दिया है वह घोर विपत्ति में भी पालन पोषण-पोषण करेगा। वह अपने पिता को भी दुष्कर्म करने पर फटकार देती है।

रोहितास से निर्वासित होने पर उसका सारा जीवन त्यागपूर्ण है। धर्म-साधन ही उसकी दिनचर्या है। अपनी टूटी-फूटी झोंपड़ी में टिमटिमाते हुए दीपक की ज्योति में वह गीता के पाठ में लवलीन रहती है। इसी कठिन तपस्या के कारण उसका 'महिमामय मुखमण्डल' आभा और तेज से परिपूर्ण है और जिसका नमस्कार क्रूर और आततायी मुग़ल भी प्रभावित होकर करते हैं।

उसका सारा जीवन दीन-हीनों की सेवा में व्यतीत होता है। वह दूसरों के प्रति समवेदना प्रकट करके उनके दुख को हलका करती है। आजीवन सब के सुख दुख की समभागिनी होने के कारण ही उसकी मृत्यु के समय ग्रामीण स्त्रियाँ उसकी सेवा करने में तत्पर रहती हैं।

ममता चाहे सब कुछ छोड़दे, परन्तु अपने धर्म, अपने कर्तव्य और कर्म को नहीं छोड़ सकती। युद्ध से हारा हुआ दीन हुमायूँ उससे शरण माँगता है। यद्यपि क्षण भर के लिए विधर्मी होने के कारण वह उसे शरण देने से हिचकिचाती है, लेकिन अन्त में अपने कर्तव्य को समझ कर उसे आश्रय देकर उसकी रक्षा करती है।

जहाँ ममता आदर्श और गुणों की मूर्ति है, वहाँ वह स्त्री जन-सुलभ लज्जा और भय से परिपूर्ण है। यह मुग़ल सिपाहियों को देखकर डर जाती है और फिर उनके सामने आने का नाम भी नहीं लेती। परन्तु उसके इस भय का कारण यह है कि कहीं उसकी झोंपड़ी, कहीं उसका सरल जीवन, कहीं तपस्या का स्थान उससे छीन न लिया जाय। निष्कर्ष यह है कि वह हिन्दू नारी है, आदर्श विधवा है, त्याग और तपस्या की मूर्ति है; धार्मिक है और प्रलोभन से सदैव दूर है।

लेखों के लिए विषय

(१) छुट्टियों में घर जाते समय विचार (१) बाल्यकाल की स्मृतियाँ (३) किसी वृद्ध का वर्णन (४) नदी तट की सैर (५) देशी-विदेशी खेल (६) प्रातः काल का दृश्य (७) सायंकाल का दृश्य (८) प्राकृतिक दृश्य (९) मेरा प्रिय कवि (१०) मेरी प्रिय पुस्तक (११) आदर्श विद्यार्थी (१२) आदर्श महापुरुष (१३) आदर्श शिक्षक (१४) आदर्श जीवन (१५) जीवन की कोई मनोरंजक घटना (१६) यदि मैं राष्ट्र-पति होता (१७) रामायण से शिक्षा (१८) कवि सम्मेलन (१९) मनोरंजन के आधुनिक साधन (२०) ग्राम निवास या नगर निवास (२१) विद्यार्थी-जीवन (२२) मेरे जीवन ध्येय (२३) भारत की वर्तमान दशा (२४) देशोन्नति के साधन (२५) देश के प्रति देश वासियों का कर्तव्य (२६) पाश्चात्य सभ्यता का भारत पर प्रभाव (२७) प्राचीन और आधुनिक सभ्यता (२८) रुपये की आत्म कहानी (२९) छड़ी की आत्म कहानी (३०) किसी साधु की आत्म कहानी (३१) भारत के साधु-सन्यासी (३२) भारतीय किसान (३३) वर्षा-विहार (३४) हम सौ वर्ष कैसे जीवें (३५) पाश्चात्य शिक्षा के गुण दोष (३६) वायुयान (३७) सैनिक और शिक्षक (३८) नागरिक कर्तव्य (३९) कलम और तलवार (४०) भारतीय उद्योग

धन्धे (४१) अछूतोद्धार (४२) अनुशासन (४३) स्वावलम्बन (४४) स्वाभिमान (४५) सत्संग (४६) आत्म सम्मान (४७) स्वच्छता (४८) इच्छा शक्ति (४९) परोपकार (५०) अध्ययन के आनन्द (५१) कर्तव्य पालन (५२) श्रम ही सों सब मिलत है बिनु श्रम मिले न काहु (५३) पराधीन सपनेहु सुख नाहीं (५४) समाचार पत्र (५५) चित्रपट का शिक्षा में महत्त्व (५६) सौ वर्ष पश्चात् का संसार।

हिन्दी भाषा का विकास

भारतवर्ष में इस समय अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। इन सब का विकास दो वर्गों की भाषाओं से हुआ है। दक्षिण भारत में बोली जाने वाली भाषाओं—तामिल, तेलगू, मलयालम तथा कनारी का उद्भव द्रविड़ कुल से हुआ है। आसामी, बंगाली, हिन्दी, पञ्जाबी, मराठी, गुजराती तथा पहाड़ी भाषाओं का सम्बन्ध आर्य-भाषा संस्कृत से है। संस्कृत का प्राचीन रूप ऋग्वेद की ऋचाओं में मिलता है। विद्वानों ने इसे संसार की प्राचीनतम भाषा माना है।

विद्वानों की भाषा तथा सामान्य जनता की भाषा में सदैव अन्तर रहता है। अतएव जब वैदिक संस्कृत बोल-चाल की भाषा थी, तब साहित्यिक संस्कृत विद्वानों की भाषा थी। किन्तु सजीव भाषा का रूप कभी स्थिर नहीं रहता। जब वैदिक संस्कृत को विद्वत्समुदाय ने अपनाया तब जन साधारण की भाषा 'पाली' की उत्पत्ति हुई। पाली से प्राकृत भाषाओं और प्राकृत से अपभ्रंश भाषा का जन्म हुआ। हिन्दी की उत्पत्ति इसी अपभ्रंश से ग्यारहवीं शताब्दी के लगभग हुई।

हिंदी की उपभाषाएँ निम्नलिखित हैं :—

अवधी—यह अवध प्रदेश में बोली जाती है। सूफी कवियों कुतुबन, मंझन और जायसी आदि ने अपनी काव्य-साधना के लिए इसे अपनाया। जायसी का पद्मावत अवधी में ही है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी रामचरित मानस की रचना अवधी में ही की है। बघेली और छत्तीस गढ़ी इसी के अन्तर्गत हैं। काव्य-माधुर्य और कोमल पद-विन्यास की दृष्टि से यह भाषा अत्युत्तम है।

पिंगल या व्रजभाषा—यह व्रज प्रान्त–आगरा, मथुरा, वृन्दावन आदि में बोली जाती है। कोमल-कान्त-पदावली और माधुर्य के कारण यह अत्यन्त ललित भाषा है। सूरदास और नंददास ने अपनाकर इसमें माधुर्य उत्पन्न किया। रीतिकाल के कवियां बिहारी, मतिराम, देव, रसखान, पद्माकर, घनानन्द आदि ने और वर्तमानकाल में हरिश्चन्द्र, रत्नाकर, सत्यनारायण और वियोगी हरि ने इसकी साहित्य-श्री को भली भाँति समृद्ध किया है।

डिंगल—यह राजस्थान में बोली जाने वाली भाषा राजस्थानी का साहित्यिक रूप है। राजस्थान के कवियों ने प्रायः इसी को अपनाया है। 'बीसलदेवरासो' इसका प्रथम ग्रन्थ है। कुछ गद्य साहित्य के ग्रन्थ भी इस भाषा में उपलब्ध हैं।

बुन्देलखण्डी—यह बुन्देलखण्ड में बोली जाती है। जगनिक के 'आल्हा खण्ड' को छोड़कर इसमें महत्त्व पूर्ण साहित्य नहीं मिलता। केशवदासजी की 'रामचन्द्रिका' में भी बुन्देलखण्डी के शब्द मिलते हैं।

खड़ी बोली—यह भाषा मेरठ और देहली के आस-पास बोली जाती है। यद्यपि उसका उद्भव १३वीं शताब्दी के लगभग

हुआ था, तथापि पिछले पचास वर्षों में इसकी विशेष उन्नति हुई है। अब यह केवल काव्य की ही भाषा नहीं; वरन् उपन्यास नाटक, कहानियाँ, निबन्ध आदि गद्य साहित्य के विभिन्न अंगों की पूर्ति इसके द्वारा हुई और होती जारही हैं। मैथिली शरण गुप्त, 'हरिऔध', श्रीधर पाठक; 'प्रसाद', पन्त, 'निराला', महादेवी वर्मा ने अपनी रचनाओं द्वारा इसकी पूर्ण अभिवृद्धि की है।

हिन्दी के तीन साहित्यक रूप प्रचलित हैं। (१) शुद्ध हिन्दी (२) उर्दू और (३) हिन्दुस्तानी। उर्दू का प्रचार अधिकतर मुसलमानों में है। अरबी-फारसी के अप्रचलित शब्द समूह, अवैज्ञानिक लिपि और विदेशी संस्कृति को अपनाने के कारण यह हिन्दी से दूर पड़ गई है। हिन्दुस्तानी का उद्भव और विकास राजनीतिक कारणों से हुआ है। इसमें हिन्दी, उर्दू और अँगरेजी के प्रचलित शब्दों का मिश्रण है। आजकल हिन्दी साहित्य की भाषा शुद्ध खड़ी बोली है। इसे राष्ट्रभाषा के उच्च पद पर आसीन करने के लिए प्रबल प्रयत्न किये जारहे हैं।

हिन्दी-साहित्य का विकास

हिन्दी कविता का जन्म सं० १०५० के आस पास माना जाता है। उस समय से अब तक ९०० वर्ष के काल में विभिन्न प्रवृत्तियों एवं विचार धाराओं ने हिन्दी काव्य को प्रभावित किया। इन प्रवृत्तियों के दृष्टिकोण से आलोचकों ने हिन्दी-साहित्य के इतिहास को निम्नलिखित चार कालों में विभाजित किया है।

(१) वीर गाथा या चारणकाल—सं० १०५० से १३७५ तक
(२) भक्तिकाल—सं० १३७५ से १७०० तक।
(३) रीतिकाल—सं० १७०० से १९०० तक।
(४) आधुनिककाल—सं० १९०० से अब तक।

वीरगाथा-काल की प्रवृत्तियाँ

इस समय उत्तरी भारतवर्ष में राजपूतों के छोटे-छोटे राज्य थे। इनमें परस्पर युद्ध होते रहते थे। राजपूत नरेश अपने राज्य की वृद्धि, शत्रुओं को पददलित करने, मान-गौरव बढ़ाने, केवल शौर्य प्रदर्शित करने अथवा किसी राज्य कन्या का बलपूर्वक हरण करके इसके विवाह करने के लिए परस्पर युद्ध करते थे। कभी-कभी मुसलमानों के आक्रमणों से रक्षा करने के लिए भी इन राजाओं को युद्ध करने पड़ते थे। अतएव राज्याश्रित कवि या चारण अपने राजाओं के शौर्य, पराक्रम और प्रताप का वर्णन वीर-रस-पूर्ण कविताओं में करते थे। ये कवि लेखनी और तलवार दोनों के धनी हुआ करते थे। इस कारण इस काल की कविता के विषय थे, राजाओं की वीरता, रण कुशलता दान प्रियता, विरह, प्रेम आदि। नीति, शृंगार आदि विषय दोहों में और वीर-रस के पद्य छप्पय में कहे जाते थे।

इस काल की रचनाएँ प्रबन्ध काव्य और वीर गीतों के के रूप में हैं। 'पृथ्वीराज रासो' (चन्द वरदाई कृत), 'बीसलदेव रासो', 'खुमान रासो'; 'जय मयंक' आदि इस काल के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। जगनिक कृत 'आल्हा' भी इसी काल की रचना है।

इन काव्यों की भाषा दो प्रकार की है—(१) पुरानी अपभ्रंश या 'डिंगल' और (२) जनसाधारण की बोलचाल की

भाषा जो आगे चल कर 'पिंगल' या व्रजभाषा के नाम से प्रसिद्ध हुई। वीररस के उपयुक्त इन रचनाओं में दोहा, कवित्त, छप्पय, भुजंगप्रयात, शार्दूल विक्रीड़ित छन्दों और उत्प्रेक्षा, रूपक, अतिशयोक्ति और अत्युक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग किया गया है। इनमें भाषा की सजावट अधिक नहीं, तथापि ओज उत्साह और भावोत्तेजन की प्रचुरता है। शांतरस के अतिरिक्त अन्य रसों, विशेष कर वीर, रौद्र, वीभत्स और हास्य के उत्तम वर्णन हैं। सेना-संचालन, व्यूह-निर्माण और युद्ध के ओजपूर्ण और सजीव वर्णन, जैसे इस काल की रचनाओं में मिलते हैं, वैसे अन्यत्र नहीं।

भक्ति-काल की प्रवृत्तियाँ

इस समय तक देश में मुसलमानों का अधिपत्य स्थापित हो चुका था। वे हिन्दुओं पर मनमाने अत्याचार कर रहे थे। निराशा-सागर में डूबी हुई हिन्दू-जनता के पास ईश्वर की प्रार्थना के सिवाय और क्या चारा था? अतएव अनेक भक्त कवियों ने अपनी अमर वाणी द्वारा जनता की निराशा को दूर करके सजीवता का संचार किया। कबीर, नानक, दादू रैदास आदि सन्त कवियों ने हिन्दू-मुसलमानों के पारस्परिक भेद-भाव को दूर करके ईश्वर के एकत्व का उपदेश दिया। इधर कुतबन, जायसी, उसमान, कासिम आदि सूफी कवियों ने प्रेमगाथा के बहाने अपना आध्यात्मिक सन्देश सुनाया। किन्तु, ये ज्ञान और प्रेम मार्गी कवि हिन्दू जनता की निराशा को दूर न कर सके। उस समय सूरदास ने कृष्ण का लोकरंजक चित्र खींचकर हिन्दू जनता की खिन्नता को दूर किया और तुलसीदास ने राम के लोक-रक्षक रूप की झांकी दिखाकर आशा का संचार किया।

इस प्रकार भक्ति काल में चार प्रकार की काव्य-धाराएँ प्रवाहित हुईं:—

(अ) सन्त काव्य धारा—सन्त कवियों की रचना गेय पदों से है; इन्होंने दोहा, सोरठा, झूलना, कवित्त और गीत-पदों को अपनाया है। इनकी भाषा सधुक्कड़ी है जिसमें व्रज, अवधी, पंजाबी, राजस्थानी, उर्दू, फारसी आदि के शब्दों का सम्मिश्रण है। इनकी रचनाओं में न भाषा की सजावट है और न उत्तम छन्द-व्यवस्था; फिर भी भाव माधुर्य का अभाव नहीं। इनके काव्य का विषय है हिन्दू-मुसलिम एक्य का प्रचार और जाति पांति, छूआछूत और धार्मिक अन्धविश्वासों का विरोध।

(आ) सूफी काव्य धारा—सूफी कवियों ने हिन्दुओं की सरल कथाओं द्वारा प्रेम-काव्यों की रचना और लौकिक प्रेम द्वारा अलौकिक प्रेम की छटा दिखलाई है। इन्होंने सरल अवधी और दोहा-चौपाई की शैली को अपनाया। इनकी रचनाओं में भाषा की अत्यधिक सजावट नहीं, तथापि काव्य माधुर्य और भाव-गांभीर्य की कमी नहीं। जायसी का 'पद्मावत' हिन्दी साहित्य की अमूल निधि है।

(इ) कृष्ण काव्य धारा—कृष्ण-भक्त कवियों ने श्री कृष्ण को बाललीलाओं और गोपियों के प्रेम का सरस वर्णन किया है। इन्होंने व्रज भाषा को अपनाकर उसे साहित्यिक और परिष्कृत रूप देकर सरल और मधुर बनाया। इनकी रचना में शृंगार और वात्सल्य की प्रधानता है। भक्त-कवियों ने विभिन्न राग-रागनियों से पूर्ण गीत पदों और कवित्त, सवैया, छप्पय, रोला आदि छन्दों को अपनाया है। अलंकारों की सुन्दर योजना,

भाव-गांभीर्य और काव्य-माधुर्य भक्त काल की विशेषताएँ हैं। भाषा, भाव और कला सभी दृष्टियों से यह काव्य अत्युत्तम है। कहीं-कहीं राधा और कृष्ण का प्रेम-वर्णन अश्लील है। कृष्ण-भक्त कवियों में सूरदास, नन्ददास, परमानन्द आदि अष्ट छाप के कवि और मीराबाई, रसखान आदि प्रमुख हैं।

(ई) राम-भक्तिधारा—राम-भक्त कवियों में तुलसीदास नाभादास, केशवदास, सेनापति, रघुराजसिंह, आदि प्रमुख हैं। इनमें तुलसीदास सर्व प्रथम हैं। इन्होंने, राम चरित मानस और भगवान राम के लोक-रक्षक स्वरूप का चित्रण करके और लोकादर्शों की प्रतिष्ठा करके निराश जनता में आशा का संचार किया तथा प्रथभ्रष्ट समाज को सुमार्ग की ओर प्रेरित किया। इन्होंने सभी काव्य शैलियां और व्रज तथा अवधी दोनों भाषाओं में रचनाएँ कीं। इनमें सभी रसों की सुन्दर व्यंजना हुई है।

रीति काल की प्रवृत्तियाँ

मुग़ल शासकों का शासन काल भारत का स्वर्ण युग था। इस समय हिन्दू-मुसलमानों का विरोध मिट चुका था। धन और शान्ति की वृद्धि के साथ राज दरबारों में विलासिता का नग्न नृत्य होने लगा। अतएव कवियों ने अपने आश्रित राजाओं को प्रसन्न करने के लिए शृंगार रस की रचनाएँ कीं। नायक नायिका भेद तथा नखशिख वर्णन ही काव्य के मुख्य विषय थे। कृष्ण और राधिका के प्रेम वर्णन के मिस वासनात्मक शृंगार की कविताएँ रचने में इन दरवारी कवियों ने अपने पाण्डित्य और प्रतिभा का परिचय दिया है। इस दूषित धारा के बीच भूषण, लाल और सूदन ने वीर रसात्मक रचनाएँ करके

सुषुप्त हिन्दू जाति में जीवन का संचार किया . साथ ही वृन्द, गिरधर और घाघ आदि ने नीति सम्बधी रचनाएँ कीं।

इस युग के कवियों की दूसरी प्रवृत्ति काव्य के विभिन्न अंगों पर लक्षण ग्रन्थ लिखने की हुई। प्रायः सभी कवियों ने अलंकार रस और पिङ्गलका निरुपण किया और इस प्रकार लक्षण ग्रन्थ रचकर अपना आचार्यत्व भी प्रदर्शित किया।

इसी कारण इस काल को 'रीति काल कहते हैं। केशबदास, बिहारी, मतिराम, भूषण, देव, भिखारीदास, पद्माकर आदि इस युग के प्रमुख कवि हैं।

इस काल के कवियों ने ब्रज भाषा को अपनाया। यद्यपि कुछ कवियों ने व्याकरण की शुद्धता और विन्यास-व्यवस्था का ध्यान नहीं रखा तथापि भाषा में सरलता, मधुरता, व्यंजकता और चित्रोपमता आदि गुणों का पूर्ण विकास हुआ। चमत्कार प्रदर्शन पर इन कवियों ने विशेष ध्यान दिया और प्रायः कवित्त सवैया, घनाक्षरी और दोहा का ही प्रयोग किया है। मुक्तक-काव्यों की रचना ही अधिकतर इस काल में हुई है।

आधुनिक काल की प्रवृत्तियाँ

मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् अँगरेजी साम्राज्य, पाश्चात्य सभ्यता और अँगरेजी शिक्षा का प्रादुर्भाव हुआ। इनके फलस्वरूप जनता में राष्ट्रीयता की भावना प्रस्फुटित हुई। देश की राजनीतिक, धार्मिक तथा सामाजिक दशाओं में बड़े परिवर्तन हुए। अतएव कवियों का दृष्टिकोण भी बदला; उन्हें नवीन विषयों की प्रेरणा मिली। देश प्रेम, प्रकृति चित्रण, समाज सुधार, धर्म-सुधार आदि विषयों पर कविताएँ होने

लगीं। साथ ही छायावाद एवं रहस्यवाद की भावनाएँ प्रस्फुटित हुईं।

विषय के साथ ही साथ भाषा एवं शैली में भी परिवर्तन हुए। ब्रजभाषा का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया। भाषा पूर्ण साहित्यिक, परिष्कृत एवं व्याकरण-सम्मत हो गई है। कवित्त और सवैया के स्थान पर नए नए छन्दों की सृष्टि की जाने लगी। अँगरेजी और बंगला के प्रभाव से गीति काव्य और अतुकांत छन्दों का भी प्रादुर्भाव हुआ। कविता के बाह्य रूप से हटकर आन्तरिक सौन्दर्य की ओर कवियों का ध्यान गया। अलंकारों और उक्ति-वैचित्र्य के स्थान पर भावों का प्राधान्य हुआ। प्रबन्ध काव्य और खण्ड काव्य के अतिरिक्त मुक्तक काव्य रचना की अधिकता है। इस समय हिन्दी-काव्य का सर्वतोमुखी विकास हो रहा है।

इस काल में कुछ कवि जैसे, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, राजा लक्ष्मणसिंह, जगन्नाथदास 'रत्नाकर', सत्यनारायण कविरत्न, पं० रामचन्द्र शुक्ल और वियोगी हरि आदि ब्रजभाषा में भी काव्य-रचना करते रहे। खड़ी बोली के उन्नायकों में मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय,'हरिऔध,जयशंकर 'प्रसाद', सुमित्रानन्दन 'पन्त', निराला, माखनलाल चतुर्वेदी, गोपालशरण सिंह, सियाराम शरण, अनूप शर्मा, उदयशकर भट्ट, महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान, दिनकर, श्यामनारायण पांडेय आदि प्रमुख हैं।

सन्त कवि कबीर

जीवन-परिचय—कबीर हिन्दी साहित्य की ज्ञानाश्रयी शाखा के सर्वोत्कृष्ट कवि माने जाते हैं। उनका जन्म सं० १४५६ में हुआ था। किंवदन्ती के अनुसार ये एक विधवा ब्राह्मणी से उत्पन्न और एक जुलाहा दम्पति से पालित हुए थे। लड़कपन से ही अपने पैतृक व्यवसाय को करते और साधु-संगति का लाभ उठाते ये महात्मा रामानन्द के शिष्य हुए। साधु-स्वभाव कबीर गृहस्थ थे। ११९ वर्ष का दीर्घ जीवन प्राप्त करके ये स्वर्गधाम सिधारे।

यद्यपि 'मसि कागज छूओ नहीं कलम गहो नहिं हाथ' के अनुसार ये विद्वान् न थे; तथापि इन्होंने सत्संग द्वारा वेदान्त, उपनिषद् और पुराणों की अनेक शिक्षाओं और योग की क्रियाओं को जान लिया था। देशाटन से इनका अनुभव विस्तृत हो गया था। 'सायर, सिंह, और सपूत' की लीक पर न चलकर धार्मिक अन्ध विश्वासों की कठोर आलोचना की है।

भाषा-शैली—कबीर की भाषा सधुक्कड़ी है; संस्कृत और साहित्यिक न होते हुए भी वह पचमेल मिठाई के समान सरस और सरल है। उसमें अवधी, व्रज, खड़ी बोली, पंजाबी, राजस्थानी आदि का मिठास पाया जाता है। कहीं कहीं उसमें अरबी और फारसी के शब्दों का भी मिश्रण है। विधि निषेध की कड़ियाँ तोड़ने के साथ ही साथ उन्होंने भाषा और व्याकरण की लौह-शृंखलाओं को भी तोड़ डाला है। अलंकारों से युक्त और छन्द-शास्त्र के नियमों से पूर्ण साहित्यिक माधुर्य इनकी कविता में दुर्लभ है परन्तु वह सरस, मधुर, हृदयग्राही और मर्मस्पर्शी है।

जहाँ कहीं विषय की गहराई है, वहाँ भावों को हृदयंगम कराने के लिए दृष्टान्त, अन्योक्ति, रुपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया है। 'अन्योक्ति' का आश्रय लेकर परमात्मा के विरह में आत्मा की तड़पन का कैसा सुन्दर चित्रण किया गया है :—

साँझ पड़ी दिन आथव्यो, चकवी दीन्हीं रोय।
चल चकवा वा देश को, रैन कदै नहिं होय॥

इसी प्रकार सांसारिक पदार्थों की नश्वरता प्रकट की गई है!

माली आवत देखि करि, कलियन करी पुकार।
फूले फूले चुणि लिए, काल्हि हमारी बार॥

इसी प्रकार उनकी अनेक उलट वासियाँ चमत्कार के साथ साथ भाव व्यंजना से ओत प्रोत हैं :—

'मोहि सुनि सुनि आवे हाँसी, जल में मीन पियासी'

प्रायः इन्होंने विरोध और असंभव का आश्रय लेकर उलट वाँसियों में उक्ति-चमत्कार का समावेश किया है; जैसे-नैया विच नदिया डूबति जाय।

इनकी कविता बाहरी तड़क-भड़क से रहित हृदय का स्वच्छ दर्पण है। इसकी सूक्तियाँ कटु सत्य से युक्त, भाव पूर्ण और प्रभावोत्पादक हैं। इनके ज्ञान और नीति-विषयक दोहे अति लोक-प्रिय हैं। भारतीय जनसमाज के हृदय पर उनका अधिक प्रभाव है।

यद्यपि उनकी रचनाओं में शब्दों की तोड़ मरोड़, स्वच्छन्द तथा अव्यवस्थित भाषा और छन्दो भंग आदि दोष मिलते हैं;

कहीं कहीं उनका रहस्यवाद शुष्क और नीरस है; उनकी उलट बाँसियों का अर्थ स्पष्ट नहीं होता—साधारण जनता के लिए वे भावहीन और शब्दाडम्बर मात्र हैं; तथापि उनके कथन का ढंग सर्वथा अपना है, उनकी रचना पर उनके व्यक्तित्व का गहरा प्रभाव है, उनके रूपक और अन्योक्तियाँ अत्यन्त प्रभावोत्पादक हैं।

धार्मिक सिद्धान्त और समाज सुधार—सन्त कबीर सदाचरण और स्पष्ट व्यवहार के प्रबल समर्थक, और कर्मकाण्ड, पाखण्ड, एवं बाह्याडम्बर के घोर विरोधी थे। हिन्दू मुसलमान और छूत-अछूत में उनके लिए कोई भेद-भाव न था। इस स्पष्टवादी सन्त ने अपनी चुटीली और व्यंग्यपूर्ण बातों से पंडित और मुल्ला दोनों को उनके पाखण्ड और कुत्सित आचार के लिए फटकारा, रूढ़ियों और अन्ध विश्वासों की धज्जियाँ उड़ाईं, जातिपाँति, ऊँच नीच और छूआ छूत को दूर करके समानता, सौहार्द, सत्यता और सरल जीवन अपनाने के लिए उपदेश दिया। उन्होंने हिन्दुओं को मूर्ति पूजा, जाति पाँति, तीर्थ स्थान, खान-पान, छूआ छूत, आदि कार्यों के लिए खूब फटकारा; जैसे—

"दुनिया कैसी बावरी, पाथर पूजन जाय।
घर की चकिया कोउ न पूजै जाको पीस्यो खाय।"

इसी प्रकार मुसलमानों को जीवहत्या करने, सुन्नत कराने और अजान लगाने के कारण आड़े हाथों लिया—

'दिन भर रोजा रहत हैं, राति हनत हैं गाय।
यह तो खून वह बंदिगी, कैसे खुशी खुदाय॥'

'बकरी पाती खाति है, ताकी काढ़ी खाल।
जे नर बकरी खात हैं, तिनको कौन हवाल॥'

वास्तव में धर्म के नाम पर किए गये अनाचार का विरोध कर जन साधारण की भाषा द्वारा समाज को जाग्रत करने वाले सन्त कवियों में कबीर का स्थान सर्व प्रथम है।

महा कवि सूरदास

किंधौं सूर को सर लग्यौ, किंधौं सूर की पीर।
किंधौं सूर को पद लग्यौ, वेध्यो सकल शरीर॥

* * *

उत्तम पद कवि गंग के, कविता को बलबीर।
केशव अर्थ गंभीर को, सूर तीन गुण धीर॥

हिन्दी-साहित्याकाश में सूर्य के समान अपनी प्रतिभा से जगमगाने वाले सूरदास का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी-साहित्य के इस 'मिल्टन' ने 'सूरसागर' की रचना की है। कहा जाता है कि उसमें सवा लाख पद थे। अब भी जिसमें सात-आठ हजार पद मिलते है—। 'जनमत ही ते नैन विहीना' कहे जाने पर भी उन्होंने साहित्य की जो धारा प्रवाहित की है वह अत्यंत सरस, सुकोमल एवं हृदयस्पर्शी है।

कृष्ण भक्त कवियों में सूर का स्थान सर्व श्रेष्ठ है। जिस समय पीड़ित और हतोत्साह हिन्दू जनता नैराश्य-सागर में निमग्न थी; निर्गुण ब्रह्म के शुष्क ज्ञान से उसका हृदय विक्षिप्त था; उस समय सूर ने भगवान के हंसते-खेलते लोकरंजक, माधुर्य और सौन्दर्य से पूर्ण स्वरूप की झांकी दिखाकर निराश

जन समूह में उल्लास और आशा की किरणें जगमगाईं। जनता को विश्वास हुआ कि अब अत्याचारों का अंत दूर नहीं और भगवान भक्तों के उद्धार हेतु अवतार लेने वाले हैं।

भाषा—सूर ब्रजभाषा के महान कवि हैं। उनका भाषा पर असाधारण अधिकार है। उनकी भाषा सरल, चलती हुई और कुछ ग्रामीणता लिए हुए है। उसमें प्रसाद और माधुर्य गुण कूट कूट कर भरे हैं। उन्होंने अरबी, फारसी, गुजराती, बुंदेलखंडी, प्राकृत आदि के शब्दों को बड़ी कुशलता के साथ प्रयुक्त किया है। उनकी भाषा में न शिथिलता है और न उन्होंने शब्दों को तोड़ा-मरोड़ा है।

अलंकार—सूरदास जी ने अलंकारों का बड़े सुन्दर और स्वाभाविक ढंग से प्रयोग किया है। उनकी कविता में उपमा, रूपक, उत्पेक्षा और दृष्टांत अलंकार मिलते हैं। उपमाओं के तो वे 'सम्राट' ही हैं।

रस—यद्यपि उन्होंने प्रधानतः शृंगार और वात्सल्य का ही वर्णन किया है तथापि शांत, अद्भुत, हास्य और भयानक रसों का भी इनकी कविता में सुन्दर वर्णन है। वात्सल्य और शृंगार में तो ये अपना सानी नहीं रखते। इन रसों के तो वे 'सम्राट' कहे जाते हैं।

सूर ने श्रीकृष्ण के बालरूप का सुन्दर, मनोवैज्ञानिक, सरस और सजीव चित्र अंकित किया है। उन्होंने अपने दृष्टि-विहीन चर्म चक्षुओं से मुरलीधर, श्यामल यमुना, गोपी-मंडल, ग्वाल-बाल तथा गोवंश का इतना सजीव और हृदय स्पर्शी चित्र उपस्थित किया है जो विश्व-साहित्य में कहीं नहीं मिल सकता।

बालकों की चपलता, उनकी स्पर्द्धा, अनुकरण शीलता, अभिलाषाओं और आकांक्षाओं का जीता-जागता चित्र यदि कहीं उपलब्ध होता है तो सूरदास में। उदाहरण के लिए:—

खेलत में को काको गोसैयाँ।
हरि हारे जीते श्रीदामा बरबस ही कत करत रिसैयाँ॥

* * *

मैया कबहि बढ़ैगी चोटी।
किती बार मोहि दूध पिवत भई यह अजहूँ है छोटी।

* * *

यशोदा के मातृ हृदय, उसकी निष्काम कामना और वात्सल्यमयी चिंता बड़ी मर्मस्पर्शिनी है।—

सिखवत चलन जसोदा मैया।
अर बराइ कर पानि गहावत, डगमगाइ धरती धरै पैया।

* * *

संदेसो देवकी सों कहियो।
हों तो धाय तिहारे सुत की। कृपा करत ही रहियो॥

* * *

सूर का प्रेम वर्णन अत्यंत उत्कृष्ट है। वियोग वर्णन में उन्हें अद्वितीय सफलता मिली है। उन्होंने गोपियों के हृदय में पैठकर भिन्न-भिन्न प्रकार के भावों को अत्यंत मर्म स्पर्शी शब्दों में प्रकट किया है। उनके श्रृंगार वर्णन में अश्लीलता की झलक तक नहीं आई है। उनकी उक्तियाँ अत्यंत मार्मिक हैं। उन्हें कहने के टेढ़े-सीधे अनेक ढंग ज्ञात हैं। इसी कारण कहा जाता है कि आगे आने वाले कवियों ने उनकी झूटन खाकर ही सन्तोष किया है। गोपी-उद्धव-संवाद अत्यंत मर्मस्पर्शी, तर्क पूर्ण और

रोचक है। "ऊधो मन नाहीं दस बीस, एक हुतो सो गयो श्याम संग को आराधै ईस।" "उर में माखन चोर गड़े। अब कैसे हु निकसत नहिं ऊधो! तिरछे ह्वै जु अड़े।" "अखियाँ हरि दरशन की भूखी" आदि कितनी मार्मिक उक्तियाँ हैं।

संगीत की दृष्टि से सूर के पद राग रागिनियों से पूर्ण हैं। इनकी कोमल कान्त पदावली जब संगीत की मधुर लहरी से एकाकार होने लगती है तो हृदय थिरक उठता है।' उन्होंने एक ही प्रसंग पर अनेक पद लिखे हैं; किन्तु पुनरुक्ति होने पर भी वे इतने मर्मस्पर्शी और हृदयहारी हैं कि पाठक को रस में सराबोर कर देते हैं।

सूर का क्षेत्र अत्यंत सीमित हैं परन्तु अपने सीमित क्षेत्र में वे अपना सानी नहीं रखते। उनका शब्द-माधुर्य, भाव लालित्य, अलंकारों की मार्मिक योजना, भक्ति और वात्सल्य-पूर्ण बाल-वर्णन, विप्रलंभ शृंगार का सूक्ष्म चित्रांकन और-मार्मिक उक्तियाँ इतनी अद्वितीय हैं कि उन्हें हिन्दी-साहित्य का सूर्य कहना उपयुक्त है।

जीवन-परिचय—सूरदास का जन्म सन् १४८० के लगभग रेणुका क्षेत्र नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता रामदास थे। ये सारस्वत ब्राह्मण थे। इन्होंने अपना अधिकांश जीवन गऊ घाट पर बिताया था। श्री बल्लभचार्य जी से इन्होंने दीक्षा ली थी। उनके आदेशानुसार 'श्री मद्भागवत' की पदों में रचना की।

रचनाएं—सरसागर, सूरसागवली और साहित्य लहरी।

महाकवि तुलसीदास

जीवन-परिचय—भक्त-चूड़ामणि तुलसीदास का जन्म सं० १५५४ में बाँदा ज़िले के राजापुर नामक ग्राम में हुआ था।

इनके पिता पं० आत्मारामजी सरयूपारीण ब्राह्मण थे । इनकी माता का नाम हुलसी था। कहा जाता है कि मूल नक्षत्र में जन्म लेने के कारण इनके माता पिता ने इन्हें त्याग दिया था। किसी प्रकार द्वार-द्वार भटकते हुए भिक्षा द्वारा ये अपनी उदर पूर्ति करते थे। अन्त में गुरु नरहरिदास ने इनका उद्धार करके शिक्षा दीक्षा दी। उन्हीं से इन्हें राम-भक्ति की प्रेरणा मिली। विद्वान् महात्मा शेष सनातन जी ने इनको वेद, वेदांग, दर्शन, पुराण आदि में प्रवीण कर दिया। इनका अपनी स्त्री रत्नावली से अगाध अनुराग था। एक बार वह इनकी अनुपस्थिति में अपने पितृ-गृह चली गई। ये भी उसके पीछे-पीछे जा पहुँचे। तब स्त्री ने खिन्न होकर कहा :—

'अस्थि चर्ममय देह मम, तामें जैसी प्रीति ।
तैसी जो श्रीराम महँ, होत न तौ भव-भीति ।।'

स्त्री के व्यंग्य-वाणों ने तुलसी को संसार से विरक्त कर दिया। उनका वासनामय लोक-प्रेम श्रीरामजी की दृढ़-भक्ति में परिणत हो गया। उन्हों ने अपना समस्त जीवन राम-भक्ति, रामगुण गान और सत्संग-सेवन में लगा दिया । उन्होंने मान-सरोवर और चारों धाम की यात्रा की। निम्न दोहे के अनुसार इनकी मृत्यु सं० १६८० में काशी में महामारी से हुई थी।

'संवत् सोरह सै असी, असी गंग के तीर।
श्रावण शुक्ला तीज शनि, तुलसी तज्यो शरीर ।।'

रचनाएँ—गोस्वामीजी की अक्षय कीर्ति को चिरस्थायी रखने वाला इनका महाकाव्य ' रामचरितमानस ' है । रीति-नीति, आचरण, व्यवहार धर्म आदि बातों में यह हिन्दू समाज

का पथ-प्रदर्शक और परम प्रिय है। इसके अतिरिक्त विनय-पत्रिका, गीतावली, कवितावली, दोहावली, बरवै रामायण, पार्वती मंगल, जानकी मंगल, कवित्त रामायण, रामाज्ञा प्रश्नावली, रामललानहछू; वैराग्य संदीपिनी, कृष्ण गीतावली आदि उनके रचे हुए ग्रन्थ हैं।

भाषा शैली—महाकवि तुलसीदासजी रामभक्ति शाखा के ही नहीं, वरन् हिंदी साहित्य के भी सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उन की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। उनके समय में व्रज और अवधी दो काव्य भाषाएँ प्रचलित थीं। प्रायः तत्कालील कवि किसी एक भाषा में साहित्य रचना करते थे। गोस्वामीजी का व्रज और अवधी दोनों भाषाओं पर समान और विस्तृत अधिकार था। उन्होंने ठेठ और साहित्यिक दोनों प्रकार की अवधी में रचनाएँ की हैं। उनकी व्रज भाषा भी साहित्यिक, परिष्कृत, सुव्यवस्थित और अनुप्रासमयी है। उनकी भाषा सर्वत्र सरल, सुबोध और परिमार्जित है, उसमें संस्कृत की कोमल कान्त-पदावली का अनूठा आनन्द प्राप्त होता है। यथा स्थान उन्होंने कहावतों, मुहावरों तथा विदेशी शब्दों को हिंदी रूप देकर प्रयुक्त किया है। वास्तव में उनकी प्रसाद पूर्ण भाषा का प्रधान गुण है—निर्दोष वाक्य-विन्यास। विषयानुकूल भाषा का प्रयोग करने में उन्होने सर्वत्र अपना कौशल दिखलाया है।

छन्द—गोस्वामी जी ने रामचरित की पीयूषधारा को अपने समय की सभी प्रचलित शैलियों में प्रवाहित किया है। उनके समय में काव्य की पाँच प्रधान शैलियाँ प्रचलित थीं। वीरगाथा काल की छप्पय शैली और भाटों की कवित्त—सवैया शैली-

‘कवितावली’ में, विद्यापति और सूरदास की गीत शैली ‘गीतावली’, ‘कृष्ण गीतावली’ और ‘विनय पत्रिका’ में, जायसी की दोहा-चौपाई शैली ‘रामचरित मानस’ में और अपभ्रंश काल से चली आने वाली नीति और सूक्ति शैली ‘सतसई’, ‘दोहावली’ और ‘रामाज्ञा’ में देखने को मिलती है। इस प्रकार उन्होंने सभी प्रचलित शैलियों में रचना करके अपनी काव्य प्रतिभा का परिचय दिया है। उनकी समस्त रचना में शायद ही कहीं पिंगल का दोष हो, उसमें न बनावटीपन है और न शिथिलता।

प्रबन्ध-पटुता—गोस्वामी जी की सब से बड़ी विशेषता है उनका प्रबन्ध-कौशल। ‘रामचरित मानस’ हिन्दी-साहित्य का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है। उसमें प्रबन्ध-काव्य के सभी अंगों का समुचित सामंजस्य है। न तो उसमें अनावश्यक प्रसंगों का वर्णन है; न कहीं कथा की शृंखला टूटने पाई है, न पात्रों के संवाद, नखशिख, अभिषेक आदि के वर्णन लम्बे होने पाये हैं; फिर भी उसमें मानव जीवन के समस्त व्यापारों और सभी परिस्थितियों का वर्णन मिलता है। मानव-अन्तकरण की सूक्ष्म वृत्तियों, कोमल और स्वाभाविक भावनाओं की उथल-पुथल और मानसिक अन्तर्द्वन्द का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने में वे पूर्ण सफल हुए हैं। उन्होंने राम-कथा के मार्मिक स्थलों को पहचान कर उनका हृदय-स्पर्शी और गम्भीर वर्णन किया है। जनक-वाटिका में राम सीता का परस्पर दर्शन; राम-वनगमन, दशरथ-मरण, चित्रकूट में भरत से भेंट, ग्रामीण स्त्रियों की सहानुभूति, युद्ध, लक्ष्मण को शक्ति लगना आदि मर्मस्पर्शी

स्थलों का विशद वर्णन करने में गोस्वामीजी ने अपनी सहृदयता और प्रतिभा का परिचय दिया है।

रस—तुलसीदासजी ने नवरस की धारा प्रवाहित की है। राम जानकी मिलन में संयत और शिष्ट शृंगार, दशरथ-विलाप और लक्ष्मण के शक्ति लगने पर करुण, नारद-मोह में हास्य, राम-रावण युद्ध में वीर और रौद्र, लंका-दहन में भयानक और उत्तरकांड में शांतरस का उत्कृष्ट वर्णन मिलता है।

इसी प्रकार शोक, घृणा, दाम्पत्य प्रेम, पीड़ा, विषाद, आत्मग्लानि, श्रम आदि सूक्ष्म भावों के मनोवैज्ञानिक वर्णन उनके काव्य में भरे पड़े हैं। रसानुकूल शब्द-योजना का जैसा चमत्कार उनकी रचनाओं में देखा जाता है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। 'कंकन किंकिनि नूपर धुनि' में नूपुरों की ध्वनि शब्दों में भी गूँजती है।

विभिन्न पात्रों के चरित्र-चित्रण, मानव अंतःकरण के अन्तर्द्वन्द और संश्लिष्ट योजना द्वारा प्राकृतिक दृश्यों के सजीव चित्र उपस्थित करने में भी गोस्वामीजी पूर्ण सफल हुए हैं। विभिन्न व्यापारों में तत्पर मनुष्य की मुद्राओं का जीता जागता चित्रण भी उन्होंने अत्यन्त हृदय स्पर्शी किया है। भौं पर हाथ रखे हुए प्रतीक्षा करती हुई शबरी की मुद्रा का चित्र कितना सुन्दर है :—

"छन भवन छन बाहर विलोकति पंथ भ्रूपर पानि कै।"

अलंकार—गोस्वामीजी की अलंकार-योजना भावों की अभिव्यंजना करने में पूर्ण सफल हुई है। उनकी रचना शब्द-

सौंदर्य से पूर्ण होने पर भी माधुर्य और ओज आदि गुणों से विभूषित है और उक्ति-वैचित्र्य से परिपूर्ण है।

विशेषता—गोस्वामीजी एक महान कवि और कलाकार ही नहीं थे, वे एक धार्मिक उपदेष्टा, आचार्य और सुधारक भी थे। राम के मुख से 'शिव द्रोही मम दास कहावा। सो नर मोहि सपनेउ नहिं भावा' कहला कर शैव-वैष्णवों का झगड़ा मिटाया, भक्ति, ज्ञान और कर्म के सुन्दर समन्वय द्वारा धर्म के व्यापक रूप का चित्रण किया और सगुण और निर्गुण का भेदभाव दूर किया। 'राम' में अनन्त-सौन्दर्य, अनन्त गुण और अनन्त शक्ति की प्रतिष्ठा करके और उन्हें लोक और धर्म की रक्षा में तन्मय दिखाकर निराश जनता को उत्साह और जीवन का सन्देश दिया, वर्णाश्रम धर्म की व्यवस्था की और धर्म के व्यावहारिक रूप का दिग्दर्शन कराया। राम की लोक-पावन-कथा द्वारा उन्होंने जीवन की अनेक परिस्थितियों को ऐसे अनुपम ढंग से सुलझाया, राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक सिद्धान्तों का ऐसा सुन्दर प्रतिपादन किया, मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र द्वारा ऐसा आदर्श उपस्थित किया कि आज भी हिन्दू समाज के लिए यह पथ-प्रदर्शन का कार्य कर रहा है। पारिवारिक जीवन का सच्चा चित्र खींचकर उन्होंने पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-भाई, गुरु-शिष्य, राजा-प्रजा के पारस्परिक कर्तव्यों का निर्धारण किया और सामाजिक मर्यादा की स्थापना की। यही कारण है कि उनके 'मानस' का आज भी 'हिन्दू मानस' पर अटल अधिकार है। उनकी सूक्तियाँ आर्ष-वाक्यों की भाँति प्रयुक्त की जाती हैं। राग-रागनियों की दृष्टि से अनेक

उत्कृष्ट सुललित पद रचकर उन्होंने संगीत-प्रेमियों के लिए सुधा-धारा प्रवाहित की है ।

सारांश यह है कि सभी दृष्टियों से गोस्वामीजी का स्थान हिन्दी-साहित्य में सर्वोच्च है । उसकी सुवाणी में सुधाकर की शीतलता और जीवन-प्रदायिनी शक्ति है। इसी कारण वे हिन्दी काव्याकाश के सुधाकर माने जाते हैं । हरिऔध जी का यह कथन अति सार्थक है :—

“ कविता करके तुलसी न लसे,
कविता लसी पा तुलसी की कला ।”

सूर और तुलसी की समानता

भाषा—सूर और तुलसी दोनों ही हिन्दी के महान कवि हैं। इन दोनों में से कौन बड़ा है, यह निश्चय पूर्वक कह देना सरल कार्य नहीं है। सूर की रचना केवल ब्रजभाषा में है; तुलसी ने ब्रजभाषा और अवधी दोनों का प्रयोग किया है। सूर ने प्रचलित ग्रामीण ब्रजभाषा का प्रयोग किया है; किन्तु तुलसी की भाषा साहित्यिक और परिष्कृत है। सूर की भाषा कहीं-कहीं उखड़ी सी होने पर भी उस में माधुर्य गुण की अपूर्व धारा है।

छन्द—सूर की रचना केवल गीत पदों में है । तुलसी ने उस समय की सभी प्रचलित शैलियों में रचनाएँ की हैं, जैसे—छप्पय, सवैया, कवित्त, दोहा, चौपाई और गीत पद । लेकिन गीत की जो मधुरता सूर में पाई जाती है वह तुलसी में नहीं; यद्यपि संगीत की दृष्टि से दोनों की पदावलियाँ अनूठी और पूर्ण हैं।

अलंकार—तुलसी और सूर दोनों ने ही अलंकारों का प्रयोग किया है; लेकिन सूर ने कहीं-कहीं लम्बे-लम्बे रूपकों, उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं की झड़ी बँध दी है। उनके कूट पद भी अत्यन्त क्लिष्ट हैं।

रस—तुलसी ने रामचरित का आश्रय लेकर जीवन की अनेक परिस्थितियों का मार्मिक चित्र खींचा है। सूर के कृष्ण चरित्र में उतनी व्यापकता नहीं। सूर ने श्रीकृष्ण के बाल चरित्र का वर्णन किया है। अतएव उन्होंने वात्सल्य और शृंगार रस के अत्यन्त अनूठे वर्णन किए हैं। बालकों की बाल क्रीड़ा, उनकी चपलता, स्पर्द्धा आदि के जीते जागते चित्र सूर ने चित्रित किए हैं। तुलसीदास ने नव-रसों की हृदयग्राही धारा बहाई है। जहाँ सूर के संयोग वियोग के वर्णन अद्वितीय हैं, वहाँ उनके शृंगार रस के वर्णन कहीं-कहीं मर्यादा के बाहर हो गए हैं। तुलसी के वर्णन सर्वत्र मर्यादा से पूर्ण और शिष्ट हैं।

भावुकता—सूरदास को कहने के अनेक सीधे टेढ़े ढंग ज्ञात हैं। उनके उपालंभ और वक्रोक्तियाँ अत्यन्त मार्मिक और हृदय स्पर्शी हैं। उनकी अनूठी उक्तियों के कारण ही यह प्रसिद्ध है कि आगे आने वाले कवियों ने उनकी झूठन खाकर संतोष किया है। तुलसी ने मानव जीवन के मार्मिक स्थलों को पहचान कर उनका बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। राम बन गमन, भरत-मिलन, लक्ष्मण-मूर्च्छा आदि प्रसंगों का जैसा हृदयस्पर्शी वर्णन रामचरित मानस में किया गया है; वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।

रचना-परिमाण—सूर की कीर्ति का भव्य स्मारक सूरसागर है। कहते हैं कि इसमें लगभग एक लाख पद थे; किन्तु अब पाँच-छः हजार पदों से अधिक नहीं मिलते हैं। तुलसीदास ने हिन्दी-साहित्य के अद्वितीय महाकाव्य 'रामचरित मानस' की रचना की है। इसके अतिरिक्त उनके अन्य काव्य—गीतावली, कवितावली, विनय पत्रिका, दोहावली आदि भी हैं। इस प्रकार तुलसी की रचनाएँ सूर से कहीं अधिक हैं।

इन बाह्य दृष्टिकोणों से तुलसी सूर से कहीं ऊँचे ठहरते हैं, किन्तु शुद्ध कवित्व की दृष्टि से दोनों का समान अधिकार है। दोनों की वाणी में पूत भावनाएँ एक सी हैं। सूर ने जीवन के केवल एक ही क्षेत्र को लेकर उसमें अपनी प्रतिभा का पूर्ण चमत्कार दिखाया है। मधुरता भी सूर में तुलसी से अधिक है। सूक्ष्म-दर्शिता में भी सूर अपना जोड़ नहीं रखते। इन्होंने अपने सीमित क्षेत्र में ही बालकों की क्रीड़ाओं, उनकी चेष्टाओं और मधुर भावनाओं का अनुपम चित्र उपस्थित किया है। तुलसी का क्षेत्र विस्तृत है। लोक-कल्याण की दृष्टि से भी उनकी रचनाएँ अधिक शक्तिशाली और महत्त्व पूर्ण हैं। उन्होंने पारिवारिक और सामाजिक जीवन के अनुपम चित्र चित्रित किए हैं।

वास्तव में सूर और तुलसी दोनों ही हिन्दी के महान कवि हैं। देवों में किसको बड़ा और छोटा कहा जाय? फिर भी तुलसी का स्थान सूर से कहीं ऊँचा है। अतएव 'सूर सूर तुलसी ससी' (सूर सूर्य के समान और तुलसी चन्द्रमा के समान हैं) वाला दोहा यदि कवि ने यमक के लोभ से नहीं कहा है तो

तुलसी को छोड़कर सूर को हिन्दी साहित्य का अन्यतम कवि माना जा सकता है।

आचार्य केशवदास

जीवन-परिचय—रीति-काल के प्रवर्तक आचार्य केशवदास का जन्म सं० १६१२ के लगभग ओरछा में हुआ था। ये संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित और काव्य शास्त्र के मर्मज्ञ थे। ओरछा-नरेश के अनुज इन्द्रजीत सिंह इनके आश्रयदाता थे। इनका जैसा राजसी-जीवन और ऐश्वर्य भूषण के अतिरिक्त अन्य किसी कवि को उपलब्ध नहीं हुआ। इनका देहावसान सं० १६८० के लगभग हुआ।

रचनाएँ— रसिक-प्रिया, कवि-प्रिया, राम चन्द्रिका, विज्ञान गीता, वीर सिंहदेव चरित, जहाँगीर-जस-चन्द्रिका और रतन-बावनी। 'रामचन्द्रिका' प्रबन्ध काव्य है, जिसमें राम चरित्र का वर्णन है।

आलोचना—आचार्य केशवदास का स्थान हिन्दी के प्रमुख साहित्याचार्यों में अग्रगण्य है। महाकवि देव ने इनको 'कठिन काव्य का प्रेत' कहा है, क्योंकि इनकी कविता अत्यन्त क्लिष्ट है। इन्होंने सर्वत्र अपना पाण्डित्य प्रदर्शन करने की चेष्टा की है। ये एक उत्कृष्ट कलाकार थे। इनका भाषा पर एकाधिपत्य था। इन्होंने शुद्ध साहित्यिक और परिमार्जित व्रज भाषा का प्रयोग किया है, परन्तु उसमें बुन्देलखण्डी शब्दों का पुट है। संस्कृत के लम्बे-लम्बे समस्त पद और अलंकारों के

बाहुल्य के कारण इनकी भाषा साधारण व्रजभाषा से कठिन और दुरूह है। माधुर्य और प्रसाद की अपेक्षा उसमें ओज गुण की प्रधानता है। क्लिष्ट पदों की योजना करने के कारण ही यह कथन प्रसिद्ध है कि 'कवि को दीन न चहै बिदाई। पूछै केशव की कविताई।'

छन्द शास्त्र के मर्मज्ञ होने के कारण केशवदासजी ने 'रामचन्द्रिका' में विविध छन्दों का प्रयोग किया है। श्री छन्द और सारछन्द से लेकर दंडक घनाक्षरी और मनहरण आदि सभी प्रकार के छन्दों का बदलता हुआ प्रयोग कवि के कौशल और पाण्डित्य को प्रकट करता है। छन्दों की बहुलता के कारण ही 'राम-चन्द्रिका' को 'छन्दों का अजायबघर' कहा जाता है। कहीं-कहीं न्यून और अधिक पदत्व के दोष भी छन्दोंमें मिलते हैं।

छन्दों के समान ही केशवदासजी का अलंकार-शास्त्र पर पूर्ण अधिकार था। कविता-कामिनी को अलंकारों से सुसज्जित करने में इनकी प्रतिभा की झलक सर्वत्र दिखाई देती है। अलंकारों को काव्य की आत्मा मानने के कारण ही इनका कथन है—'भूषण बिनु न विराजई, कविता, बनिता मित्त।' शब्दों के श्लेषात्मक प्रयोग, चमत्कार पूर्ण उक्तियों की अधिकता, लाक्षणिक एवं व्यंजक प्रयोगों की बहुलता इनके समान अन्यत्र दुर्लभ है। श्लेष, यमक और अनुप्रास से तो प्रत्येक पद परिपूर्ण है, किन्तु रूपक उत्प्रेक्षा, विभावना, उल्लेख अपह्नुति आदि अर्थालंकारों की सफल योजना करने में इनकी काव्य पटुता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। किन्तु उनकी अलंकार योजना भाव-निरूपण के लिए नहीं, वरन् चमत्कार प्रदर्शन का साधन-मात्र है। जनक-

पुर के वर्णन में उनकी आलंकारिक कलाबाजी का एक दृष्टान्त देखिए -

दुर्गति दुर्गम ही कुटिल गति सरितन ही में।
श्रीफल को अभिलाष प्रगट कवि कुल के जी में ॥

श्लिष्ट पदों की सफल योजना के कारण उनके अनेक छन्दों के तीन-तीन चार-चार अर्थ लगाये जाते हैं । कहीं-कहीं इनकी अनौखी कल्पना, गहरी सूझ तथा लोकोक्तियाँ और मुहावरों के सार्थक प्रयोग से काव्य में अत्यन्त रोचकता आगई है।

उत्कृष्ट संवाद—केशवदासजी को संवादों की योजना में सब से अधिक सफलता मिली है। उनके संवादों में नाटकों का सा आनन्द आता है। संवादों के उपयुक्त बदलते हुए छन्दों, चलती तथा फड़कती हुई भाषा, वचन-चातुर्य और मार्मिक वक्रोक्तियों का प्रयोग किया गया है।

भाव—राज-दरबार से घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण केशवदास ने वीर दर्प. शौर्य-शालीनता और युद्धोत्साह का सुन्दर चित्रण किया है। उनमें राज सभा के आतंक और प्रताप एवं ऐश्वर्य और शक्ति के प्रदर्शित करने की असाधारण योग्यता थी । मानव-स्वभाव का चित्रण उन्होंने जहाँ किया है, वहाँ अच्छा ही किया है । रावण से त्रस्त और भयभीत जानकी का अति स्वाभाविक वर्णन है—

सबै अंग लै अंग ही में दुरायो।
अधो दृष्टि कै अश्रु धारा बहायो ॥

प्रबन्ध-पटुता—प्रबन्ध काव्य की दृष्टि से केशव असफल सिद्ध हुए हैं। 'रामचन्द्रिका' में न तो कथा के सम्बन्ध का यथोचित निर्वाह है और न मार्मिक स्थलों का सरस वर्णन।

मार्मिक स्थलों का वर्णन करने में उन्होंने अपनी हृदयहीनता का परिचय दिया है। उनके 'राम' बन जाने के अवसर पर माता को विधवा के कर्तव्य समझाते हैं और रावण से अपहृत सीता 'हा राम, हा रमन, हा रघुनाथ धीर!' कहकर शांत होजाती हैं। इसी प्रकार प्रकृति चित्रण में प्रकृति के सहज सौन्दर्य का वर्णन न करके शाब्दिक चमत्कार में उलझ गये हैं। जैसे—

सेव बड़े नृप की जनु लसै। **श्रीफल** भूरि भाव जहँ बसै।
वेर भयानक सी अति लसै। **अर्क** समूह जहाँ जग मगै॥

कहीं-कहीं इन्होंने वस्तु नामावली की गणना करके आत्मतुष्टि करली है और अनुप्रास की धुन से देश-काल विरुद्ध वर्णन भी कर बैठे हैं, जैसे—"एला ललित लवंग संग पुंगी फल सोहैं।"

वास्तव में केशवदास आचार्य पहले थे और कवि बाद में। उनकी काव्य-पटुता, अलङ्कार-योजना, उक्ति-वैचित्र्य, संवाद पटुता और सूझ सराहनीय है; परन्तु उसमें सूर और तुलसी के समान सहृदयता और आत्म विस्मृति का अभाव है। काव्यांगों के निरूपण और सरस उदाहरणों द्वारा साहित्य शास्त्र की मीमांसा करने के कारण उनका हिंदी साहित्य में उच्च स्थान है।

रहीम

अब्दुल रहीम खानखाना सरदार बैरमखाँ के पुत्र और सम्राट अकबर के दरबार के नवरत्नों में से एक थे। ये अनेक भाषाओं के जानकार और हिन्दी के मर्मज्ञ कवि थे। अकबर

के समय में ये प्रधान मंत्री तथा प्रधान सेनापति के उच्च पदों पर आसीन रहे।

आप परम धार्मिक, भगवान कृष्ण के उपासक, दानी और परोपकारी थे। दया और उदारता की तो आप साक्षात् मूर्ति थे। मुक्तहस्त होकर दान करने के कारण ही ये अपने समय के कर्ण माने जाते हैं। एक बार कवि गंग को एक छप्पय पर प्रसन्न होकर ३६ लाख रुपये दे डाले थे। आप विद्वानों और गुणियों के आश्रयदाता थे। इनकी सभा में अनेक विद्वान् और कवि रहते थे। गोस्वामी तुलसीदासजी से भी इनका परिचय और स्नेह था। इनके अन्तिम दिन जहाँगीर की कोपाग्नि के कारण बड़े ही कष्ट से व्यतीत हुए।

काव्य—इनके रचित काव्यों में रहीम सतसई मुख्य है। जिसमें नीति और भक्ति से पूर्ण दोहे हैं। इसके अतिरिक्त बरवै नायिका भेद, रासपंचाध्यायी, शृंगार सोरठ और मदनाष्टक शृंगार-विषयक रचनाएँ हैं।

शैली

भाषा—रहीम का ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। ये पूर्वीय और पश्चिमी दोनों प्रकार की अवधी का प्रयोग करने में कुशल थे। "बरवै नायिका भेद" में अवधी का अत्यन्त सुन्दर और सरस रूप देखा जाता है। भाषा में प्रसाद गुण सर्वत्र विद्यमान है! सरल से सरल और संक्षिप्त शब्दों में मार्मिक भावों को रख देना ही इनका कौशल है।

छन्द—यद्यपि आप अपने दोहों के लिए प्रसिद्ध हैं, तथापि इन्होंने बरवै, कवित्त, सवैया, सोरठा और पदों में भी कविता की है। रहीम के ज्ञान पूर्ण नीति के दोहे सरल और भावपूर्ण होने पर भी प्रासंगिक विषयों का मार्मिक प्रतिपादन करते हैं। उसमें इनके जीवन का अनुभव कूट-कूटकर भरा हुआ है। इसी लिए ये इतने चुभते हुए और लाभप्रद हैं। रहीम के दोहे वृन्द और गिरिधर के दोहों और कुण्डलियों के समान केवल नीति के उपदेश नहीं हैं वरन् उनके भीतर से एक सच्चा हृदय झांक रहा है।

अलंकार—इन्होंने बिहारी की तरह दोहों में अलंकारों का पुट देने का प्रयत्न नहीं किया, फिर भी यथास्थान उनमें श्लेष, यमक, दृष्टांत आदि अलंकार स्वाभाविक रूप से प्रयुक्त हुए हैं। जैसेः—

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी बिना न ऊबरै मोती, मानुस चून॥
दीन सबन को लखत है, दीनहि लखै न कोय।
जो रहीम दीनहि लखै, दीनबन्धु सम होय॥

रस—नीति और भक्ति के दोहों के साथ आपने अन्य रीति कालीन कवियों की भाँति शृंगार रस को भी चखने का प्रयत्न किया है और नायक-नायिका भेद लिखा है। आपके बरवै छन्द शृंगाररस से ओत-प्रोत हैं।

यद्यपि रहीम कल्पना की उड़ान और झूठी खिलवाड़ में नहीं पड़े, तथापि आपकी उक्तियाँ इतनी लुभावनी और हृदयस्पर्शी हैं कि वे लोकोक्तियों के समान प्रयुक्त की जाती हैं।

अनेक परवर्ती कवियों ने इनको अपनाया है। जैसे—

बिगरी बात बनै नहीं, लाख करो किन कोय।
रहिमन बिगरे दूध को, मथै न माखन होय ॥

वास्तव में नीति पूर्ण मार्मिक दोहों में तुलसी और कबीर के पश्चात् आपका ही स्थान है।

बिहारी

जीवन-परिचय—महाकवि बिहारी का स्थान रीतिकाल के शृंगारी कवियों में सर्वश्रेष्ठ है। आप इस युग के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। आपका जन्म (सं० १६६० के लगभग ग्वालियर के निकट बसुवा गोविन्दपुर में हुआ था। आपकी बाल्यावस्था बुन्देलखण्ड और युवावस्था अपनी ससुराल मथुरा में बीती थी।

बिहारी जयपुर नरेश मिर्जा राजा जयसिंह के आश्रित राजकवि थे। कहा जाता है कि एक बार महाराज जयसिंह नवविवाहिता रानी के प्रेम-जाल में ऐसे फँसे हुए थे कि उन्होंने राजकार्य देखना भी छोड़ दिया था। उस समय बिहारी के निम्न दोहे ने महाराज जयसिंह को सचेत किया था :—

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल।
अली कली ही सौं बँध्यौ, आगे कौनु हवाल ॥"

इसके पश्चात् राजा जयसिंह ने उनकी काव्य-प्रतिभा से मुग्ध होकर इसी प्रकार से दोहे रचने की आज्ञा दी। वे प्रत्येक दोहे पर एक अशर्फी भेंट करते थे।

काव्य— बिहारी का एकमात्र ग्रन्थ 'बिहारी सतसई' है जिसमें लगभग ७१३ दोहे हैं। इनकी कीर्ति केवल इसी पुस्तक के आधार पर है। हिंदी-साहित्य में रामचरितमानस को छोड़कर अन्य किसी ग्रन्थ पर इतनी अधिक टीकाएँ नहीं लिखी गईं। अनेक भाषाओं में उसके अनुवाद किए जा चुके हैं। बिहारी सतसई की लोक-प्रियता का अनुमान इसी से लग सकता है।

शैली

भाषा—आपका भाषा पर पूर्ण अधिकार है। शुद्ध साहित्यिक ब्रजभाषा का प्रयोग करने पर भी उस में कहीं-कहीं बुन्देलखण्डी, उर्दू और फारसी आदि के शब्द भी पाए जाते हैं। निखरे हुए हीरे की भाँति शब्द चुने हुए हैं। अनावश्यक शब्दों का पूर्ण अभाव है। शब्दों की तोड़-मरोड़ अधिक नहीं, केवल एक दो स्थलों पर ही शब्दों के रूप बिगड़ गए हैं। भाषा परिष्कृत और मंजी हुई होने पर भी सरस, सरल सुव्यवस्थित और भावपूर्ण है। भाव क्लिष्ट होने पर भी भाषा प्रसाद और माधुर्य गुण से पूर्ण है।

छन्द—सतसई में 'दोहे' का प्रयोग किया गया है। परन्तु इस छोटे से छन्द में ही शब्द रचना ऐसी उत्तम है, अनेक भाव ऐसी सुन्दरता से भरे हुए हैं कि मन मुग्ध हो जाता है। अनेक परिवर्ती कवि उसी भाव को कवित्त और सवैयों में भी उसी खूबी से नहीं कह सके हैं।

रस—यद्यपि विहारी शृंगारी कवियों में प्रमुख हैं; उन्होंने नायक-नायिकाओं की चेष्टाओं, उनके हाव-भावों और सौन्दर्य

आदि का उत्तम वर्णन किया है, तथापि स्थान-स्थान पर उनके वैराग्य, नीति, भगवद् भक्ति, संसार की असारता और प्रकृति के वर्णन भी मिलते हैं। कवि ने अपने व्यावहारिक ज्ञान का पूरा-पूरा लाभ उठाया है। ज्योतिष, गणित, भूगोल आदि विषयों के सिद्धांतों को कविता में घटा दिया है।

जैसे—कहत सबै बेंदी दएँ आँक दस गुनो होत।
तिय लिलार बेंदी दएँ अगनित बढ़त उदोत॥

शृंगार रस के अतिरिक्त हास्य, शांत रसों की भी अच्छी व्यंजना की है। बिहारी पर मसनवी (फारसी) कवियों का भी प्रभाव दिखलाई पड़ता है, इसी लिए कहीं-कहीं उनकी कविता में अस्वाभाविकता आगई है, और विरह वर्णन खिलवाड़ सा हो गया है। ऐसे ऊहात्मक वर्णनों में सुकुमारता और नाज़ुक ख़याली की हद हो गई है :—

औंधाई सीसी सुलखि बिरह बरति विललात।
बीचहि सूखि गुलाब गो, छींटो छुई न गात॥

विरहाग्नि से तप्त नायिका की गति बड़ी विचित्र है :—

आड़े दै आले वसन; जाड़े हू की राति।
साहस ककै सनेह बस, सखी सबै ढिंग जाति॥

बिहारी पर सामयिक परिस्थितियों का पूर्ण प्रभाव पड़ा है। अतएव इन्होंने काव्य-चातुरी को नख-सिख वर्णनों में, विभाव-अनुभाव का सजीव चित्र उपस्थित करने में और वासना-रंजित प्रेम के सूक्ष्म निरीक्षण में प्रयुक्त किया है।

अलंकार—इन्होंने अलंकारों का प्रयोग अलंकारों के लिए किया है। एक ही दोहे में अलंकारों की कारीगरी देखने योग्य है। भावों का निर्वाह करते हुए भी अनेक अलंकारों की ऐसी सुन्दर

योजना है कि कहीं भद्दापन नहीं आया है। वास्तव में भावपक्ष और कलापक्ष दोनों का समन्वय इनके दोहों में भली भाँति मिलता है।

उक्ति-वैचित्र्य—बिहारी की नीति सम्बन्धी उक्तियाँ बड़ी मर्मस्पर्शी हैं। कहीं-कहीं पर तो इन्होंने अपने जीवन के सूक्ष्म निरीक्षण और अनुभवों को ज्यों का त्यों रख दिया है। यही कारण है कि उनके दोहे कान्ता-सम्मति का सा काम करते हैं। इनकी मार्मिक उक्तियों और गंभीर भावों के कारण ही पं० रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है कि बिहारी का एक-एक दोहा रस से पूर्ण पिचकारी है जो छूटते ही पाठक या श्रोता को रस से सिक्त कर देती है और वह आनन्द विभोर हो जाता है। इसी लिए यह उक्ति उपयुक्त है :—

सतसइया के दोहरे ज्यों नाविक के तीर।
देखन के छोटे लगैं घाव करैं गंभीर॥

भूषण

भारती-भूषण महाकवि भूषण उन युग-प्रवर्तकों में से थे जो जमाने को बदल दिया करते हैं। जिस युग में उनका प्रादुर्भाव हुआ था, उसमें विलासिता का नग्न नृत्य हो रहा था। इस समय रीतिकालीन शृंगार पूर्ण दूषित कविताओं का देश में बोलबाला था। उन्होंने महलों के अन्दर उछल-कूद करने वाले राजाओं के मनोरंजन और यश-कीर्तन में अपनी काव्य-शक्ति का दुरुपयोग न कर उसे पतितोन्मुख हिंदू-जाति के उत्थान में

लगाया और अपनी वीररस पूर्ण ओजस्विनी वाणी द्वारा आर्य जाति की नस-नस में प्राणों का संचार कर स्वातंत्र्य पथ पर अग्रसर किया।

जीवन-परिचय—महाकवि भूषण का जन्म सं० १६७० के लगभग कानपुर जिले के तिकवाँपुर नामक ग्राम में हुआ था; वे कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। इनके पिता रत्नाकर त्रिपाठी थे। चिंतामणि, मतिराम और जटाशंकर जो अपने समय के प्रसिद्ध कवि थे, इनके भाई थे। इनके असली नाम का पता नहीं चलता। 'कवि भूषण' की उपाधि इन्हें चित्रकूट नरेश ने प्रदान की थी।

पन्ना के राजा छत्रशाल और छत्रपति शिवाजी ने इन्हें राजाश्रय ही नहीं दिया, वरन् इनका अत्यधिक सम्मान किया। कहते हैं, महाराज छत्रशाल ने इनकी पालकी का डण्डा स्वयं अपने कन्धे पर रखकर इनका सम्मान बढ़ाया था। दोनों की गुणग्राहकता देखकर भूषण ने द्विविधा में यह कहा था—"शिवा कौ बखानों कै बखानों छत्रशाल को।"

रचनाएँ—'शिवाबावनी' और 'छत्रशाल-दशक' में अत्यन्त ओजस्वी भाषा में शिवाजी और छत्रशाल के शौर्य और पराक्रम का वर्णन है। 'शिवराज-भूषण' में अलंकारों की परिभाषा देकर उनके उदाहरण स्वरूप छन्दों में शिवाजी की प्रशस्ति है।

काव्य-विषय—भूषण की कविता के मुख्य विषय हैं—युद्ध वर्णन और वीरों के कीर्तिगान। युद्ध वर्णन में उन्होंने नायक के अदम्य उत्साह, सेनाओं के प्रबल पराक्रम और लोमहर्षक दृश्यों का ओजस्विनी भाषा में वर्णन किया है।

भूषण को सच्चा जातीय कवि कहा जा सकता है। वे राष्ट्रीय भावों के गायक थे। उनके हृदय में आर्य जाति के प्राचीन गौरव का भाव, उनकी नसों में वीर रक्त और मस्तिष्क में स्वाभिमान कूट-कूट कर भरा था। उनके काव्य का उद्देश्य पतित जाति को उत्थान की ओर अग्रसर करना था। उन्होंने केवल वीरता—मूर्ति छत्रपति शिवाजी और छत्रशाल के आर्योचित कार्यों का ही यशोगान किया है। उनका लक्ष्य अपने आश्रयदाता की झूठी चाटुकारिता अथवा मनोरंजन द्वारा धनोपार्जन करना न था। वे स्वाभिमानी और स्वदेशाभिमानी कवि थे, प्रशस्तियाँ लिखने वाले भाट नहीं। उनके उद्‌गार हृदय की सच्ची अनुभूति हैं, इसलिए वे अत्युक्ति पूर्ण होने पर भी अत्यन्त प्रभावोत्पादक हैं।

भाषा-शैली—भूषण की काव्य भाषा प्रधानतः व्रजभाषा है, परन्तु उसमें प्राकृत बुन्देलखण्डी, अवधी, बैसवाड़ी शब्दों का भी अधिक प्रयोग है, जैसे, आइयतु, बैयर, बयारन, काल्हि आदि। उन्होंने फारसी और अरबी के शब्दों का भी खूब प्रयोग किया है; जैसे, खलक, तसवीह आदि। प्रायः उन्होंने इन शब्दों के तद्भवरूपों को खराद करके अपनी भाषा के अनुकूल बना लिया है; जैसे—बेहद से बिहद, सरजाइ से सरजा, चगताई से चकत्ता। कहीं-कहीं उन्होंने खड़ी बोली के क्रिया रूपों को अपनाया है, जैसे, 'अफजलखान को मयदान जिन मारा है' 'देखत में खान रुस्तम जिन खाक कियो।'

वास्तव में भूषण ने भाषा को संवारने और सुव्यवस्थित करने का तनिक भी प्रयत्न नहीं किया। प्रायः व्याकरण का उल्लंघन हुआ है, और वाक्य रचना भी कहीं-कहीं गड़बड़ है।

तथापि उनकी भाषा सशक्त और जोरदार है और वीररस के अनुकूल फड़कती हुई और ओजस्विनी है। कहावतों और मुहावरों का प्रयोग जहाँ कहीं उन्होंने किया है, अत्यन्त उपयुक्त है; जैसे—(१) केते पातसाहन की **छाती धरकति है**। (२) **स्याह मुख** नौरंग सिपाह **मुख पियरे**।

रस—रस परिपाक की दृष्टि से भूषण पूर्ण सफल हुए हैं। उनकी प्रत्येक पंक्ति में ओज, दर्प और वीररस कूट-कूटकर भरा है। वीररस के साथ भयानक और रौद्र रसों की भी पूर्ण व्यंजना हुई है। भय, आतंक, पराक्रम, दर्प, शूरवीरता, उत्तेजना और उत्साह के सजीव चित्र भूषण ने चित्रित किये हैं।

अलंकार—भूषण की वीररस पूर्ण कविताओं में यत्रतत्र अलंकारों का समुचित प्रयोग मिलता है। श्लेष, यमक, अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति का प्रयोग प्रस्तुत भाव को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए किया गया है। शिवाजी के आतंक और छत्रसाल के शौर्य की तीव्र व्यंजना कराने के लिए निम्नाङ्कित पदों में 'यमक' की छटा दर्शनीय है :—

(१) ऊँचे घोर मन्दिर के अन्दर रहनवारी,
ऊँचे घोर मन्दिर के अन्दर रहाती हैं।
(२) पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने वीर,
तेरी बरछीने बर छीने हैं खलन के।

इसी प्रकार छत्रसाल की तलवार के वर्णन में 'अनुप्रास' ने भाषा और भाव को कितना सशक्त कर दिया है :—

प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिका सी किलकि कलेऊ देती काल को।

'अतिशयोक्ति' की भी सुन्दरता देखिए :—

(१) तारा सो तरनि धूरि धारा में लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यों हलत है।
(२) दल के दरारे हू ते कमठ करारे फूटे,
केरा केसे पात विहराने फन सेस के।

अस्तु, भूषण वीररस के अन्यतम और लोकप्रिय कवि हैं। उन्होंने रीतिकालीन शृंगार-सरिता को वीर-रस सागर में विलीन कर दिया है। उन्होंने अपनी निर्भीक ओजस्वी वीर वाणी द्वारा जातीय गौरव को जाग्रत किया, सुषुप्त हिन्दू जनता को क्रांति का अमर सन्देश सुनाया, उसकी नस-नस में वीरता और स्वतन्त्रता की भावना भर दी और अत्याचार का विरोध करके अपने अधिकारों की रक्षा करने के लिए उत्साहित किया। इस दृष्टि से भूषण का स्थान राष्ट्रीय कवियों में अग्रगण्य है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

हिन्दी-साहित्याकाश में भारतेन्दुजी के प्रादुर्भाव के समय भारतीय साहित्य, समाज और राजनीति पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव पड़ रहा था, शिक्षित जनता अँगरेजी भाषा और अँगरेजी विचार प्रणाली की ओर झुक रही थी, समय के परिवर्तन होने पर भी हिन्दी साहित्य भाषा और विषय की दृष्टि से पिछड़ा हुआ था और उस में नई भावनाओं और चेतनाओं का पूर्ण अभाव था, उस समय भारतेन्दुजी ने अपनी अपूर्व प्रभा द्वारा पथभ्रष्ट जनता को सुमार्ग दिखलाया, रीतिकालीन संकुचित

काव्यधारा को व्यापक और बहुमुखी करके हिन्दी-साहित्य को परिपुष्ट किया, हिन्दी भाषा का परिष्कार एवं परिमार्जन करके उसे जनता के हृदयासन पर प्रतिष्ठित किया तथा गद्य, पद्य, नाटक, निबन्ध, इतिहास, पत्रकला आदि सभी क्षेत्रों को समुन्नत किया। इसी कारण वे आधुनिक युग के प्रवर्त्तक माने जाते हैं।

जीवन-परिचय—भारतेन्दु जी का जन्म काशी के प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री गोपाल चन्द्र काव्य प्रेमी थे। भारतेन्दु जी में बचपन से ही कवि-प्रतिभा थी। घर पर रह कर ही इन्होंने अनेक भाषाओं का अध्ययन किया। हिंदी-भाषा की उन्नति हेतु इन्होंने अपना तन-मन-धन अर्पण कर दिया था। ये बड़े दानी, उदार, रसिक, विनोदी और अनेक संस्थाओं के संस्थापक थे। ३४ वर्ष की अल्पवय (सं० १६४१) में इनका देहावसान होगया।

रचनाएँ—भारतेन्दु जी ने छोटे-बड़े १७५ ग्रन्थ लिखे हैं, जो चार विभागों में विभाजित किये जा सकते हैं:—(१) काव्य-प्रेम-फुलवारी, प्रेम प्रलाप, मधुमुकुल, विजयिनी-विजय-वैजयन्ती भारतवीणा आदि। (२) नाटक-सत्य हरिश्चन्द्र, चन्द्रावली, भारत-दुर्दशा, नीलदेवी, अन्धेर-नगरी, वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, विषस्य विषमौषधम्, सती प्रताप, प्रेमयोगिनी (मौलिक) मुद्राराक्षस, धनंजय, कर्पूर मंजरी, भारतजननी आदि। (अनूदित)। (३) इतिहास-काश्मीर-कुसुम, बादशाह दर्पण आदि। (४) निबन्ध।

भाषा-शैली—भारतेन्दु जी ने गद्य और पद्य दोनों क भाषाओं का परिष्कार किया। उन्होंने शुद्ध भाषा और ठेठ खड़ी बोली का निर्माण करके उसमें यत्र-तत्र हास्य और विनोद का

पुट देकर तथा लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग करके सजीव बनाया। अप्रचलित शब्दों को कम करके काव्य भाषा को शुद्ध, परिष्कृत और प्रवाह पूर्ण बनाया।

भाव और विषय में भी भारतेन्दुजी ने एक नवीन ज्योति दिखलाई; साहित्य को समय के अनुकूल बनाया और रीति कालीन शृंगार-रस के स्थान में देशभक्ति और समाज सुधार की धारा प्रवाहित की। उनकी काव्य प्रवृत्तियाँ चार दिशाओं में दिखाई देती हैं—(१) भक्ति प्रधान (२) शृंगार-प्रधान, (३) राष्ट्रीय और (४) सामाजिक।

भारतेन्दुजी की रचनाओं में प्राचीनता एवं नवीनता दोनों का सुन्दर समन्वय है। जहाँ इन्होंने राधाकृष्ण की भक्ति में और शृंगार रसके मार्मिक कवित्त सवैये रचे, वहाँ देशभक्ति और समाज-सुधार की धारा को भी प्रवाहित किया। भक्ति और शृंगार के पद, सवैये और कवित्त माधुर्य, प्रसाद और अर्थ-गाम्भीर्य से परिपूर्ण हैं। उनमें यमक, श्लेष, रूपक, अनुप्रास आदि अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग है। देखिए:—

(१) व्रज के लता पता मोहि कीजै।
गोपी-पद-पंकज पावन की रज जामैं सिर भीजै॥

(२) देखि घनश्याम घनश्याम की सुरति करि,
जिय में विरह-घटा घहरि घहरि उठै।

काव्य की नवीन धारा के बीच भारतेन्दुजी की वाणी का सबसे ऊँचा स्वर देश भक्ति का था। उनकी रचनाओं में कहीं देश की अतीत गौरव गाथा का गर्व, कहीं वर्तमान अधोगति की क्षोभ पूर्ण वेदना, कहीं भविष्य की मंगल-कामना से जगी हुई

चिन्ता इत्यादि अनेक पुनीत भावों की अनुपम व्यंजना पाई जाती है। वे देशोद्धार हित किन मार्मिक शब्दों में श्रीकृष्ण जी को पुकारते हैं।—

"कहाँ करुणानिधि केशव सोये ?
जागत नाहिं अनेक जतन करि भारतवासी रोये।"

प्रकृति-चित्रण——भारतेन्दुजी ने प्रकृति के सुन्दर दृश्यों का सजीव वर्णन किया है। इनके गंगा और यमुना-वर्णन उत्तम बन पड़े हैं। उनमें अलंकारों की छटा अनुपम है। देखिए—

नव उज्ज्वल-जलधार हार-हीरक सी सोहति।
बिच बिच छहरति बूंद मध्य मुक्ता-मनि पोहति॥

भारतेन्दु जी सिद्ध-वाणी के अत्यन्त सरस-हृदय कवि थे। अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा द्वारा उन्होंने भाषा, साहित्य और भावों का परिष्कार किया, साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र की अभाव-पूर्ति करके नवीन मार्ग प्रशस्त किया; कवियों की सुरुचि को सुधारा; देश-प्रेम की रचनाओं से देश-प्रेम का मंत्र फूंका और समाज सुधार की धारा प्रवाहित करके सुषुप्त हिंदू जाति को सचेत किया। पंतजी का कथन सत्य ही है—"भारतेन्दु कर गये भारती की वीणा निर्माण।"

राष्ट्रकवि श्री मैथिली शरण गुप्त

राष्ट्र कवि श्री मैथिली शरण गुप्त वर्तमान युग के अत्यन्त लोक प्रिय कवि हैं। देश भक्ति, राष्ट्रीयता, उच्चादर्श और सामा-

जिक क्रान्ति की भैरवी बजाने के कारण आप इस युग के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। आप आर्य संस्कृति के पुजारी प्राचीन गौरव के अभिमानी और जन जागरण के उद्बोधक राष्ट्रीय कवि हैं।

जीवन परिचय—गुप्त जी का जन्म सं० १६४३ वि० में चिरगाँव जिला झांसी में हुआ था। आपके पिता सेठ रामचरण जी रामोपासक और हिन्दी-कविता-प्रेमी थे। आपमें बाल्यावस्था से ही काव्य प्रतिभा थी। आचार्य द्विवेदी जी का वरद-हस्त प्राप्त करके आपकी इस प्रतिभा का अनुपम विकास हुआ। सन्, ४२ के राष्ट्रीय आंदोलन में आपको भी कृष्ण मंदिर में प्रवास करना पड़ा था। आगरा विश्वविद्यालय ने आपको 'डाक्टर' की उपाधि देकर गौरवान्वित किया है। आप रामोपासक-वैष्णव हैं। आपका रहन-सहन सरल और स्वभाव नम्र है।

रचनाएँ—(१) काव्य-ग्रन्थ—रंग में भंग, जयद्रथ वध, भारत-भारती, शकुन्तला, किसान, पत्रावली, वैतालिक, पंचवटी, हिंदू, त्रिपथगा, गुरुकुल, शक्ति, वन-वैभव, द्वापर, सिद्धराज, विकट भट, झंकार, यशोधरा, मंगल घट, नहुष और साकेत (महाकाव्य)।

(२) नाटक—तिलोत्तमा, चन्द्रहास; अनघ।

(३) अनुवाद—मेघनाद वध, वीरांगना, पलासी युद्ध, उमरखैयाम।

भाषा-शैली—गुप्त जी खड़ी बोली के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उनका काव्य-क्षेत्र बहुत व्यापक है। आपने धार्मिक, ऐतिहा-

सिक, पौराणिक, राष्ट्रीय और साहित्यिक विषयों पर रचनाएँ की हैं। गुप्त जी की कविता में शुद्ध, साहित्यिक, परिष्कृत और सुव्यवस्थित खड़ी बोली की मनोहर छटा दृष्टिगोचर होती है। वह सर्वत्र स्वाभाविक, व्याकरण सम्मत और संस्कृत की कोमल-कांत पदावली से परिपूर्ण है। विदेशी शब्दों का पूर्ण अभाव होने पर भी उसमें मुहावरों और लोकोक्तियों का सार्थक प्रयोग है। भाषा सर्वत्र रसानुकूल और माधुर्य, ओज और प्रसाद तीनों गुणों से पूर्ण है।

अलंकार-छन्द--भावों को स्पष्ट करने वाले अलंकारों की योजना में गुप्त जी परम सिद्धहस्त हैं। आपकी स्वभावोक्तियाँ अत्यन्त उत्तम हैं। आपने तुकान्त और अतुकान्त दोनों प्रकार की रचनाएँ की हैं। 'साकेत' में नियमानुकूल छन्दों का प्रयोग अत्युत्तम है।

संवाद—गुप्त जी ने अपने प्रबन्ध काव्यों में संवादों की सुन्दर योजना की है। आपके संवाद सरस, मधुर और तर्क पूर्ण हैं। आपकी चुटकियाँ बड़ी मीठी हैं। 'साकेत' में उर्मिला-लक्ष्मण संवाद और राम-भरत संवाद आदि बड़े उत्तम बन पड़े हैं।

प्रबन्ध-पटुता—गुप्त जी कुशल प्रबन्ध काव्यकार हैं। उनके खंडकाव्य—विशेषकर पंचवटी और जयद्रथ-वध, भाषा-सौन्दर्य रस-परिपाक और कल्पना-चातुर्य की दृष्टि से अनुपम रचनाएँ हैं, तथापि 'साकेत' में भाव पक्ष और कलापक्ष का सुन्दर समन्वय है। अपनी मौलिक उद्भावनाओं द्वारा और उपेक्षित

स्थलों का मार्मिक वर्णन करके आपने प्राचीन कथा को भी सरस बना दिया है। काव्य की उपेक्षिता उर्मिला के त्याग-अनुरागमय जीवन को प्रकाश में लाने तथा आत्मग्लानि से पूर्ण कैकेयी के चरित्र को उज्ज्वल बनाने में गुप्त जी को पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। मार्मिक स्थलों के हृदय स्पर्शी वर्णन, गीतिकाव्य की सरसता, संवादों की सुन्दर योजना और प्रकृति के सूक्ष्म चित्रण के कारण यह महाकाव्य उत्कृष्ट है।

रस-परिपाक—गुप्तजी ने अपने काव्यों में नवरस की सरस धारा प्रवाहित की है। 'पंचवटी' में रौद्र, वीभत्स और प्रेम, 'जयद्रथ-वध' में वीर और करुण, 'यशोधरा' में वात्सल्य और विरह वेदना तथा साकेत में दाम्पत्य प्रेम, करुणा, आत्मग्लानि, शोक, क्रोध, आवेश, उत्साह आदि की हृदय स्पर्शी व्यंजना हुई है।

चरित्र-चित्रण—मानव-प्रकृति का सजीव, स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक चरित्र चित्रण करने में गुप्तजी को पूर्ण सफलता मिली है। यशोधरा, कैकेयी, लक्ष्मण, माण्डवी का चरित्रांकन करने में आपने सर्वथा मौलिकता का परिचय दिया है। मानसिक संघर्षों को सुलझाने, अन्तर्वृत्तियों का विश्लेषण करने और सापत्न्य, मातृत्व, गर्व आदि स्त्रियोचित और जातिगत भावनाओं का चित्ताकर्षक वर्णन करने में गुप्तजी को पूर्ण सफलता मिली है। स्त्रियों के त्यागमय जीवन और दयनीय दशा का मार्मिक चित्र उनकी तूलिका से कितना उत्तम चित्रित हुआ है:—

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।

प्रकृति-चित्रण—गुप्त जी ने प्रकृति का चित्रण करने में भी पूर्ण सहृदयता से काम लिया है। आपके काव्यों में प्रकृति का विशद और हृदयग्राही वर्णन मिलता है :—

"चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल-थल में।
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है, अवनि और अम्बर तल में।"
पुलक प्रकट करती है धरती, हरित तृणों की नोकों से।
मानो झीम रहे हैं तरु भी मन्द पवन के झोंको से।

गुप्त जी ने प्राचीन और नवीन धाराओं में समन्वय स्थापित किया है। जहाँ उन्होंने प्राचीन भारतीय आदर्शों के भव्य चित्र उपस्थित किये हैं, वहाँ नवीन भावनाओं और चेतनाओं, स्वातंत्र्य युद्ध और सत्याग्रह, समाजवाद और विश्वप्रेम, अछूतोद्धार और ग्राम सुधार आदि का पूर्ण समर्थन किया है। उन्होंने धार्मिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक सभी क्षेत्रों की पूर्ति की है। गुप्त जी की प्रतिभा सर्वतोमुखी होने पर भी नवीन है और सर्वदा नवीन रहेगी।

अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध"

श्री० हरिऔध गद्य और पद्य दोनों के सिद्धहस्त लेखक, पारदर्शी समीक्षक, रसशास्त्र के आचार्य और खड़ी बोली के महाकवि थे। इस क्रान्ति-युग के रीति कालीन कवि होते हुए भी आपने काव्य क्षेत्र में नवीन कल्पनाओं एवं उद्भावनाओं की सृष्टि की और अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा द्वारा गद्य-पद्य, काव्य शास्त्र, दर्शनशास्त्र आदि सभी क्षेत्रों की पूर्ति की।

जीवन-परिचय—हरिऔध जी का जन्म सं० १९२२ में जिला आजमगढ़ के अन्तर्गत निजामाबाद में हुआ था। सिक्ख गुरु बाबा सुमेर सिंह के प्रभाव से आप में काव्य रुचि जाग्रत हुई। सदर कानूनगो के पद से अवकाश ग्रहण करके आपने सन् १९४१ तक हिन्दू विश्व-विद्यालय में अवैतनिक अध्यापक के रूप में कार्य किया। आप का स्वभाव सरल और जीवन आदर्श था। आप प्राचीन आर्य-संस्कृति के प्रेमी, समाज-सुधार के पोषक और देशोत्थान के समर्थक थे। आपमें प्राचीन एवं नवीन भावनाओं का अपूर्व समिश्रण था।

रचनाएँ—हरिऔध जी ने प्रबन्ध और मुक्तक दोनों प्रकार की रचनाएँ की हैं। 'प्रिय प्रवास' और 'वैदेही वनवास' आपके महा काव्य हैं।

'प्रिय प्रवास' हरिऔध जी का कीर्तिस्तम्भ है। भाषा, भाव और अलंकार-सौन्दर्य की दृष्टि से यह ग्रन्थ उत्तम है। इसमें भगवान कृष्ण के जीवन की मधुर झाँकी नए ढंग से दिखलाई गई है। 'रस कलश' में आपने रीति कालीन आचार्यों की भाँति रसों एवं नायक-नायिकाओं का विवेचन नवीन ढंग से किया है। 'बोलचाल', 'चुभते चौपदे' और 'चोखे चौपदे' में मुहावरेदार सरल भाषा में समाज और राज, लोक और परलोक, नीति और धर्म आदि पर सुन्दर सूक्तियाँ कही हैं।

भाषा-शैली—'हरिऔध' जी ने व्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों का प्रयोग किया है। आपका दोनों पर समान अधिकार है। क्लिष्ट से क्लिष्ट और सरल से सरल भाषा का प्रयोग करने

में आप पूरी तरह सफल हुए हैं। 'प्रिय प्रवास' में संस्कृत-गर्भित कोमल समास पदावली से युक्त, परिष्कृत, माधुर्य पूर्ण भाषा का प्रयोग किया गयाहै। यदि पद्यों में से 'है' और 'थे' को हटा दिया जाय तो वे संस्कृत श्लोक के समान प्रतीत होने लगते हैं। लेकिन अन्यत्र आपने बोलचाल की सरल, मुहावरों से पूर्ण, प्रसाद गुण युक्त भाषा का प्रयोग किया है।

छन्द—आपने तुकान्त और अतुकान्त दोनों प्रकार के छन्दों में रचनाएँ की हैं। 'प्रिय प्रवास' अतुकान्त छन्दों में हैं। उसमें आपने संस्कृत के मन्दाक्रान्ता, शिखरिणी, बसंत तिलका, वंशस्थ आदि छंदों की उत्तम छटा दिखलाई है। उसी प्रकार आपने 'बोलचाल' में उर्दू छंदों का प्रयोग सफलता से किया है।

अलंकार—आपने अलंकारों का समुचित प्रयोग किया है; किन्तु वे चमत्कार-प्रदर्शन के खिलवाड़ में नहीं पड़े। केवल सादृश-मूलक अलंकार जैसे-उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि की ही छटा सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है।

रस एवं भाव—उपाध्याय जी का कवि-हृदय भावुकता-पूर्ण है। आपने 'प्रिय-प्रवास' में शान्त, करुण और शृंगार की अच्छी छटा दिखलाई है। यशोदा के मातृ प्रेम और राधिका की विरह-पीड़ा का कविने सजीव चित्र उपस्थित किया है। 'प्रिय-प्रवास' में अनेक मार्मिक और हृदय-द्रावक प्रसंग हैं जिन्हें पढ़ते पढ़ते पाठक करुणा-सागर में निमग्न हो जाता है।

चरित्र-चित्रण—'हरिऔध' जी ने अपने काव्यों में पात्रों का चरित्र-चित्रण करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। 'प्रिय-

प्रवास' में भगवान् कृष्ण को व्रज के नेता और उद्धारक के रूप में अंकित किया गया है। वे व्रज-रमणियों के साथ हास-विलास करने वाले प्रेमी नहीं वरन् देश की आशा के आधार और निस्सहायों के उद्धारक हैं। उसी प्रकार राधिका जी भी कृष्ण-विरह में हाय-हाय करने वाली प्रोषित-पतिका न होकर लोक-सेवा में निमग्न रहने वाली देश-सेविका हैं। उन्होंने परमार्थ और लोकहित के लिए स्वयं को भी बलिदान कर दिया है। उनकी निम्न उक्ति में निस्वार्थ प्रेम की पूर्ण अभिव्यंजना हुई है;

"प्यारे जीवें जगहित करें गेह चाहे न आवें"।

इस प्रकार कवि ने राधा-कृष्ण के चरित्र पर लगाई हुई कालिमा को धोकर उसे सर्व प्रकार भव्य और सुखद बनाया है।

प्रकृति-चित्रण—हरिऔध जी ने बाह्य-दृश्यों के चित्रण पर भी यथेष्ट ध्यान दिया है। आपने सान्ध्य-गगन की लालिमा, वनों की प्राकृतिक छटा, वसन्त के सौन्दर्य के साथ-साथ राधा-कृष्ण की रूप माधुरी का स्वाभाविक चित्र खींचा है। आपने 'प्रकृति' को पात्रों के सुख-दुख की समभागिनी के रूप में चित्रित किया है। कहीं कहीं वस्तु नामावली देने के कारण आपका प्रकृति-वर्णन अरोचक हो गया है।

वास्तव में 'हरि औध जी' नूतन और पुरातन, कोमल और क्लिष्ट, सरल और सरस के अद्भुत संगम थे।' वे लोक भाषा के सफल कवि और आचार्य थे। उनकी बहुमुखी प्रतिभा हिन्दी के लिए वरदान सिद्ध हुई। कवि के शब्दों में ही—

भेद उसने कौन से खोले नहीं ?
कौन सी बातें नहीं उसने कहीं ?

दिल नहीं उसने टटोले कौन से ?
घुस गया कवि किस कलेजे में नहीं ?

कविवर ठाकुर गोपालशरणसिंह

वर्तमान युग में खड़ी बोली के सम्यक् उत्कर्ष में योग-दान देकर उसकी कर्कशता को दूर करके माधुर्य-गुण-सम्पन्न बनाने वाले कवियों में ठाकुर गोपाल शरण सिंह का स्थान अत्यन्त प्रतिष्ठित है। प्राचीन काव्य शैली और विषय को अपने नवीन भावाभिव्यजन से आपने अत्यन्त सरस, मधुर और हृदयग्राही बना दिया है।

जीवन-परिचय—ठाकुर गोपालशरणसिंह का जन्म संवत् १९४८ में रीवाँ राज्य के अन्तर्गत नई गढ़ी इलाके के सुप्रतिष्ठित छत्रिय कुल में हुआ था। आप इस इलाके के अधीश्वर हैं। बाल्य-काल से ही आप कविता-प्रेमी रहे हैं। हिंदी और संस्कृत के काव्य ग्रन्थों का अध्ययन और मनन करके तथा निरन्तर काव्याराधन द्वारा आपने अपनी काव्य-कला को विकसित किया है। आप अत्यन्त उदार-हृदय हैं; निम्न-वर्ग की त्रस्त और शोषित जनता के प्रति आपके संवेदनशील हृदय का प्रतिबिम्ब आपकी रचनाओं में भली भाँति दृष्टिगोचर होता है।

रचनाएँ—माधवी, कादम्बिनी, मानवी, ज्योतिष्मती, सुमना और संचिता आपके प्रमुख काव्य ग्रन्थ हैं।

काव्य-साधना—आपकी कविता के प्रमुख विषय हैं—प्रेम, ब्रजभूमि, श्रीकृष्ण, नारी, मानव, मातृभूमि, शिशु आदि।

आपके काव्य में प्रेमाराधना का भाव प्रधान है, पर इस प्रेमाराधना का अवलम्ब व्यापक विभु है जिसकी अलौकिक छवि सर्वत्र प्रस्फुटित हो रही है। इस अनन्त सौन्दर्य की झलक प्रकृति के कण-कण में व्याप्त है—

'बन उपवन में, सरोज में, सरोवर में,
सुमन-सुमन में, उसी की सुघराई है।
× × ×
सब ठौर देखो, वह छवि दिखलाई देती,
उर में समाई तथा लोचनों में छाई है।

आपने नारी जाति की वेदना, परतंत्रता और व्यथा के मार्मिक चित्र अत्यन्त सजीव चित्रित किए हैं। निम्नांकित पंक्तियों में नारी के विविध रूपों का चित्रण किया गया है।

"मानव-कुल की शक्ति-दायिनी, तू है भव्य भवानी।
बनती है तू विश्व-विजयिनी, ले आँखों में पानी॥

इसी प्रकार उन्होंने दलित-मानव-हृदय की भावनाओं की भी सहृदयता पूर्ण सरस अभिव्यक्ति की है।

प्रकृति-चित्रण—आपने प्रकृति का भी सजीव उल्लास-पूर्ण और मन मोहक चित्र खींचा है। प्राकृतिक दृश्यों में कवि को अनन्त-अव्यक्त सत्ता का आभास मिलता है। इन की 'चाँदनी' सृष्टि के कण-कण में न जाने किसकी खोज करती हुई उन्मत्त सी फिरती है।

भाषा—आपकी काव्य शैली के प्रधान गुण हैं—सरलता और सरसता। आपने सरस-सरल, परिष्कृत और प्रांजल भाषा का प्रयोग किया है। उसमें प्रसाद गुण सर्वत्र विद्यमान है। खड़ी बोली में ब्रजभाषा का सा काव्य-माधुर्य और सरसता उत्पन्न

करने में आपने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है। इसके लिए आपने व्रजभाषा के शब्दों और कोमल-कान्त पदावली का सुन्दर प्रयोग किया है।

अलंकार और छन्द—ठाकुर साहब ने प्रायः प्राचीन शैली को अपनाया है। आपने छप्पय- घनाक्षरी, कवित्त–सवैया आदि प्राचीन छन्दों का खड़ी बोली में सफल प्रयोग करने में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है। लालित्य, माधुर्य, धारा-प्रावाहिकता और सरसता आपकी काव्य शैली के प्रधानगुण हैं। कहीं कहीं लाक्षणिक पदों के प्रयोग से भावाभिव्यंजन में नवीनता और निरालापन आगया है। आपने अनुप्रास, यमक, श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा इत्यादि अलंकारों का समुचित प्रयोग करके भाषा के सौन्दर्य की ही वृद्धि नहीं की वरन् भावाभिव्यंजन में भी सफलता प्राप्त की है।

वास्तव में भाषा, भाव और कला सभी दृष्टियों से आपको पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। प्रस्तुत विषय का वर्णन करने में आपने चित्र सा खींच दिया है। प्राचीन शैली, प्राचीनभाव और प्राचीन विषयों को नवीनभाषा में, चित्ताकर्षक भाव व्यंजना और मधुरता के साथ प्रस्तुत करने में आप परम पटु हैं। आधुनिक कवियों में आपका गौरव पूर्ण स्थान है।

सुकवि रामनरेश त्रिपाठी

जीवन-परिचय—त्रिपाठी जी का जन्म सं० १९४६ में जौनपुर जिले के अन्तर्गत कोइरीपुर नामक ग्राम में हुआ था।

आपने स्वाध्याय द्वारा ज्ञानार्जन किया है। आरम्भ से ही, आपकी अभिरुचि साहित्य की ओर थी। आपने 'हिन्दी-मन्दिर' नामक संस्था की स्थापना करके काव्य-ग्रन्थों के प्रणयन और प्रकाशन का ठोस कार्य किया। 'कविता-कौमुदी' और ग्राम गीतों का संग्रह आपकी साधना के सुफल हैं। आपने काश्मीर से लेकर सेतुबन्ध-रामेश्वर तक का भ्रमण किया है।

रचनाएँ—त्रिपाठी जी की प्रतिभा सर्वतोमुखी है। आप उत्कृष्ट कवि और गद्य-लेखक हैं। आपने साहित्य के विभिन्न अंगों—काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, अनुवाद, टीका, और समालोचना सभी की पूर्ति की है। आपने प्राचीन और अर्वाचीन हिन्दी-कवियों का सपरिचय कविता-संग्रह 'कविता-कौमुदी' के नाम से प्रकाशित किया है। हिन्दी में स्त्री-साहित्य और बाल-साहित्य का प्रचार करने में आप सदैव अग्रगण्य रहे हैं। ग्राम गीतों के संग्रह करने में भी आपने बड़ा परिश्रम किया है। 'स्वप्न', 'मिलन' और 'पथिक' आपके रचित खण्ड काव्य, 'मानसी' स्फुट कविताओं का संग्रह और 'प्रेमलोक' नाटक है।

काव्य साधना—त्रिपाठी जी एक आदर्शवादी कवि हैं। छायावाद की रंगीन कल्पनाओं के बीच भी आपने देशभक्ति, समाज-सुधार, सेवा, प्रेम एवं त्याग की उच्च भावनाओं की प्रतिष्ठा की हैं। आपकी कविता के प्रमुख विषय हैं लोक कल्याण, प्रकृति एवं राष्ट्रप्रेम। आपके खण्डकाव्यों के कथानक मौलिक हैं; उनके पात्र राष्ट्रप्रेम से ओत प्रोत हैं। इन रचनाओं में देश की सामयिक स्थिति और प्रवृत्तियों का सुन्दर चित्र और भारतीय आदर्शवाद की पूर्ण प्रतिष्ठा है।

भाषा और शैली—आपकी भाषा संस्कृत शब्दों से पूर्ण मधुर, ओजस्वी और प्रसाद गुण पूर्ण है। आपने सर्वत्र शुद्ध, व्यवस्थित और व्याकरण-सम्मत खड़ी बोली का प्रयोग किया है, उसमें विदेशी शब्दों का पूर्ण अभाव है। प्रकृति-वर्णन में आपने बड़ी मधुर शब्दावली का प्रयोग किया है। जहाँ आपने मानव-कर्तव्यों का निरूपण किया है वहाँ भाषा ओजमयी और जोरदार हो गई है।

भावों की सम्यक् अभिव्यंजना और भाषा-सौन्दर्य क वृद्धि के लिए आपने यत्र-तत्र अनुप्रास, यमक, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का समुचित प्रयोग किया है। संक्षेप में आपकी शैली सरस, प्रवाहपूर्ण और परिष्कृत है।

हिन्दी गद्य का विकास

आविर्भाव-काल—हिन्दी का प्राचीन साहित्य पद्य में हैं। कुछ वार्ताओं जैसे 'चौरासी वैष्णवों की वार्ता' और सनदों को छोड़कर जो व्रजभाषा गद्य में हैं, गद्य साहित्य का अभाव है। खड़ी बोली के प्रादुर्भाव के साथ ही गद्य साहित्य का भी विकास हुआ। आधुनिक गद्य साहित्य के प्रवर्त्तक इंशा अल्ला खाँ, मुंशी सदासुखलाल, लल्लूजीलाल और सदल मिश्र माने जाते हैं। इन्होंने क्रमशः 'रानी केतकी की कहानी', 'सुखसागर', 'प्रेमसागर' और 'नासिकेतोपाख्यान' की रचना की है; किन्तु इनकी शैली में खड़ी बोली का विशुद्ध रूप नहीं मिलता।

भारतेन्दु-युग—भारतेन्दुजी के अभ्युदय के साथ हिन्दी के

प्रचार का श्रीगणेश हुआ। स्वामी दयानन्द सरस्वती के सत्प्रयत्नों से पंजाब जैसे उर्दू-प्रधान प्रान्त में भी हिन्दी का प्रचार हुआ। इस समय दो प्रकार की शैलियाँ प्रचलित थीं—राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' की उर्दू-प्रधान शैली और राजा लक्ष्मणसिंह की संस्कृत तत्सम-प्रधान शैली। भारतेन्दुजी ने मध्यवर्ती मार्ग का अनुसरण किया। उन्होंने संस्कृत की तत्सम प्रधानशैली में अरबी-फारसी के प्रचलित शब्दों को भी अपनाया। उनके समकालीन लेखकों—प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, चौधरी बदरी नारायण, अम्बिकादत्त व्यास, श्रीनिवासदास, जगमोहन सिंह आदि ने इसी शैली को अपनाया। अनेक नवीन विषयों पर ग्रन्थ रचे गए। कहानी, उपन्यास, नाटक और निबन्ध का सूत्रपात हुआ। फिर भी इस युग में अनुवादों की धूम रही, मौलिक रचनाएँ कम हुईं। भाषा और शैली का रूप स्थिर न हुआ। शुद्ध व्याकरण-सम्मत और परिमार्जित भाषा की ओर लेखकों का ध्यान न या। गम्भीर विषयों पर लेख और आलोचना का पूर्ण अभाव रहा।

द्विवेदी-युग—इस युग में गद्य-साहित्य की पूर्ण श्री-वृद्धि हुई। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सत्प्रयत्नों के फल-स्वरूप भाषा और शैली का स्वरूप स्थिर हुआ, व्याकरण सम्बन्धी दोषों का परिहार किया गया, अनुच्छेद-रचना और विरामादि चिह्नों का समुचित प्रयोग होने लगा। भारतेन्दु-युग में जो कमी थी उसकी इस युग में पूर्ति हो गई। विविध विषयों पर मौलिक रचनाएँ की गईं।

इस युग में साहित्य के सभी अंगों का पूर्ण विकास हुआ। जयशंकर 'प्रसाद' ने खोजपूर्ण ऐतिहासक नाटकों की रचना

की। हिन्दी नाट्यकला पर अँग्रेजी और बंगला का प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है। इस युग के अन्य नाटक कार हरिकृष्ण 'प्रेमी', सेठ गोविन्ददास, पं० गोविन्दबल्लभ पन्त, पं० लक्ष्मीनारायण मिश्र, उदयशंकर भट्ट आदि हैं।

तिलिस्मी और जासूसी उपन्यासों के स्थान पर सामयिक समस्याओं से सम्बन्धित उपन्यास लिखे गये। इनमें पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन और पात्रों के मनोवैज्ञानिक चरित्र चित्रण की झाँकी मिलती है। प्रेमचन्द्र, 'प्रसाद', विश्वंभर नाथ 'कौशिक', जैनेन्द्र कुमार, वृन्दावनलाल वर्मा आदि इस युग के प्रमुख उपन्यासकार हैं।

इस युग में कहानी-कला का भी पूर्ण विकास हुआ। वास्तविक जीवन से सम्बन्धित कहानियाँ खूब लिखी गई। प्रेमचन्द्र, 'प्रसाद', चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, सुदर्शन, चण्डी प्रसाद 'हृदयेश', सुदर्शन आदि इस युग के प्रमुख कहानीकार हैं।

विविध विषयों पर वर्णनात्मक, तर्कात्मक, विवेचनात्मक निबन्ध लिखे गये। ये निबन्ध शब्द-सौष्ठव, प्रौढ़शैली और सूक्ष्म विचार की दृष्टि से अत्युत्तम हैं। आचार्य द्विवेदी, डाक्टर श्यामसुन्दर दास, पं० रामचन्द्रशुक्ल, श्री पूर्णसिंह, और रायकृष्णदास इस युग के प्रमुख निबन्धकार हैं।

इस युग में विवेचनात्मक आलोचनाओंका अच्छा विकास हुआ। पं० रामचन्द्र शुक्ल ने पाश्चात्य और भारतीय प्रणालियों का समन्वय करके 'सूर', 'तुलसी' और 'जायसी' की विस्तृत समालोचनाएँ लिखीं। डा० श्यामसुन्दर दास, पं० कृष्णशंकर शुक्ल, जनार्दन झा, गिरजादत्त शुक्ल आदि इस युग के अन्य समालोचक हैं।

आधुनिक-युग—इस युग में हिन्दी साहित्य के सभी अंगों की पूर्ति हो रही है। भाषा-विज्ञान, मनोविज्ञान, पुरातत्त्व, अन्वेषण आदि विषयों पर मौलिक ग्रन्थ लिखे जा रहे हैं। हिन्दी भाषा के शब्द भण्डार की भी वृद्धि हो रही है। इस युग के प्रमुख साहित्यकार डा० धीरेन्द्रवर्मा, डा० रामकुमार-वर्मा, बा० गुलाबराय, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि हैं : आशा है कि भविष्य में हिन्दी स्वतन्त्रभारत की राष्ट्रभाषा के पद को ही ग्रहण नहीं करेगी, वरन् विश्व-साहित्य में भी उसका गौरव पूर्ण स्थान होगा।

गद्य-लेखकों की शैलियाँ

पं० बालकृष्ण भट्ट

पं० बालकृष्ण भट्ट आरम्भिक गद्य-काल के प्रतिभाशाली लेखकों में से हैं। आपने हिन्दी-प्रदीप द्वारा ३२ वर्ष तक साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा नैतिक सब प्रकार के अनेक लेख निकाले। भारतेन्दु युग के गद्य लेखकों में आपका प्रमुख स्थान है।

रचनाएँ—भट्ट जी की गणना सफल निबन्ध लेखकों में की जाती है। आपने साधारण विषयों जैसे—आँख, नाक, कान, बातचीत, चन्द्रोदय, आत्मनिर्भरता, कल्पना आदि पर सुन्दर लेख लिख कर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। लेखों के अतिरिक्त आपने 'रेल का विकट खेल', 'बाल विवाह नाटक' 'सौ अजान एक सुजान' 'नूतन ब्रह्मचारी' 'कलिराज की सभा'

आदि ग्रन्थों की रचना और 'पद्मावली' और 'शर्मिष्ठा' नामक नाटकों का बंगला से अनुवाद किया है।

शैली

भाषा— भट्टजी की शैली चलती हुई, सजीव, रोचक तथा मुहावरेदार भाषा से पूर्ण है। भाषा में दृढ़ता, सरसता और भावुकता है। आपका गद्य निस्संकोच काव्य-मय-गद्य कहा जा सकता है। परिमार्जित और ठीक खड़ी बोली का निर्वाह भट्टजी ने भी नहीं किया। पूर्वीय प्रयोग प्रायः इनके लेखों में मिलते हैं। समझा बुझाकर के स्थान में समझाय-बुझाय लिखा है। इस प्रकार आपकी शैली माधुर्य और प्रवाह से पूर्ण है।

शब्द—भाषा को अधिक व्यापक बनाने के लिए भट्टजी ने जहाँ संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है, वहाँ विदेशी शब्दों को भी अपनाया है। फारसी-अरबी के ही शब्द नहीं वरन् अंग्रेजी के शबद भी ज्यों के त्यों उठाकर रख लिए हैं; जैसे--दिल बहलाव, चमनिस्तान, लियाकत, खाहमखाह, असर, स्पीच (Speech), सोसायटी (Society), आर्ट आफ कनवरसेशन (Art of Conversation) कैरेक्टर (character) आदि।

अलंकार तथा मुहावरे—आपकी गद्य में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और अनुप्रास आदि अलंकारों की छटा देखने योग्य होती है। उनमें सर्वत्र कल्पना का प्राचुर्य दृष्टिगोचर होता है। आपने स्थान-स्थान पर कहावतों का सुन्दर प्रयोग किया है। परन्तु आपका झुकाव मुहावरों की ओर अधिक है। जैसे--

नम सी जड़ आना, धक्के खाना, दाँत निकालना, भाग्य लड़ना, इत्यादि। कहीं-कहीं भट्टजी ने अंग्रेजी, फारसी और संस्कृत की सूक्तियों का भी प्रयोग किया है; जैसे—'हम चुनी दीगरे नेस्त'। बेन जानसन, एडीसन आदि के उद्धरण भी सूक्तियों का कार्य करते हैं।

निबन्ध-कौशल——भट्टजी ने प्राय: छोटे-छोटे निबन्ध लिखे हैं। वे बराबर कहा करते थे कि लोग कैसे बड़े निबन्ध लिख डालते हैं। परन्तु ये छोटे-छोटे निबन्ध भी उनके प्रबन्ध-कौशल से अत्यन्त ही रोचक हो जाते हैं। उनके निबन्धों में व्यंग्य और वक्रता कूट-कूट कर भरी रहती है। उनके लेखों में उनके व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

पं० प्रताप नारायण मिश्र

पं० प्रतापनरायण मिश्र भारतेन्दु-युग के प्रतिभाशाली साहित्यिकों में से थे। आप भारतेन्दु जी के घनिष्ठ मित्र थे। अपनी रचनाओं और ब्राह्मण तथा हिन्दी-हिन्दोस्तान नामक पत्रों द्वारा आपने हिन्दी भाषा की सराहनीय सेवा की थी। आप हिन्दी-हिन्दू-हिन्दुस्तान के परम भक्त थे।

रचनाएँ——मिश्रजी अपने समय के अच्छे कवि और लेखक थे। आप 'ब्राह्मण' में विविध विषयों पर लेख निकालते थे। देश दशा, समाज सुधार, नागरी-हिन्दी-प्रचार, साधारण मनोरंजन आदि सब विषयों पर मिश्रजी की लेखनी चलती थी। आप अपनी हास्यपूर्ण और रोचक रचनाओं के लिए अधिक प्रसिद्ध हैं। आपने 'हठी हमीर' 'भारत-दुर्दशा' (नाटक), 'गो संकट',

'कलि-प्रभाव', जुआरी-खुआरी' (प्रहसन), 'कलि-कौतुक-रूपक', 'राजसिंह', 'युगलांगुलीय'. 'दंगल-खंड', (आल्हा) आदि ४० के लगभग पुस्तकों को रचना और अनुवाद किया। मिश्रजी की कविताएँ भी हास्य और विनोद से पूर्ण हैं। 'हर गंगा', 'तृप्तयांम', 'बुढ़ापा' अत्यन्त मनोरंजक हैं।

शैली

विषय—पं० बालकृष्ण भट्ट की भाँति मिश्र जी ने भी साधारण और व्यावहारिक विषयों जैसे बाल, दाँत, वृद्ध, भौं धोखा, समझदार की मौत, मनोयोग आदि पर सुन्दर लेख लिखे हैं। आपके लेखों के शीर्षक भी प्रायः छोटे हैं। इनमें आपने अपने स्वच्छंद विचार प्रकट किये हैं।

भाषा—मिश्रजी की भाषा सरल और सुबोध होने पर भी प्रौढ़, व्याकरण-सम्मत, मंजी हुई और परिष्कृत नहीं है। वह सर्वत्र उनकी विनोदशील प्रकृति के अनुकूल है। उसमें प्रान्तीय शब्दों और पूरबी प्रयोगों की भरमार है, जैसे सेंतमेंत, टेव, खै खै, तिथ, हईं, भए आदि। आपने उर्दू-फारसी के शब्दों का भी सर्वत्र प्रयोग किया है; जैसे—पसेमर्ग, ग़नीमत, हिकमत, आफ़त, ज़माना आदि। कहीं-कहीं ग्रामीण शब्दों, जैसे--दोख, मुड़ियावें, आँय-बाँय-शाँय और अनुप्रासमयी भाषा जैसे 'निरी खारिज खराब हाल खाल की खलीती', 'भ्रमोत्पादक भ्रम स्वरूप भगवान के बनाए हुए भव में जो कुछ है भ्रम ही है' की भी छटा दिखलाई पड़ती है।

मुहावरे और लोकोक्तियाँ--मिश्र जी ने मुहावरों और लोकोक्तियों का सुन्दर प्रयोग किया है; जैसे --लकीर के फ़क़ीर,

धोखे की टट्टी, कलई खोलना, पानी पानी होना, आपे से बाहर होना। संस्कृत एवं हिन्दी कवियों के उद्धरणों और कहावतों की भी भरमार लेखों में पाई जाती हैं, जैसे—'मूँदि गई आँखें तब लाखैं केहि काम की';'आपन पेट हाहू मैं ना देहों काहू' आदि।

व्यंग्य और विनोद—आपकी विनोद प्रिय प्रकृति की छाप आपकी शैली में स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ती हैं। कैसा भी विषय हो, आप उसमें विनोद और मनोरंजन की सामग्री भर देते थे। व्यंग्य और विनोद का पुट देने के लिए आपने बैसवाड़े की ग्राम्य कहावतों और शब्दों को अपनाया है। यद्यपि आपकी हास्य-विनोद की रुचि सर्वत्र दिखाई पड़ती है तथापि गंभीर विषयों में आपने संयत और साधु भाषा का प्रयोग किया है।

बा० जयशंकर 'प्रसाद'

बा० जयशंकर 'प्रसाद' हिन्दी साहित्याकाश के उन जगमगाते नक्षत्रों में से हैं जिनके विषय में कबीरदास जी की यह उक्ति कि 'लालों की नहिं बोरियाँ साधु न चलें जमात' पूर्ण रूप से चरितार्थ होती है। आपकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। आपने साहित्य के अनेक अंगों—कविता, नाटक, कहानी, उपन्यास और गद्य-काव्य की वृद्धि ही नहीं की वरन् अनेक क्षेत्रों में आपने नवीन धारा प्रवाहित की है।

जीवन-परिचय—आपका जन्म संवत् १९४६ में काशी के एक प्रतिष्ठित और धनी-मानी वैश्य कुल में हुआ था। घर पर ही आपकी शिक्षा की समुचित व्यवस्था की गई। आपने हिन्दी,

संस्कृत, अँगरेजी, उर्दू, फ़ारसी और बंगला का अध्ययन किया। सत्रह वर्ष की अवस्था में आपके अग्रज के निधन से कौटुम्बिक भार आपके कंधों पर आगया। व्यापार और ज़मींदारी का सारा कार्य योग्यतापूर्वक करते हुए आपने अपनी साहित्यिक अभिरुचि को जारी रखा। सन् १९३८ ई० में आपका देहावसान होगया। आपकी अध्ययनशील रुचि तथा सरल और कोमल प्रकृति थी।

रचनाएँ:—प्रसाद जी की प्रतिभा बहुमुखी थी। आपने कवि, कहानी लेखक, उपन्यासकार, नाटककार और निबंध लेखक सभी रूपों में सफलता प्राप्त की है। आपने ऐतिहासिक नाटकों की सृष्टि करके अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया है। चन्द्रगुप्त, अजातशत्रु, राज्यश्री, विशाख, स्कन्दगुप्त, जनमेजय का नाग यज्ञ, कामना और एक घूंट नाटक; कंकाल और तितली उपन्यास; आँसू, झरना, लहर, कानन-कुसुम-मुक्तककाव्य 'कामायनी' प्रबन्ध काव्य; आकाशदीप, प्रतिध्वनि. छाया, तथा पल्लव आपकी कहानियों के संग्रह हैं।

शैली

भाव प्रधान कहानियाँ—प्रसाद जी एक अनूठी लेखन शैली लेकर साहित्य क्षेत्र में अवतीर्ण हुए। भावुक कवि और गंभीर दार्शनिक होने के कारण आपकी गद्य रचनाओं में भी भावुकता और दार्शनिकता के दर्शन होते हैं। आपकी रचनाओं में आलंकारिक और भावमय शैली के कारण गद्य-काव्य का सा आनन्द आता है। "उनकी कहानियों को हम एक प्रकार का प्रेम पूर्ण कथात्मक गद्य-काव्य कह सकते हैं।

जिसमें घटना और चरित्र प्रधान न होकर भाव ही प्रधान हैं।" उनकी कहानियों और उपन्यासों में मानसिक भावनाओं की उथल-पुथल और अन्तर्द्वन्द का उत्तम विश्लेषण हुआ हैं।

भाषा:—प्रसाद जी की भाषा संस्कृत-गर्भित, परिष्कृत और परिमार्जित है। उसमें तत्सम और तद्भव शब्दों की अधिकता है तथा विदेशी भाषाओं के शब्दों का पूर्ण अभाव है। संस्कृत का पदावली के प्रयोग से कहीं-कहीं भाषा गंभीर, दुरूह और क्लिष्ट हो गई हैं; किन्तु दार्शनिक विचारों और तीव्र अन्तर्द्वन्द को प्रकट करने के लिए वह परम उपयुक्त है। आपने मुहावरों का बहुत कम प्रयोग किया है।

प्रेमचन्द जी के समान प्रसाद जी की शैली में विनोद और परिहास का अभाव है और न उनकी भाषा में उछल-कूद और चुलबुलापन है।

समाज के विकृत स्वरूप का चित्रण आप बड़ी खूबी के साथ करते थे, पर उसमें कुरुचि नहीं आने पाती थी।

डा० श्यामसुन्दर दास

रायबहादुर डा० श्यामसुन्दरदास उन गंभीर एवं लगनशील साहित्य कर्मठों में से हैं जिन्होंने मातृभाषा के प्रचार और प्रसार का श्रीगणेश किया और उसे राष्ट्रभाषा के उच्चासन पर आसीन किया। आप वर्तमान हिन्दी-साहित्य के प्रमुख उन्नायकों में से हैं। एक ओर आपने हिन्दी भाषा के प्रचार कार्य की ओर ध्यान दिया और दूसरी ओर प्राचीन ग्रंथों की

खोज की तथा साहित्य, इतिहास एवं भाषा विज्ञान सम्बन्धी सामग्री को एकत्र कर साहित्यिकों का पथ प्रदर्शन-किया। आपकी प्रशंसा में आचार्य पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी ने लिखा था:—

मातृभाषा के प्रचारक, विमल बी० ए० पास।
सौम्य शील-निधान, बाबू श्यामसुन्दर दास॥

जीवन-परिचय—आपका जन्म संवत् १९३२ में काशी में ला० देवीदास खन्ना के यहाँ हुआ था। बी० ए० पास करने के पश्चात् कुछ वर्ष तक आप विभिन्न पदों पर कार्य करते रहे। फिर आप हिन्दू विश्व-विद्यालय, काशी में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष नियुक्त हुए। वहाँ से अवकाश ग्रहण करके साहित्य सेवा में लीन रहे।

रचनाएँ—आपकी कीर्ति का प्रधान प्रकाश-स्तंभ काशी नागरी प्रचारिणी सभा है। सभा के स्थापन काल से लेकर आप बराबर हिन्दी भाषा और साहित्य की सेवा करते रहे। आपकी हिन्दी सेवा अत्यंत ही सराहनीय है। आपने अनेक ग्रंथों का सम्पादन और रचना की है। आपकी रचनाओं में साहित्यालोचन, भाषा-विज्ञान, रूपक-रहस्य, हिन्दी भाषा और साहित्य, गोस्वामी तुलसीदास, कवि-कोविद-रत्न-माला आदि मुख्य हैं। 'हिन्दी-शब्द-सागर' का सम्पादन एवं प्रकाशन भी आपके भगीरथ प्रयत्न का सुपरिणाम है।

शैली

भाषा (सरल और सुसंस्कृत)—आपने अपनी रचनाओं में सरल, सुबोध और सुसंस्कृत भाषा का प्रयोग किया है। भाषा

गंभीर और परिमार्जित होते हुए भी प्रवाह पूर्ण है। आपकी भाषा की प्रधान विशेषता यह है कि उसमें अरबी-फारसी के विदेशी शब्द नहीं आते। आपने प्रायः तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। जहाँ कहीं आपने अति प्रचलित उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है, वहाँ उन्हें हिन्दी व्याकरण के नियमों से अनुशासित करके एवं उनका विदेशीपन दूर करके ही अपनाया है। साधारण विषयों पर लिखते समय आपने तत्सम शब्दों का कम प्रयोग किया है।

वाक्य (विषयानुकूल)—आपके वाक्य प्रायः विषय के अनुसार छोटे अथवा बड़े होते हैं। जहाँ विषय गंभीर है, वहाँ वाक्य प्रायः छोटे होते हैं और जहाँ विषय सरल है वहाँ वाक्य कहीं लम्बे भी हो गये हैं। आपका मत है—"जो विषय जटिल अथवा दुर्बोध हों उनके लिए छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग ही सर्वथा वांछनीय है। सरल और सुबोध विषयों के लिए यदि वाक्य अपेक्षाकृत कुछ लम्बे भी हो जावें तो उनसे उतनी हानि नहीं होती।" इस सिद्धान्त का आपने सर्वत्र पालन किया है। कहीं-कहीं समीकृत वाक्यों (Balanced sentences) की छटा भी आपकी रचनाओं में अनौखी है।

अलंकार—भाषा को अलंकारों द्वारा सजाने की ओर आपकी रुचि नहीं थी। विषय को सुगम बनाने के लिए उपमा तथा रूपक इत्यादि कुछ साधारण अलंकारों को छोड़कर अन्य अलंकारों का आपने बहुत ही कम प्रयोग किया है। आपके कथन का ढंग इतना अच्छा होता था कि गंभीर से गंभीर विषय

को भी आप सुबोध बना देते थे। आपके लेखों में प्रसाद गुण की व्यापकता पाई जाती है।

विषय को अधिक स्पष्ट बनाने के लिए "सारांश यह है" कह कर फिर से आप प्रतिपादित विषय को थोड़े शब्दों में दुहरा देते हैं। ऐसा करने से आपके गद्य में एक विशेष सौन्दर्य आ जाता है।

आपकी शैली साधारणत: संगठित तथा व्यवस्थित होती है। उसमें एक धारा प्रवाहिक प्रवाह भी मिलता है। वह प्रायः पुष्ट और ओजस्विनी होती है। मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग न करने से शैली में रूखापन आगया है। आपकी प्रकृति गंभीर होने से उसकी छाप आपकी शैली में भी देखी जाती है। इसी कारण उसमें विनोद और उछल-कूद का पूर्ण अभाव है। कहीं-कहीं भूमिका अति विस्तृत हो गई है। कभी-कभी आप एक ही बात को अधिक बढ़ा देते हैं और बार बार उसी को दूसरे शब्दों में दुहराते हुए पाए जाते हैं। इस कारण कहीं-कहीं आपके लेखों में वाग्विस्तार की अधिकता है।

आचार्य पं० रामचंद्र शुक्ल

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल का स्थान वर्तमान हिन्दी महारथियों में अग्रगण्य है। आप एक प्रौढ़ गद्य लेखक, उत्कृष्ट समालोचक और इतिहासकार तथा मर्मज्ञ कवि थे।

जीवन-परिचय—शुक्ल जी का जन्म सं० १९४१ में जिला वस्ती के अगौना नामक ग्राम में हुआ था। आप जीवन भर

साहित्य सेवा में लीन रहे। आपने हिन्दी शब्द सागर का सम्पादन विद्वता एवं परिश्रम से किया। वास्तव में हिन्दी-शब्द सागर के वर्तमान रूप का श्रेय बहुत कुछ आपको ही है। आठ नौ वर्ष तक आपने नागरी प्रचारिणी पत्रिका का भी सम्पादन किया। इसके पश्चात् आप हिन्दी-विश्व-विद्यालय के हिन्दी-विभाग में नियुक्त हुए जहाँ अध्यक्ष-पद तक पहुँच गए। इस सम्मान्य पद पर कार्य करते हुए २ फरवरी सन् १९४१ में आपका देहावसान होगया। आप उच्च कोटि के विद्वान, परम सहृदय और प्रकृति के पुजारी थे। आपने अपने गंभीर अध्ययन और विवेचन शक्ति द्वारा अमूल्य साहित्य-निधि का सृजन किया।

रचनाएँ—शुक्ल जी का गद्य और पद्य दोनों में ही प्रमुख स्थान है। श्री शातिप्रिय द्विवेदी के शब्दों में "उनका हृदय कवि है, मस्तिष्क आलोचक है, तथा जीवन एक अध्यापक।" अनेक फुटकल कविताओं के अतिरिक्त (जैसे 'हृदय का मधुर भार', 'बसन्त-पथिक' 'शिशिर-पथिक') आपने ब्रजभाषा में अंगरेजी के 'लाइट आफ एशिया' के आधार पर 'बुद्ध-चरित नामक प्रबन्ध काव्य ब्रजभाषा में रचा है। आपने गोस्वामी तुलसीदास, जायसी, सूर पर मनोवैज्ञानिक समालोचनाएँ और 'हिन्दी-साहिय का इतिहास' लिखकर एक बड़ी कमी की पूर्ति की है। 'काव्य में रहस्यवाद' में आपने रहस्यवाद की प्रवृत्तियों की व्याख्या की है। 'विचार-वीथी' और 'चिन्तामणि'. आपके निबन्ध-संग्रह है। समालोचना के क्षेत्र में आपने एक नए युग का सूत्रपात किया है।

शैली

शुक्ल जी वर्तमान काल के उत्कृष्ट निबंध-लेखक और आलोचक शिरोमणि थे । आप पर जर्मन आलोचक बफन (Buffon) की उक्ति कि 'शैली लेखक की वैयक्तिकता है (Style is the man himself) पूर्ण रूप से घटित होती है । शुक्ल जी के लेखों में उनके व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट लक्षित होती है । उनकी व्यक्तिगत गंभीरता उनकी भाषा में व्याप्त है ।

शुक्ल जी ने आलोचनात्मक तथा साधारण अनेक प्रकार के निबंध लिखे हैं । आपने अपने निबंधों के लिए या तो साहित्यिक विषय चुने हैं या मनोविकार सम्बन्धी; जैसे—कविता, उपन्यास, क्रोध, घृणा, श्रद्धा, मित्रता आदि । इन विचारात्मक निबंधों में आपके विचारों की छटा देखने ही योग्य है ।

आपने संस्कृत-मिश्रित, शुद्ध, परिमार्जित भाषा का सर्वत्र प्रयोग किया है । मननशील विषयों पर लिखने के कारण उसमें तत्सम शब्दों की अधिकता रहती है । पर जहाँ विषय सरल है वहाँ आपने प्रचलित उर्दू शब्दों का भी उपयुक्त प्रयोग किया है; जैसे, तारीफ़, चीज़, मज़ाक, क़द्र आदि ।

आपके गद्य की प्रधान विशेषता यह है कि उसमें शब्दाडम्बर का नाम भी नहीं । उसमें बिना आवश्यकता के वाक्य-पूरक "है" का भी प्रयोग नहीं किया गया है । यदि आपके निबंधों में से एक वाक्य भी बाहर निकाल लें तो समस्त विचार माला अस्त व्यस्त होजाती है । आपकी गद्य में थोड़े शब्दों में गंभीर से गंभीर भाव व्यक्त किए गए हैं । आपका शब्द भण्डार पूर्ण था । अतएव प्रत्येक भाव को आपने उपयुक्त शब्दों में व्यक्त किया है ।

आपने प्रायः छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग किया है, लेकिन इन छोटे वाक्यों में अत्यन्त अधिक भाव भर देना शुक्ल जी का ही काम है। आपका प्रत्येक वाक्य एक सूत्र के समान प्रतीत होता है।

आपकी भाषा में अलंकारों का कम प्रयोग है। फिर भी कहीं-कहीं रूपक, श्लेष तथा यमक अलंकार दिखलाई पड़ते हैं। इन अलंकारों का प्रयोग अत्यन्त स्वाभाविक रूप से किया गया है। जैसे—"राम के बिना हिन्दू जीवन नीरस है, फीका है। यही राम रस उसका स्वाद बनाए रहा और बनाए रहेगा। राम नामामृत पान करके हिन्दू-जनता अमर होगई। 'साधारण जनता के मानस पर तुलसी के मानस का अधिकार समझा जा सकता है।'

आपकी शैली की प्रधान विशेषता यह है कि गंभीर और गहन विचारों का प्रतिपादन करने पर भी कहीं उसमें दुरूहता और शुष्कता नहीं आने पाई है। गम्भीर निबन्धों के बीच आपने शिष्ट और मार्मिक व्यंग्य का आश्रय लिया है। इस प्रकार के व्यंग्यात्मक छीटों के लिए आपने उर्दू के शब्दों और मुहावरों का उपयोग किया है। जेसे—"हवा से लड़ने वाली स्त्रियाँ देखी नहीं तो सुनी तो बहुतों ने होगीं; चाहे उनकी जिन्दादिली की क़द्र न की हो।" "माफ कीजिए हमने चौड़ी मोहरी का पायजामा पहना, आदाब अर्ज किया किन्तु रामनाम न छोड़ा।"

आचार्य शुक्ल जी की साहित्यिक देन केवल ग्रन्थों के रूप में ही नहीं है वरन् आपने आलोचना के क्षेत्र में उसके अनुकूल प्रौढ़ भाषा का निर्माण किया, सम्यक् भाव-व्यंजना के लिए

उपयुक्त शब्दों का आविष्कार किया और भाषा के शब्द कोष को पूर्ण करने में सहायता दी। आपकी इस सराहनीय साहित्य सेवा के लिए हिन्दी संसार चिर कृतज्ञ रहेगा।

बा० प्रेमचन्द

उपन्यास– सम्राट बाबू प्रेमचन्द जी का स्थान हिन्दी गद्य-निर्माताओं में प्रमुख है। जिस समय हिन्दी साहित्य क्षेत्र में तिलस्मी कहानियों और अनुवादित उपन्यासों का बोलबाला था, उस समय आपने सुन्दर कहानियों और वास्तविक जीवन से सम्बन्ध रखने वाले उपन्यासों की रचना करके अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया था।

जीवन चरित्र—बा० प्रेमचन्द जी का जन्म स० १९३७ ई० में एक प्रतिष्ठित कायस्थ कुल में हुआ था। आपका पहला नाम धनपतराय था। प्रेमचन्द आपका साहित्यिक नाम है। बाल्यावस्था में आपको अनेक आपत्तियों का सामना करना पड़ा। आपने बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त की थी।

पहले आप उर्दू में लेख और कहानियाँ लिखा करते थे; फिर हिन्दी में लिखने लग गए थे। आप कई पत्र पत्रिकाओं के सम्पादक भी रहे। आपने काशी से मासिक-पत्र 'हंस' और साप्ताहिक 'जागरण' निकाला था। पीछे आप सिनेमा-संसार में प्रविष्ट हुए। संवत् १९९४ में आपका देहावसान हो गया।

रचनाएँ—आप वर्तमान काल के सर्वोत्कृष्ट कहानी लेखक और उपन्यासकार थे। सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प,

कर्मभूमि, गबन, गोदान आदि आपके प्रमुख उपन्यास हैं। आपकी कहानियों के अनेक संग्रह—प्रेम-तीर्थ, प्रेमद्वादशी, प्रेम प्रसून और कफ़न आदि प्रकाशित हो चुके हैं। आपने नाटक रचनाएँ भी की हैं लेकिन उनमें विशेष सफलता प्राप्त नहीं कर सके।

शैली

प्रेमचन्द जी हिन्दी के उच्चकोटि के कहानी लेखक थे। पहले उर्दू में लिखने के कारण आपकी भाषा मंज चुकी थी। उनकी भाषा में उर्दू और हिन्दी की मिलावट होते हुए भी वह सरल, सुबोध, मंजी हुई है। उसमें प्रचलित उर्दू शब्दों का पूर्ण प्रयोग है। भाषा में गंभीरता के स्थान पर उछल कूद और चुलबुलापन है। स्थान स्थान पर विनोद और परिहास का पुट देकर आपने भाषा को सजीव बना दिया है; विशेषकर उनके कथोपकथन अत्यन्त सजीव हैं। मुहावरों और लोकोक्तियों का आपने खूब प्रयोग किया है।

प्रेमचन्द जी ने अपने विचारों को अधिक स्पष्ट बनाने के लिये 'जैसे' 'तैसे' 'मानो' का प्रयोग किया है। कहीं कहीं उन्होंने उदाहरणों द्वारा विषय को बोध-गम्य बनाया है। सरलता के साथ साथ अलंकारों के पुट से इनकी गद्य में पद्य का सा आनन्द आता है। दार्शनिक भावों को आपने इतनी उत्तमता से समझाया है कि प्रत्येक मनुष्य उन्हें सरलता से समझ सकता है।

आपको प्रारंभिक रचनाओं में भाषा शिथिल और उखड़ी हुई सी है; उसमें वाक्य के शुद्ध क्रम का भी अभाव खटकता

है, जैसे—'जाइए आप', 'क्या पड़ी है आपको ?' उर्दू के अत्यधिक एवं अप्रचलित शब्दों के प्रयोग से भाषा खिचड़ी हो गई है।

प्रेमचन्द जी की भाषा की मुख्य विशेषता यह है कि वह सर्वथा पात्रों के अनुकूल हुई है। नागरिकों द्वारा शुद्ध खड़ी बोली, मुसलमानों से फारसी मिश्रित-उर्दू और ग्रामीणों द्वारा देहाती का प्रयोग कराया है। इस कारण भाषा सजीव और स्वाभाविक है।

प्रेमचन्द जी के कहने का ढंग अत्यन्त सजीव और रोचक है। ग्रामीण जीवन के वास्तविक चित्र आपने इतने स्वाभाविक चित्रित किए हैं कि मन मुग्ध हो जाता है। उन्होंने झोंपड़ों में रहने वाले गरीब किसानों और मजदूरों से लेकर अट्टालिकाओं में निवास करने वाले धनिकों और ज़मीदारों, पुलिस के थानेदारों और अन्य अफसरों का वास्तविक और सजीव वर्णन किया है।

आपकी कहानियों और उपन्यासों में वर्त्तमान परिस्थितियों का सुन्दर चित्रण रहता है। वे घरेलू, नागरिक, ग्रामीण, सामाजिक और राजनीतिक विषयों से सम्बन्धित होती हैं। समाज की सत्य अवस्था का जो चित्रण इन्होंने किया है वह हृदयस्पर्शी है। ग्रामीण जीवन, किसानों की दुरवस्था और उनकी आशा-निराशा का जीता जागता वर्णन करने में आप पूर्ण सफल हुए हैं।

आपने यथार्थवाद और आदर्शवाद का समन्वय करके पाठकों के लिए व्यावहारिक शिक्षा दी है। मजदूर-दार्शनिक,

किसान-ज़मींदार छूत-अछूत की वास्तविक अवस्था का वर्णन करते हुए उनमें फैली हुई बुराइयों को दूर करने का उपाय बतलाया है।

आपकी कहानियाँ प्रायः घटना-प्रधान होती हैं। घटनाओं का निर्माण करने में आप परम पटु हैं। आपने पात्रों का स्वाभाविक चरित्र चित्रण करने में भी कमाल हासिल किया है।

आपका जीवन संघर्षमय होने के कारण कहीं-कहीं आप उपदेशक के रूप में दिखाई पड़ते हैं। कुछ आलोचकों ने उन पर 'घृणा के प्रचारक' होने का दोष लगाया है लेकिन उनकी रचनाओं में केवल पाप और अन्धकार का ही साम्राज्य नहीं है वरन् उज्ज्वल नक्षत्र की भाँति आशा की किरण और ज्ञान का प्रकाश है जो आगे आने वाले युग का पथ-प्रदर्शन करता रहेगा।

वास्तव में भारतीय साहित्य में प्रेमचन्द जी का वही स्थान है जो पाश्चात्य देशों में डिकेंस और टालस्टाय का है। उनको 'जनता का साहित्यकार' कहा जा सकता है।

Shri Haribansh [illegible] dhyay Baskota.
श्री हरिवंश [illegible] बास्कोटा,
Ishw [illegible] (Banke)
ईश्वरी निवास, [illegible] (बाँके)
P.O. RUPAIDIHA, Dist. Bahraich, (U.P.)

हरप्रसाद भार्गव,
एज्युकेशनल पब्लिशर
कचहरी घाट आगरा ।

पुस्तक प्राप्ति के लिए:—
सरस्वती सदन.
बेलनगंज, आगरा

मू० ७५।—

[illegible]